गांधीजी की छत्रछाया में

[व्यक्तिगत संस्मरण]

●

राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्रप्रसाद के प्राक्कथन सहित

●

लेखक

घनश्यामदास बिड़ला

●

१९५५

सत्साहित्य प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय, मत्री
सस्ता साहित्य मडल, नई दिल्ली

पहली बार १९५५
मूल्य
अजिल्द डेढ रुपया
सजिल्द अढाई रुपये

मुद्रक
सम्मेलन मुद्रणालय
प्रयाग

विषय-सूची

प्रकाशकीय

इस पुस्तक मे मुख्य रूप से गाँधीजी तथा श्री घनश्याम दासजी बिडला का पत्र-व्यवहार है। कही-कही पर अन्य प्रसगोचित सामग्री जोड कर लेखक ने इसे अधिकाधिक उपयोगी तथा पूर्ण बनाने का प्रयत्न किया है।

श्री बिडलाजी की रचनाओ से हिन्दी के पाठक भलीभाति परिचित है। उनकी लिखी 'बापू' 'डायरी के पन्ने' 'ध्रुवोपाख्यान' 'बिखरे विचार' आदि पुस्तके हिन्दी मे बहुत लोकप्रिय हुई है। पहली दो पुस्तको के तो एक से अधिक सस्करण हुए है।

हमे हर्ष है कि उनकी नवीन कृति पाठको के हाथो मे पहुँच रही है। गाँधीजी के अमूल्य पत्रो का सग्रह होने के कारण तो इस पुस्तक का मूल्य है ही, साथ ही भारत के स्वातत्र्य-सग्राम के कुछ अशो पर महत्वपूर्ण सामग्री उपस्थित करने के कारण भी इसका अपना स्थान है। पुस्तक को पढकर यह भी पता चलेगा कि लेखक के किन गुणो के कारण गाँधीजी उनकी ओर आकर्षित हुए थे और लेखक ने अनेक बातो मे उनसे मतभेद होते हुए भी उनके प्रति कितनी भक्ति रक्खी थी और उनके लोकोपयोगी कार्यो मे कितनी उन्मुक्तता से योग दिया था।

ज्यो-ज्यो समय बीतता जायगा, आगे आने वाली पीढियो मे गाँधीजी-विषयक साहित्य के लिए अधिक-से-अधिक जिज्ञासा-भाव उत्पन्न होगा। इस दृष्टि से इस प्रकार के साहित्य का आगे चल कर क्या मूल्य होगा, इसकी कल्पना सहज ही की जा सकती है।

हमे विश्वास है कि हमारे राष्ट्रीय साहित्य मे इस पुस्तक का ऊचा स्थान होगा और हिन्दी के पाठको मे यह वहुत ही लोकप्रिय होगी। सामान्य पाठक भी इससे लाभ उठा सके, इसलिए इसका मूल्य इतना कम रक्खा गया है। हम आशा करते है कि यह पुस्तक प्रत्येक सुशिक्षित भारतीय परिवार मे पहुचेगी।

——मत्री

प्राक्कथन

मुझसे इस पुस्तक का प्राक्कथन लिखने को कहा जाने पर मैं तुरत राजी हो गया। श्री घनश्यामदास बिड़ला से मेरा बहुत पुराना और घनिष्ठ सम्बन्ध है। स्वतन्त्रता-संग्राम के समय उन्होंने हमेशा हमारा साथ दिया और आवश्यकतानुसार रुपये-पैसे से हमारी सहायता की। पर पुस्तक का प्राक्कथन लिखना स्वीकार करने का यही एकमात्र कारण नहीं था, बल्कि पुस्तक के प्रूफ देखकर मुझे यह रचना भविष्य में एक महत्वपूर्ण विषयपर बहुमूल्य साहित्य सिद्ध होती जान पड़ी।

भारतीय इतिहास में स्वातन्त्र्य-संग्राम का युग एक क्रान्तिकारी युग था। उस समय महात्मा गांधी के नेतृत्व में भारत ने ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध अहिंसात्मक आन्दोलन छेड़ा था और उसमें कामयाबी हासिल की थी। उन महत्वपूर्ण वर्षों में देश में होनेवाली घटनाओं से समाचार-पत्रों का प्रत्येक पाठक परिचित है। समाचार-पत्रों की मिसिलें उन दिनों के समाचारों से रंगी पड़ी हैं, पर महात्मा गांधी तथा सरकार के बीच पर्दे की आड़ में होने वाली बातों के सम्बन्ध में लोगों को बहुत ही कम जानकारी है। इस पुस्तक से वह कमी एक हद तक पूरी होती है। घनश्यामदासजी और महात्मा गांधी तथा देश के अन्य राजनीतिक नेताओं के बीच पिछले २५ वर्षों में हुआ पत्र-व्यवहार इस पुस्तक में दिया गया है। इसमें तत्कालीन ब्रिटिश सरकार के उच्चपदस्थ अधिकारियों तथा वहा के सार्वजनिक जीवन में प्रमुख अन्य अंग्रेजों के साथ की गई घनश्यामदासजी की भेंटों का विवरण भी है। गोलमेज-परिषद् का तथा स्वतंत्रता-प्राप्ति के कुछ ही समय पहले तक सरकार और कांग्रेसी नेताओं में होने वाली चर्चा का विवरण भारतवासियों के तथा उस समय के इतिहास से परिचित होना चाहनेवालों के लिए समान रूप से रोचक होगा। तत्कालीन इतिहास के प्रेमियों के लिए तो यह पुस्तक विशेष महत्व-पूर्ण होगी। घनश्यामदासजी के अपने पास विद्यमान सामग्री में से एक अंश के प्रकाशित करने के निश्चय का मैं स्वागत करता हूं।

महात्मा गांधी पत्र-व्यवहार में बड़े नियमित थे। वह पत्रों का उत्तर स्वयं देते या अपने सेक्रेटरी श्री महादेव देसाई के द्वारा दिलवाते या अपने

साप्ताहिक पत्रो के मार्फत देते। इस प्रकार वह देश के तथा वाहर के असख्य नर-नारियो के जीवन से सम्वन्ध वना रखते और उनकी विचारधारा को प्रभावित करते थे। मनुष्यो के सद्‌गुणो को परख लेने की उनमे एक विशेष शक्ति थी। परख लेने पर वह उन मनुष्यो का देशहित के निमित्त पूर्ण उपयोग करते थे। अपने जीते-जी उन्होने ऐसे अनेक आदमियो को गढा, जो उनकी अनेक योजनाओ से सहमत न होते हुए भी उनसे स्फूर्ति पाते और अपने-अपने क्षेत्र मे वहुमूल्य सेवाए करते रहे। घनश्यामदासजी की गणना इन्ही लोगो मे थी। यह नही कि वह महात्माजी से सदा सव विषयो मे सहमत रहे हो, तथापि एक सैनिक की भाति वह अपने नेता के आदेश का पालन करते थे। पुस्तक से पता चलेगा कि अनेक विपयो मे, विशेपत आर्थिक विपयो मे वापू से कभी-कभी उनका दृष्टिकोण भिन्न होते हुए भी वह उनके द्वारा हाथ मे लिये गए कामो मे सोलह आना योग देते थे। गाधीजी की राजनीतिक कार्य-योजना के सवध मे, अनेक अग्रेजो के सामने उन्होने अपने को गाधीजी के दृष्टिकोण का विश्वासी व्याख्याता सिद्ध किया। आगे के पृष्ठो से पता चलेगा कि किस प्रकार उन्होने स्वय वार-वार इग्लैड जाकर वहा के अधिकारी वर्ग को इस वात से पूर्ण परिचित रखा कि गाधीजी का दिमाग किस दिशा मे काम कर रहा है। उन्होने गाधीजी की ओर से अधिकार के साथ वोलने का कभी दावा नही किया, पर उनकी विचारधारा का उन्होने इतना अध्ययन और मनन किया था कि उन्होने गण्यमान्य व्यक्तियो को उसका मर्म समझाने का दायित्व स्वय ही ले लिया। स्वेच्छा से अपने ऊपर लिये हुए इस दायित्व को पूरा करने मे उन्हे निस्सदेह असाधारण सफलता प्राप्त हुई, घनश्यामदासजी गाधीजी का मानस ठीक समझ पाते थे। राजनीतिक विपयो के सिवा अन्य विपयो के सवध मे भी यह वात घटती है। घनश्यामदासजी उन गिने-चुने व्यक्तियो मे से थे जो गाधीजी के लिए एक सतान के समान थे। उनकी शिक्षा उनमे अकुरित होकर फलित हुई। सवध घनिष्ठ होने के साथ-साथ यह प्रभाव वढता गया। दोनो का यह अतरग सवध वत्तीस वर्प तक वना रहा। मुझे उनका यह पारस्परिक सवध वर्पो तक देखने का गौरव प्राप्त है। क्योकि गाधीजी के जितना ही अतरग सवध उनका मेरे साथ भी था।

गाधीजी की अनेक शिक्षाओ मे से एक शिक्षा थी कि लक्ष्मी के कृपा-पात्रो को अपने आपको धरोहरधारी और अपनी सम्पत्ति को दूसरो के उपकार के निमित्त एक धरोहर की भाति समझना चाहिए। विडलो ने यह शिक्षा भलीभाति हृदयगम की है। देश के कोने-कोने मे विखरी हुई अनेक शिक्षण-सस्थाए, मन्दिर, धर्मशालाए और अस्पताल इसके साक्षी है। पिलानी

इनमे शीर्ष स्थानीय हैं। जैसे उन्होने खूब कमाया है, वैसे ही भाति-भाति के सत्कार्यो मे उदारता-पूर्वक मुक्तहस्त होकर खर्च भी किया है। अपनी स्थापित-सचालित सस्थाओके सिवा ऐसी भी अनगिनत सस्थाए है, जो इनके दान से लाभान्वित हुई है। कहना तो यह उचित होगा कि ऐसा कदाचित् ही कोई सत्कार्य होगा, जिसके लिए माग करने पर उन्होने उसपर ध्यान न दिया हो। स्वातत्र्यसग्राम के सबध मे भी यही बात थी। उसमे भी बापू और अन्य राजनीतिक नेताओ के मार्फत मुक्तहस्त होकर निस्सकोच भाव से उन्होने धन-दान दिया। गाधीजी के कोई भी सत्कार्य, कोई भी अच्छी योजना हाथमे लेने पर बिडलो की उदारता का उपयोग हुआ। इन पृष्ठो मे यह सब भलीभाति देखने को मिलेगा। वास्तव मे आवश्यकता होने पर गाधीजी कभी इनके साधनो का उपयोग करते न हिचकते थे, न ये अपने साधन उनकी सेवा मे अर्पित करने मे सकोच करते थे।

इन पृष्ठो मे यह भी देखने को मिलेगा कि किस प्रकार भाति-भाति के कामो से घिरे रहने पर भी गाधीजी बिडलो मे सबध रखने वाली ज़रा-ज़रा-सी बातमें व्यक्तिगत रूप से दिलचस्पी लेते थे—ठीक वैसे ही, जैसे कोई पिता अपनी सतान के कार्यकलाप मे रस लेता है। उनकी दिलचस्पी यहा तक बढ गई थी कि वह घनश्यामदासजी जैसे व्यक्ति को, जिन्हे डाक्टरी मशवरे का कोई अभाव न था, चिकित्सा-सबधी नुस्खे बताते, क्योकि उन्हें पूरा भरोसा था कि उनकी नसीहत श्रद्धापूर्वक सुनी जाकर उसपर अमल किया जायगा।

अतएव इस पुस्तक को प्रकाशित होते देखकर मुझे प्रसन्नता होती है। मुझे विश्वास है कि यह पुस्तक गाधीजी के जीवन और उनकी विचारधारा का अध्ययन करनेवाले प्रत्येक विद्यार्थी के लिए ही नही, उन इतिहासकारो के लिए भी उपयोगी और सहायक सिद्ध होगी, जो उन घटनाओ मे रुचि रखते हो, जिनकी इति-श्री भारत में स्वतत्रता स्थापन के रूप मे हुई।

—राजेन्द्रप्रसाद

राष्ट्रपति भवन
नई दिल्ली

लेखक गाधीजी के साथ

प्रास्ताविक

इस पुस्तक का नाम क्या रखा जाय, यह मेरे सामने एक बडी समस्या थी। एक सुझाव था कि "गांधीजी के साथ मेरा पत्र-व्यवहार" नाम रखा जाय। पर मुझे प्रस्ताव पसन्द नही आया। यह सही है कि पुस्तक मे गांधीजी व उनके सेक्रेटरी महादेव देसाई के साथ मेरे पत्र-व्यवहार का विशेष रूप से सग्रह है। गांधीजी को जब स्वय लिखने का अवकाश नही मिलता था तब महादेवभाई उनके निर्देश से मुझे समय-समय पर लिखते रहते थे और उनके क्षेप की आवश्यक घटनाओ से परिचित करते रहते थे। पर यदि पत्र-व्यवहार तक ही इस पुस्तक को मैं सीमित रखता तभी यह नाम सही होता। जो चित्र मै पाठको के सामने रखना चाहता था वह तो इससे कुछ भिन्न था। मैने जान-बूझकर अनेक सस्मरणो और भेटो का भी इसमे समावेश कर लिया है, जो समय-समय पर वाइसरायो, कूटनीतिज्ञो और अन्य लोगो के साथ मैने की थी। यदि मै इन सब विवरणो को छोड देता तो यह पुस्तक अधूरी रह जाती। इनके सिवाय इस पुस्तक मे मैने कई राजनीतिज्ञो से प्राप्त कुछ ऐसे पत्र भी दे दिये है, जिन्हे विषय-प्रतिपादन की दृष्टि से मै आवश्यक समझता हू। इसलिए मैने "बापू की छत्रछाया मे—कुछ व्यक्तिगत ससम-रण" यही नाम रखना उचित समझा। मुझे लगता है कि यह नाम सार्थक होगा, क्योकि अपने सब कामो मे मैने अपने को, बापू के सान्निध्य मे और उनकी छत्रछाया मे हूँ, ऐसा माना है।

गांधीजी सन् १९१५ के अत मे दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटे थे। तबसे लेकर हत्यारे की गोली से मारे जाने के दिन तक

वे भारत का एक प्रकार से मथन करते रहे। प्राय रोज-रोज ही उन्होने इतिहास का निर्माण किया। नये विचार, नई अभिलाषाए और नये स्वप्न उन्होने जनता के सामने रक्खे। जव मथन हुआ तो कुछ मक्खन भी ऊपर आने लगा और साथ-साथ मे थोडा मैल भी तैरने लगा। गाधीजी हमारे वीच से अव चले गये, किन्तु इस मथन-क्रम को वे जो गति दे गये है, उसमे आज भी कोई शिथिलता नही आई है। इस मथन मे हमे शुद्ध ताजा मक्खन मिलेगा या मैल-मिश्रित घी, या केवल मैल ही पल्ले पडेगा, इसकी भविष्य-वाणी करना मेरे वूते के वाहर की वात है। अत मे तो यह सव-कुछ हमारे लोक-समाज पर ही निर्भर है।

यह मेरे लिए कठिन नही था कि पत्र-व्यवहार तथा अन्य सामग्री के आधार पर मै एक ऐसी रचना कर डालू, जो पाठको को एक क्रम-बद्ध चित्र दे दे। पर यह कार्य मेरा नही था। यह तो इतिहास-लेखको का काम है। मैने तो जैसी सामग्री मेरे पास थी उसको उसी अनगढ रूप मे ही प्रस्तुत करके सतोप कर लिया है। इसमे कुछ ऐसे विवरण भी है, जो अबतक अज्ञात थे और अव प्रकाश मे आकर भारत के राजनीतिक इतिहास की शृखला मे एक नई कडी जोडने मे सहायक होगे। भविष्य के इतिहासकार वर्तमान युग का चित्रण करने जब बैठेगे तो अवश्य ही उन्हे इस पुस्तक मे कुछ नई सामग्री मिलेगी, जिसके सहयोग से वे अपने चित्र मे कुछ नये रग भर सकेगे। इस विवरण मे तिथि की शृखला वीच-वीच मे टूटी हुई दिखाई देती है, उसका भी कारण है। गाधीजी द्वारा लिखित और उनके निर्देश से महादेवभाई द्वारा लिखे गये सव पत्रो को मैने अत्यत सावधानी से सुरक्षित रखा। महादेवभाई तथा गाधीजी के अन्य सेक्रेटरियो द्वारा लिखे गये पत्रो को भी मै गाधीजी के ही पत्र मानता था, क्योकि वे सव उनके निर्देश से लिखे जाते थे, इसलिए मैने

उन्हे सुरक्षित रखा। पर जो पत्र मैने उन्हे लिखे, दुर्भाग्यवश उन्हे मै सभालकर नही रख सका। मुझे इस बात का दुःख है कि समय-समय पर उनके साथ हुई अपनी चर्चा का भी कोई विवरण मैने नही रखा। पुस्तक मोटी हो जाने और उसकी कीमत बढ जाने के डर से गाधीजी के सभी पत्रो का भी मैने इसमे समावेश नही किया है। उन्ही पत्रो को इस पुस्तक मे मैने स्थान दिया है, जो मेरी दृष्टि मे महत्वपूर्ण या ज्ञानवर्द्धक थे। कही-कही शृखला की कडिया टूटी है, उसका और भी एक कारण है। जब-जब मै स्वय गाधीजी के साथ होता था उस समय कोई पत्र-व्यवहार हो नही सकता था। जहा अधिक दिनो का अतर पड गया है, जैसे कि एक बार सन् १९३१ मे और १९४२ या १९४४ के बीच, उसका यह कारण था कि गाधीजी उस समय जेल मे थे और उनके साथ पत्र-व्यवहार उस जमाने मे सम्भव नही था। इसके सिवा बहुत से ऐसे कागज-पत्र भी थे जो कि मुझे महादेवभाई से मिले थे। उन्होने उन कागजो की अपने कई पत्रो मे चर्चा भी की है, पर दुर्भाग्यवश इस तरह की सारी-की-सारी सामग्री उपलब्ध नही है। इसलिए कुछ अशो मे यह कहा जा सकता है कि यह पुस्तक अधूरी है। किन्तु अवलोकन करने से पता लग जाता है कि इसके कारण कोई ज्यादा क्रम-भग नही हुआ है। इतिहासकार को घटनाओ की कडियॉ जोडने मे, मेरा विश्वास है, कोई कठिनाई नही होगी। जहा शृखला टूटी भी है वहा अन्य सामग्री इतनी स्पष्ट है कि वह उस कमी को पूरा कर देती है।

गाधीजी के साथ मेरी पहली मुलाकात सन् १९१६ मे हुई थी। तब वह दक्षिण अफ्रीका से लौटने के कुछ दिन बाद कलकत्ता आये थे। उस दिन हमारा जो सम्पर्क स्थापित हुआ, वह पूरे ३२ वर्ष तक, अर्थात् उस दिन तक बना रहा जिस दिन दिल्ली मे मेरे ही निवास-स्थान पर उनकी मृत्यु हुई।

मै उनके सम्पर्क मे किस प्रकार आया ? मेरे जीवन की इस सौभाग्यपूर्ण घटना का एकमात्र श्रेय प्रारब्ध को ही मिलना चाहिए, जिसका रहस्यमय हाथ भीतर-ही-भीतर अपना काम करता रहता है। मेरी कोई राजनीतिक पृष्ठभूमि नही थी, इसलिए मै इस योग्य कहाँ था कि किसी विश्वविख्यात व्यक्ति की दृष्टि मे आ पाता। मेरा जन्म सन् १८९४ मे एक गाव मे हुआ था, जिसकी जनसख्या मुश्किल से तीन हजार रही होगी। रेल, पक्की सडक या डाकघर के जरिये बाहरी दुनिया से सम्पर्क का कोई आधुनिक साधन उपलब्ध न होने के कारण हमारा गाँव राजनीतिक हलचल से एक प्रकार से बिलकुल अलग-सा था। यात्रा के साधन ऊट घोडे या बैलो द्वारा चलनेवाले रथ थे। बैलो द्वारा चलनेवाले रथ विलास की वस्तु थे और साधारणत सम्पन्न लोगो द्वारा महिलाओ और अपाहिजो के लिए रखे जाते थे। घोडा दुर्लभ जानवर था और अधिकतर भूस्वामियो द्वारा उसका उपयोग किया जाता था। हमारे परिवार मे तो बहुत अच्छे ऊँट थे और बाद मे हमारे पास बैलो-वाला एक रथ भी हो गया। किन्तु ऊट ही सदा यातायात का सबसे अधिक उपयोगी और लोकप्रिय माध्यम रहा। आजकल ऊट पर लम्बी यात्रा की सम्भावना को लोग कोई उत्साह के साथ नही देखते है। किन्तु अपनी सहन-शक्ति, धीरज और भोलेपन के कारण इस पशु ने मुझे सदा आकर्षित किया। मुझे याद है कि जब एक बार मुझे लगातार छह दिनो तक ऊट की पीठ पर यात्रा करनी पडी थी तो कितना आनन्द आया था !

हमारे गाव मे कोई भी अखबारो के पीछे सिर नही खपाता था। दो-चार आदमी ही अखबार पढ पाते होगे और उन दिनो अखबार थे भी कहा ? देहात मे अग्रेजी पढना-लिखना कोई न जानता था। वहा कोई स्कूल भी नही था। बहुत कम लोग ही, शायद सौ मे एक, मामूली हिन्दी या उर्दू लिख-पढ सकते थे।

चार वर्ष की आयु मे मुझे पढाने को एक ऐसे अध्यापक रखे गये, जो लिखाई-पढाई की अपेक्षा हिसाव अधिक जानते थे। इस प्रकार मेरी शिक्षा का आरम्भ अको के साथ हुआ—जोड, वाकी, गुणा, भाग आदि। नौ वर्ष की आयु मे मैने थोडा-वहुत लिखना-पढना सीख लिया। कुछ अग्रेजी भी आ गई, किन्तु मेरी स्कूली शिक्षा का अन्त प्यारेचरण सरकार द्वारा लिखित अग्रेजी की पहली पुस्तक (फर्स्ट वुक ऑव रीडिग) के साथ ही हो गया। उस समय मै ग्यारह वर्ष का था।

मेरे परदादा एक व्यापारी के यहाँ दस रु० मासिक पर मैनेजरी का काम करते थे। उनकी मृत्यु हो जाने पर मेरे दादाजी ने अठारह वर्ष की आयु मे अपना निजी व्यापार चलाने का निश्चय किया और किस्मत आजमाने वम्वई चले गये। वाद मे मेरे पिताजी ने काम-काज वढाया और जव मेरा जन्म हुआ, उस समय तक हम लोग काफी सम्पन्न समझे जाने लगे थे। हमारे पैतीस वर्ष पुराने कारवार की जड उस समय तक अच्छी तरह जम चुकी थी। इसलिए जव मेरे तथाकथित स्कूली जीवन का अन्त हुआ तो मुझसे खान्दानी कारवार मे हाथ वटाने को कहा गया और वारह वर्ष की उम्र मे ही मै उसमे लग गया। पर मुझे विद्या से लगन थी, इसलिए स्कूल छोडने के वाद भी मै अपनी शिक्षा स्वय चलाता रहा। न मालूम क्यो, मुझे किसी अध्यापक द्वारा पढने से चिढ थी। इसलिए स्कूल छोडने के वाद पुस्तको और अखवारो के अलावा एक शब्दकोष और कापीवुक ही मेरे मुख्य अध्यापक रहे। इसी ढग से मैने अग्रेजी, सस्कृत, एक-दो दूसरी भारतीय भाषाए, इतिहास और अर्थशास्त्र सीखा और काफी जीवनिया तथा यात्राओ के विवरण भी पढ डाले। मेरा यह मर्ज आज भी ज्यो-का-त्यो वना हुआ है।

सम्भव है, इस पठन-पाठन द्वारा ही मुझे देश की राजनीतिक स्वतत्रता के लिए काम करने और उस समय के राज-

नीतिक नेताओ से सम्पर्क स्थापित करने का लोभ पदा हुआ। उन दिनो रूस-जापान युद्ध से एशियाई प्रजा मे एक जोश लहराने लगा था। उससे भारत भी बचा न रहा। एक बालक के रूप मे मेरी सहानुभूति सोलह आने जापान के साथ थी और भारत को स्वतत्र देखने की लालसा मेरे मन को उद्वेलित करने लगी थी। किन्तु, जैसा कि मै कह चुका हू, हमारे परिवार, गाव या जाति मे किसी प्रकार की राजनीतिक पृष्ठभूमि नही थी, इसलिए राजनीति के प्रति मेरी इस रुचि को मेरे आसपास वालो ने कुछ अधिक पसन्द नही किया। पर यह सब मुझे गाधीजी की ओर खीच ले जाने को काफी नही था, इसलिए मेरा अब भी यही विश्वास है कि कृपालु प्रारब्ध ही मुझे उनके पास ले गया।

सोलह वर्ष की आयु मे मैने दलाली का अपना एक स्वतत्र धधा शुरू कर दिया और इस प्रकार मै अग्रेजो के सम्पर्क मे आने लगा। वे मेरे सरक्षक भी थे और मुझे काम भी देते थे। उनके सम्पर्क मे आने पर मैने देखा कि जहा वे अपने कामकाज के ढग मे, अपनी सगठन-सबधी क्षमता मे तथा कितने ही अन्य गुणो मे बेजोड है, वहा वे अपने जातीय दर्प को भी छिपा नही पाते है। उनके दफ्तरो मे जाने के लिए मुझे लिफ्ट का इस्तेमाल नही करने दिया जाता था, न उनसे मिलने के लिए प्रतीक्षा करते समय उनकी बेचो पर ही बैठने दिया जाता था। इस प्रकार के तिरस्कार से मै तिलमिला उठता था और सच पूछिये तो इसीने मेरे भीतर राजनीतिक अभिरुचि जागृत की, जिसे मैने सन् १९१२ से लेकर आजतक उसी प्रकार बनाये रखा है। लोकमान्य बाल गगाधर तिलक और गोखले को छोडकर ऐसा कोई राजनीतिक नेता नही हुआ, जिससे मेरा सम्पर्क न रहा हो। न देश मे ऐसा कोई राजनीतिक आन्दोलन ही हुआ, जिसमे मैने गहरी दिलचस्पी न ली हो और जिसमे मैने अपने ढग से सहायता करने की चेष्टा न की हो।

उन दिनों के आतंकवादियों का साथ करने के कारण एक बार मैं बड़ी विपत्ति में पड़ गया और लगभग तीन महीने तक मुझे छिपकर रहना पड़ा। कुछ कृपालु मित्रों के हस्तक्षेप ने मुझे जेल जाने से बचा लिया। फिर भी मैं यह तो कह ही दूं कि आतंकवाद के लिए मेरे मन में कभी कोई गहरी रुचि नहीं रही और उनके जो कुछ भी अणु मुझमें शेष रह गये थे वे गांधीजी के सम्पर्क में आने के बाद से तो बिलकुल ही नष्ट हो गये।

ऐसी पृष्ठभूमि के कारण मेरा गांधीजी की ओर आकर्षित होना स्वाभाविक ही था। मैंने आरम्भ उनके आलोचक की हैसियत से किया और अंत में उनका अनन्य भक्त बन गया। फिर भी यह कहना बिल्कुल गलत होगा कि मैं सब बातों में गांधीजी से सहमत था। सच तो यह है कि अधिकांश मामलों में मैं अपना स्वतंत्र विचार रखता था। जहां तक रहने-सहने के ढंग का सवाल था, मेरे और उनके बीच बहुत कम समानता थी। गांधीजी संत पुरुष थे। उन्होंने सुख-ऐश्वर्य के जीवन का परित्याग कर दिया था। उनकी प्रधान निष्ठा धर्म में थी और उनकी यह निष्ठा ही मुझे बरबस उनकी ओर खींच ले गई। पर अर्थशास्त्र के सम्बन्ध में उनका दृष्टि-कोण मेरे दृष्टिकोण से भिन्न था। उनकी आस्था चरखा-घानी जैसे छोटे-छोटे घरेलू उद्योगों में थी, इधर मैं काफी ऐश्वर्यपूर्ण जीवन व्यतीत करता था और बड़े-बड़े उद्योगों की सहायता से देश के औद्योगीकरण में विश्वास रखता था। तो फिर मेरे और उनके बीच इतनी निकटता का सम्बन्ध कैसे स्थापित हुआ? क्या कारण था कि मेरे प्रति उनका विश्वास और स्नेह अंत तक बना रहा? इसका श्रेय तो मैं मुख्यत उनकी महत्ता और उदारता को ही दूंगा। इतना आकर्षण, इतना स्नेह, मित्रों के प्रति इतनी प्रीति मैंने बहुत कम आदमियों में पाई। इस संसार में संतों का पैदा होना

कोई वहुत वडी वात नही है और राजनीतिक नेता भी ढेरो आते-जाते ही रहते है, पर सच्चे मानव इस पृथिवी पर वहुतायत से नही पाये जाते। गाधीजी एक महामानव थे—एक ऐसे दुर्लभ प्राणी, जो विश्व मे शताव्दियो के वाद पैदा हुआ करते है। पर लोगो को एक मानव के रूप मे गाधीजी के सम्वन्ध मे वहुत कम जानकारी है। यही कारण था कि वहुत-सी समस्याओ पर उनसे सहमत न होते हुए भी मैने उनकी इच्छाओ का पालन करने से कभी इन्कार नही किया और उन्होने भी न केवल मेरे विचार-स्वातत्र्य को ही सहन किया, वल्कि इसके लिए मुझसे और भी अधिक स्नेह किया—ऐसा स्नेह जो केवल एक पिता के द्वारा ही सम्भव है। इसलिए हमारे सम्वन्ध ने पारिवारिक स्नेह का रूप ले लिया था। मेरे प्रति उनका यह पितृ-सुलभ स्नेह उनके जीवन की अतिम घडियो तक ज्यो-का-त्यो वना रहा।

अतिम वार मुझे उनके शव के ही दर्शन हो पाये। यह प्रारव्ध की क्रूरता ही कही जायगी कि मै उनके जीवन के अतिम क्षणो मे उनके पास मौजूद न था। मै उनकी मृत्यु से दस घटे पहले ही उनसे अलग हुआ था। मुझे दिल्ली से लगभग एक सौ वीस मील दूर अपने गाव जाना पडा था, जहा मै एक प्रभावशाली मत्री महोदय को पिलानी की शिक्षा-सस्था दिखाने ले गया था। मै अपने घर से सवेरे सात वजे चला था और जाने से पहले गाधीजी के कमरे मे प्रणाम करने गया था, पर वह आराम कर रहे थे और गहरी नीद मे थे, इसलिए मैने उन्हे जगाया नही। दस घटे वाद पिलानी मे मेरा लडका मेरे पास दौडा आया और वोला कि रेडियो ने गाधीजी के गोली से मारे जाने की खवर सुनाई है। मुझे सहसा विश्वास नही हुआ। किन्तु भाग्य के आगे चारा ही क्या था।

तत्काल दिल्ली लौट आना सम्भव न था, क्योकि आज भी मेरे गाव तक न रेल गई है, न पक्की सडक। इसलिए मुझे

रातभर वही ठहरना पडा। पर नीद ठीक तरह नही आई और मैने सपना देखा कि मै अपने दिल्ली वाले मकान मे (जहाँ गाधीजी ठहरे हुए थे) लौट आया हू। वहा जैसे ही मे उनके कमरे मे घुसा, मैने देखा कि उनका शव भूमि पर पडा हुआ है। मेरे प्रवेश करते ही वह उठ बैठे और बोले, "आ गये, बहुत अच्छा हुआ। बडी खुशी की बात है। मुझे जो गोली मारी गई है, वह कोई एकाकी घटना नही है, इसके पीछे एक गहरा षड्यत्र है, किन्तु मुझे खुशी है कि उन्होने मेरा अन्त कर दिया। मेरा काम पूरा हो गया है, इसलिए मुझे अब इस ससार से विदा होते हुए क्लेश नही हो रहा है।" फिर हम दोनो ने कुछ देर तक बातचीत की, बाद को उन्होने अपनी घडी निकाल कर कहा, "अब मेरी अन्त्येष्टि का समय हो चला, लोग मुझे ले जाने के लिए आयेगे, इसलिए मै लेटा जा रहा हू।" यह कहकर वह फिर लेट गये और बिलकुल निश्चेष्ट हो गये। कैसा आश्चर्यजनक स्वप्न था वह! किन्तु शायद यह सब मेरे हृदय की प्रतिध्वनि-मात्र थी।

अगले दिन तडके ही दिल्ली लौटा और उस कमरे मे गया, जहा उनका शव रक्खा हुआ था। लाखो की भीड बिडला-भवन को घेरे खडी थी। वह शात और स्थिर लेटे हुए थे। उन्हे देखकर ऐसा लगता ही नही था कि उनके शरीर से प्राण निकल चुके है। मेरे लिए यही उनके अतिम दर्शन थे।

वर्षों पहले १६ जून, सन् १९४० को एक पत्र मे महादेव देसाई ने मुझे लिखा था कि उन्हे लार्ड लिनलिथगो के प्राइवेट सेक्रेटरी का एक पत्र मिला है, जिसमे लिखा है कि जर्मन रेडियो से यह खबर प्रसारित की गई है कि अग्रेजो के गुरगे गाधीजी की हत्या कराने की योजना कर रहे है। उसी पत्र मे यह भी आशका प्रकट की गई थी कि कौन जाने जर्मन गुरगे स्वय ही अग्रेजो के विरुद्ध प्रचार करने के लिए ऐसा कोई षड्यत्र रच रहे हो, इसलिए सतर्क रहना चाहिए। क्या गाधीजी यह पसन्द करेगे कि उनकी

रक्षा के लिए सादी पुलिस तैनात कर दी जाय ? वाइसराय महोदय को ऐसी व्यवस्था करने मे वडी प्रसन्नता होगी। महादेवभाई ने लिखा था कि उन्होने वाइसराय को यह उत्तर दे दिया है कि गाधीजी ऐसी कोई व्यवस्था नही चाहते, क्योकि वह बीसो वर्पो से हत्या की आशका का सामना करते आ रहे है और अनुभव ने उन्हे सिखा दिया है कि ईश्वर की इच्छा के विना एक पत्ता भी नही हिलता है, और न तो कोई हत्यारा किसी के जीवन की अवधि मे कमी ही कर सकता है, न कोई मित्र उसकी रक्षा ही कर सकता है। महादेवभाई ने लिखा था कि ये वापू के अपने शब्द है। सचमुच ही होनी लगभग आठ वर्प पहले से ही अपनी काली छाया डालने लगी थी। परतु उस होनी का प्रतिनिधि न कोई जर्मन था, न कोई अग्रेज, उनका हत्यारा एक भारतीय था—एक कट्टर हिन्दू। जब गाधीजी की वम से हत्या करने का प्रथम प्रयत्न निष्फल हुआ था तभी से भारत सरकार ने उनकी रक्षा के लिए कडा प्रवन्ध कर दिया था, यहा तक कि मेरे मकान के कोने-कोने मे सतरी और सफेदपोश पुलिस के हथियारबद सिपाही चक्कर लगाते दिखाई देते थे। यह अतिशय सतर्कता मुझे दु खदायी लगती थी।

सन् १९१६ मे तत्कालीन वाइसराय लार्ड हार्डिज काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का शिलान्यास करने बनारस गये हुए थे। इससे कुछ समय पूर्व जब उनका जलूस नई राजधानी मे प्रवेश कर रहा था तो उनपर एक वम फेका गया था। इसलिए वनारस मे उनकी रक्षा का कडा प्रबन्ध किया गया था। राइफलो और रिवालवरो से लैस पुलिस आसपास के तालावो तक पर तैनात कर दी गई थी। गाधीजी को यह तमाशा वेहूदा प्रतीत हुआ था और उन्होने खुले आम इस वात की आलोचना की थी कि वाइसराय का जीवन मृत्यु से भी वदतर है।

एक वार मैंने गाधीजी को उनके इन शब्दो की याद दिलाई और कहा, "क्या यह अशोभनीय नही है कि हमारी प्रार्थना-सभाए तक सगीनो के साये मे हो ? मुझे आपके जीवन की वडी चिन्ता है, पर उससे भी अधिक चिन्ता मुझे आपकी कीर्ति की है। आप जव स्वय ही जीवन भर इस प्रकार के प्रवन्धो से घृणा करते आये है तव क्या अव आप यह सव सहन कर लेगे ?" गाधीजी मेरी वात से सहमत हुए और वोले, "वल्लभभाई से पूछो, क्योकि आखिर यह सव इतजाम उसने ही तो किया है। मुझे यह सव पसन्द नही है, पर मै यह सव अपनी रक्षा के लिए नही, सरकार के नाम की खातिर सह रहा हू।" वाद मे मैंने सरदार से वातचीत की और, जैसी कि उनकी आदत थी, उन्होने सक्षेप मे उत्तर दिया, "तुम्हे चिन्ता क्यो ? तुम्हारा इन वातो से सरोकार नही है। जिम्मेदारी मेरी है। मेरा वस चले तो मै विडला-भवन मे घुसनेवाले एक-एक आदमी की तलाशी लू, पर वापू मुझे ऐसा करने नही देगे।" निष्ठुर नियति की यही इच्छा थी और महादेव के शब्दो मे—पर गाधीजी की भाषा मे – उन्हे कोई मित्र नही वचा सका। मै स्वय प्रार्थना-सभा मे अपनी कमर-पेटी मे पिस्तौल छिपा-कर जाया करता था और वापू की ओर वढनेवाले हर आदमी पर निगाह रखता था, पर यह सव मिथ्या गर्व मात्र था। 'ईश्वर की इच्छा के विना एक पत्ता भी नही हिलता है।'

इस घटना के लगभग दो वर्ष वाद एक दूसरा महान व्यक्ति इस ससार से उठ गया। इनके साथ भी मेरा उतना ही घनिष्ठ सम्वन्ध था। वह थे सरदार पटेल। वह हर वात मे महात्माजी के सवसे कट्टर अनुयायी थे, विशेषरूप से सयम के मामले मे। वह लौह पुरुष कहे जाते थे, पर उनकी वाहर से वज्र-जैसी दिखाई देनेवाली कठोरता के पीछे अतिशय कोमलता छिपी रहती थी। उनके भी अपने स्वतत्र विचार थे, फिर भी

प्रत्येक आन्दोलन मे, चाहे वह राजनीतिक हो, चाहे सामाजिक, उन्होने सदैव अपने गुरुदेव का अनुसरण किया। एकान्त मे वह उनसे लड-भिड लेते थे, परतु प्रकाश मे उनका अनुसरण करते थे। यह कुछ विचित्र-सी बात थी कि देश के अनेक महान व्यक्ति गाधीजी से मतभेद रखते हुए भी उनका अनुसरण करते थे, बहुधा आँख मूदकर। गाधीजी अपने आकर्षक व्यक्तित्व और मित्रो के प्रति वफादारी के बल पर ही इस प्रकार का असम्भव-सा चमत्कार दिखा सके थे। यही कारण था कि बहुत-सी बातो मे गाधीजी से सहमत न होते हुए भी सरदार प्राय सभी अवसरो पर उनका आख मूदकर अनुसरण करते रहे।

गाधीजी के मरने के बाद सरदार को कारोनरी थ्रामबोसिस (एक जटिल हृदय-रोग) हो गया। गाधीजी की मृत्यु से जो धक्का लगा, उससे उनका दिल टूट गया था। कोई साधारण कोटि का मनुष्य होता तो रो-धो कर अपने मन का उफान निकाल लेता, पर सरदार ने अपने शोक का प्रदर्शन नही किया, इसीलिए उनका हृदय शोक से जर्जर हो गया था। मुझपर उनका जादू उनकी मृत्यु से लगभग अट्ठाईस साल पहले चला था और उनके जीवन के अन्त तक हममे स्नेह का सम्बन्ध बना रहा।

यद्यपि सरदार की मृत्यु भी मेरे ही घर पर हुई, तथापि प्रारब्ध की क्रूरता का यह दूसरा उदाहरण है कि उनके अतिम क्षणो मे भी मै उनके पास मौजूद न था। अपनी मृत्यु से चार दिन पहले वह दिल्ली से बम्बई चले गये थे। उनके बहुत से मित्र, जिनमे कुछ मत्री भी थे, उन्हे विदा करने हवाई अड्डे पर गये थे। उन्होने कुर्सी पर बैठे-बैठे ही हवाई जहाज के द्वार से एक उदास मुस्कान के साथ सबको नमस्कार किया था। उन्हे भासित हो गया था कि जल्दी ही इस ससार से विदा लेनी है। मै भी जानता था कि वह शीघ्र ही अपनी महा-यात्रा के लिए प्रस्थान करने वाले है; किन्तु अपने मन

को इस भुलावे मे रखकर कि अन्त इतना निकट नही है, मै दिल्ली मे ही रह गया। चार दिन बाद ही वह चल बसे। सरदार की अतिम झाकी भी मुझे उनके शव की ही मिली।

महादेव देसाई की मृत्यु सन् १९४२ मे आगाखा महल मे हुई थी, जो उन दिनो बदीगृह बना दिया गया था। महादेवभाई भी मेरे एक अभिन्न मित्र थे। उन्होने अपने गुरुदेव की गोद मे ही शरीर-त्याग किया। उस समय उनके इष्ट-मित्र उनके पास नही थे। वह सबके ही प्यारे थे। यह ठीक है कि महात्माजी ने उन्हे बनाया था, पर यह कहना भी गलत न होगा कि कुछ सीमा तक महादेव ने भी महात्माजी को अपने साचे मे ढाला था। महादेव देसाई के व्यक्तित्व मे बडा आकर्षण था, बडी मोहिनी थी। वह बडे विद्वान थे और दूसरो से अपनी बात मनवाने की उनमे असाधारण क्षमता थी। जब कभी बापू किसी मामले मे हठ पकड लेते थे तो केवल सरदार और महादेव ही उस महान सकल्पी को दूसरी ओर मोड पाते थे। कितनी ही बार गाधीजी को महादेवभाई की बात माननी पडी, कभी उबल पडने के बाद, कभी खिलखिलाकर हॅसते-हॅसते।

आज यदि ये तीनो व्यक्ति जीवित होते और इतने स्वस्थ होते कि आगे पन्द्रह वर्ष और जीवित रह सकते तो भारत के इतिहास की रूपरेखा क्या होती, यह एक वृथा कल्पना है। मेरा तो विश्वास है कि मनुष्य अपना कार्य समाप्त करने के बाद ही इस ससार से विदा लेता है। हमारा शोक करना बेकार है। उत्तरदायित्व का भार अब आज की, और आगे आनेवाली, पीढियो पर है। सम्भव है, इन महापुरुषो की प्रेरणा का कुछ अश इन पृष्ठो के द्वारा उन पीढियो के हिस्से मे आ जाय।

१८ जुलाई, सन् १९३५ को मै लदन मे श्री बाल्डविन से मिला था। बातचीत के सिलसिले मे उन्होने निम्नलिखित बाते कही, जिन्हे मैने उसी समय नोट कर लिया था—

"प्रजातत्रीय शासन-प्रणाली त्रुटियो से सर्वथा मुक्त हो, ऐसी वात नही है। किन्तु अवतक की शासन-प्रणालियो मे वही सवसे अच्छी सिद्ध हुई है। भगवान को धन्यवाद है कि इस देश मे तानाशाही नही है। जन-हितकारी तानाशाही स्वत एक वहुत अच्छी चीज है, पर इस प्रकार की तानाशाही मे जनता को कुछ करना नही पडता, केवल चुपचाप वैठे रहना होता है, जो कि ठीक नही है। प्रजातत्र मे सवको काम करना पडता है,यही इस प्रणाली का सवसे अच्छा गुण है। भारतवर्ष मे भी यदि सव लोग काम करेगे तो यह प्रयोग सफल सिद्ध होगा। यह प्रयोग-मात्र है, यह समझ कर यदि सव लोग काम मे नही जुटेगे तो यह कभी सफल नही होगा। प्रजातत्रीय व्यवस्था मे समाज के कुछ लोग भले ही उत्पात करे, पर हमे इन इने-गिने लोगो को समाज का मापदण्ड नही वनाना चाहिए। काग्रेस को तो अपने वास्तविक स्वरूप को ध्यान मे रखकर इस वात को समझ लेना चाहिए कि उसे काफी वडे क्षेत्र मे देश की सेवा करने का अवसर मिल रहा है।"

१८ जुलाई, सन् १९३७ को, जव हमने प्रजातत्रीय सरकार वनाने का दायित्व सम्हाल लिया तो वापू ने मुझे लिखा था, "हमारी असली कठिनाई तो अव आरम्भ होती है। यह वात तो अच्छी है कि हमारा भविष्य अव हमारी शक्ति, सत्यवादिता, साहस, सकल्प, परिश्रमशीलता और अनुशासन पर निर्भर है। अन्त मे जो कुछ किया है वह ईश्वर के नाम से ईश्वर के भरोसे से। अच्छे होगे, अच्छे रहो। तुम्हे मे आशीर्वाद देता हू।"

श्री वाल्डविन ने कहा था, "प्रजातत्र मे सवको काम करना होता है।" वापू ने इस वात पर जोर दिया कि हमारा भविष्य हमारी शक्ति, सत्यवादिता, साहस, सकल्प, परिश्रमशीलता और अनुशासन पर निर्भर है। दोनो ने एक ही वात भिन्न-भिन्न ढग से कही और ये दोनो ही हमारे लिए मार्गदर्शक सिद्ध होने चाहिए।

गांधीजी की छत्रछाया में

: १ :

मेरा सामाजिक बहिष्कार

इस पुस्तक मे मैंने इस बात की काफी चर्चा की है कि लोगो से जान-पहचान करने और व्यक्तिगत सम्पर्क करने का क्या महत्व है। इसमे मैंने अपनी फाइलो मे सुरक्षित उन पत्रो का सकलन किया है, जो मेरे और दूसरे लोगो के बीच पिछले पच्चीस वर्षो मे या उससे भी कुछ अधिक समय से जाते-आते रहे है। इसमे वे पत्रादि भी सग्रहीत किये गए है, जो गाधीजी तथा दूसरे लोगो ने मुझे राष्ट्र के इस सकटकाल मे भेजे थे। हम भारतवासी स्वभाव से ही भावुक होते है। हम मित्रता से पिघलते है, प्रेम और सहानुभूति से द्रवित हो जाते है और करुणा की अनुभूति करते है। हम घृणा करना भी जानते है, परतु यह घृणा साधारण तौर पर किसी एक व्यक्ति के प्रति नही, बल्कि व्यक्तियो के समूहो और उनकी कार्य-प्रणालियो के विरुद्ध होती है। यदि कभी वह किसी व्यक्ति विशेप के प्रति होती भी है तो अक्सर ऐसे व्यक्ति के प्रति होती है जिसके साथ हमारी जान-पहचान या साक्षात्कार नही होता है या जिसका नाम किवदती ने हमारे लिए घृणास्पद बना दिया है। सम्पर्क से सत्य का पता चल जाता है, कभी-कभी तो बहुत ही अप्रिय सत्य का। हस माना गया व्यक्ति बगुला निकल आता है। स्वर्गीय महादेव देसाई ने अपने एक मर्मस्पर्शी पत्र मे उन साथियो की करतूतो

का जिक्र किया है, जिन्होने राष्ट्रीय हित के लिए पहले तो अपना पेशा छोड दिया, पर जिन्हे बाद मे अपना पेट भरने के लिए बाध्य होकर तरह-तरह के हथकडे अपनाने पडे। उस पत्र मे महादेव देसाई ने चेतावनी दी थी कि भविष्य मे भी ऐसा सकट उपस्थित हो सकता है। लेकिन,जैसा कि मेरी यह कहानी बतायेगी, लोगो के अधिक निकट सम्पर्क मे आने से हमे उनकी जिन अच्छाइयो का पता चलता है उनका पलडा कुल मिलाकर उनकी बुराइयो से कही भारी होता है। बुद्धिमानो ने तो 'अपने को पहचानो' के सिद्धान्त-वाक्य को सर्वोपरि स्थान दिया है। उसके बाद शायद 'एक-दूसरे को पहचानो' का नम्बर है, और तीसरा नम्बर है'तुम्हारे साथ जैसा व्यवहार किया जाय वैसा ही तुम औरो के साथ करो' के सिद्धात-वाक्य का। इन सभी कामो के लिए व्यक्तिगत सम्पर्क जरूरी है। हा, उन लोगो की बात दूसरी है, जो सिर्फ एकात जीवन व्यतीत करते-करते ही मर जाते है। पर हममे से अधिकाश के लिए तो यह सम्भव नही है।

अधिकाश देशवासियो की तरह मुझपर भी गाधीजी का गहरा प्रभाव पडा है। इसलिए मै भारत के स्वतत्र होने के दिन की बडी उत्सुकता के साथ प्रतीक्षा करता था। पर साथ ही जब अग्रेजो और उनकी पार्लमेंट ने यह घोषणा की कि भारत को स्वतत्र करना उनका भी लक्ष्य है तो मैने उनकी नेकनीयती पर कभी सदेह नही किया। अपने कार्यकलाप के प्रारम्भिक युग मे गाधीजी का भी ऐसा विश्वास था, पर रौलट-रिपोर्ट ने और उसके फलस्वरूप बने हुए कानून ने, जिसे वास्तव मे कभी अमल मे नही लाया गया, इस विश्वास की नीव खोखली कर दी। राजनीति के साथ मेरा जो कुछ भी सम्बन्ध रहा है, वह उसके आर्थिक क्षेत्र मे ही रहा है, लेकिन मै भारत मे रहने वाले अग्रेजो के मन मे गाधीजी के उच्च उद्देश्यो के बारे मे अविश्वास की बढती हुई भावना को, और साथ ही भारतवासियो

के मन मे भारत-प्रवासी अग्रेजो के प्रति ही नही, बल्कि अग्रेज कूटनीतिज्ञो और ब्रिटिश पार्लमेट तक के प्रति अविश्वास की जबरदस्त भावना को रोकने मे सचेप्ट रहा।

एक हिन्दू के नाते मेरा जो भावना थी उसके कारण मेरे जीवन पर गाधीजी का प्रभाव सबसे अधिक था। मेरा जन्म एक ऐसे व्यापारी परिवार मे हुआ है, जो सदा से सनातनधर्म की परम्परा का पालन करता आया है। मेरे दादा ओर उन-जैसे दूसरे लोगो की तुलना इग्लैड और अमरीका के 'क्वेकरो' के साथ की जा सकती हे। 'क्वेकरो' की ही तरह उन्होने भी व्यापार मे खूब धन कमाया, साथ ही उन्होने अच्छे कामो मे खुले हाथ खर्च करना अपना कर्त्तव्य समझा। 'क्वेकरो' की तरह ही वे भी कट्टरपथी नही थे, अर्थात् वे जात-पात के किसी कठोर बधन मे जकडे हुए नही थे। 'बिडला एजूकेशन ट्रस्ट' के द्वारा महिलाओ के उत्थान-कार्य को बडी प्रेरणा मिली है। गाधीजी हरिजनो के हितो के जबरदस्त समर्थक थे। ट्रस्ट ने इन हरिजनो को अन्य वर्गो के लोगो की बराबरी के दर्जे के पेशो के लिए तैयार करने मे भी बडा काम किया है। लेकिन यहा मै 'बिडला एजूकेशन ट्रस्ट, के कार्य के बारे मे कुछ कहने नही बैठा हू। मेरे कहने का अभिप्राय तो यही है कि गाधीजी का मुझपर जो प्रभाव पडा ह वह उनके एक शक्तिशाली राजनीतिक नेता होने के कारण उतना नही पडा, जितना कि उनकी धर्मपरायणता, उनकी नेकनीयती और उनकी सत्य की खोज करने की प्रवृत्ति के कारण पडा। अक्सर मै उनके तर्को को नही समझ पाता था और कभी-कभी मै उनसे असहमत भी हो जाता था, लेकिन मुझे यह विश्वास सदा बना रहता था कि वह जो कुछ कहते या करते हे वह अवश्य ही ठीक होगा, मै उनका अभिप्राय न समझा होऊ, यह बात दूसरी हे। उन्होने मुझसे जितना भी रुपया मागा (और वह कहा करते थे कि जिन कामो मे वह लगे हुए है, उनकी खातिर उनका भिक्षा-पात्र सदैव आगे

बढा रहता है) इस विश्वास के साथ मागा कि उन्हे वह रकम अवश्य मिल जायगी, क्योकि उनके लिए मेरा सर्वस्व हाजिर था। पर उन्होने तानाशाही कभी नही अपनाई। वह तो स्वभाव से ही विनयशील थे। इतना ही नही, जब कभी मैं उनकी बातो को समझ नही पाता था और अपने मन की बात कह देता था तो वह मेरी आलोचना को रत्ती भर भी नाराज हुए विना ग्रहण कर लेते थे, जैसा कि हमारे पत्र-व्यवहार से जाहिर होगा। उनका यह कहना कि वह अपने दोस्तो को अपना पथ-प्रदर्शक मानते है, न तो उनकी कोरी नम्रता ही थी, न दूसरो के मनोभावो को ठेस न पहुचाने की इच्छा ही, वह सचमुच ही उनकी सलाह मानने को तैयार रहते थे, वशर्तेकि वह सलाह उन्हे उस अतिम सत्य की खोज से न डिगाए—उस चिरतन सत्य की खोज से, जो हम सबका सृजन करता है ।

गाधीजी ने अपनी 'आत्मकथा' सन् १९२४ मे समाप्त की। वस, तभी से मैंने उनके और दूसरे लोगो के साथ अपने पत्र-व्यवहार को सुरक्षित रखना आरम्भ किया। मै बडे कष्ट मे था, इसलिए स्वभावतया मै नसीहत के लिए बापू की शरण मे आया। मारवाडी समाज रूढिवादी है ही। उसने हमारे परिवार की आधुनिकता के कारण हमारा सामाजिक बहिष्कार आरम्भ कर दिया था। इससे मेरे मन मे बडा रोष भरा हुआ था और मै गाधीजी की अहिसा की नीति का पालन करने और यह सबकुछ चुपचाप सहन करते जाने को तैयार नही था। मै गाधीजी को लिख भी चुका था कि वह विरोधियो के साथ पेश आने के मामले मे जरूरत से ज्यादा नम्रता और विश्वास से काम लेते है और जिन्हे वह हस समझते है उनमे से कुछ तो बगुले मात्र है। इसके उत्तर मे उन्होने लिखा, "मै किसी पर भी आवश्यकता से अधिक विश्वास नही करता हू। पर जब दोनो पक्ष दोषी होते है तव यह निश्चय करना कठिन हो जाता है कि एक का दोष दूसरे के दोष से कितना अधिक है। इसलिए मैंने एक सीधीसादी

युक्ति सोच ली है—वुरा करने वाले के साथ भी नेकी ही करो।" और जव मैंने अपनी विरादरी के अवकार मे पडे पोगा-पथियो के विरुद्ध दिल का गुवार निकाला तो गाधीजी ने आश्वासन देकर मुझे शात किया। उनके वे आश्वासन अव सच्चे सिद्ध हो चुके हैं। उन्होने लिखा

जुहू, वम्वई
१३-५-२४

भाई श्रीयुत् घनश्यामदास,

आपका पत्र मुझको मिला है।

मेरा विश्वास है कि यदि जातिवालो के विरोव आप वरदाश्त कर सकेगे तो आखिर में फल अच्छा ही होगा। हम सवमे दैवी और आसुरी प्रकृति कार्य कर रही है। इसलिए थोडी वहुत अशाति अवश्य रहेगी। उससे डरने की कुछ आवश्यकता नही है। प्रयत्नपूर्वक निग्रह करते रहने से आसुरी प्रकृति का नाश हो सकता है। परतु दिल मे पूरा विश्वास होना चाहिए कि दैवी प्रकृति को ही सहायता देना हमारा कर्तव्य है। मुझे फिक्र आपके पिता और वन्वु के लिये है। यदि वे आपके पक्ष का सगठन कर सग्राम चाहते है और आप उनको शाति-मार्ग की ओर न ला सकें तो आपके ही कुटुम्ब में दो विरोधी प्रवृत्ति होने का सम्भव है। ऐसे मौके पर धर्म-सकट खडा होता है। मैं तो अवश्य उनसे भी प्रार्थना करूगा कि आपके ही हाथ से जाति में दो गिरोह पैदा न हो।

जिस चीज को आपने अच्छी समझकर की है और जिसकी योग्यता के लिए आज भी आप लोगो के दिल में शका नही है, उसके लिए माफी मागना मैं हरगिज उचित नही समझूगा।

आपकी तरफ से मुझे ५,०००) रु० मिल गये है। 'यग इडिया', 'नवजीवन' के लिए आप उचित समझें, उतना द्रव्य भेज दें। करीव ५० नकल मुफ्त देने की आवश्यकता है।

आपका
मोहनदास गाधी

११ जून को मैंने गाधीजी को लिखा .

पिलानी
११ जून, १९२४

परम पूज्य महात्माजी,

आपके पत्र सदैव मुझे कुछ-न-कुछ नई शाति देते रहते है। यद्यपि दो गिरोह होगये है तथापि कुछ वहुत ज्यादा अविवेक से कार्य नही हो रहा है।

हालाकि हम लोगो ने इस मामले मे अवतक थोडा कष्ट सहन कर एक छोटा-सा स्वार्थ त्याग किया है, फिर भी जो पवित्रता ऐसे कार्यो मे होनी चाहिए वह हम लोग धारण नही कर सके है। कुछ धर्म-सकट भी है और कुछ कौटुम्बिक दौर्बल्य भी है। आप 'नवजीवन' मे सामाजिक विपयो पर कुछ लिखे तो लोगो का अत्यत उपकार भी हो सकता है।

स्वराजियो ने सिराजगज की कान्फ्रेन्स मे हिंसा की घोपणा कर दी है और अपनी अहिसा के पुराने बुरके को उतार कर फेक दिया है। अहिंसा के नाम से जो हिसा का नाटक खेला जा रहा था, उसका इस प्रकार अत हो गया। सभव है, आप अल्पसख्यक रह जाय, किन्तु जिस पवित्रता मे आपका काम होगा, उसकी ताकत कितनी वढी-चढी होगी, इसकी तो कल्पना भी मेरे लिए असम्भव-सी है।

आपने मुझे अहिसा का उपदेश दिया और मैने भी उसे विना शका के सुन लिया, किन्तु आपसे दूर होने के पश्चात मुझे फिर समय-समय पर शकाए होती है। इसमे तो मुझे रत्तीभर भी शका नही कि अहिसा एक उत्तम ध्येय है। किन्तु आप जैसे द्वद्व-विमुक्त पुरुप ससार की भलाई के लिए किसी मनुष्य का यदि वध कर दे तो क्या इसको हिंसा कहा जा सकता है? समझ मे तो ऐसा आता है कि निष्काम भाव से किया हुआ कर्म एक प्रकार से अकर्म ही है, किन्तु जो साधारण श्रेणी के मनुष्य द्वद्व से छूट नही गये है उनके हाथ से किया हुआ वध तो अवश्य हिंसा ही है। क्या ऐसी हिंसा के लिए विधि नही है? आपने तो स्वय ऐसा कहा है कि भाग जाने की अपेक्षा प्रहार करना कही अधिक अच्छा है। इस हालत मे लोगो को अतिम श्रेणी की शिक्षा देकर प्रहार करने से रोकना कहा तक फलदायक होगा, सो मेरी वुद्धि मे नही आता। आप लाठिया खाने का उपदेश भी देते है। लोग इस अतिम ध्येय को पहुचने का प्रयत्न कर सकते है या नही, इसमे मुझे पूरा शक है। मुझे तो ऐसा भय भी होता है कि कही ऐसा न हो कि लोग न तो उस उच्चतम अहिसा को प्राप्त कर सके और न अपनी वहू-वेटियो की रक्षा के लिए तलवार ही चलाय। हिंदूसभा एव आर्य-समाजी भाइयो ने जवसे तलवार चलाने के लिए लोगो को उत्तेजित किया तवसे मुसलमान लोग भी वार करने मे थोडा भय मानते है। मै जानता हू कि ऐसा होने से झगडा एक दफा वढता ही है, किन्तु इसी सग्राम मे झगडा तय न हो जायगा, यह भी तो नही माना जा सकता।

हम लोग ऐसा भी देख रहे है कि जिन हिन्दुओ को २०० वर्प पूर्व जवर-दस्ती मुसलमान वना लिया गया था वे यद्यपि उस समय मुसलमानो से रुष्ट हुए होगे, तथापि आज वे वैसे ही कट्टर मुसलमान है जैसे अरव, ईरान से आये

हुए आदिम मुसलमान। इससे तो यही सिद्ध हो जाता है कि हिंसात्मक उपायो से की गई शुद्धिया भी, सभव है, हिन्दुओ का बल बढाकर अन्त में प्रेम उपस्थित कर सके। यद्यपि आपने मुझसे ऐसा कहा था कि पशु बल से कोई सुधार स्थाई नहीं हो सकता, किन्तु जब यह देखता हू कि पशुबल से ही सती की घृणित प्रथा को ब्रिटिश सल्तनत ने बन्द कर दिया तो फिर यह समझ में नहीं आता कि पशुबल से अन्य सुधार भी क्यो नहीं किये जा सकते ? आप मुझसे कहते थे कि मुसलमानो के धर्म की वृद्धि तलवार से नहीं हुई। किन्तु पुराने लेखो के पढने से इतना तो पता लगता है कि मुसलमानो ने जबरदस्ती बहुतसे हिन्दुओ को मुसलमान बनाया था। सन् १८२६ ईस्वी मे लार्ड बैंटिक के ईस्ट इंडिया कपनी के डाइरेक्टरो के नाम लिखे हुए पत्र मे ऐसा स्पष्ट पता भी चलता है कि मुसलमान जबरन तबलीग करते थे।

पशुबल से अर्थात् प्रोटेक्टिव टैरिफ (रक्षात्मक चुगी) द्वारा खादी का प्रचार एव विदेशी माल का बायकाट भी किया जा सकता है। यदि गवर्नमेंट चाहे तो अनेक सामाजिक कुप्रथाओ को रोक सकती है। इस हालत मे मुझे यह भी शका होती है कि समाजी लोग पशुबल से शुद्धिया कर ले और हिन्दुओ का बल बढा लें तो इसमे कौनसी बुराई है? इसमें तो कोई शक नही कि जिन मुसलमानो को हम किसी भी प्रकार हिन्दू बना लेंगे वे हिन्दुओ को उतना ही प्यार करेंगे जितना कि हिन्दू एक हिन्दू से कर सकता है।

मै आपसे यह स्पष्ट कर देता हू कि मुझे यह हिंसात्मक नीति बिलकुल पसद नही है। अहिंसात्मक नीति मुझे प्रिय भी मालूम पडती है, किन्तु कभी-कभी मन में उठता है कि कही यह वृत्ति आलस्य के कारण तो नही है। मैंने आपको ये शकाए इसलिए लिखी है कि मुझे इनका माकूल जवाब मिले।

यदि आप यह कहें कि कार्य सिद्ध हो या असिद्ध, हमे कर्म की पवित्रता को नही बिगाडना चाहिए तब तो मेरे लिए कोई प्रश्न ही नही रह जाता। किन्तु जो लोग मुक्ति के मार्ग के पथिक नही है और मध्यम श्रेणी में विचरते है वे फलाफल को तौले बिना कोई उत्तम कार्य नही कर सकते। उन्हें 'आब्जेक्ट' (लक्ष्य) की चिन्ता है, न कि 'मैथड' (साधन) की, इसलिए आप कृपाकर मुझे यह लिखे कि यदि 'आब्जेक्ट' हिंसात्मक प्रणाली से प्राप्त कर सकें तो क्यो न किया जाय।

यह मै फिर निवेदन कर देता हू कि हिंसात्मक नीति मुझे दिन-दिन अप्रिय होती जा रही है। और यह पत्र मैंने केवल अपनी शकाओ के समाधान के लिए ही लिखा है।

विनीत

घनश्यामदास

२० जून, १९२४

भाई घनश्यामदासजी,

आपका पत्र मिला है।

कार्य सिद्ध हो या न हो तो भी हमे अहिंसक ही रहना चाहिये। यह सिद्धात को प्राकृत रूप से वताने का तरीका है। ठीक कहना यह है कि अहिंसा का फल शुभ ही है। ऐसा हमारा दृढ विश्वास है। इसलिये आज मिले या वर्षो के वाद, उससे हमे कुछ वास्ता नही है। २०० वर्ष के आगे जिनको जवरदस्ती इस्लाम मे लाया गया उससे इस्लाम को लाभ हो ही नही सकता, क्योकि इससे वलात्कार की नीति को स्थान मिला है। इसी तरह यदि किसी को वलात्कार से या फरेव से हिन्दू वनाया जावे तो उसमे हिन्दू धर्म के नाश की जड है। सामान्यत तात्कालिक फल देखकर हम धोखा खाते है। वडे समाज मे २०० वर्ष कोई चीज नही है।

कानून के जरिये से किसी की वुरी आदत छुडाना, इतनी-सी हिंसा पशुवल नही कहा जाय। कानून से शराव का धधा वन्द करना और इसीलिए शरावियो का शराव को छोडना वलात्कार नही है। यदि ऐसा कहा जाय कि शराव पीनेवालो को वेत लगाये जायगे तो अवश्य पशुवल माना जाय। शराव वेचने का हमारा कर्त्तव्य नही है।

आपका

मोहनदास

स्पष्ट ही इससे मुझे सतोष नही हुआ और, जैसा कि उनके दूसरे पत्र से प्रकट होता है, मैने वही शिकायत की होगी

२० जुलाई, १९२४

भाई श्री घनश्यामदास,

ईश्वर ने मुझको नीति-रक्षक दिये है, उन्हीमे से मै आपको समझता हूँ। मेरे कई वालक भी ऐसे है और कई वहने भी है और आप, जमनालालजी-जैसे प्रौढ भी है जो मुझको सम्पूर्ण पुरुष बनाना चाहते है। ऐसा समझते हुए आपके पत्र से मुझे दु ख कैसे हो सकता है। मै चाहता हू कि हर वक्त ऐसे ही आप मुझे सावधान बनाते रहे।

आपकी तीन फरियाद है। एक, मेरा स्वराज्य दल को तखत के आरोप से मुक्त रखना, दूसरा, सोहरावर्धी को प्रमाण-पत्र देना और तीसरा, सरोजनी देवी को सभापतित्व दिलाने की कोशिश करना।

प्रथम वात यह है कि मनुष्य का धर्म है कि साधना के पश्चात् जो अपने को सत्य लगे उसी चीज को कहना, भले जगत को वह भूल-सी प्रतीत हो।

इसके सिवा मनुष्य निर्भय नही वन सकता है। अपनी मोक्ष के सिवा और किसी चीज का मै पक्षपाती नही वन सकता हू, परन्तु यदि मोक्ष सत्य और अहिंसा के प्रतिकूल हो तो मुझे मोक्ष भी त्याज्य है। उक्त तीनो वातो मे मैने सत्य का ही सेवन किया है। आपने जो कुछ मुझे जुहू मे कहा था उसे स्मरण मे रखते हुए मैने जो कुछ भी कहा है वह कहा। जव मेरे नजदीक कुछ भी प्रमाण न हो तो मेरा धर्म है कि मै स्वराज्य दल को आरोप से मुक्त समझू। यदि आप मुझको प्रमाण दे देगे तो मै अवश्य निरीक्षण करूगा और आप उसका उपयोग करने देगे तो मै जाहिर मे भी कह दूगा, वरना मेरे दिल मे समझकर मै खामोश रहूगा।

सरोजनी देवी के लिये आप खामखा घवराते है। मेरा दृढ विश्वास है कि उन्होने भारतवर्ष की अच्छी सेवा की है और कर रही है। उनके सभापतित्व के लिये मैने कुछ प्रयत्न इस समय नही किया है। परतु मेरा विश्वास है कि इस पद के लिए वह योग्य है, यदि दूसरे जो आजतक हो गये है वे योग्य थे तो। उनके उत्साह पर सव कोई मुग्ध है। उनकी वीरता का मै साक्षी हू। मैने उनका चरित्र-दोष नही देखा है।

इन सव वातो का आप यह अर्थ न करे कि उनके या किसी के सव कार्यो को मै पसन्द करता हू।

जड चेतन गुणदोषमय, विश्व कीन्ह करतार।
सत हस गुण गहहिं पय, परिहरि वारि विकार॥

आपका
मोहनदास गाधी

पुनश्च

शरीर को अच्छा रखो तव तो मै काफी काम ले लूगा और कुछ दूगा। कम-से-कम पन्द्रह दिन दूध की आवश्यकता लगे तो अवश्य पिओ। फल खाओ। रोटी नुकसान करेगी। दही अवश्य लेना।

१५ सितम्वर, १९२४

भाई घनश्यामदासजी,

आपके पत्र मिलते रहते है। जवलपुर के मामले से मै घवराता नही हू। मैने जो आत्म-प्रायश्चित्त करने की मेरी शक्ति थी वह कर लिया, इसलिये मै शात रह सकता हू। फल का अधिकार हमको नही है, यह तो ईश्वर के ही हाथ मे है। मेरा स्वास्थ्य ठीक होने से कई अग्रगण्य नेताओ को साथ लेकर दौरा करने का मेरा इरादा तो है ही, सवसे पहले मै कोहाट जाना चाहता हू। सभव है कि मै ८ दिन मे तैयार हो जाऊगा।

समय आने पर आपकी सब भाति की सहाय मै माग लूगा ।
आपके लोगो से मुझे यहाँ खूब सहाय मिल रही है ।
रुपये आप जमनालालजी को या तो आश्रम साबरमती को भेजने की कृपा करे ।

आपका
मोहनदास गाधी

हिन्दुओ और मुसलमानो के आपसी सबध की दृष्टि से यह एक बहुत ही बुरा साल था। कितनी ही जगहो पर भयकर दगे हुए और सदा की भाँति तब भी बापू ने समझौता कराने की प्राण-पण से चेष्टा की। सर्दियो मे उन्होने दिल्ली मे इक्कीस दिन तक अनशन किया, लेकिन उससे कोई ठोस लाभ न हुआ। उन दिनो हमारा पत्र-व्यवहार अधिकतर इसी विषय पर होता था। बापू ने लिखा

"हिन्दू औरतो पर जो हमला हो रहा है उस बारे मे हमारा ही दोष मै समझता हू। हम ऐसे नामर्द बन गये है कि हमारी बहनो की रक्षा भी नही करते है। इस विषय मे मे खूब लिखूगा। इसका कोई सादा इलाज मेरे नजदीक नही है। कई बात जो आपके सुनने मे आई है, उसमे अतिशयोक्ति का सभव है, परतु अतिशयोक्ति काट देने के बाद जो शेष रहता है हमको लज्जित करने के लिए काफी है।"

पर इन घटनाओ के बावजूद मुसलमानो के प्रति उनकी हितैषिता मे कोई कमी नही हुई, जैसा कि उनके अगले पत्र से स्पष्ट हो जाता है

बीकानेर
२१-२-१९२५

भाई श्रीयुत् घनश्यामदासजी,

अलीगढ मे राष्ट्रीय मुस्लिम यूनिवर्सिटी चलती है, उसकी आर्थिक स्थिति बहुत ही कठिन है । मैने उन भाइयो को कहा है, मै सहाय दिलवाने का प्रयत्न करूगा । वे लोग एक रकम इकट्ठी कर रहे हे । मैने कहा है कि उसमे रु० ५०,०००) की सहाय मागने की कोशिश मे

करूगा । आप भी इस बात को सोचिये और आपका दिल यदि इस सहायता मे पूरी या कुछ भी देना चाहता है तो मुझे लिखियेगा । हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न का मै खूब अभ्यास कर रहा हू । मेरा यह विश्वास हिन्दू समाज पर पडता जा रहा है, अगरचे मुसीबते ज्यादा देखता हू तो भी ।

मै आजकल काठियावाड मे घूम रहा हू । आज मेरा प्रवास खतम होगा ।

आपका
मोहनदास गाधी

२२-३-२५

भाई घनश्यामदासजी,

आपके दो पत्र मिले है ।

मुस्लिम यूनिवर्सिटी के बारे मे आपने मुझको निश्चिन्त कर दिया है । मै तो यह हरगिज नही चाहता हूँ कि आपके दान से आप भाइयो मे कुछ भी विवाद हो । आपका नाम मै प्रगट नही करूगा ।

आपने जो जमीन छोटा नागपुर मे ली है उसको नौकरो की मृत्यु के कारण छोडने की सलाह मै नही दूगा । धातुरूप और जमीनरूप द्रव्य मे बडा फरक नही है । द्रव्य के कारण झगडा होना, खून भी होना अनिवार्य है । आपके धर्म-सकट का एक ही इलाज है, मिलकियत छोड देना । यह तो आप इस समय करना नही चाहते है । हा, एक बात तो मैने कही है, क्योकि मिलकियत फिसादो का कारण बनती है और हमारे पास अकर्तव्य भी करवाती है । उसे छोड देना और जबतक उसको हम सम्पूर्णतया छोडने के लिये तैयार नही है तबतक उसका व्यय पारमार्थिक भाव से ट्रस्टी की हैसियत से करना और अपने लोगो के लिये उसका कम-से-कम व्यय करना । एक बात और सभावित है । जो सज्जन झगडा करता है उसको मिलने की कुछ कोशिश हुई है ? उसकी अशाति का कारण क्या है ? उसकी मूर्खता भले हो, परतु उसकी जमीन पानी के दाम से तो नही मिली है । दुष्ट पुरुप भी अपनी मिलकियत फेक देना नही चाहता है। यह तो दूसरा तात्विक प्रश्न मैने छेडा है ।

आपकी धर्मपत्नी का स्वास्थ्य कुछ ठीक है क्या ? मै मद्रास २४ तारीख को छोडूगा ।

आपका
मोहनदास गाधी

भाई घनश्यामदासजी,

२६ मार्च, १९२५

यह है हकीम साहब का तार। क्या आप मुझको २५,०००) रु० अब भेज सकते हो ? यदि भेजा जाय तो दिल्ली मे हकीम साहब के यहा भेजोगे कि मुझको मुबई मे जमनालालजी के यहा भेजोगे। मुझे यदि क्रेडिट दिल्ली मे मिले तो कमीशन का शायद बचाव होगा। मै पहली अप्रैल तक आश्रम मे हूँगा। उसके बाद काठियावाड मे दुबारा जाऊगा। मई दो तारीख को फरीदपूर पहुचना होगा।

आपका,
मोहनदास गाधी

बापू ने मुझे एक खास तरह का चरखा उपहार मे दिया और मेरी कताई मे बडी दिलचस्पी दिखाई, यहा तक कि मेरे काते हुए सूत की बारीकी पर मुझे बधाई भी दी

भाई श्री घनश्यामदासजी,

३० मार्च, १९२५

आपका खत मिला है।

आपका सूत अच्छा है। जिस पवित्र कार्य का आपने आरम्भ किया है उसको आप हरगिज न छोडे। आपकी धर्मपत्नी के बारे मे आप प्रतिज्ञा ले सकते है कि यदि उनका स्वर्गवास हो तो आप एक पत्नीव्रत का सर्वथा पालन करेगे। यदि ऐसी प्रतिज्ञा लेने की इच्छा और शक्ति हो तो मेरी सलाह है कि आप आपकी धर्मपत्नी के समक्ष यह प्रतिज्ञा ले।

२० हजार रुपये के लिए मै जमनालालजी की दुकान से पूछूगा।

श्री रायचदजी से मेरा खूब सहवास था। मै नही मानता हू कि सत्य और अहिंसा के पालन मे वे मेरे से बढते थे, परतु मेरा विश्वास है कि शास्त्र-ज्ञान मे और स्मरण-शक्ति मे मेरे से बहुत बढते थे। बाल्यावस्था से उनको आत्मज्ञान और आत्मविश्वास था। मै जानता हू कि वे जीवनमुक्त नही थे और वे खुद जानते थे कि वे नही थे। परन्तु उनकी गति उसी दिशा मे बडे जोर से चल रही थी। बुद्धदेव इत्यादि के बारे मे उनके ख्यालो से मै परिचित था। जब हम मिलेगे तो उस बारे मे बाते करेगे। मेरा बगाल मे प्रवास मई मास मे शुरू होता है।

अलीगढ के बारे मे मैंने आपसे २५,०००) रु० की मागनी की है। हकीमजी का तार भी आपको भेजा है।

आपका
मोहनदास गाधी

आश्रम, सावरमती
९ अप्रेल, १९२५

भाई घनश्यामदास,

आपका पत्र मिला है। आपने जो चेक भेजा उसमे से देशवन्धु स्मारक के पैसे की जो रसीद जमनालालजी के यहा से आई है आपको देखने के लिये भेज देता हू। चेक पर जो हुडियावण काट लेते है वह काटकर रसीद दी जाती है उसका मुझको यह पहला अनुभव है।

हिन्दू-मुस्लिम झगडो के लिये मै और क्या लिखू? भलीभाति समझता हू कि हमारे लिये क्या उचित है। परन्तु आज मेरा कहना निरर्थक है, यह भी जानता हू। शहद पर बैठी हुई माख को कौन हटा सकता है, बत्ती के इर्द-गिर्द घूमते परवाने की गति को कौन रोक सकता है?

मसूरी न जाने मे मै बहुत लाभ उठा रहा हू। आपका अभिप्राय यहा मिलने के बाद आपने क्यो दिल्ली मे मसूरी जाने का तार भेजा? परतु जिसको ईश्वर बचाना चाहता है, उसको कौन मिटा सकता है?

फिनलैंड के बारे मे मै नही जानता हू मै क्या करना चाहता हू। जाने न जाने के मेरे नजदीक बहुत से कारण है। और क्योकि मै निश्चय नही कर सका हू, इसलिये निमत्रण देनेवालो को मैने मेरी शर्त सुना दी। शर्त के स्वीकार के साथ अगर वे लोग मेरी हाजिरी चाहें तो मै समझूगा कि मेरा जाना आवश्यक है।

आल इडिया काग्रेस कमेटी मे क्या होगा, देखा जावेगा।

आपका
मोहनदास

कहने की जरूरत नही कि एक जाति-बहिष्कृत के रूप मे मुझे जो अनुभव प्राप्त हुए थे उनके कारण दलित जातियो के प्रति मेरी सहानुभूति बढ गई थी। फलत बापू के हरिजन-आन्दोलन को आगे बढाने के लिए मै लालायित हो गया था। हमारे पत्र-व्यवहार का बहुत बडा भाग इसी आन्दोलन के सम्बन्ध मे था। परतु मै अपने पाठको को इन विस्तार की बातो से परेशान नही करूगा, क्योकि हरिजनो का विषय इस पुस्तक मे आगे चलकर फिर आयेगा। फिर भी यह तो बता ही दू कि बापू ने अपने सुझावो के द्वारा कि चेको को कहा जमा कराया जाय, जिससे उनके भुगतान का कमीशन न देना पडे, अपनी वणिक-

सुलभ व्यापार-कुशलता का परिचय दिया। यहा यह भी वता दू कि हरिजनो से व्यक्तिगत सम्पर्क न होने के कारण ही कट्टर हिन्दुओ के मन मे, जिनमे मालवीयजी जैसे साधु पुरुष भी थे, हरिजनो के लिए उपेक्षा की भावना ने जड पकड ली थी। पत्र-व्यवहार को देखने से पता चलता है कि राष्ट्रीय प्रश्न को छोडकर और सभी वातो मे बापू और मालवीयजी मे मौलिक मतभेद था। यद्यपि बापू स्वराज्य-पार्टी वनाने और उसके विधान-सभाओ मे भाग लेने के विरोधी थे, फिर भी उनकी सहानुभूति पार्टी के कट्टरपथी नेताओ—मोतीलाल नेहरू और सी० आर० दास—के साथ अपेक्षाकृत अधिक थी।

शुक्रवार ७ अगस्त, १९२५

भाई श्री घनश्यामदासजी,

आपके पत्र का उत्तर मैने जमनालालजी के मार्फत भेजा था, वह मिला होगा। आपका लम्बा पत्र जब मुझे मिला था तब मैने उसका सविस्तार उत्तर भेज दिया था और उसकी निज की रजिस्ट्री भी है। वह उत्तर सोलन मे भेजा गया था। कैसे गुम हो गया, मै नही समझ सकता हू।

उसमे मैने जो लिखा था उसकी तफसील यहा देता हू। आपने एक लाख का दान देशबधु स्मारक मे किया, उसकी स्तुति की और यथाशक्ति शीघ्रता से देने की चेष्टा करने की प्रार्थना की।

पू० मालवीयजी और पू० लालाजी को मै साथ नही दे सकता हू, उसका कारण बताया और मेरे उनके लिये पूज्य भाव की प्रतिज्ञा की। प० मोतीलाल और स्वराज्यदल को सहाय देता हू, क्योकि उनके आदर्श कुछ-न-कुछ तो मेरे से मिलते है। उसमे व्यक्तिगत सहाय की वात नही है।

और वाते तो वहुत-सी लिखी थी, परन्तु इस समय वे सब मुझे याद भी नही है।

आप दोनो का स्वास्थ्य अच्छा होगा। मेरे उपवास की कथा आपने सुन ली होगी। मेरे इस खत के लिखने से ही आप समझ सकते है कि मेरी शक्ति वढ रही है। उम्मीद है कि थोडे दिनो मे मै थोडा शारीरिक श्रम उठा सकूगा।

मै ता० १० को वर्धा पहुचूगा। वहा कुछ दस दिन रहने को मिलेगा।

आपका
मोहनदास

मेरी धर्मपत्नी को एक ऐसी बीमारी लग गई थी जो बाद में घातक सिद्ध हुई। बापू की शुभ कामनाए और उनके चिकित्सा-सम्बन्धी सुझाव लगातार आते रहते थे। इसी बीच उन्होंने यौन-प्रश्नों पर भी अपने विचार लिखे

बम्बई, १३ अप्रैल, १९२५

भाई घनश्यामदासजी,

आपके दो पत्र मिले है। आपने तिथि या तारीख का देना छोड दिया है। देते रहिये, क्योकि मेरे भ्रमण में पत्र मिलते है इसमे कौनसी तारीख के कौन पत्र है, उसका पता बगैर तारीख मुझे नही मिल सकता।

हकीमजी तो यूरोप गये है। मैंने ख्वाजा साहब को पुछवाया है कि द्रव्य मिल गया है या नही। आपको कुछ पता मिले तो बताइये। जमनालालजी की दुकान मे मैने जाच की तो पता मिला कि उनको आपकी तरफ से रु० ३०,०००) अबतक मिले है। मुनीम ने पहुच तो दी थी, ऐसा कहते है। मिलने की तिथि अनुक्रम मे १०,०००) की १-१-२४ और २०,०००) की ५-१-२५ है।

यदि डाक्टर लोग आशा बताते है तो आपको धर्मपत्नी के मृत्यु का भय क्यो रहता है? विकारो का वश करना मेरे अनुभव में बहुत कठिन तो है ही, परतु वही हमारा कर्त्तव्य है। इस कलिकाल मे मै रामनाम को बडी वस्तु समझता हू। मेरे अनुभव मे ऐसे मित्र है जिनको रामनाम मे बडी शाति मिली है। रामनाम का अर्थ ईश्वर नाम है, मत्र भी वही फल देता है। जिस नाम का अभ्यास हो उसका स्मरण करना चाहिये। विषयासक्त ससार में चित्तवृत्ति का निरोध कैसे हो, ऐसा प्रश्न होता ही रहता है। आजकल जनन-मर्यादा के पत्रो को पढकर मै दुखित होता हू। मै देखता हू कि कई लेखक कहते है कि विषय-भोग हमारा कर्त्तव्य है। इस वायु मे मेरा सयम-धर्म का समर्थन करना विचित्र-सा मालूम होता है। तथापि मेरे अनुभव को मै कैसे भूलू? निर्विकार बनना शक्य है, इसमें मुझे कोई शक नही। प्रत्येक मनुष्य को इस चेष्टा को करना अपना कर्त्तव्य है। निर्विकार होने का साधन है। साधनो में राजा रामनाम है। प्रात काल उठते ही रामनाम लेना और राम से कहना 'मुझे निर्विकार कर', मनुष्य को अवश्य निर्विकार करता है। किसी को आज, किसी को कल। शर्त यह है कि यह प्रार्थना हार्दिक होनी चाहिये। बात यह है कि प्रतिक्षण हमारे स्मरण में हमारी आखो के सामने ईश्वर की अमूर्त मूर्ति खडी होनी चाहिये। अभ्यास से इस बात का होना सहल है।

मै बगाल मे प्रथमा को पहुचूगा । उसी रोज कलकत्ता फरीदपुर के लिये छोड़ूगा ।

मोहनदास के वदेमातरम्

गोरक्षा की लक्ष्य-सिद्धि के प्रयास के मामले मे वापू की व्यावहारिक विवेक-बुद्धि की झलक निम्नलिखित पत्र से मिलेगी

१ जुलाई, २५

भाई श्री घनश्यामदासजी,

आपका पत्र मिला । लौहार्नी के वारे मे आपको विशेष तकलीफ इस समय तो नही दूगा ।

जमनालालजी मुझे कहते थे कि जो २५,०००) रुपये आपने मुस्लिम यूनिवर्सिटी को दिये वे जो ६०,०००) जुहू मे देने की प्रतिज्ञा की थी उसीमे के थे, । मेरी समझ ऐसी थी और मैने ६०,०००) रुपये दूसरे कामो मे खर्चने का इरादा कर रखा था । परतु यदि आपकी समझ ऐसी न थी कि मुस्लिम यूनिवर्सिटी के रुपये अलग न माने जाय तो मुझे कुछ कहना नही है ।

दूसरी वात यह है । गोरक्षा के वारे मे मेरे ख्याल आप जानते है । श्री मधुसूदनदास की एक टेनरी कटक मे है, उसकी उन्होने कम्पनी वनाई है उसमे ज्यादा शेयर लेकर प्रजा के लिए गोरक्षा के कारण कब्जा लेने का दिल चाहता है। उसपर १,२०,०००) का कर्ज होगा। उस कर्ज मे मे उसकी मुक्ति आवश्यक है । टेनरी मे चमडे केवल मृत जानवरो के लिए जाते है, परतु पाटलघो को मरवाकर के भी उसके चमडे लेते है । यदि टेनरी ले तो तीन शर्त होनी चाहिए

(१) मृत जानवर का ही चमडा खरीदा जाय ।

(२) पाटलघो को मरवाकर उसका चमडा लेने का काम वन्द किया जावे ।

(३) सूत लेने की वात ही छोड दी जावे। यदि कुछ लाभ मिले तो टेनरी का विस्तार वढाने के लिए उसका उपयोग किया जावे।

मै चाहता हू कि यदि इस शर्त से टेनरी मिले तो आप ले ले। उसकी व्यवस्था आप ही करे तो मुझको प्रिय लगेगा। यदि न करे तो व्यवस्थापक मै ढूढ लूगा । टेनरी की अपनी ही जमीन कुछ वीघा है। मैने देख ली है। श्री मधुसूदनदास ने इसमे अपने वहुत पैसे खर्च किये है ।

तीसरी वात है चर्खा-सघ की। आप इसमे साथ दे सकते है। आप अखिल भारत देशवन्धु-स्मारक मे अच्छी रकम दे, ऐसा मागता हू।

इन तीनो वात के वारे मे आपसे जमनालालजी ज्यादा वात करेगे, यदि आपका उनके साथ दिल्ली मे मिलना हुआ तो।

आपकी धर्मपत्नी को कुछ आराम हुआ है क्या?

मै विहार मे १५ तारीख तक रहूगा।

आपका
मोहनदास गाधी

मुझे ठीक याद नही कि मैने उन्हे ऐसी क्या वात लिखी थी, जिसपर उन्होने निम्नलिखित पत्रो मे मुझे डाट वताई

नवम्वर, १६२५

भाई घनश्यामदासजी,

आपका पत्र मिला है।

मेरे लेख के वारे मे मुझे विश्वास है कि मैने वा को अन्याय से वचा लिया है। वा भी दिल मे यही समझती है, ऐसा मुझको प्रतीत होता है, अन्यथा इतने प्रफुल्लित चित्त से मेरे साथ घूम न सकती। कई वृथा दोपारोपण से वा और छगनलाल आदि को मैने वचा लिया है। दोप के जाहिर स्वीकार का मीठा अनुभव मैने जितना लिया है इतना शायद ही और किसी ने हमारे समाज मे लिया हो। मुझको आश्चर्य है कि यह वात आपने नही पहचान ली।

आपका
मोहनदास

पाठको ने देखा होगा कि वापू ने अपने पत्रो मे वारवार आर्थिक वातो की चर्चा की है। दलित जातियो की सहायता के लिए किये जाने वाले सघर्ष मे मै रुपये-पैसे से उनकी जितनी भी सहायता कर सकता था, करता रहा, क्योकि यही एक ऐसी चीज थी जो उनके पास नही थी। ये चर्चाए उनके पत्रो मे वारवार आयेगी। इन पत्रो मे व्यावसायिक मामले मे उनकी व्यवहार-कुशलता के दर्शन होते है

सावरमती
३ जनवरी, १९२६

भाई रामेश्वरदासजी,

आपका पत्र मिला। जमनालालजी आजकल यहां हैं। उन्होंने मुझे खबर दी है कि १०,०००) रु० उनकी पेढी पर मिल गये हैं। उसका व्यय अन्त्यज-सेवा में करूंगा।

आपका स्वास्थ्य अच्छा है, जानकर आनन्द हुआ।

आपका
मोहनदास गांधी

उन दिनों हिन्दू-मुस्लिम समस्या विकट रूप में मौजूद थी।

आश्रम, सावरमती
शुक्र० १६-४-२६

भाई घनश्यामदास,

आपका खत और २६ हजार रुपये का चेक मिला है। हिन्दू-मुसलमान-झगडे के बारे में आपने जो प्रश्न पूछे हैं उनका उत्तर मैं देता हूं, परन्तु अखबारों के लिये नहीं। मैंने आपसे कहा था कि आजकल हिन्दू जनता पर या तो हिन्दू जनता के उस विभाग पर कि जो इन झगडों में दखल देता है, मेरा कोई असर नहीं है। इसलिये मेरे कहने का अनर्थ हो जाता है। इसलिये मैं शांत रहना, वही मेरा कर्तव्य समझता हूं।

(१) जुलूस यदि सरकार ने बन्द कर दिये हैं और कोई धार्मिक कार्य के लिये जुलूस की आवश्यकता हो तो सरकार की मनाही होते हुए भी जुलूस निकालना मैं धर्म समझूंगा। परंतु जुलूस निकालने के आगे मैं मुसलमानों से मेलजोल की बात कर लूंगा। और इतनी भी विनय करने पर वह न माने तो मैं जुलूस निकालूंगा और वे मारपीट करें उसको बरदाश्त करूंगा। यदि इतनी अहिंसा की मेरे में शक्ति न हो तो मैं लडाई का सामान साथ रखकर जुलूस निकालूंगा।

(२) मुसलमान सईस वि० नौकरों के बारे में किसी को उसके मुसलमान होने के कारण नहीं निकालूंगा। परंतु किसी मुसलमान को मैं नहीं रखूंगा जो वफादारी से अपना काम नहीं करेगा या तो मेरे से उद्दंड बनेगा। मेरा ऐसा अभिप्राय नहीं है कि मुसलमान अन्य कौमों से ज्यादे कृतघ्न हैं। ज्यादा लडाकू हैं, यही बात मैंने उनमें देखी। किसी मुसलमान को मुसलमान होने के कारण ही त्याग करना मुझको तो बहुत ही अयोग्य मालूम होता है।

(३) जो हिन्दू शांति-मार्ग को नापसन्द करता है या तो उसके लिये तैयार नहीं है उसको लड़ाई करने की शक्ति हासिल कर लेनी चाहिये।

(४) यदि सरकार मुसलमानों का पक्षपात करती है तो हिन्दुओं को बेफिकर रहना चाहिये। सरकार से बेपरवाह रहे, खुशामद न करें, परंतु अपनी शक्ति पर निर्भर होकर स्वाश्रयी बनें। जब हिन्दू इतना हिम्मतवान बन जायगा तब सरकार अपने आप तटस्थ रह जायेगी और मुसलमान सरकार का सहारा लेना छोड़ देगा। सरकार की मदद लेने में न धर्म का पालन होता है, न कुछ पुरुषार्थ बनता है। मेरी तो सलाह है कि आप इस चीज को तटस्थता से देखें और कार्य करें। इसी में हिन्दू जाति का भला है, हिन्दू धर्म की सेवा है। यह मेरा दीर्घकाल का— कम-से-कम ३५ वर्ष का— अनुभव है। झगड़ा होने के समय जिस शांति और वीरता से आपने काम लिया वह मुझको बहुत ही प्रिय लगा। इसी शांति को कायम रखकर आप जो कुछ योग्य हो वह करें। यदि मेरे उत्तर में कहीं भी स्पष्टता का अभाव है तो अवश्य दुबारा पूछियेगा।

जो लोन चर्खा संघ को देने का आपने कहा है उसमें से कुछ हिस्सा बम्बई के माल पर लेने का इरादा है। बम्बई में चर्खा संघ के दो गोडाउन हैं। आप चाहें तो उसमें से एक का कब्जा ले लेवें और इसी में लोन कवर करने के लिये जितना माल चाहिये उतना रखा जाय, और उससे ज्यादा माल भी आप सम्मत हों तो हम रखना चाहते हैं, जिससे एक गोडाउन का किराया हम बचा सकें। और वह माल हम जब चाहें तब ले सकें ऐसा प्रबन्ध होना चाहिये। जो माल चर्खा संघ सीक्योरिटी के बाहर रखे उसमें हमेशा बढ़-घट होनी होगी। इसलिए हमेशा उसमें प्रवेश करने का सुभीता मिलना चाहिये।

आपका
मोहनदास

आश्रम साबरमती
२३-५-२६ रवि०

भाई घनश्यामदास,

आपका पत्र मिला था। खादी के विषय में जो लोन आपने देने की प्रतिज्ञा की है इस बारे में आपके खत की नकल जमनालालजी को भेज दी है।

साबरमती समझौते के बारे में मैं तो स्तब्ध हो गया। अबतक मैं कुछ समझ सकता नहीं हूँ। हिन्दू-मुसलमान के बारे में मैं सब समझ सकता हूं, परंतु लाचार बन गया हूं, क्योंकि मैं आत्मविश्वास को नहीं छोड़ सकता

हू, इसलिए निराश नही होता। इतना तो समझता हू कि जिस ढग से आज हिन्दू धर्म की रक्षा करने की कोशिश होती है उस ढग से रक्षा नही हो सकती है। परतु मैं तो निर्बल के बल राम वस्तु को सम्पूर्णतया मानता हू। इसलिए निश्चिन्त हो बैठा हू।

आपका
मोहनदास

अगले पत्र मे उनके और मालवीयजी के मतभेद की चर्चा है, खासतौर से मेरे राजनीतिक क्षेत्र मे क्रियात्मक रूप से प्रवेश करने के बारे मे।

आश्रम साबरमती
८-६-२६ मगल

भाई घनश्यामदासजी

आपका पत्र मिला है। खादी प्रतिष्ठान को चर्खा सघ की मार्फत से आजतक कम-से-कम ७० हजार रूपये दिये है। मुझको स्मरण है, वहा तक ३५ हजार अन्य आश्रम को और ६ हजार प्रवर्तक सघ को। और भी छोटी-छोटी रकमे दी गई है। सब मिलकर करीब सवा लाख रुपये होगे। और भी बगाल मे पैसे दिये जायेगे। मैं जानता हू कि खादी प्रतिष्ठान की आवश्यकता बहुत बडी है। सतीशबाबू अपना काम बहुत ही बढाना चाहते है। मुझे यह बात प्रिय भी है। परतु चरखा सघ मे आज तो पैसे बहुत ही कम है। इसलिए यद्यपि चरखा सघ के मार्फत से जो कुछ हो सकता है वह किया जावेगा तदपि आप जितना दे सके उतना सतीशबाबू को अवश्य दे।

कौन्सिल के बारे मे क्या लिखू ? पूज्य मालवीयजी से इस बारे मे मेरा तात्विक मतभेद है। मैं केवल इतना ही कह सकता हू कि यदि आप माने कौन्सिलो मे आपके जाने से लोकोपकार होगा तो आप अवश्य जाये। स्वराज्य दल का विरोध और राजनैतिक शिक्षण प्राप्ति का प्रलोभन यह दोनो बाते नैतिक दृष्टि से ख्याल करने मे अप्रस्तुत है। यदि आप ऐसा समझते है कि आपने कौन्सिलो मे न जाने की प्रतिज्ञा मेरे समक्ष की है तो इस समझ को आप दूर करे। ऐसा कोई प्रतिबन्ध का निश्चयपूर्वक स्वीकार नही किया है। ऐसे बन्धन से मुक्त समझ कर केवल औपकारिक दृष्टि से आप कौन्सिलो मे जाने के बारे मे आपका अभिप्राय निश्चित करे।

आपका
मोहनदास

आश्रम साबरमती
२५-७-२६

प्रिय घनश्यामदासजी,

मैं इस पत्र के साथ एक वक्तव्य भेजता हू जो उस पत्र के साथ जाना चाहिये था, जो आपको उस दिन भेजा था।

आपके खादी प्रतिष्ठान वाले पत्र के सम्बन्ध मे बापू का कहना है कि कोई ऐसी खास बात नही जिसके लिए उनके उत्तर की जरूरत हो। वह इस बात मे आपसे सहमत है कि व्यापार और परोपकार को मिलाना ठीक नही है, और प्रतिष्ठान की आप केवल एक ही प्रकार से सहायता कर सकते है, और वह यह है कि उसे ३०,०००) रुपये का कर्ज दिया जाये, जो वह जनवरी १९२७ मे अदा कर देगा।

आपका
महादेव

बापू को यह बात तो बहुत भायी कि मैने नाइटहुड की उपाधि लेने से इन्कार कर दिया, पर उन्हे यह बात जितनी पसद थी उतनी ही विधान सभा के लिए मेरे खडे होने की बात नापसद थी। (सन् १९२७ मे मै असेम्बली का सदस्य था, बाद मे उनकी सलाह से मैने उसे त्याग दिया था।) 'सर' की उपाधि के बारे मे उन्होने लिखा, "किसी उपाधि को इन्कार करने के लिए न तो यह जरूरी है कि सरकार को अपना दुश्मन समझा जाय और न यह कि उपाधियो को बुरा माना जाय, यद्यपि आजकल की परिस्थितियो मे तो मै उन्हे बुरा ही समझता हू।"

मेरे सन् १९२७ मे यूरोप जाने के बारे मे शुरू मे तो उन्होने कोई उत्साह नही दिखाया, पर जैसा कि हम देखेंगे, मेरा जाना एक बार निश्चित हो गया तो उन्होने उसमे पूरी दिलचस्पी ली।

: २ :

लाला लाजपत राय

मेरे गुरू के पथ-प्रदर्शको मे पडित मदनमोहन मालवीय और लाला लाजपत राय थे। मालवीयजी वहुत वडे विद्वान् थे और उनमे देश-भक्ति कूट-कूट कर भरी हुई थी, किन्तु सामाजिक विषयो मे वह पक्के सनातनी थे। लाला लाजपत राय रूढिवादी विचारो के नही थे, पर थे वडे ही भावुक और तुनकमिजाज। मेरे मन मे अछूतो के प्रति अभिरुचि सबसे पहले उन्होने ही जागृत की थी। 'हरिजन' और 'परिगणित' जाति जैसे शब्द तो उस समय कोई जानता भी न था। ३० दिसम्बर १९२३ को उन्होने मुझे एक पत्र मे लिखा

जेल से छूटकर आने के बाद से ही मै तुमसे मिलने को छटपटा रहा था, पर बीमारी के कारण कलकत्ता न आ सका, और मुझमे इतना साहस नही हुआ कि तुममे से किसीको यहा आकर मिलने के लिए लिखू। मै तुमसे हिन्दुओ की एकता और हिन्दू अछूतो की शुद्धि के मसले पर बातचीत करना चाहता हू। मै समझता हू कि हिन्दू सस्थाए और हिन्दू नेता शोरगुल तो बहुत मचाते है, परतु ठोस काम बहुत कम करते है। कुछ लोग ऐसे है जिन्हे आगे की पीढियो के लिए पैसा इकट्ठा करने का तो चाव है, पर इस बात मे कोई रुचि नही है कि उस पैसे का इस समय किस तरह अच्छे-से-अच्छा उपयोग किया जाय। कुछ दूसरे लोग ऐसे है जो एकसाथ बहुतसी योजनाए बना लेते है, और अपनी सारी योजनाओ को विशाल रूप दे देते है, पर निश्चय-निर्णय करने मे बहुत समय लेते है। इस दूसरी श्रेणी के लोगो मे हमारे पूज्य नेता पडित मदनमोहन मालवीय है। मेरा उनके प्रति स्नेह है और मै उनकी श्रद्धा करता हू, किन्तु उनकी जिस बात से मुझे दुख होता है वह यह है कि वह निर्णय करने और उसे कार्य-रूप में परिणत करने मे देर लगा देते है। मै समझता हू कि यह जमाना

झटपट निर्णय करने और तत्परता से काम करने का है। यदि हम अपने हिन्दू समाज की महत्वाकांक्षी और साहसिक शत्रुओं से रक्षा करना चाहते हैं तो हमारे आगे सबसे अधिक महत्वपूर्ण समस्या यह है कि इसमें किस तरह से एका हो और हम दलित वर्गों की रक्षा किस प्रकार करें। इस दूसरी समस्या में तो जरा भी देर करना आत्मघातक सिद्ध होगा। मालवीयजी का खयाल है कि हिन्दू विश्वविद्यालय से ही हमारा बेडा पार हो जायगा। वह सारा रुपया और सारा समय उसीमें लगा रहे है। यह तो ठीक है कि विश्वविद्यालय के लिए उन्होंने शानदार काम किया है और हम मालवीयजी तथा उनके कार्य पर गर्व कर सकते हैं, पर विश्वविद्यालय को और फैलाने का काम अभी रोका जा सकता है।

आगे चलकर लालाजी ने एक सस्था का रेखाचित्र दिया और उसके लिए मेरा सहयोग मागा। उनकी और मालवीयजी की प्रेरणा से ही मैं बनारस और गोरखपुर से व्यवस्थापिका सभा का सदस्य बना था और उनकी रिसपान्सिविस्ट पार्टी मे शामिल हुआ था। राजनीति के क्षेत्र मे मानो मेरा यह रैन-बसेरा था।

सन् १९२७ आते-आते हम एक-दूसरे को और भी अच्छी तरह से जानने और समझने लगे और लालाजी ने मुझे खरी-खरी बाते सुनाने का निश्चय किया। जुलाई के महीने मे, जब हम दोनो लदन मे थे तो उन्होंने मुझे लिखा

तुम्हारे बारे मे मेरी जो धारणा है वह मै तुम्हे साफ-साफ और दिल खोलकर बता देना चाहता हू। जहाज पर और जिनेवा मे साथ-साथ रहने के कारण अब मै तुम्हें पूरी तरह समझने लगा हू। इतने पास से तुम्हारा अध्ययन करने का अवसर मुझे पहली बार मिला। तुममे कुछ ऐसे गुण है जिनकी मै मुक्त कठ से सराहना करता हू, पर तुममे कुछ ऐसी आदतें है जिन्हे मै चाहूगा कि तुम बदल दो। तुममें मेरी दिलचस्पी एक पिता की दिलचस्पी है, जो चाहता है कि उसका बेटा उससे भी अधिक बडा और अच्छा बने। तुममें एक महान नेता बनने के गुण विद्यमान है, वे सभी गुण जो एक सच्चे नेता में होने चाहिए। बस, तुम्हे अपने व्यवहार के ढग में कुछ परिवर्तन करना होगा। इस समय तुम्हारे व्यवहार से कुछ रुखाई का और धैर्य के अभाव का आभास मिलता है और इस कारण जो लोग

तुम्हे अच्छी तरह से नही जानते, वे तुम्हे अभिमानी समझ वैठते है। वात-चीत और व्यवहार के मामले मे हमे महात्मा गाधी से अच्छा व्यक्ति कोई नही मिलेगा। वैसे तो इस ससार मे किसीको भी सर्व-गुण-सम्पन्न व्यक्ति नही कहा जा सकता, पर महात्मा गाधी को लगभग पूर्णता-प्राप्त पुरुप अवश्य कहा जा सकता है। वह महान् है, हमसव से महान्, पर वह अपने मित्रो और सहकर्मियो के प्रति अपने व्यवहार का वडा ध्यान रखते है। उन्हे उपेक्षा या उदासीनता या अशिष्टता का दोप देना सम्भव ही नही है। तुमसे उनका लाख मतभेद होते हुए भी वह तुम्हारी सारी वाते धैर्य के साथ सुनेगे और अपना निर्णय सुनाने मे कभी जल्दवाजी से काम नही लेगे। वह अडिग है, उन्हे कोई दुर्वलता का दोपी नही ठहरा सकता। पर उनकी दृढता को कोई उद्दडता समझ वैठे, यह सम्भव नही है। वह तो उनसे भी दिल खोलकर तर्क-वितर्क करते है जो किसी भी दृष्टि से उनके समकक्ष नही माने जा सकते। तुम अभी युवक ही हो और अभी तुमने दुनिया नही देखी है, पर तुम्हारी वुद्धि अच्छी है और निश्चय करने मे तुम्हे देर नही लगती है। पर वुरा न मानना। एक राजनीतिक नेता के रूप मे, जो कि आगे चलकर तुम वनोगे ही, तुम्हे मस्तिष्क और आचार-विचार-सम्वन्धी जिन गुणो की दरकार होगी वे उन गुणो से भिन्न होगे जिन्होने तुम्हे एक सफल उद्योगपति वनाया है।

मेरे जीवन की तो सध्या आ गई। गाधीजी और मालवीयजी भी तिल-तिल करके मर ही रहे है। भगवान करे वे चिरायु हो। हिन्दुओ मे आज ऐसे वहुत ही कम लोग है, जिनपर हम अपने देश के नेतृत्व का भार छोडना पसन्द करेगे। मेरी आशाए तो वुद्धिजीवियो मे जयकर पर और उद्योगपतियो मे तुमपर वधी हुई है। लेकिन जयकर वम्वई के है। हमे एक ऐसे हिन्दू नेता की जरूरत है, जो उत्तर भारत के हिन्दुओ का नेतृत्व करने के लिए अपने साथियो और सहकर्मियो का पूरा-पूरा स्नेह तथा विश्वास प्राप्त कर सके। आज मुझे एक भी ऐसा आदमी दिखाई नही देता है। मुझे तुमसे आशा है। यही कारण है कि मैने तुम्हे यह पत्र लिखने का जिम्मा लिया। मेरे स्नेह और देश-प्रेम ने ही मुझे ऐसा करने को प्रेरित किया है। यदि तुम समझो कि मै व्यर्थ ही टाग अडाने की धृष्टता कर रहा हू तो मुझे क्षमा कर देना और इस पत्र को रद्दी की टोकरी मे डाल देना और फिर कभी इसकी याद न करना। भगवान तुम्हारा भला करे, यही मेरी कामना है।

तुम्हारा सच्चा हितैपी
लाजपत रया

मै कह नही सकता कि इस पत्र का मुझपर कितना असर पडा, पर मै अपनी त्रुटियो की ओर से सचेत था और मुझे नेता बनने की कोई आकाक्षा भी नही थी। इसलिए मैने उनकी सलाह को उसी रूप मे ग्रहण किया, जिस रूप मे एक युवक अपने बुजुर्गो की सलाह को ग्रहण करता है।

इसके बाद उन्होने पेरिस से यह डाट लिखकर भेजी

पेरिस, ६ जुलाई, १९२७

मै अभी पेरिस मे ही हू। दिल की बात कह रहा हू, माफ करना। मेरे लन्दन छोडने से पहले तुम मुझसे मिलने नही आये, इससे मेरे दिल को चोट पहुची है। तुम सर शादीलाल के भोज और श्री पटेल के स्वागत-समारोह मे नही आये सो मेरी समझ मे ठीक नही हुआ। चाहे तुम कुछ खाते नही, पर तुम्हे आना जरूर चाहिए था। लोगो के साथ नम्रता और शिष्टता का व्यवहार करना और उनपर अच्छा प्रभाव डालना बडे काम आता है। तुमपर लक्ष्मी की कृपा है, इसलिए तुम्हारे लिए यह और भी आवश्यक है कि तुम जीवन के इन औपचारिक शिष्टाचारो का पालन करो। मै चाहता हू कि लोग तुम्हे तुम्हारे धन के लिए नही, बल्कि तुम्हारे गुणो के लिए प्यार करें। मेरी राय में तुम्हे अपने में थोडा-सा परिवर्तन करना चाहिए और अपने दोनो पूज्य नेताओ (गाधीजी और मालवीयजी) के आदर्श का अनुकरण करते हुए छोटी-छोटी बातो में भी उदार बनना सीखना चाहिए।

मै कल या परसो विशी जा रहा हू। मै उस यात्रा के लिए बडा आभारी हू और तुम्हे विशी पहुचकर पत्र लिखूगा। मै यहा अपने दातो की परीक्षा कराने का प्रयत्न कर रहा हू। इन बातो में लन्दन इतना महगा है कि मैने आगे की डाक्टरी परीक्षा पेरिस के लिए रोक रखी थी।

तुम्हारा हितैषी
लाजपत राय

इस उलाहने के बाद भी मुझमे पार्टियो और भोजो के लिए कोई विशेष रुचि उत्पन्न नही हुई।

होटल रेडियो
विशी
९-७-२७

प्रिय घनश्यामदास,

तुम्हारा पत्र आज सवेरे मिला। धन्यवाद। मैं तुम्हारे दृष्टिकोण को समझता हू और मैंने कभी यह आशा नही की थी कि तुम स्टेशन पर मुझे छोडने आओगे। मैंने तो केवल यह आशा की थी कि तुम या तो क्लब मे मुझसे आकर मिल लोगे या टेलीफोन पर ही नमस्ते कर लोगे। मै समझता हू कि शिष्टाचार की ये छोटी-छोटी बाते मित्रो ओर परिवार के लोगो मे भी अच्छी ही लगती है। इनसे सम्बन्ध मीठे बने रहते है।

मेरा खयाल है कि तुम्हे सर शादीलाल के भोज और श्री पटेल के स्वागत-समारोह, दोनो मे ही जाना चाहिये था। मेरी राय मे तो तुम्हारा ग्लासगो जाना उतना जरूरी नही था। मै चाहता था कि स्वागत-समारोह मे विद्यार्थीगण और भोज मे सिख लोग, तुम्हे देख-समझ सके। खैर, अब तो बात बीत गई। मै यह सब सिर्फ इसलिए लिख रहा हू कि तुममे मुझे बहुत ज्यादा दिलचस्पी है और मुझे इस बात की खुशी है कि तुम मेरी नुक्ताचीनी का बुरा नही मानते।

यहा मै कल पहुच गया। आज वर्षा हो रही है, पर एक घटे मे मै जो कुछ भी देख सका हू, उसके आधार पर कह सकता हू कि स्वास्थ्य के लिए यह स्थान बहुत ही लोकप्रिय है। इस समय यहा हजारो यात्री है और होटलो तथा शहर मे उनके लिए हर तरह से आराम की व्यवस्था की गई है। सभी खास-खास सडको के किनारे बरामदे बने हुए है जो धूप और वर्षा से यात्रियो की रक्षा करते है।

मै जिस होटल मे ठहरा हुआ हू वह अच्छा खासा है। फिर भी मै हमेशा की तरह यही चेष्टा कर रहा हू कि साधारण आराम को ध्यान मे रखते हुए जितना भी कम खर्च किया जा सके, करू। मैंने अपने लिए एक पौड तीन शिलिंग पर एक कमरा लिया है, जिसमे गुसलखाना नही है। गुसलखाने के साथ कमरे का किराया २२५ फ्रेंक यानी लगभग दो गिन्नी है, पर मेरे कमरे के सामने का दृश्य बडा सुन्दर है, और उसमे एक छोटा-सा कक्ष है जिसमें दिनरात गर्म और ठडा पानी मिल सकता है। पेरिस मे मुझे नीद न आने की बहुत शिकायत थी। अब फिर लिखूगा।

तुम्हारा हितैषी
लाजपत राय

विशी से उन्होंने अपने देश की राष्ट्रीय विशेषताओं पर एक बार फिर लिखा

रविवार, १८ जुलाई, १९२७

जब कामन्स सभा में भारत के ऊपर बहस हुई थी तो क्या तुम वहां मौजूद थे? यह तो ठीक है कि वहां बहुत-सी वाहियात बातें भी हुई, पर मैं समझता हूं कि भारत सरकार के उपसचिव का अपने भाषण में यह कहना कि भारतीयों की भौतिक उन्नति में उनकी चित्तवृत्ति एक बहुत बड़ी बाधा है, बहुत कुछ सत्य है। परलोक पर जरूरत से ज्यादा जोर और जीवन से संघर्ष करने की मनोवृत्ति का अभाव लौकिक उन्नति के मार्ग में बहुत बड़ी रुकावटें हैं। मेरा तो दिन-पर-दिन यह विश्वास पक्का होता जा रहा है कि हमारा प्रधान काम जनता की प्रवृत्ति को बदलना और उसे अधिक महत्वाकांक्षी और आशामय विचारों का बनाना है। उसके विचार आशामय न हों, न सही, उनमें अपने व्यक्तित्व को आगे लाने की प्रवृत्ति तो अवश्य मौजूद रहनी चाहिए।

मेरा विचार यहां से २९ या ३० को चलने का है। यहां से मैं नाइस या मान्टेकार्लो जाना चाहता हूं, और फिर ५ अगस्त को जहाज में बैठ जाने का इरादा है। पता नहीं, तुम जर्मनी जा रहे हो या नहीं, या तुम्हारे पास वहां जाने के लिए समय भी है या नहीं।

सोच रहा हूं, ज्यादा घूमना-फिरना बंद कर दूं और किसी एक जगह (लाहौर, दिल्ली या बनारस में) जमकर कुछ अधिक स्थायी साहित्यिक कार्य करूं।

पत्र समाप्त करने के बाद उन्होंने "पुनश्च" करके ये मर्मस्पर्शी शब्द लिखे

पुनश्च

पत्र का एक अंश काटने-कूटने से गंदा-सा हो गया है, क्षमा करना। कोई खास बात नहीं लिखी थी, कुछ शौकीनी की चीजों के लिए लिखने की मूर्खता की थी, पर बाद को सोचने पर मैंने उसे काट देना ही उचित समझा।

लंदन के 'कलकत्ता यूरोपियन एसोसियेशन' के कार्य-कलाप से उन्हें चिन्ता हो गई थी जैसा कि नीचे के पत्र से स्पष्ट है

२१-७-२७

प्रिय घनश्यामदास,

मुझे उम्मीद है कि लदन मे भारत से आये हुए अग्रेजो की जो सभा हुई थी उसकी उस कार्रवाई को तुमने जरूर पढा होगा, जो २० तारीख के 'टाइम्स' के पृष्ठ १८ पर छपी है। अव तुमने देख लिया होगा कि दोस्त कर्नल क्राफर्ड क्या कर रहे है। यह वहुत ही जरूरी है कि तुम पूरे मनोयोग के साथ प्रतिरोध आरम्भ कर दो, नही तो व्यापार और उद्योग-धधो के क्षेत्र मे भारतीय हित हमेशा के लिए पिछड जायगे। मै इस समय तुम्हारे जैसे विचारो वाले देशभक्तो का भारत से वाहर रहना ठीक नही समझता। एक-एक दिन महत्वपूर्ण है। अव राजनीति के क्षेत्र मे उतरने के वाद तुम्हारे लिए राजनीतिक समस्याओ की उपेक्षा करना सम्भव नही है। यह तो ठीक है कि तुम्हारे उद्योग-धधे-सम्वन्धी हित वडे महत्वपूर्ण है, क्योकि वही युद्ध की सज्जासामग्री जुटाते है। लेकिन मेरा अपना खयाल है कि अगले छ महीने आमतौर पर सारे भारतवर्ष के लिए और खासतौर पर भारतीय व्यापार और उद्योग के लिए वडे ही महत्व के है। अग्रेज कुछ भारतीयो को अपने जाल मे फसाकर एक मजवूत सस्था वनाने और एक जवरदस्त आन्दोलन का आरम्भ करने की चेष्टा कर रहे है। इस आन्दोलन का जवाव देना प्रत्येक भारतीय का कर्त्तव्य है और मै समझता हू कि तुम वहुत कुछ कर सकते हो। मेरा मतलव तुम्हारे धन से नही है, वल्कि भारतीय उद्योगपतियो मे तुम्हारे प्रभाव से है। मै जितना सोचता हू उतना ही मेरा विश्वास दृढ होता जाता है कि तुम्हे असेम्वली मे लौट जाना चाहिए और शिमला-अधिवेशन के समय जोर-शोर के साथ काम करना चाहिए। इसके अलावा और किसी तरह इतने प्रमुख व्यक्तियो को इकट्ठा करना मुश्किल है। मुझे अपने घेवते के एक पत्र से पता चला है कि मालवीयजी ने तुम्हे भारत से वाहर रहने की अनुमति दे दी है। मै समझ नही पाता कि इसका मतलव क्या है। जो कुछ भी हो, मेरा मन्तव्य इससे भिन्न है। घटनाओ का विकास वडी तेजी से हो रहा है और यह समय वाहर रहने का नही है। स्वय मुझे इस वात का दु ख हो रहा है कि मै भारत से चला आया।

तुम्हारा हितैषी
लाजपत राय

पुनश्च

अभी-अभी मुझे ध्यान आया कि मै तुम्हे अपने और तुम्हारे शिमला रहने के वारे मे कुछ लिखू। मै समझता हू कि हम दोनो का पास-

पास रहना बहुत फायदेमन्द होगा। मेरे पास गत वर्ष जो कमरे थे उन्हीं के लिए मैंने इस बार भी लाला मोहनलाल को लिख दिया है। परतु उनका मकान बहुत दूर है और वहा से इधर-उधर आना-जाना बहुत मुश्किल होता है। मै समझता हू कि मिलने-जुलने के लिए तुम्हारा मकान केन्द्रीय स्थान सिद्ध होगा। अगर तुम शिमले लिखो तो तीन कमरे मेरे लिए भी सुरक्षित करा लेना—ऐसे कमरे जिनमे एक या दो अलग गुसलखाने भी हो।

इसके बाद उसी महीने उन्होंने लदन से एक पत्र भेजा, जिसमे धर्म को आलोचना का विषय बनाया। उन्होने लिखा कि यूरोपियन राष्ट्रो की महत्ता का कारण यह नही है कि वे ईसा का अनुकरण करते है, बल्कि यह है कि वे उसका अनुकरण नही करते। भारत मे साधु-सतो की भरमार है और गांधीवाद का त्यागमय जीवन एक भूल है।

बहुत ही भावुक होने के कारण लालाजी को उस जगह भी षड्यत्र और शत्रुता दिखाई देने लगी थी, जहा शायद वह मौजूद नही थी। असेम्बली के प्रेसिडेट विट्ठलभाई पटेल से उन्हे सख्त नफरत हो गई थी। उन्होने वस्तुस्थिति का वर्णन जिस निराशकारी ढग से किया, उसके कारण राजनीति से पीछा छुडाने की मेरी इच्छा और भी बलवती हो गई। इस प्रकार मुझे राजनेता बनाने की उनकी योजना असफल हुई। इस चिट्ठी की सबसे मार्के की बात यह है कि इससे स्पष्ट हो जाता है कि जिन लालाजी ने साइमन कमीशन का बहिष्कार करने मे अन्त मे अपने प्राण गवा दिये, वह शुरू-शुरू मे बहिष्कार के पक्ष मे नही थे और दूसरो के प्रति अपनी निष्ठा की खातिर ही उन्होने बहिष्कार मे भाग लिया था।

२ कोर्ट स्ट्रीट, लाहौर
२६-६-२७

प्रिय घनश्यामदास,

मेरे तार के उत्तर मे तुम्हारा तार मिला। इस समय कलकत्ते की ओर जाने का मेरा कोई इरादा नही है, पर साथ ही मै तुमसे जल्दी-से-जल्दी मिलना चाहता हू। इसके दो कारण है एक तो यह कि मै तुमसे रिजर्व

बैंक के बारे मे बातें करना चाहता हू, और दूसरी यह कि अपनी पार्टी के भविष्य के सम्बन्ध मे भी तुम्हारे साथ विचार-विनिमय करना है। इन दोनो ही मामलो मे पूज्य मालवीयजी से मेरा मतभेद रहा है। पिछले अधिवेशन मे हम एक प्रकार से एक-दूसरे के खिलाफ रास्तो पर चलते रहे। पटेल नारद मुनि का काम कर रहे है। उन्होने स्वय बताया है कि जब वह अधिवेशन से लौटे तब वायसराय उनसे इस बात पर नाराज हुए कि उन्होने वायसराय से सलाह लिये बिना ही अग्रेज-राजनेताओ के सामने क्रान्तिकारी-योजनाए क्यो रख दी।

पटेल चाहते थे कि हम यह घोषणा कर दे कि यदि रायल कमिशन मे भारतीयो का बहुमत नही हुआ तो हम उसका बहिष्कार कर देगे। मैने ऐसा करने से साफ इन्कार कर दिया। इसके बाद उन्होने मालवीयजी को फासना चाहा ओर उनके और मेरे बीच एक खाई खोदने की हद से ज्यादा कोशिश की, यहा तक कि एक दिन मैने पार्टी के सामने अपना त्यागपत्र रख दिया और मेरे उसे वापस ले लेने के बाद भी मालवीयजी ने उसे मेरे पास लिखित रूप मे भेजा। मुझे खूब मालूम है कि यह सलाह पटेल और श्रीनिवास आयगर ने मालवीयजी को पटेल के घर पर दी थी। दुर्भाग्यवश इस अधिवेशन के दौरान मे मालवीयजी पटेल से बहुत ज्यादा मिलते रहे ओर पटेल के दाव-पेच को भाप न पाये। तब पटेल ने जयकर को बुलाया और सुझाया कि हम अपनी पार्टी भग करके काग्रेस-पार्टी मे मिल जाय और इस पार्टी के नेता मोतीलाल, डिप्टी नेता मै और आयगर, और मत्री जयकर हो। उन्होने जयकर से यह बेकार ही कहा कि इगलैड मे मोतीलाल के हाथ मजबूत करने के लिए ऐसा करना आवश्यक है। जयकर ने उनके सामने साफ-साफ मेरा नाम लिया और कहा कि पार्टी के नेता होने के नाते बातचीत मुझसे ही की जानी चाहिए। तब पटेल ने मुझे बुलाया और कहा कि वह इसी सप्ताह मे दोनो दलो को एक देखना चाहते है। मैने कहा कि इस सप्ताह तो मुझे अपनी पार्टी के लोगो से सलाह करने का समय नही है, हा, अगले सप्ताह मे ऐसा अवश्य कर लूगा। इसपर वह बोले कि हमारे शिमला छोडने से पहले ही यह काम पूरा हो जाना चाहिये। तब मैने पार्टी की एक बैठक बुलाई, जिसमे सर्वसम्मति से यह तै हुआ कि जबतक मोतीलाल का दृष्टिकोण मालूम न हो जाय जब तक इस बात की गारटी न मिले कि ऐसा कोई काम नही किया जायेगा, जिसमे हमे फिर से काग्रेस-पार्टी से अलग होने को बाध्य होना पडे तबतक पटेल की सलाह न मानी जाय।

इस समय तो खुद काग्रेस-पार्टी ही दलबदी का शिकार है। जयकर ने तो मुझे बताया कि काग्रेस-पार्टी के बहुत से सदस्य हमारी पार्टी मे आने को

तैयार है। साफ जाहिर है कि मालवीयजी ने पटेल को कोई-न-कोई वचन दिया था। इस प्रकार पटेल हमारी पार्टी का अत करने की चेष्टा कर रहे है। पिछले अधिवेशन मे उन्होने जयकर का विरोध किया और मेरी पीठ थपथपाई। इस अधिवेशन मे वह जयकर की पीठ थपथपा रहे है, जिससे मुझे नीचा देखना पडे और हमारी पार्टी मे फूट पड जाय।

कांग्रेस-पार्टी भी पटेल से बहुत तग आ गई है। जयकर पूरे तौर पर हमारे साथ है और पटेल की चाल को समझ गये है, पर मालवीयजी नही समझ पाये है। इसके लिए मै अपने को ही दोषी समझता हू, क्योकि मै मालवीयजी से इतनी दूर रहता हू और इस प्रकार उन्हे पटेल के जाल मे फसने का अवसर देता रहा हू। मै इसी विषय पर तुमसे विस्तार के साथ बाते करना चाहता हू, क्योकि भविष्य में इसी पर हमारा सारा राजनीतिक कार्यकलाप निर्भर है।

रिजर्व बैक के मामले मे भी पटेल की चाल यह रही है कि उसकी असफलता की सारी जिम्मेदारी मालवीयजी पर आ पडे। मालवीयजी उनकी इन कुटिल चालो को नही समझ पाये है। पटेल एक ओर तो कांग्रेस-पार्टी और उसके नेता से सरकार के साथ समझौता करने को कहते रहे है, और दूसरी ओर वह सरकार का डटकर विरोध करने के लिए मालवीयजी को उकसाते आ रहे है। उनकी सारी चाल यह रही है कि वह (यानी मा०) सरकार और कांग्रेस-पार्टी दोनो ही के बुरे बन जाय।

इन कारणो से मै चाहता हू कि तुम एक-दो दिन के लिए लाहौर चले आओ और अपने यूरोप के अनुभवो पर लाहौर तथा अमृतसर मे जनता के सामने भाषण दो। तुम्हारे लिए यह बहुत जरूरी है कि सारे देश मे तुम्हारा नाम हो। 'राजनीति मे हिन्दुओ के भावी नेतृत्व के लिए मेरी आखे तुमपर और जयकर पर लगी हुई है और मै चाहता हू कि तुम सभी प्रांतो में कुछ सार्वजनिक सभाओ मे बोलो। बनारस जाते हुए क्या तुम एक दिन के लिये लाहौर नही आ सकते? यदि तुम्हारी खातिर दलित जातियो का कोई अधिवेशन कराया जाय तो क्या तुम उसकी अध्यक्षता करने यहा नही आ सकोगे? एक बार तुम कलकत्ता पहुच गये तो फिर कुछ दिनो तक तुम्हारा वहा से निकलना मुश्किल हो जायगा।

हिन्दू स्वयसेवक-आन्दोलन के बारे मे हमने जो योजना पेरिस से ड्यूविले जाते समय बनाई थी, मै उसे भी हाथ में लेना चाहता हू।

इन सब बातो पर सलाह-मशवरा करना जरूरी है। अगर तुम्हारा लाहौर आना सभव न हो तो मै तुमसे दिल्ली मे ही मिल लूगा। जैसा भी हो, तुम्हारे कलकत्ता जाने से पहले ही हमारा मिलना जरूरी है। मेरे लिए

वनारस या कलकत्ते तक आना सम्भव नही होगा। अक्तूबर ओर नवम्वर मे लाहौर मे ही जमकर वैठना और मिस मेयो की पुस्तक का जवाव लिखना चाहता हू। मुझे विश्वास है कि इन उलझनो मे तुम मेरा हाथ वटाओगे।

तुम जयकर से मिलकर उनसे भी इन मामलो पर सलाह-मशवरा कर सकते हो। इवर मैं एक वगला अपने लिए और दूसरा मालवीयजी के लिए सुरक्षित करा रहा हू, जिससे हम दोनो एक-दूसरे के पास रह सकें और मिलने और वातचीत करने मे आसानी हो। तुम्हारी क्या योजनाए है, सो विस्तार के साथ लिखना।

तुम्हारी उस नये वैकवाली योजना का क्या रहा? मैं समझता हू कि उसे ठोस रूप देने का यही ठीक समय है। सस्नेह,

तुम्हारा ही
लाजपत राय

किन्तु मैं भारत-व्यापी नेतृत्व की सम्भावित स्थिति से उत्तरोत्तर दूर खिसकता जा रहा था। मेरे ३० सितम्वर के पत्र से, जिसमे मैने इन सव झगडो को शात करने की चेष्टा की थी, लालाजी की नजरो मे मेरी प्रतिष्ठा वढी नही होगी।

मैने लिखा

रविवार को मैं वनारस जा रहा हू। पार्टी के वारे मे कोई चिन्ता मत करिये। मेरा खयाल है कि जव हमारे दल के सदस्य शिमले के शीतोष्ण वातावरण से मैदान मे लौटेंगे तो अपने को अपेक्षाकृत अधिक शीतल वातावरण मे पायेंगे। मुझे यकीन है कि दिल्ली में फिर से एकत्र होने से पहले ही हमारी स्थिति वहुत कुछ सुधर जायगी। हमारे दल की सवमे वडी खूवी यह है कि इसमे एक-से-एक वढकर विवेकशील व्यक्ति है। इसलिए मुझे तो किसी अडचन की आशका नही है।

शिमला मे जो एकता-सम्मेलन हुआ था, उसकी कार्रवाई मैने पढी। मेरी अपनी राय तो यह है कि हमारे कट्टर हिन्दू भाई माने या न मानें, हमें धार्मिक स्वतत्रता स्वीकार करनी ही होगी, अर्थात् एक ओर गोवध की और दूसरी ओर मसजिदो के सामने वाजा वजाने या सुअर मारने की स्वतत्रता। यदि हमे गौओ की रक्षा करनी है तो हमें दूसरे धर्मवालो की सद्भावना पर ही निर्भर रहना पडेगा। मुझे विश्वास है कि मुसलमानो को अनावश्यक रूप से अपना शत्रु वनाकर हम गोवध में कमी नहीं कर सकेंगे। वैसे यदि हमारा भला होता हो तो मैं मुसलमानो से मोर्चा लेने मे भी आनाकानी नही करूँगा।

सम्भव है, खिलाफत कमेटी के सेक्रेटरी ने आपके कथनानुसार भ्रामक वक्तव्य दिया हो, पर मेरी अपनी धारणा तो यह है कि हमारे लिए एक ओर मुसलमानों को उनके धार्मिक रीति-रिवाजों का पालन करने की आजादी न देना और दूसरी ओर मस्जिदों के सामने बाजा बजाने की स्वतन्त्रता की माग करना बिलकुल ना-समझी का आचरण करना है। बनारस पहुचकर मै मालवीयजी से विचार-विनिमय करूगा। उम्मीद है कि नवम्बर या दिसम्बर में दिल्ली आकर आपसे भी मिलू।

यदि आपने बालचरों की दीक्षा की कोई सविस्तर योजना बनाई हो तो लिखने की कृपा करिये और आपके पास योजना की कोई प्रति हो तो मेरे पास भेज दीजिए।

इसके उत्तर मे लाला लाजपत राय ने मुझे लिखा कि गोवध के बारे मे सिद्धात रूप मे तो वह मुझसे सहमत है, पर जबतक जोर-शोर के साथ प्रचार न किया जाय तबतक पारस्परिक सहिष्णुता की यह भावना व्यावहारिक राजनीति की बात नही मानी जा सकती, क्योंकि हिन्दू लोग ऐसी बातों की ओर कान नही देगे। इस बीच हमे दिल्ली एकता-सम्मेलन के प्रस्ताव को ही अपने सामने रखना चाहिए।

लालाजी ने अपनी पुस्तकों—'यग इडिया' और "इग्लेड्स डेट टु इडिया' को पुन प्रकाशित करने मे सहायता मागी। ये दोनो पुस्तके अमरीका मे प्रकाशित हुई थी, पर भारत मे उनपर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था और लालाजी मिस मेयो की 'मदर इडिया' का उत्तर लिख रहे थे। इधर यह प्रतिबन्ध उठा लिया गया था।

लाला लाजपत राय भावुक आदमी थे और उनपर रह-रह कर घोर निराशा के दौरे से पड़ा करते थे। उनका अगला पत्र, जो उन्होने २७ अक्तूबर को लाहौर से भेजा, मालवीयजी की आलोचना से भरा हुआ था 'मुझे इस बात का अफसोस है कि इस पार्टी को बनाने मे मैंने मालवीयजी का साथ दिया।' 'सारे अधिवेशन मे पटेल का व्यवहार बडा ही कपटपूर्ण रहा। उन्होने श्रीनिवास आयगर को तो एक तरह की सलाह दी और

मालवीयजी को दूसरी तरह की।' वह अब यही चाहते थे कि मालवीयजी 'अपना सारा समय विश्वविद्यालय के कामो मे लगाये, जिसकी दशा बडी दयनीय हो रही है।' उन्होने मुझसे दिल्ली आने का अनुरोध किया और लिखा 'बात यह है कि आजकल मेरा चित्त बडा ही उद्विग्न हो रहा है और मै कोई ऐसा आदमी चाहता हू जिसके सामने मै अपने दिल को खोल कर रख सकू।'

लालाजी के धार्मिक सशयवाद ने उन्हे निराशा के दलदल मे ला पटका था। १२ जुलाई, १९२८ को उन्होने पूना से एक पत्र लिखा, जिसमे उन्होने (स्वय अपने शब्दो मे) 'निराशा का लावा' उडेल दिया। यह पत्र टाइप किये हुए पूरे पाच पृष्ठो मे है। हृदय को टूकटूक कर देने वाला ऐसा पत्र मैने शायद ही कभी पढा हो। कुछ वाक्यो मे ही पत्र के दुखद विषय की कुजी मिल जायगी

मुझे अब किसी मे आस्था नही है न अपने मे, न भगवान मे, न इन्सानियत मे, न जीवन मे, न ससार मे। सब कुछ मुझे क्षणभगुर और मनुष्य के मिथ्या गर्व का परिणाम प्रतीत होने लगा है। मैने सारे जीवन इस प्रकार की धारणा का सामना किया। सैकडो रगमचो मे मैने गर्ज-गर्ज कर कहा कि जो धारणा यह कहती है कि यह ससार असत्य, अनित्य और भ्रान्तिमात्र है वह स्वय असत्य है। पर आज यह कहावत कि जीवन ही सत्य है ओर जीवन मे ही उत्साह है, मुझे अचेत मिथ्या गर्व का चीत्कार मात्र मालूम देने लगा है। जीवन मे ऐसी क्या चीज है जिसे हम सत्य माने या जिसे हम लगन के साथ अपनाना चाहे ? मै उस ईश्वर मे कैसे विश्वास करू, जो न्यायपूर्ण, परोपकारी, सर्वशक्तिमान ओर सर्वत्र विद्यमान कहलाकर भी इस मूढ ससार पर राज्य करता है ?

अब लालाजी को मित्रता, यहा तक कि कुटुम्बियो के स्नेह से भी कोई लगाव नही रह गया था। अब न वह उनकी चिन्ता करते थे, न वे उनकी।

सक्षेप मे बात यह है कि ईश्वर या धर्म, किसी मे मेरी आस्था नही रही है। मै जानता हू कि जरूरत से ज्यादा बाल की खाल निकालना बुरा होता

है। यह मार्ग आनन्द की ओर नही ले जाता है। फिर भी अक्सर मुझमें तल-स्पर्शी आलोचना करने की प्रवृत्ति जाग उठती है। मेरे आदर्श की कसौटी पर कोई भी पूरा नही उतरता है। मै गाधीजी की सराहना करता हू, मे मालवीयजी को भी सराहता हू, पर अक्सर मै खुद ही उनकी कडुई आलोचना करने लग जाता हू। सार्वजनिक जीवन, सार्वजनिक कार्यकलाप, सार्वजनिक भोज-सहभोज। इन सबमे मुझे अब कोई आकर्षण नही दिखाई देता। वे मुझे अपनी ओर नही खीच पाते। उनसे मुझे कोई आनन्द नही मिलता। फिर भी मै देखता हू कि मै उनके बिना रह भी नही सकता। ओह, मै क्या करू? मै बडा ही सतप्त हू, अपनेको बिलकुल अकेला पाता हू और बहुत ही दु खी हू, फिर भी मै अपने सताप, अपने एकाकीपन, अपने दु ख से चिपटा हुआ हू। मै अपनी इस मानसिक अवस्था से निस्तार पाना चाहता हू, पर नही जानता कि कैसे।

लाला लाजपत राय की सतप्त आत्मा को यदि कही चैन मिलता था तो केवल काम मे। नवम्बर मे उन्होने मुझे लाहौर से लिखा "अब मै बिलकुल स्वस्थ हू और उम्मीद करता हू कि अगले दिसम्बर मे मै तुमसे मिलने कलकत्ते आ सकूगा। मै चाहता हू कि उस समय मै समुद्र के रास्ते या मोटर से सैर करू।"

इसके कुछ दिन बाद ही वह शहीद हो गये। उनका योग राष्ट्र के स्वतत्रता-सग्राम मे जितना महान था उतना ही सामाजिक सुधारो मे भी था। पर गाधीवाद के आगमन पर उन्होने शायद अपनेको परिवर्तनशील परिस्थितियो के अनुकूल बनाने मे कठिनाई का बोध किया। जो हो, अपने तमाम दोषो के बावजूद वह निस्सदेह एक महान व्यक्ति थे और स्वतत्रता के आन्दोलन मे उन्होने जो योगदान किया था, उसका मूल्य कभी ठीक-ठीक नही आका जा सकेगा।

: ३ :

मेरी लंदन-यात्रा

सोमवार १६ मार्च, १९२७ के अपने पत्र मे गाधीजी ने मेरे लिए जो कार्यक्रम निश्चित किया वह इस प्रकार था

यूरोप मे आरोग्य रहने के लिये इतने नियमो का पालन आवश्यक समझता हू।

(१) अपरिचित खोराक न लेना।

(२) वे लोग छ सात वार खाते है। हम तीन वार से ज्यादा न खाय। वीच मे चाकोलेट इत्यादि खाने की वुरी टेव न रखे।

(३) रात्रि को एक वजे तक भी खा लेते है। हम रात्रि को आठ वजे के वाद न खाय। किसी जगह जाने पर चाह इत्यादि लेने के लिये हम मजबूर होते है, ऐसा माना जाता है। ऐसा कुछ नही है।

(४) नित्य कम से कम ६ मील पैदल घूमने का अभ्यास रखना आवश्यक है। प्रात काल मे और रात्रि को, दोनो समय घूमना चाहिये।

(५) हद के वाहर कपडे पहनने की आवश्यकता न मानी जाय। रहस्य यही है कि शरीर को ठडी न लगे। घूमने से ठडी चली जाती है।

(६) इग्रेजी कपडे पहनने की कोई आवश्यकता नही है।

(७) यूरोप के गरीव लोगो का परिचय करने की कोशिश की जाय। इस परिचय के लिये वहुत काम पैदल करना आवश्यक है। जव समय है तव पैदल ही जाना अच्छा है।

(८) यूरोप मे गये तो कुछ न कुछ करना ही है, ऐसा कभी न सोचा जाय। स्वच्छ प्रयत्न से और निश्चिन्तता से जो वन पडे, वह किया जाय।

(९) मेरे ख्याल से तो आपके जाने का एक परिणाम अवश्य आ सकता है। शरीर वज्र सम वनाया जाय यह वात वन सकती है।

(१०) ईश्वर आपको मानसिक व्यभिचार से वचा ले। वहुत कम हिन्दी इस दोष से वचते हं। वहा का रहन-सहन यद्यपि उन लोगो के लिये स्वाभाविक है, हमारे लिए मद्यपान-सा वन जाता है।

(११) गीताजी और रामायण का अभ्यास हो तो हर्गिज न छोडा जाय। यदि नहीं है तो अब रखा जाय।

आपने इतनी सूक्ष्म सूचना की तो आशा नहीं रखी होगी। मैंने दी है, क्योंकि आप सब भाइयों की सज्जनता पर मेरा विश्वास है। आप जैसे जो थोडे धनिकों मे धन के साथ नम्रता और सज्जनता है, उनकी नम्रता और सज्जनता मे मैं बहुत वृद्धि चाहता हूं और इस वस्तु का देश कार्य के लिये उपयोग चाहता हूं। "शठ प्रति शाठ्य" के सिद्धान्त को मैं मानता नहीं हूं। इसलिये जिस जगह शुद्धता, सत्य, अहिंसा इत्यादि का थोडा-सा भी दर्शन करता हूं तो सूम जैसे धन का संग्रह करता है ठीक उसी तरह मैं ऐसे गुणों का संग्रह करने की चेष्टा कर आनन्दित होता हूं।

और पूछना है तो पूछोगे। २३।२४ बम्बई, २५।२६ कोल्हापुर, २७।४ अप्रैल बेलगाम, ५।१२ मद्रास।

आपका
मोहनदास

इस समय मैं इस बात के लिए बड़ा उत्सुक था कि गाधीजी यूरोप जाय और लोगों से व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करे। अपने पत्र की तो कोई नकल मेरे पास नहीं है, पर उन्होंने जो उत्तर दिया वह इस प्रकार था

२७ मार्च, १९२७

भाई घनश्यामदासजी,

आपका पत्र मिला है।

योरोप जाने के बारे में मैं अब तक कुछ निश्चय नहीं कर सका हूं। जाने का दिल नहीं है। रोमेरोला को मिलने की इच्छा है सही, परन्तु इस बारे में मैं उनके पत्र की प्रतीक्षा करता हूं। एक पत्र आया है उससे जाने का निश्चय नहीं होता है। यदि जाने का हुआ भी तो मई मे होगा। और अक्तूबर में वापिस आ जाऊंगा। थोडे दिन भी यदि मैं आपके साथ मसूरी में रह सकता हूं तो प्रयत्न करूंगा। एप्रिल १३ तारीख तक तो यहीं रहना चाहता हूं। विदेशी कपडों के बहिष्कार के बारे मे मैंने जो कुछ लिखा है उसपर मुझे आपका अभिप्राय भेजें।

स्वास्थ्य के पूरे हाल मुझे दे दें। अब कुछ खा सकते हो?

आपका
मोहनदास

नदी दुर्ग, २६-५-२७

भाई घनश्यामदासजी,

दो दिन से जमनालालजी यहाँ आ गये है । उन्होंने आपका सदेशा दिया हैं । जो कुछ मैंने आपको लिखा हैं उससे ज्यादा लिखने का कोई खयाल नही आता । वादशाह की मुलाकात के वारे मे मेरा अभिप्राय यह हैं कि उस मुलाकात की आप कोशिश न करे । यदि हिन्दी प्रधान या तो मुख्य प्रधान मुलाकात कराने के लिए चाहे तो उस वात का इन्कार भी न करे । जहा तक मुझे ज्ञान है मेरा ऐसा मतव्य है कि वादशाह के पास कुछ राज्य प्रकरण की वाते नही की जा सकती हैं । केवल क्षेम कुशल की ही वात होती है । प्रधानो को अवश्य मिले । और उनके साथ जो कुछ भी दिल चाहे वह वात कर सकते है । वहा की जेलो का सूक्ष्म निरीक्षण करे ओर लडन के गरीव प्रदेश मे किसी जानकार मनुष्य के साथ खूव भ्रमण करे और गरीबो की स्थिति का अवलोकन करे । शनीचर की रात्रि को एक या दो वार गरीव और धनिक प्रदेश के शरावखानो के नजदीक खडे रहकर वहा की भी चेष्टा देखे ।

मेरा स्वास्थ्य दिन प्रतिदिन अच्छा होता जाता है ।

पू० मालवीयजी को मैंने वहुत दिनो के पहले खत लिखा । उसके उत्तर की आशा नहीं रखता हू क्योकि पत्रो का उत्तर देना उनका स्वभाव नही हैं । तारो का उत्तर तार से अवश्य देते है ।

मै तो दुवारा भी लिखने वाला हू ।

आपका स्वास्थ्य अच्छा होगा ।

आपका
मोहनदास

कुछ दिनो वाद उन्होने फिर हिन्दी मे पत्र लिखा और उसमे अपने और मालवीयजी के स्वास्थ्य की चर्चा करने के साथ-ही-साथ जीवन और मरण पर वडे ही रोचक ढग से एक दार्शनिक निवन्ध ही लिख डाला। पत्र नीचे दे रहा हू

नदी दुर्ग
ता० ३१-५-१९२७

भाई घनश्यामदासजी,

आपका पत्र मिला । यह खत लिखाते हुए महादेव मुझसे याद दिलाते है कि आपने जमनालालजी से सूचना दी थी कि मै आपको अग्रेजी मे खत

लिखू । परतु ऐसी कोई वात मै लिखना ही नही चाहता,हू जो किसी को वताने की आवश्यकता रहे । इसलिये इस पत्र को मै हिन्दी में ही लिखवाता हू ।

आपका खत स्टीमर पर से लिखा हुआ मिला है । मैने दो खत इसके पहले भी लिखे है जिनिवा के पते मे । वह मिल गये होगे । मेरा स्वास्थ्य सुधरता जाता है । पू० मालवीयजी से मै खत लिखता जा रहा हू । मैने लिखा था वैसे ही उनका इस हफ्ते मे लम्वा तार आ गया । उसमे वताते है कि स्वास्थ्य है तो अच्छा लेकिन दुर्वल है । आजकल वम्वई मे है । मेरा तो यह ख्याल है कि मेरे लिये यह कहना कि मै स्वास्थ्य की दरकार नही करता हू, वह ठीक नही है । जितना मै आवश्यक समझता हू उतना प्रयत्न स्वास्थ्य रक्षा के लिये ठीक ठीक कर लेता हू । पू० मालवीयजी ऐसा नही करते है । ऐसा मैने वहुत दफे लिखा है और उन्होने आराम लेने की प्रतिज्ञा करने के वाद भी आराम न लिया । वे वैद्यो के उपचार पर वहुत विश्वास करते है और मान लेते है कि उनकी गोलिया और भस्मादि की पुडिया लेकर अच्छे रहते है, रह सकते है, और उनका आत्मविश्वास इतना जवरदस्त है कि दुर्वल होते हुए भी, वीमार होते हुए भी, कम से कम ७५ वर्ष जीने का निश्चय कर लिया है । ईश्वर उस निश्चय को सफल करे । उनको ज्यादा कौन कह सकता है ? मैने तो विनय के साथ जितनी सख्ती हो सकती है उतनी सख्ती, विनोद करके लिखी है । वस्तु यह है कि प्रत्येक मनुष्य की वुद्धि कर्मानुसारिणी रहती है । ऐसी वातो मे पुरुषार्थ के लिये वहुत ही कम जगह है । प्रयत्न करना कर्त्तव्य है ही और करना चाहिये, परतु प्रत्येक मनुष्य के लिये एक समय तो आता ही है जव सव प्रयत्न व्यर्थ वनता है और सद्भाग्य से और पुरुषार्थ की रक्षा के कारण ईश्वर ने इस आखिरी समय का पता किसी को नही दिया है । तव इस अनिवार्य होनारत के लिये हम क्यो चिन्ता करे ? राष्ट्र का कारोवार न मालवीयजी पर निर्भर, न लालाजी पर, न मुझपर । सव निमित्त मात्र रहते है और मेरा तो यह भी विश्वास है कि सत्पुरुष के कार्य का सच्चा आरम्भ उसके देहान्त के वाद ही होता है । शेक्स-पीयर का यह कथन कि मनुष्य का भला कार्य प्राय उसी के साथ जल जाता है और वुरा कार्य उसके पश्चात् रह जाता है ठीक नही है । वुराई की कभी इतनी आयु नही रहती है । राम जिन्दा है और उसके नाम से हम पवित्र होते है । रावण चला गया और अपनी वुराइयो को अपने साथ ले चला । कोई दुष्ट मनुष्य भी रावण नाम का स्मरण नही करते है । राम के युग मे न जाने राम कैसा था । कवि ने इतना तो वता दिया है कि अपने युग में राम पर भी आक्षेप रहा करते थे । परतु आज राम की सव अपूर्णता राम के

शरीर के साथ भस्म हो गई और उसको अवतारी समझकर हम पूजते है और राम का राज्य आज जितना व्यापक है उतना हरगिज राम के शरीरस्थ रहते हुए नही था। यह बात मै बडी तत्वज्ञान की नही लिख रहा हू न हमारे लिये शाति रखने के कारण। परतु मै दृढता से यह कहना ही चाहता हू कि जिसको हम सतपुरुप मानते है उनके देहात का कुछ भी दु ख नही मानना चाहिये। और इतना दृढ विश्वास रखना चाहिये कि सत पुरुष के कार्य का सच्चा आरम्भ या कहो सच्चा फल उसके देहान्त के बाद ही होता है। अपने युग मे जो उसके बडे-बडे कार्य माने जाते है वह भविष्य मे होने के परिणाम के साथ केवल यत्किन्चित है। हा, हमारा इतना कर्तव्य है सही कि हम हमारे ही युग मे जिनको हम सत्पुरुप माने उनकी सब साधुता का यथाशक्ति अनुकरण करे।

आपके स्वास्थ्य के लिये मेरी यह सूचना है कि यदि आपका विश्वास ऐलोपेथिक पर नही—और न होना चाहिये—तो आप जर्मनी मे लूई कूने और जुस्ट की सस्था है उसे देखे। वहा खुली हवा और पानी के उपचार होते है और उसमे सैकडो लोगो ने लाभ उठाया है। लडन और मैन्चेस्टर दोनो जगह पर वेजिटेरियन सोसाइटी है उसका भी परिचय करे। उस समाज मे हमेशा थोडे अच्छे, गम्भीर, विनयी और मध्यवर्ती मनुष्य रहते है। मूर्ख लोग भी और मदान्ध तो देखने मे आयेगे ही।

आपका
मोहनदास

अगला पत्र एक सप्ताह बाद लिखा गया, जो अग्रेजी में था

कुमार पार्क
बगलौर, ९ जून, १९२७

भाई घनश्यामदासजी,

आपके बम्बई से रवाना होने के बाद से मै आपको यह चौथा पत्र लिख रहा हू। जमनालालजी ने मेरे पास आपका विलायत से भेजा हुआ तार भेजा है, इसीलिए यह अग्रेजी का पत्र जाता है। मै खुद पत्र लिखने की कोशिश नही करुगा, क्योकि मुझे अपनी शक्ति बनाये रखनी है, इसलिए मै अधिकाश पत्र व्यवहार अग्रेजी, हिन्दी या गुजराती मे बोलकर लिखाता हू।

मालवीयजी आज मेरे पास ही है। वह स्वास्थ्य सुधारने के लिए ऊटी जा रहे है। आज सुबह ही आये थे और सध्या को चले जाते, पर मेरे यह कहने पर कि परसो मैसूर के महाराज का जन्मदिन है, इसलिए उन्हें ऊटी के लिए रवाना होने से पहले मैसूर जाकर उन्हे आशीर्वाद देना चाहिए, उन्होने दीवान को तार भेजा है। उन्होने अपनी यात्रा स्थगित कर दी है

और शायद कल को मैसूर के लिए रवाना होगे। मै उनके साथ वरावर पत्र-व्यवहार करता आ रहा हू और वह तार द्वारा उत्तर देते आ रहे है। काफी दुवले हो गये है, पर सारे मामलो मे उनकी आशावादिता ज्यो-की-त्यो वनी हुई है। उन्हे किसी प्रकार की शारीरिक व्याधि नही है। यह सारी दुर्वलता तो लगातार परिश्रम करने के कारण है। महीना भर आराम लेने का वचन देते है। साथ मे डाक्टर मगलसिह है और एक रसोइया तो है ही। गोविन्द वम्बई तक तो उनके साथ ही था, पर उसे इलाहावाद जाना पडा, क्योकि उस कांए वाले मामले मे नयी तारीख नही मिल सकी।

याद नही आता कि मैने आपसे मिस म्यूरियल लेस्टर से मिलने को कहा था या नही। वह लदन की वस्तियो मे काम कर रही है। पिछले साल किसी समय यहा भारत मे आई थी और आश्रम मे कोई एक माह ठहरी थी। वडी ही उत्साही और योग्य कार्यकर्त्री है। पूर्ण मद्यपान-निषेध के लिए काम कर रही है और उसके लिए वहा जनमत जागृत कर रही है। उनका पता है

मिस म्यूरियल लेस्टर, किंग्सवे हाल, वोविस रोड, वो, ई, ३

आशा है आपका स्वास्थ्य सुधरा होगा, लालाजी का भी। मै पिछले रविवार को ही नदी से नीचे उतरा था। मेरे स्वास्थ्य में काफी सुधार हुआ है। डाक्टरो का कहना है कि मै अगले महीने तक थोडा वहुत सफर करने लायक हो जाऊगा।

आपका
मोहनदास

मै कुछ समय वाद भारत लौट आया। हमारे पत्र-व्यवहार मे अनेक तत्कालीन समस्याओ की चर्चा जारी रही। पर वापू के पत्रो मे अक्सर आत्मीयता से भरी वे वाते रहती थी, जिनके कारण वह सवके इतने प्रिय हो गए थे।

१-१०-२७

भाई घनश्यामदासजी,

आपका खत मिला है।

जमनालालजी के खत से पता चलता है कि आप योरप से स्वास्थ्य विगाड के आये है। अव कही आराम पाकर स्वास्थ्य दुरस्त करना आवश्यक समझता हू। भोजन की पसन्दगी करने मे मै कुछ सहाय अवश्य दे सकता हू। परतु उसके लिए तो कुछ दिनो तक मेरे साथ रहना चाहिए।

आपने अपनी राय विषय विपय मे भेजी है वह ठीक किया।

असहयोग के कारण दो दल हो गये है ऐसा कुछ नही है। दो दल तो थे ही। जो कुछ हुआ है वह प्राकारातर ही है। मेरा विश्वास कायम है कि असहयोग के सिवा हमारी शक्ति वढ ही नही सकती है। लोग उसका चमत्कार समझ गये है, परन्तु उसको कुछ करने की शक्ति अवतक नही आई है। हिन्दू-मुस्लिम झगडा उसमे ओर वाधा डाल रहा है। कौसिलो की सहाय की चेष्टा मै नही कर सकता हू। परतु मेम्वर चाहे तो खादी और मद्यपान के विपय मे मदद दे सकते है। परतु मेम्वर लोग स्वार्थ, अज्ञान और आलस्य के लिये कुछ कर नही सकते है। खादी इ० का काम मन्द और तेज चल रहा है। मद इस कारण कि हम परिणाम नही देख पाते। तेज इस कारण कि जितना हो रहा है वह स्वच्छ है और स्वच्छ होने से उसका शुभ परिणाम अवश्य होनेवाला है।

धन की भूख तो मुझे हमेशा रहती है। खादी, अछूत और शिक्षा का कार्य करने मे ही मुझे कम से कम दो लाख रुपये आवश्यक रहते है। दुग्धालय का जो प्रयोग चल रहा है उसको आज रु० ५०,०००) दरकार है। आश्रम का खर्च तो है ही। कोई काम रुक नही जाता, परतु ईश्वर रोवा-रोवा कर धन देता है। मुझे उससे सन्तोप है। जिस काम मे आपका विश्वास है और जितना उसके लिये दे सके दे।

मेरा भ्रमण इस वर्ष के अत तक तो चलता ही रहेगा। जनवरी मास मे आश्रम पहुँचने की आशा करता हू।

हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न के वारे मे पू० मालवीयजी को एक पत्र लिखा है। इस वारे मे कुछ न कुछ कार्य योग्य रास्ते से वनाना चाहिये। आज जो चल रहा है उसमे मै धर्म नही देखता हू।

आपका
मोहनदास

विडला हाउस
काशी
११ अक्टूवर, १९२७

परम पूज्य महात्माजी के चरणो मे प्रणाम।

मै यहा पर २० रोज तक केवल विश्राम ही लेता रहूगा। यहा पर मेरे विश्वस्त वैद्य त्र्यवक शास्त्रीजी है, उनकी औपधि मे खा रहा हू। मै जिस तरह वैद्यो की शरण मे जाकर प्राय स्वस्थ वन जाता हू उसी तरह मुझे

अव तक प्राकृतिक इलाज करनेवाला कोई वैद्य नही मिला है जिसे मै अपना शरीर सौपकर निश्चिन्त हो जाऊ ।

पूज्य मालवीयजी यहा नही है । मै ५०,०००) और १,००,०००) के बीच मे सम्भवत आगामी साल के लिए दे सकूगा ।

धन के अभाव मे कही काम रुकता हो तो आप विना सकोच के मुझे लिख दिया करे । वैसे भी कुछ कुछ भेजता रहूगा । मै आपको अधिक धन भी दे सकता हू किन्तु मै भी अपनी कुछ व्यापारी स्कीमो के पीछे लगा हू और उनको पूरा कर देना देशहित के लिए आवश्यक समझता हू, इसलिए कुछ कजूसी कर रहा हू ।

विनीत
घनश्यामदास

वेतिया
सोमवार, १४-१२-२७

भाई घनश्यामदासजी,

आपका पत्र मिला है ।

रु० ८०००) जमनालालजी को भेजे है वह चर्खा सघ के लिये समझता हू ।

शुद्धि के वारे में मै खूब विचार कर रहा हू । जिस ढग से आज शुद्धि की जाती है वह धार्मिक नही है । जो वलात्कार से या अनजानपन मे विधर्मी हो जाते है उनकी शुद्धि क्या करनी थी, वे तो शुद्ध ही है । केवल हिन्दू धर्मी की उदारता का प्रश्न है । हमारा आन्दोलन खृस्ती, इस्लामी शुद्धि के विरोध मे होना चाहिये । इसमे विचार परिवर्तन की ही आवश्यकता है । यदि हम माने कि शुद्धि की प्रणाली दोषित है तो हम क्यो उसकी नकल करे? हम पर आक्रमण हो जाये उसको दूर करने के लिये शुद्ध इलाज ढूढकर हमे उसको ही उपयोग मे लाना चाहिये । शुद्धि के आन्दोलन से हम गन्दगी की वृद्धि करते है और हिन्दू धर्मियो मे जो सुधारणा होनी चाहिये उसको रोकते है । आजकल के आन्दोलन मे मै विचार का अत्यन्त अभाव देख रहा हू । जब आपको कुछ स्थिरता मिले तब इस बारे मे हम शान्ति से विचार कर सकते है । मै यह नही चाहता हू कि मेरे ही कहने से कोई भी कार्य रोक दिया जाय । उसमे हमको फायदा नही हो सकता है, जो मै सोच रहा हू वह स्वतत्रतया यथार्थ है तब ही और उतना ही परिवर्तन होना उचित है । इसलिये मै धैर्य और खामोशी धारण कर रहा हू । मेरी सलाह है कि जब

आपको धारा-सभा में से फुर्सत मिले तव मेरे भ्रमण मे मेरे साथ चन्द दिनो के लिये हो जाय ।

फेब्रेवरी पहली तारीख को मै गोदिया जाते हुए कलकत्ते मे हूगा ।

आपका
मोहनदास

बिडला हाउस, पिलानी
१०-१-१९२८

प्रिय महादेवभाई,

मुझसे जमनालालजी ने पूछा है कि मेरा ७८,०००) रु० का ताजा दान किस काम मे लगाया जाय । मैने यह वात महात्माजी के ऊपर छोड दी है । यदि उन्हे रुपये की वहुत अधिक आवश्यकता न पड गई हो तो मेरा सुझाव है कि यह रुपया ऐसी योजनाओ मे लगाया जाय जिनसे स्वराज्य निकटतर आवे । हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य और अस्पृश्योद्धार भी इन्हीमे से है और स्वराज्य-प्राप्ति के लिए इनकी नितान्त आवश्यकता है ।

तुम्हारा ही
घनश्यामदास

आश्रम
ता० ७-२-२८

प्रिय घनश्यामदासजी,

आपका पत्र मिलने से चिन्ता तो अवश्य होती है। दवा से तो थकान लगना चाहिए। मेरी दृष्टि मे प्रथम उपाय तो सम्पूर्ण उपवास ही है। मुझको इसका कोई डर नही है। उपवास से नुकसान हो ही नही सकता है। और उपवास एक-दो दिन का ही नही किन्तु १०।१५ दिन का होना चाहिए। यदि उपवास करना ही है तो आपको यहाँ रहना ही चाहिए। उपवास का शास्त्र जाननेवाले एक दो सज्जन है, उनको बुला सकते है, रहने का प्रवन्ध तो है ही। आजकल यहाँ की आबोहवा अच्छी है। अगर उपवास-शास्त्रज्ञ को पिलानी मे बुलाना चाहते है तो भी प्रवन्ध हो सकता है ।

मेरा तो दृढ विश्वास है कि आपको देहली हरगिज जाना नही चाहिए। पूज्य मालवीयजी व लालाजी को मै आज ही लिख भेजता हूँ। हकीमजी अजमलखा के वारे मे जो स्मारक के लिए मैने य इ और न जी में प्रार्थना निकाली है उसके लिए मै आपसे और आपके मित्रो से द्रव्य चाहता

हूँ। यदि आप अधिक न देना चाहें और आप आप सम्मति दे दें तो आपने ७५,०००) दिया है उनमें से यही नाम निकाल दूं। आपका नाम देना न देना आप पर छोड़ता हूं। यदि उनमें से कुछ देते हों दिल न चाहे तो बगैर संकोच मुझको लिख सकें।

मेरे स्वास्थ्य के बारे में अखबारों में कुछ पढ़ने से आप न डरें। ऐसी कोई बात चिन्ताजनक नहीं। डाक्टर लोग अवश्य डराते हैं परन्तु उनका कुछ प्रभाव मेरे पर नहीं पड़ता है।

आपका
मोहनदास

२-८-२८

भाई घनश्यामदासजी,

आपका पत्र और रु० २,८००) की हुंडी मिली है। मैं चीन के साथ सम्बन्ध तो चाहता हूं परन्तु उन लोगों को तार भेजने का दिल नहीं चाहता। उसमें कुछ अभिमान का अंश आता है। यदि आयु है तो चीन जाने का इरादा अवश्य है। कुछ शांति होने के बाद वह लोग मुझको बुलाना चाहते हैं।

आप सब भाइयों के पास से आर्थिक मदद मांगने से मुझको हमेशा संकोच रहता है, क्योंकि जो कुछ मांगता हूं आप मुझे दे देते हैं। दक्षिणा-मूर्ति के बारे में मैं समझता हूं। बात यह है कि मुल्क में अच्छे काम तो बहुत हैं, परन्तु दान देनेवाले कुछ कम हैं। अच्छा काम रुकता नहीं है परन्तु नये देनेवाले उत्पन्न नहीं होते हैं। नये काम तो हमेशा बढ़ते जाते हैं।

ठीक कहते हो, नियमावली की कीमत केवल नियमों के पालन करने वालों पर निर्भर है।

रुपये आस्ट्रिया के मित्रों को भेज दिये हैं।

आपका
मोहनदास

१४-१-२९

भाई घनश्यामदासजी,

आपका तार मिला था। पत्र भी मिला है। लालाजी स्मारक के लिए मैं इस मास के अन्त में सिंध जा रहा हूं। कलकत्ते में आपने कुछ इकट्ठा किया ?

दुग्धालय के बारे मे एक मद्रासी का नाम मैंने दिया था, उसको पत्र लिखा। यदि वह अनुकूल न लगे तो दूसरा नाम मैं दे सकता हू। खादी भडार के बारे मे जो उसका उद्देश्य है उसको मत भूलिएगा। केवल वणिक वृत्ति से न चलना चाहिए। भडार को पारमार्थिक दृष्टि से चलाना है।
मेरा स्वास्थ्य अच्छा है। आजकल मेरा खुराक १५ तोला बादाम का दूध, १४ तोला रोटी भीगी। सब्जी, टमाटर कच्चा, अलसी का तेल ४ तोला, दो तोला आटे की रबडी प्रात काल मे। यहाँ फल छोड दिये है। एक हप्ते मे १।। रतल वजन बढा है। शक्ति ठीक है।

आपका
मोहनदास

बरेली
१३-६-२९

भाई घनश्यामदासजी,
हरभाई दक्षिणा-मूर्ति भवन मे नानाभाई के साथी है। नानाभाई बीमार हो गये है। वर्धे में इस विद्यालय के बारे मे हमारे बीच मे बात हुई थी इस पर से मै उनको आपके पास भेजता हू। इस सस्था को क्या मदद देना वह आप ही सोचने वाले थे। आज तो मैने नानाभाई को अभय वचन दिया है। वह आप ही के दान के आधार से है। अब आप हरभाई से सब बात सुन लेगे, सस्था का हिसाब देखेगे और उचित करेगे।

आपका
मोहनदास

सन् १९२९ के अन्त मे गाधीजी के गोलमेज-परिषद् मे लदन जाने का सवाल उठा। इस परिषद् को बुलाने का उद्देश्य यह था कि साइमन कमीशन मे सिर्फ ब्रिटिश पार्लामेट के सदस्यो को रखने से भारतवासियो के मन पर जो बुरा असर पडा था वह दूर हो जाय और जिस गवर्नमेट आफ् इडिया बिल का रास्ता साफ करने के लिए साइमन कमीशन नियुक्त किया गया था उसका मसविदा तैयार करने मे भारत के लोग भी हिस्सा ले सके। मैने इस बात की कोशिश की कि भारत की ओर से गाधीजी इस परिषद् मे जाय। लेकिन उन दिनो वह अपने सविनय अवज्ञा

आन्दोलन का दूसरा दौर शुरू करने वाले थे और उसमें बहुत ही व्यस्त थे। मैंने उन्हें यह पत्र लिखा :

पिलानी
११ नवम्बर, १९२९

परम पूज्य मालवीयजी के चरणों में सविनय प्रणाम।

मैं पिलानी आया हूँ। ४-५ दिन के बाद आऊँगा। कामन्स सभा और लार्ड्स की बहस तो आपने पढ़ ही ली होगी। मेरी राय में तो परिस्थिति को देखते हुए बेन की नीति अच्छी थी। यदि हम उनकी ईमानदारी में सन्देह न करें तो कहना होगा कि उनकी कठिनाइयों को देखते हुए वे इससे ज्यादा नहीं कर सकते थे। बेन की भावना में परिवर्तन हुआ है ऐसा तो स्पष्ट हो रहा है। नेताओं के वक्तव्य का प्रतिवाद नहीं किया, यह भी शुभ चिह्न है। लायड जार्ज के बार-बार पूछने पर भी बेन ने स्पष्टीकरण देने से इनकार किया और एक प्रकार से 'मौनं स्वीकृति लक्षणम्' के न्याय से हमारी धारणा का पोषण भी किया। मेरी राय में वाइसराय एवं बेन नेकनीयती के साथ हमें सहायता देना चाहते हैं, किन्तु मैं नहीं मानता कि हमें पूर्ण औपनिवेशिक दर्जा मिलने वाला है। यह मैं जरूर मानता हूँ कि यदि आप वहाँ पहुँच गये तो हमें अधिक-से-अधिक लाभ हो सकेगा। वहाँ की सरकार आपको असन्तुष्ट करके वापस नहीं जाने देगी, ऐसा मेरा पक्का विश्वास है। शायद फौज के रिजर्वेशन के साथ हमें कुछ दे दें। इसके विपरीत आप लोगों के न जाने से मुझे परिस्थिति बिगड़ती दिखाई देती है। इसी चिन्ता से प्रेरित होकर यह पत्र लिख रहा हूँ और आपको बिना पूछे परामर्श देना चाहता हूँ कि आप सम्मान-पूर्वक परिस्थिति को अवश्य सम्हाल लें। मैं जानता हूँ कि आपका रुख भी यही है, किन्तु फिर भी लिख देना मैंने उचित समझा है। मैं राजनीतिक मामलों में आपको कभी सलाह नहीं देता हूँ, किन्तु परिस्थिति को देखते हुए ऐसा करना आवश्यक समझा है। देश की शक्ति के साथ-साथ उसकी कमजोरी का आपसे अधिक मुझको ज्ञान नहीं है, किन्तु इसके कारण मैं कभी-कभी बहुत निराश हो जाता हूँ, और इसलिए यही सूझता है कि यदि आपके तप का—हमारी शक्तियों का नहीं—फल हमें मिलना चाहता हो तो हमें उसे ले लेने का प्रबन्ध कर लेना चाहिए। यदि पूरा औपनिवेशिक दर्जा मिले तब तो आप झटपट ले लेंगे, यह मैं जानता हूँ, किन्तु मुझे ऐसी आशा नहीं है। बहुत से बहुत, और सो भी आपके सहयोग से, फौज छोड़कर अन्य सब चीजें हमें सम्मान-पूर्वक उस समय मिल सकती हैं, मुझे तो इतनी ही आशा है। आप

शायद इतना स्वीकार न करे और कान्फ्रेन्स मे जाने से मुह मोड ले, इस भय से चिन्तित था और पत्र लिखने का भी यही प्रयोजन है।

आपके जाने के बाद वाइसराय से मै डिनर पर मिला था। उनकी बातो से इतनी बात मुझ पर स्पष्ट हो गई

१ कैदी छोडने मे आनाकानी करेगा, किन्तु उन्हे छोड देगा।
२ कान्फ्रेन्स का सगठन आप लोगो की राय और मशवरे से होगा।
३ शायद १९३० की जुलाई तक कान्फ्रेन्स कर लेगे।
४ पूर्ण औपनिवेशिक दर्जा देना कठिन है।

किन्तु इस अन्तिम बात को वे अभी तो कान्फ्रेन्स पर हो छोड देगे। न तो वे यही कहना चाहते है कि औपनिवेशिक दर्जे की पूर्णता मे अभी देर है, न यही कहना चाहते है कि शीघ्र ही औपनिवेशिक दर्जा स्थापित हो सकेगा। किन्तु मेरी समझ यह है कि पूर्ण औपनिवेशिक दर्जा हमे अभी नही मिलेगा, तो भी हम बहुत कुछ सम्पादन कर सकते है और बचा-खुचा भी ५-१० साल तक ले सकते है। आज की परिस्थिति मे हम इससे अधिक की आशा भी कैसे कर सकते है? मेरी राय का निचोड यह है कि आपका ब्रिटिश केबिनेट से मिल लेना हमारे लिए बहुत हितकर है और इस मौके को हमे छोडना नही चाहिए। यदि कान्फ्रेन्स असफल भी हो जाय तो भी हमारा लाभ ही है, क्योकि इससे गरम दल वालो का प्रभाव बढेगा। हमारे तो दोनो हाथ लड्डू दीखते है। मैने अपनी राय लिख दी है, बाकी तो आप सोच ही लेगे।

विनीत
घनश्यामदास

मै गाधीजी को पहली परिषद् मे भाग लेने के लिए राजी कराने मे असफल रहा। गाधीजी तो समझे बैठे थे कि उन्हे जेल जाना पडेगा। जब हमारी मुलाकात वर्धा मे हुई तो उन्होने मुझसे यह साफ तौर पर कह दिया कि उन्हे अग्रेजो पर घोर अविश्वास है। उन्होने इस बात पर भी जोर दिया कि अब भारतीय सदस्यो को धारा-सभा से बिलकुल अलग रहना चाहिए। २८ फरवरी, १९३० को उन्होने लिखा "वे (अर्थात् अग्रेज लोग) केवल हमारे अज्ञान और भीरुता से लाभ उठाते है। असेम्बली से जितनी जल्दी विदा ली जाय उतना ही अच्छा है। मै तो मार्च

की समाप्ति तक जेल से बाहर रहने की बहुत कम आशा रखता हूँ।"

इस मौके पर स्वराज्य-पार्टी ने उनकी सलाह मान ली और सारे सदस्य असेम्बली को छोड़कर चले आये। पर मुझे तो यह काम अक्लमंदी का नहीं लगा, क्योंकि असेम्बली के द्वारा भारतवासियों को संसदीय कार्यशीलता का बड़ा अच्छा अनुभव मिल रहा था। स्वराज्य पार्टी की समझ में यह बात अच्छी तरह आ गई। फलतः वह अगले चुनाव में फिर खड़ी हुई और असेम्बली में गई। अगले वर्ष गांधीजी ने वाइसराय लार्ड विलिंगडन के तर्क मान लिये और मालवीयजी तथा मुझ जैसे मित्रों की प्रार्थना स्वीकार कर वह दूसरी गोलमेज परिषद् में जाने के लिए तैयार हो गये। इस परिषद् के लिए कांग्रेस ने उनको अपना एकमात्र प्रतिनिधि नियुक्त किया। मैं कांग्रेस का सदस्य नहीं था, इसलिए मैंने व्यापारी वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में परिषद् में भाग लेने का सरकारी निमंत्रण स्वीकार कर लिया। गांधीजी की इंग्लैंड-यात्रा के बारे में इतने विस्तार के साथ लिखा जा चुका है कि यहां कुछ लिखना अनावश्यक होगा। लार्ड हैलीफैक्स के वायसराय के पद पर रहते हुए जब गांधीजी उनसे मिले थे और दोनों ने मिलकर गांधी-अरविन पैक्ट की रूप-रेखा तय की थी, तभी से लार्ड हैलीफैक्स और गांधीजी, दोनों एक-दूसरे पर अधिकाधिक विश्वास करने लगे थे। किन्तु एक वर्ष पहले की परिषद् के बाद से दृश्य अब बदल चुका था। श्री रैमजे मेक्डॉनल्ड अब भी प्रधान मंत्री थे और बदस्तूर परिषद् की अध्यक्षता कर रहे थे। पर अब वह मजदूर सरकार के नेता न रहकर एक संयुक्त सरकार के नेता थे, जिसमें श्री बाल्डविन और उनके अनुदार साथियों का स्थान प्रमुख था। भारत मंत्री के पद पर अब श्री वेजवुड बेन के बदले अनुदार दल के सदस्य सर सेम्युअल होर (बाद में लार्ड टेम्पिलवुड) थे। इसलिए गांधीजी की तरह मुझे भी अंग्रेजों की

नीयत पर शक होने लगा था, जैसा कि मेरे नीचे लिखे पत्र से प्रकट होगा

लदन
३१ अक्तूबर, १९३१

प्रिय सर तेज बहादुर सप्रू

जब मैंने सघ-विधायक-समिति (Federal Structure Committee) की रिपोर्ट की १८वी, १९वी और २०वी धाराओ का आपकी सम्मति से भिन्न अर्थ निकाला तो आपको तथा श्री जयकर को मेरा ऐसा करना बडा ही मूर्खतापूर्ण लगा होगा। पर मेरा उद्देश्य अपनी आशकाओ को व्यक्त करना था और यदि मे उन आशकाओ द्वारा अनावश्यक रूप से प्रभावित हो गया होऊ तो मै समझता हू कि अतीत को देखते हुए मेरा ऐसा करना अनुचित भी नही था। यदि मेरा निर्वचन निराधार हो तो अच्छा ही है। पर जो हो, हमे आर्थिक नियत्रण-सम्बन्धी जो वचन दिया गया है, यदि उसमे किसी प्रकार का व्याघात उपस्थित करने की कौशलपूर्ण चेष्टा की गई तो मेरा यह पत्र आपको उसके खिलाफ चौकन्ना अवश्य कर देगा। हमे आर्थिक नियत्रण तो प्राप्त होना ही चाहिए, उसमे किसी प्रकार के प्रतिबध की गुजाइश नही।

अब मेरा दृष्टिकोण यह है कि हमारे अर्थविभाग सम्बन्धी नियत्रण का मापदड सचमुच की रकम पर हमारा नियत्रण माना जाना चाहिए। फर्ज करिये, हमे एक प्रतिशत नियत्रण का अधिकार मिले और बाकी ९९ प्रतिशत आरक्षण के अधीन रहे तो मै एक व्यावहारिक व्यापारी के नाते कहूगा कि हमारा नियत्रण केवल एक प्रतिशत है। यदि हमे शत-प्रतिशत नियत्रण का अधिकार मिले और उसमे से ५० प्रतिशत आरक्षण के बतौर बाद दे दिया जाय तो मै कहूगा कि हमे केवल ५० प्रतिशत नियत्रण का अधिकार मिला है। अब इस आधार को सामने रखकर हमे देखना चाहिए कि हमे अर्थ-विभाग मे किस हद तक नियत्रण का अधिकार मिला है।

यदि आप १९वी धारा के पूर्वांश का अवलोकन करेगे तो ऐसा प्रतीत होगा कि कुछ परिसीमाए लगाकर हमे शतप्रतिशत नियत्रण का अधिकार दिया गया है। अब हमे देखना चाहिए कि वे परिसीमाए क्या है। मेरी राय मे १८, १९ और २०वी धाराओ मे निम्नलिखित परिसीमाए लगाई गई है

१ रिजर्व बैंक की स्थापना,
२ पत्र मुद्रा या टक वर्ग विधान मे सशोधन करने से पहले गवर्नर जनरल की स्वीकृति,
३ स्थायी रेल्वे बोर्ड की स्थापना,

४ ऋण-व्यय, ऋण-व्यय के लिए शोधन कोष, वेतन और पेशन और सैनिक विभाग के लिए धन की व्यवस्था करने के हेतु सघनित कोष (Consolidated fund charge) भार का सगठन,

५ जब गवर्नर जनरल समझे कि जो ढग अपनाये जा रहे है उनके कारण भारत की साख को गहरा धक्का लगेगा तो उसे बजट सबधी और उधार लेने की व्यवस्था मे हस्तक्षेप करने का अधिकार।

मेरी राय मे इन अधिकारो के अन्तर्गत समूचा आर्थिक क्षेत्र आ जाता है। अतएव मेरा कहना है कि इन धाराओ के द्वारा हमे कोई उत्तरदायित्व नही मिलता है। मै यहा अर्थ-विभाग का सक्षिप्त ढाचा देता हू जिससे आप अनुमान कर सकेगे कि मै ठीक बात कहता हू या गलत। रेल्वे बजट को मिलाकर अर्थ-विभाग की आय और व्यय लगभग एक अरब तीस करोड है। इसके अलावा अर्थ-विभाग के जिम्मे भारतीय मुद्रा और विनिमय की भी देखभाल करना है। मै यह मानकर चलता हू (और यदि मै अविश्वास का आचरण करू तो धाराओ के बुरे-से-बुरे अर्थ लगा सकता हू) कि रिजर्व बैक का सृजन हम नही करेगे और व्यवस्थापिका सभा का उसपर कोई अधिकार नही रहेगा। मै स्वय नही चाहता हू कि रिजर्व बैक के दैनिक कार्यक्रम पर किसी प्रकार का राजनीतिक प्रभाव रहे, पर रिजर्व बैक की नीति निर्धारित करने के मामले मे अतिम अधिकार व्यवस्थापिका सभा को रहे, और मै समझता हू, पत्र मुद्रा विधान मे सशोधन के लिए गवर्नर जनरल की स्वीकृति प्राप्त करने की शर्त लगाकर हमसे अधिकार छीन लिये गये है। स्थायी रेल्वे बोर्ड की स्थापना के द्वारा जिसकी रचना मे भी हमारा हाथ बिलकुल नही रहेगा। हमसे और भी चालीस करोड रुपये ले लेने की व्यवस्था की गई है। अब हमारे पास रह गये ९० करोड। इनमे से ४५ करोड सेना के लिए चाहिए, १५ करोड ऋण व्यय के लिए, और १५ करोड रुपये पेन्शन और अन्य मदो के लिए चाहिए। इस प्रकार ७५ करोड रुपये सघनित कोषभार के लिए चाहिए और इस मद का आय पर पहला दावा रहेगा। इस प्रकार हमारे पास १३० करोड मे से केवल १५ करोड रह गये। जिस किसी को भी १३० करोड की आय पर ११५ करोड व्यय का सर्वप्रथम अधिकार रहेगा वह हमारी बजट-सबधी और उधार लेने की व्यवस्था मे पद-पद

पर हस्तक्षेप करना चाहेगा, और यही कारण है कि गवर्नर जनरल को हस्तक्षेप करने का अधिकार दिया गया है। अनिश्चित भारतीय ऋतु में वजट में ५ से १० करोड तक उतार-चढाव अवश्यम्भावी है, इसलिए कदम-कदम पर गवर्नर जनरल के अर्थ-सदस्य के ऊपर चढ दौडने का खतरा वना रहेगा। अतएव अर्थ-सदस्य को गवर्नर जनरल के हाथ की कठपुतली वनने को वाध्य होना पडेगा। अत मेरी राय मे इन तीन धाराओ के अन्तर्गत लोकप्रिय अर्थ-मत्री को किसी प्रकार का नियत्रण-सम्वन्धी अधिकार नही दिया गया है। मेरा कहना है कि ये धाराए रिजर्व वैक तक ही सीमित नही है, जैसा कि आपका कहना है, वल्कि समूचे क्षेत्र पर व्याप्त है।

आप पूछ सकते है, तो फिर चारा ही क्या है? मैने कल कहा था कि ये धाराए सघनित कोष-भार के सगठन का स्वाभाविक परिणाम है। इसके दो विकल्प हो सकते है। या तो सघनित कोपभार को सुझाई गई मात्रा की अपेक्षा अत्यधिक सकुचित कर दिया जाय, और या गवर्नर जनरल को हमारी चूक होने तक हस्तक्षेप करने का अधिकार न रहे। मेरी राय मे तो हमे इन दोनो ही विकल्पो की माग करनी चाहिए। सघनित कोप को सेना के लिए निश्चित रकम मे कमी करके और हमारे ऋण-व्यय मे सहायता की माग करके सकुचिन किया जा सकता है। वेथल ने मुझे वताया है कि इस प्रकार की सहायता की माग की जा सकती है। उनका कहना है कि अपने ऋणो मे से कुछ के रद्द किये जाने की माग करने के वजाय, जैसा कि काग्रेस कर रही है, हम व्रिटेन से उन ऋणो को पूजी का रूप देने की माग कर सकते है। जो हो, यदि हमे भारत के लोकोपकारी विभागो के लिए रुपये की व्यवस्था करनी है तो हमे ठोस सहायता के लिए अवश्य झगडना चाहिए। यदि सैनिक व्यय घटाकर ३५ करोड कर दिया जाय और व्रिटेन से सहायता मिलने के वाद ऋण-व्यय और अन्य मदो पर किया जाने वाला व्यय २० करोड रह जाय तो कुल सघनित कोप-भार ५५ करोड से अधिक नही रहेगा। यदि रिजर्व वैक और स्थायी रेलवे वोर्ड की स्थापना सोलह आने हमारे हाथ की वात और उस पर आम नीति के मामले मे व्यवस्थापिका सभा का पूरा नियत्रण रहे तो मै समझता हू अर्थ-सदस्य को काफी स्वच्छदता रहेगी। वैसी अवस्था मे यह उचित तर्क पेश किया जा सकता है कि कुल १३० करोड की आय मे गवर्नर जनरल का सर्व-प्रथम व्यय केवल ५५ करोड है। इसलिए उसे वजट-सम्वन्धी और आतरिक उधार सम्वन्धी व्यवस्था मे दखल देने का अधिकार नही होना चाहिए।

मै समझता हू, मैने अपने विचारविन्दु को पूरी तौर से स्पष्ट कर दिया है। मुझे इसमे तनिक भी सदेह नही है कि मेरी आशका पूर्णतया सकारण है। मैने इन तीन धाराओ का जो अर्थ निकाला है, मेरी राय मे उनका यही अर्थ सम्भव भी है। मेरी राय मे अग्रेज इन धाराओ का दूसरा अर्थ नही निकालेगे, पर यदि आपका अब भी यही विश्वास हो कि ये धाराए रिजर्व वैक की स्थापना तक ही सीमित है, तो मेरा सुझाव है कि उनके वाक्य-विन्यास मे परिवर्तन कराके आप इस बात को साफ करा लीजिये। मैने इनका दूसरा अर्थ निकाला है। इसीलिए तो मैने कहा था कि उनका स्थान प्रस्तावित अर्थ-परिषद नही ले सकती है। यदि प्रस्तावित अर्थ-परिषद का गठन हमारे ऊपर छोड दिया जाय तब तो वह बिलकुल निर्दोष वस्तु सिद्ध होगी, जबकि इन तीनो धाराओ के द्वारा गवर्नर जनरल को हमारे समूचे आर्थिक ढाचे पर पूरा अधिकार दे दिया गया है। वास्तव मे आर्थिक विभाग के तथा-कथित नियत्रण को शून्य कर दिया गया है।

आशा है, आप मेरे नोट पर ध्यान-पूर्वक विचार करेगे।

भवदीय
जी० डी० बिडला

पुनश्च

मैने इतने विस्तार के साथ केवल इसलिए लिखा है जिससे आपको अपना यह मन्तव्य स्पष्ट कर दू कि यदि फार्मूला को उसी रूप मे स्वीकार कर लिया गया, जिस रूप मे हम लोगो ने १८ पैरे के आधार पर कल विचार किया था, तो जबतक सैनिक-व्यय और ऋण-व्यय की मदो मे भारी कमी करने की व्यवस्था नही की जायगी तबतक बजट-सम्बन्धी व्यवस्था मे गवर्नर जनरल द्वारा हस्तक्षेप बराबर होता रहेगा। यदि उपरिलिखित सुझाव के अनुसार इन दोनो मदो मे कमी कर दी गई तो ब्रिटिश सरकार और व्यापारिक हितो को यह माग करने का अधिकार नही रहेगा कि गवर्नर जनरल बजट सम्बन्धी व्यवस्था मे दखल दे। मै यह "पुनश्च" सारी बात थोडे शब्दो मे बताने के लिए दे रहा हू।

उन दिनो सर तेज बहादुर सप्रू भारत मे एक मत्री जैसी हैसियत रखते थे। वह साम्राज्य परिषद् मे भारत का प्रतिनिधित्व भी कर चुके थे। इसलिए अग्रेजो के अनोखे तरीको से वह मेरी अपेक्षा अधिक परिचित थे। मै जानता था कि अग्रेज मुँह से जो

कह देता है वह उसकी लिखित प्रतिज्ञा के वरावर होता है। इसलिए एक व्यापारी की हैसियत से मै अग्रेजो के शव्दो की ही छानवीन किया करता था, और समझे वैठा था कि वे किसी भी शर्त का अक्षरग पालन करने मे विग्वास रखते है। लेकिन व्रिटिग सविधान की परम्परा ही कुछ ऐसी कृत्रिम है कि जो रुख अग्रेज लोग व्यापार के मामले मे अपनाते है ठीक उसका उल्टा ऊचे सरकारी मामलो मे दिखलाते है। वे कहते एक वात है, जवकि उनका अभिप्राय कुछ दूसरा ही होता है। इसका प्रारम्भ तव हुआ जव उन्होने अपने राजा की गक्ति-सामर्थ्य के क्षेत्र को पीडा-रहित ढग से सकुचित करना गुरू किया। अव यह सिलसिला उपनिवेगो और आश्रित प्रदेगो पर पार्लमेण्ट की गक्ति-सामर्थ्य के क्षेत्र को उनके स्वतत्र होने की घडी तक सकुचित करते रहने तक जारी रहता है। इसलिए सोचिये कि मुझे कितना आग्चर्य हुआ होगा जव सर तेज और उनके निकट के साथी श्री जयकर ने मेरे पत्र मे कही गई वात मानना तो एक ओर, उल्टे मेरे तर्क से असहमति प्रकट की। अतएव मै नीचे का पत्र लिखने को प्रेरित हुआ

लदन
२ दिसम्वर, १९३१

प्रिय डाक्टर जयकर,

कल किग स्ट्रीट मे वातचीत के दौरान मे आपने मेरी गोलमेज परिषद मे दी गई स्पीच को नापसन्द किया था। मै आपकी सम्मति का आदर करता हू, इसलिए मुझे वडा दुख हुआ कि आपको मेरे विचारो से असहमत होना पडा। पर मै इतना अवश्य कहूगा कि मैने कोई वात अचानक ही नही कह दी है। मैने गत ३१ अक्तूवर को सर तेज वहादुर सप्रू को जो पत्र लिखा था उसकी एक प्रति आपके पास भी भेज दी थी, और उसके वाद मुझे यह समझाने के लिए कि मै गलती पर हू, न आपने ही मुझसे वात की, न सर तेज ने ही, इसलिए मै इसी नतीजे पर पहुचा कि १४, १८ और २१ धाराओ का मैने जो अर्थ निकाला है उससे आप सन्तुष्ट है। वास्तव मे आपने तो मेरे पत्र की पहुच तक स्वीकार नही की। पर

मुझे जिस वात से निराशा हुई वह यह थी कि सघ-विधायक-समिति मे मर तेज ने मेरी आशका को दूर करने के स्थान पर और भी आगे वढकर १४, १८ और २१वे पैरो का उनके मूल रूप मे समर्थन करने के वाद अभिरक्षणो के सम्वन्ध मे सर सेमुअल होर के वक्तव्य का भी समर्थन ही किया। आर्थिक अभिरक्षणो पर सघ-विधायक-समिति की जो अतिम रिपोर्ट निकली है, उसमे एक प्रकार मे मर सेमुअल होर के वक्तव्य को ही नये परिच्छेदो मे रख दिया गया है। सर पुरुपोत्तमदास ने तो सघ-विधायक-समिति मे दोप दिखाने की चेप्टा की भी थी, पर उन्हे आपकी ओर से कोई सहायता नही मिली।

अव स्थिति यह है कि १४, १८ और २१वे पैरो मे अभिरक्षणो को जिस रूप मे रखा गया है उसका स्थिरिकरण हो गया है, और इसके अलावा यह भी सुझाया गया है कि फिलहाल उन अभिरक्षणो की विस्तृत व्याख्या करना जरूरी नही है। मेरी राय मे तो अव इस सम्वन्ध मे कोई भी सदेह नही रहना चाहिए कि अभिरक्षणो का क्या मर्म है। उनकी उपलक्षणाए अव मेरे लिए विल्कुल स्पष्ट है, और मैने २१ अक्तूवर की सर तेज के नाम अपनी चिट्ठी मे जो विचार व्यक्त किये थे, अव उनकी पुप्टि हो गई है।

मुझे यह कहते हुए वडा खेद होता है कि जव सर पुरुपोत्तमदास ठाकुरदास ने सघ-विधायक-समिति मे स्थायी रेल्वे वोर्ड का प्रश्न उठाया, तव भी उनका वैसा ही अनुभव रहा। प्रवध सम्वन्धी मामलो मे विवेचना से काम लेने के प्रश्न तक पर सर तेज वहादुर सप्रू ने इस विचार का समर्थन किया कि इसका निर्णय सुप्रीम कोर्ट के द्वारा किया जाय। इस मामले मे भी सर पुरुपोत्तमदास पर वैसी ही वीती। मेरी राय मे इस प्रकार एक वडे ही खतरनाक सिद्धात को जन्म देने की वात सोची जा रही है। यह सचमुच वडे ही दुर्भाग्य की वात है कि जिन मामलो के विपय मे हम अतरग ज्ञान रखने का दावा कर सकते है उनमे भी हमे आपका और सर तेज का समर्थन प्राप्त नही हो सका।

मै आपसे इस मामले मे सहमत नही हू कि १४, १८ और २१वे पैरो को दुहराने के प्रश्न पर अव भी विचार-विमर्श की गुजाइश है। पर मुझे यह देखकर दु ख होता है कि हम उन्हे यहा दुहराने का अवसर मिलने पर भी ऐसा नही कर सके। आपने कल महात्माजी से कहा था कि प्रधान मत्री के भापण के द्वारा अव सारे प्रश्न पर दुवारा विचार करने की गुजाइश पैदा हो गई है। मुझे ताज्जुव है कि आपने इस स्पीच का यह अर्थ कैसे निकाला है। भावी ढाचे का निर्माण उन रिपोर्टों के आधार पर ही किया

जा सकता है जो मैंने पेश की है और जिनपर आप अभी तक दृढ हैं, और जिनके द्वारा जहा तक अर्थ-विभाग का सम्बन्ध है हमे रत्ती बराबर भी नियत्रण नही मिलता है—सेना और विदेश विभागो की तो बात ही जुदी है।

जो कुछ किया जा चुका है, जो कुछ तय हो चुका है, गोलमेज परिषद की कार्यकारिणी समिति उसमे कोई परिवर्तन नही कर सकती है। वह तो केवल उन्ही मामलो को आगे बढा सकती है जिनपर निश्चय किया जा चुका है, पर अभी न उसकी कार्य-सीमा ही निर्धारित की गई है, न यही तय किया गया है कि उसके जिम्मे क्या-कुछ सौपा गया है।

मै आपको आश्वासन देता हू कि मै बात समझने के लिए तैयार हू, और यदि मेरी समझ मे आ जाय कि मै ही गलती पर हू तो मेरी चिन्ता दूर हो जायगी, पर मुझे कहना पडता है कि आपने हमे यह बताये बिना कि हमारी आशकाए निर्मूल है, कुछ विशेष निष्कर्ष को स्वीकार कर इस दिशा मे मेरी सहायता नही की। जो हो, यह तो मै व्यक्तिगत विचार व्यक्त करने के लिए लिख रहा हू। मुझे आशा करनी चाहिए कि आप ठीक मार्ग पर है। क्या मै व्यवस्थापिका सभा की पुरानी नेशनेलिस्ट पार्टी के एक पुराने सहयोगी के नाते यह सुझाव रख सकता हू कि आप यह स्पष्ट करदे कि गोलमेज परिषद मे बहुमत से जो आर्थिक अभिरक्षण पास किये है वे आपको स्वीकार नही है, और आप इस प्रश्न पर और ऊपर कहे अन्य प्रश्नो पर दुबारा विचार किये जाने की माग करेगे? मुझे हृदय से विश्वास है कि आप अब भी ऐसा करने मे समर्थ होगे।

भवदीय
जी० डी० बिडला

सन् १९३७ मे भारतीय शासन-विधान लागू हुआ। गवर्नर जनरल और प्रातो के गवर्नरो ने काग्रेसी प्रधान मत्रियो तथा उनकी सरकारो के काम मे दखल देने की कोई कोशिश नही की और जब अत मे गाधीजी ने ब्रिटिश सरकार को इस बात का पूरा विश्वास दिला दिया कि भारत एक राष्ट्र है तब उन्होने बडी अच्छी तरह से अपने को हटा लिया। आज हमने रिजर्व बैक और रेलवे बोर्ड को जो बनाए रखा है, या गणतत्र होकर भी

जो हम अभी तक राष्ट्रसमूह मे ही बने हुए है सो सब स्वेच्छा से। इन सब बातो से प्रमाणित होता है कि एक-दूसरे के तौर-तरीको को समझने-बूझने का कितना महत्व है। शुरू-शुरू मे तो ब्रिटेन ने हम लोगो को समझने की चेष्टा नही की थी, पर जब दोनो पक्षो ने एक-दूसरे को समझ लिया तो उसका परिणाम बडा ही सुन्दर रहा।

: ४ :

वैधानिक संरक्षण

मै तो यहा तक आगे बढ गया था कि मैने आर्थिक सरक्षणो पर विचार करने के लिए एक विशेष समिति के नियुक्त किये जाने पर जोर दिया। जब परिषद् भग हो गई और मै भारत लौट आया तो मुझे सर सेम्युअल होर का एक पत्र मिला जिसमे उन्होंने मेरे सुझाव को मानने से इन्कार कर मुझे एक दूसरे ही प्रकार की समिति मे शामिल होने का निमत्रण दिया

इडिया आफिस
व्हाइट हाल
२७ जनवरी, १९३२

व्यक्तिगत

प्रिय श्री बिडला,

मैने आपको वचन दिया था कि मै आपको आपके इस सुझाव के सम्बन्ध मे अपनी राय बताऊगा कि आर्थिक अभिरक्षण का प्रश्न एक ऐसी समिति के सिपुर्द कर दिया जाय जिसमे ऐसे लोगो को भी शामिल किया जाय जिन्हे आर्थिक मामलो की जानकारी हो, पर जो गोलमेज परिषद की परामर्श-दायिनी समिति के सदस्य न हो। मै कुल मिलाकर इस नतीजे पर पहुँचा हू कि अब, जब कि हमने एक ऐसी परामर्शदायिनी समिति का गठन कर लिया है जिसका काम गोलमेज परिषद द्वारा बताई गई आम नीति का अनुसरण करना होगा, उस पर एक ऐसी व्यवस्था लादना जिसके अतर्गत ऐसी समितिया स्थापित करना हो, जिनके सदस्य बाहर से लिये जाय, अनुचित होगा। मेरी धारणा है कि ऐसी व्यवस्था मे से अस्तव्यस्त करनेवाली शाखाए फूट निकलेगी। मै समझता हू, सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास परामर्शदायिनी समिति मे भाग लेने मे असमर्थ है। आपको उसमे अपने लिए स्थान की माग करने की स्वतत्रता है,

और यदि आप ऐसा करेंगे तो आप उसके सदस्य नामजद हो ही जायगे।

भवदीय
सेमुअल होर

इधर गाधीजी ने सविनय अवज्ञा आन्दोलन फिर से शुरू कर दिया था। मै भारतीय वाणिज्य-उद्योग सघ का एक भूतपूर्व अध्यक्ष था ही। उसने भी गोलमेज परिषद् से नाता तोड लिया था। मैने नई दिल्ली से १४ फरवरी १९३२ को सर सेम्युअल होर को पत्र लिखा और उन्हे धन्यवाद देते हुए कहा

बिडला हाउस
अलबूकर्क रोड
नई दिल्ली
१४ फरवरी, १९३२

प्रिय सर सेम्युअल,

आपके गत मास की २७ तारीख के पत्र के लिए धन्यवाद। मुझे यह देखकर खेद हुआ कि आपको मेरा यह सुझाव कि सारे आर्थिक मामलो पर विचार करने के लिए एक उपसमिति अलग बनाई जाय, ग्राह्य नही है। मै तो आपसे अब भी इस सुझाव पर दुबारा विचार करने का अनुरोध करूगा, क्योकि आर्थिक समस्याओ का विवेकपूर्ण विचार इस विषय को समझने वाले व्यक्तियो की अनुपस्थिति में सम्भव नही है।

आपने यह सुझाकर कि यदि मै समिति में शामिल होना चाहू तो मुझे नामजद किया जा सकता है, बडी कृपा की। पर मेरी राय में मेरे लिए ऐसा रुख अपनाना ठीक नही रहेगा। वैसी अवस्था में मै सघ के प्रति वफादारी का सबूत नही दूगा और अपने आपको कोई अच्छा कार्य-सम्पादन करने के अयोग्य प्रमाणित करूगा। मै अपने देश और सहयोग के हित में जो सबसे अच्छी सेवा कर सकता हू वह यही है कि सघ को बाकायदा सहयोग प्रदान करने के लिए राजी करू। मै जानता हू कि कार्यकारिणी के कार्यकलाप में हमारे भाग लेने के सम्बन्ध में सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास का भी वही मत है जो मेरा है। इसके अलावा भारतीय व्यापारी वर्ग के प्रतिनिधि की हैसियत से वह मुझसे कई बातो मे अच्छे है। उनमें अपेक्षाकृत अधिक व्यवहार-कुशलता, अधिक योग्यता और अधिक अनुभव है। यदि हम दोनो सघ से अपने रुख में सशोधन कराने में समर्थ

हुए तो मुझे इसमे तनिक भी सदेह नही है कि भारतीय व्यापारी वर्ग का प्रतिनिधित्व करने के लिए वह सबसे योग्य व्यक्ति है।

एकमात्र इसी प्रश्न पर विचार करने के हेतु सघ की बैठक बुलाई जा रही है। उसके बाद मे मै आपको फिर लिखूगा। मै यह भी चाहूगा कि हमारे बीच मे जो कुछ विचार विनिमय हुआ है उसकी खबर वायसराय महोदय को भी रहे, जिससे आवश्यकता पडने पर हम आपको कष्ट दिये बगैर ही उनसे बातचीत कर सके।

मै सघ के प्रमुख सदस्यो के साथ इस समस्या की चर्चा करने दिल्ली आया था और अब फिर कलकत्ते के लिए रवाना हो रहा हू। वहा मै श्री बेथल और अन्य व्यक्तियो के साथ व्यवसाय और वाणिज्य मे दिलचस्पी रखनेवाले दोनो वर्गो के अपेक्षाकृत निकटतर सहयोग के प्रश्न पर बातचीत करूगा।

भवदीय
जी० डी० बिडला

अपने अगले पत्र मे सर सेम्युअल ने एक नया प्रश्न उठाया, वह था साम्राज्य अधिमान (इम्पीरियल प्रेफरेन्स) के बारे मे ओटावा मे होने वाली परिषद् का प्रश्न, जिसका उस समय अपना निजी महत्व था :

इडिया आफिस
व्हाइट हाल
२५ फरवरी, १९३२

प्रिय श्री बिडला,

आपके १४ फरवरी के पत्र के लिए अनेक धन्यवाद। मुझे यह जानकर सचमुच प्रसन्नता हुई कि आप और सर पुरुपोत्तमदास वैधानिक विचार-विमर्श मे सहयोग प्रदान करने के मामले म सघ को उसके रवैये मे सशोधन करने को राजी करने की चेष्टा कर रहे है। मै आपके इस कार्य मे सफलता की कामना करता हू। सघ की बैठक की समाप्ति पर आपके पत्र की प्रतीक्षा करूगा। मुझे यह जानकर भी प्रसन्नता हुई कि आप व्यवसाय और वाणिज्य के मामले मे दोनो वर्गो के निकटतर सहयोग के लिए श्री बेथल से बातचीत कर रहे है।

एक और अत्यत महत्वपूर्ण प्रश्न है जिसकी ओर आपका और सर पुरुपोत्तमदास का ध्यान दिलाना आवश्यक है। वह प्रश्न है ओटावा परिषद का। जैसा कि आपको मालूम ही है, आगामी यह परिषद ग्रीष्म ऋतु

मे होनेवाली है। जहा तक भारत का सम्वन्ध है, साम्राज्य के विभिन्न उपनिवेशो के चुगी सवधी पारस्परिक सम्वन्ध का अवतक का इतिहास मुझे मालूम है, पर मुझे आशा है कि आप समझ लेगे कि सम्राट की सरकार की नई नीति इस प्रश्न को एक विलकुल नये आवार पर रखने की है—ऐसे आवार पर जिसमे भावुकता और राजनीति को गौण और आर्थिक हितो को मुख्य स्थान दिया जायगा। यदि ओटावा-परिपद मे भारत का प्रतिनिधित्व उस मनोभाव के साथ नही हुआ जिसके द्वारा दोनो देशो के लिए एक समान लाभदायक व्यवसाय और वाणिज्य सम्वन्धी वार्त्तालाप सम्भव हो सके, तो मुझे वडी निराशा होगी।

भवदीय
सेमुअल होर

मैने सघ समिति के सदस्यो से परामर्श करके नीचे लिखा जवाव दिया

विडला हाउस
नई दिल्ली
१४ मार्च, १९३२

प्रिय सर सेम्युअल,

आपके २५ फरवरी के पत्र के लिए धन्यवाद। हमारी समिति की वैठक हो गई। इस पत्र के साथ पास किये गए प्रस्ताव की एक प्रति भेजता हू। जैसा कि आप स्वय देखेगे, प्रस्ताव के द्वारा समस्या का तुरत हल तो उतना नही होता है, पर उसके द्वारा सहयोग की नीति अपनाने की वात निश्चित रूप से तय कर दी गई है। प्रस्ताव के पहले भाग मे हमने सरकार से दमन की वर्तमान नीति मे परिवर्तन करने का अनुराध किया है, दूसरे भाग मे हमने उस अर्थ का खडन किया है जो सर जार्ज रेनी ने हमारे पहले प्रस्ताव का लगाया था, और तीसरे भाग मे हम उस समिति को अपना सहयोग निश्चित रूप से प्रदान करते है, जिसकी नियुक्ति हमारे सुझाव के अनुरूप सारे आर्थिक मामलो पर विचार करने और उसका सर्व-सम्मत हल खोज निकालने के लिए होनी चाहिए। हमने इस मामले पर विशद रूप से विचार-विमर्श किया और वैठक में यह स्पष्ट रूप से तय कर लिया गया कि यदि सरकार ने हमारे सुझाव को अपना लिया और हमारे अनुरोध के अनुसार एक समिति की नियुक्ति की तो सघ उस नई समिति मे भाग लेने को तो तैयार होगा ही, साथ ही वह परामर्श-दायिनी समिति मे भी भाग लेगा।

इससे आगे बढना सम्भव नही था। सघ की सदस्य सस्थाओ से जो सम्मतिया प्राप्त हुई घे अत्यधिक बहुमत से भाग न लेने के पक्ष मे थी। पर समिति ने इस मामले मे पथप्रदर्शन करने का जिम्मा अपने ऊपर लेकर इन अनेक मण्डलो के दृष्टिकोण के बावजूद सहयोग प्रदान करने का निश्चय किया—हा, कुछ शर्तो के साथ। वार्षिक अधिवेशन २६ और २७ मार्च को होगा। उस समय इस प्रस्ताव की पुष्टि करानी होगी। यह पुष्टि आवश्यक है, क्योकि हमने अपने मण्डलो की आम राय के खिलाफ आचरण किया है। पर समिति ने एक मत से इस प्रस्ताव पर अपने अस्तित्व की बाजी लगा दी है। और यदि यह प्रस्ताव पास नही हुआ तो सबने मिलकर इस्तीफा देने का निश्चय कर लिया है। उन्होने सब प्रकार से भारी साहस का परिचय दिया है और मुझे आशा है कि प्रस्ताव अपने वर्तमान रूप से पास हो जायगा। वैसी अवस्था मे, मै समझता हू, मुझे आप पर अपने मूल सुझाव के स्वीकार किये जाने का जोर डालना चाहिए, क्योकि अब यह सुझाव सघ ने वर्तमान प्रस्ताव के रूप मे अपना लिया है।

आपको पिछली बार लिखने के बाद मैने लार्ड लोदियन और सर जार्ज शुस्टर से बात की और उन्हे बताया कि जो लोग आर्थिक मामलो को समझते ही नही है उनसे आर्थिक अभिरक्षणो की चर्चा करना व्यर्थ समय नष्ट करना है। मैने उन्हे यह बात सुझाई कि ऐसे मामलो का व्यावहारिक हल तलाश करने का एकमात्र मार्ग यही है कि दोनो पक्षो के अनुभवी व्यापारी एक साथ बैठे और सर्वसम्मत हल ढूढ निकाले। लार्ड लोदियन और सर जार्ज शुस्टर, दोनो को मेरा सुझाव बहुत ही पसन्द आया और उन्होने आपको पत्र लिखने का वचन दिया। आशा है, उन्होने लिखा होगा। मै दो-एक दिन मे शुस्टर से मिलूगा और १७ तारीख को वायसराय से भी मिल रहा हू, पर मेरा आपसे यही अनुरोध है कि आप अपने रुख पर दुबारा विचार करिये। यदि आप ऐसी समिति नियुक्त कर सके, चाहे वह परामर्शदायिनी समिति के तत्वाधान मे ही क्यो न हो, जिसमे एक ओर लार्ड रीडिंग और सर बैसिल ब्लैकैट जैसे आदमी हो और दूसरी ओर हमारे पक्ष के भी उतने ही व्यक्ति हो, और सब मिलकर सारे आर्थिक मामलो पर चर्चा करे, तो मुझे यकीन है कि उसका फल बहुत अच्छा निकलेगा।

शायद एक उन्मूलनवादी भारत और एक अत्यत अनुदार पार्लमेंट मे इस समय समझौता सम्भव न हो, पर मेरा निवेदन यह है कि वर्तमान पार्लमेंट तथा काग्रेस से असम्बद्ध प्रगतिशील भारतीय लोकमत के बीच समझौता अवश्य सम्भव है। बस, मै इसी दिशा मे आपकी सहायता

और पथप्रदर्शन चाहता हू । मै चाहता हू कि आप यह बात समझें कि यदि विधान को काग्रेस की तो बात ही क्या, प्रगतिशील वर्ग तक की सहमति के बगैर अमल मे लाया जायगा तो उसके निष्कटक रूप से चलने की बात निश्चित रूप से नही कही जा सकती है। इसके विपरीत, यदि आप हमें ऐसा शासन विधान प्रदान करेगे जो प्रगतिशील वर्ग को रुचिकर होगा तो उसे गाधीजी तक का आशीर्वाद प्राप्त हो जायगा । मै गाधीजी और काग्रेस में हमेशा से भेद करता आया हू, और मेरा आपसे कहना यही है कि आपके लिए हमे ऐसा विधान प्रदान करना सभव है जो काग्रेस को ग्राह्य न होते हुए भी गाधीजी द्वारा नामजूर नही किया जाय और जिसका भविष्य मे निष्कटक रूप मे अमल में आना सभव हो। यदि विधान के जारी किये जाने के दूसरे ही दिन उसका विध्वस करने के लिए कोई आन्दोलन खडा कर दिया गया तो शाति असम्भव हो जायगी, और मै चाहता हू दोनो देशो मे स्थायी शाति । अतएव हमने जो प्रस्ताव पास किया है, मेरा अनुरोध है कि आप उसपर गभीरतापूर्वक विचार करे और यह देखें कि हम जो प्रगतिशील लोकमत को अपने निकटतर लाना चाहते है उसके निमित्त हमारी सेवाओ को काम में लाना आपके लिए सभव होगा या नही। मेरा आपसे अनुरोध है कि आप हमें शाति के निमित्त कार्य करने का अवसर दे। मेरा आपसे अनुनय है कि आप हमारे सुझाव पर विचार करें ।

रही दोनो वर्गो के निकटतर सहयोग की बात, सो मुझे खेद के साथ कहना पडता है कि मुझे श्री बेथल मे विशेप प्रोत्साहन नही मिला। लदन में हमने प्रगाढ मैत्री का आचरण किया और हरेक ने दूसरे के दृष्टिकोण को देखने और समझने की चेष्टा की, और मुझे आशा थी कि यह सिलसिला भारत में भी जारी रहेगा। पर अब तो वह बिलकुल बदल गये दिखाई देते है, और उनकी एक स्पीच की रिपोर्ट ने तो मुझे सचमुच अचम्भे मे डाल दिया है। उस स्पीच की एक प्रति इस पत्र के साथ भेजता हू। मेरी तो समझ में नही आता कि लदन में अत्यत मैत्रीपूर्ण सहयोग के बाद वह हम लोगो को "कभी न मनाये जा सकने वाले" कैसे कह सके और गाधीजी की खिल्ली कैसे उडा सके ! इससे खुद उनकी भी बडाई नही होती है और इसका भारतीय व्यापारी वर्ग के मन पर बडा ही बुरा प्रभाव पडा है। इतने पर भी जहा तक मेरा सम्बन्ध है, हम लोग अपने मण्डलो को गलत मार्ग पर नही ले जाना चाहते इसलिए मेरा ठीक दिशा मे शुरू किया गया प्रयत्न जारी रहेगा ।

किन्तु रचनात्मक कार्य के लिए विश्वास और मैत्री के वातावरण की दरकार है, और फिलहाल दुर्भाग्यवश भारत में इसका अभाव है।

वास्तव मे इस क्षोभकारी स्थिति मे आपके पत्रो से चैन मिलता है। यह स्पष्ट ही है कि आप सहज ही विश्वास कर लेते है, अतएव मेरी जिम्मेदारी भी वढ गई है। इसलिए मै चाहूगा कि मै जैसा कुछ हू, आप मुझे जान जाय। मेरे लिए यह कहना अनावश्यक हैं कि मै गाधीजी का वहुत वडा प्रशसक हू। वास्तव मे, यदि मै यह कहू कि मै उनका एक लाडला वालक हू, तो अनुचित न होगा। मैने उनके खद्दर और अस्पृश्यता-निवारण सम्वन्धी कार्यकलाप मे हाथ खोलकर धन दिया हैं। मेरा यह भी अचल विश्वास है कि भारतीय जनता के लिए अतिरिक्त धधे के रूप मे खद्दर अच्छा काम करता हैं। मैने न तो कभी सविनय अवज्ञा आन्दोलन मे भाग ही लिया हैं और न उसमे कभी रुपया ही दिया है। पर मै सरकार की आर्थिक नीति का कडा आलोचक रहा हू, इसलिए मै अधिकारी वर्ग को कभी अच्छा नही लगा हू। इस समय भी मै सरकारी नीति से सहमत नही हू। काश, मै अधिकारियो को यह विश्वास दिला सकता कि गाधीजी और उनके जैसे व्यक्ति अकेले भारत के ही नही, ब्रिटेन के भी मित्र है, और कि गाधीजी शाति और व्यवस्था मे विश्वास रखने वाले पक्ष के सवसे वडे समर्थक है। अकेले वही भारत के वामपथियो को कावू मे रखे हुए है। अतएव मेरी राय मे उनके हाथ मजवूत करना दोनो देशो की मैत्री की पाश को मजवूत करना है। पर मुझे आशका है कि वर्तमान वातावरण मे गाधीजी के सम्वन्ध मे समझाना एक कठिन कार्य है। शायद इस मिशन मे सफलता प्राप्त करने का सवसे अच्छा मार्ग है जहा तक सम्भव हो, आपको सहयोग प्रदान करना। और मेरी त्रुटियो के वावजूद यदि आप समझते है कि मै दोनो देशो मे मैत्री-पूर्ण सम्पर्क स्थापित करने मे उपयोगी सिद्ध हो सकता हू तो आप मेरी तुच्छ सेवाओ पर हमेशा निर्भर कर सकते हैं।

ओटावा-परिषद के सम्वन्ध मे मेरा कहना यही हैं कि यदि आपकी यह अभिलाषा है कि उसमें भारतीय व्यवसाय ओर वाणिज्य का भी प्रतिनिधित्व रहे, जैसा कि मै आपके पत्र से समझा हू, तो जव कभी सर पुरुषोत्तमदास को निमत्रण दिया जावेगा वह खुशी-खुशी स्वीकार कर लेगे। मै यह उनकी पूरी रजामन्दी से लिख रहा हू। सघ की समिति इस योजना के खिलाफ नही होगी। हम लोग इस परिषद की महत्ता को समझते है और, आप निश्चिन्त रहिये, ठीक दिशा मे हमारा समर्थन मौजूद रहेगा।

क्या मै इस सम्वन्ध मे एक और सुझाव दे सकता हू? ओटावा मे जो कुछ भी निर्णय हो, उसपर उस समय तक व्यवस्थापिका सभा द्वारा सही न हो जवतक नया विधान अमल मे न आ जाय, और मेरी विनम्र

सम्मति मे समझौता उस समय तक अमल मे न आवे जवतक उसपर नई सरकार सही न कर दे। हम सव आर्थिक मामलो में प्रतिव्यवहार के कायल है। हा, यह अवश्य है कि व्यवस्था ऐमी हो कि वह लोकमत के अनुकूल हो। पर ऐमी योजना कोई कठिन कार्य नही है।

मुझे आपकी यह वात वडी अच्छी लगी कि आप इतिहास की वातो की ओर मे उदासीन नही है। जहा तक हमारा सम्वन्ध है, आप हमे भावुकता और राजनीति को छोडकर आर्थिक हितो के लिए काम करने को सदैव तत्पर पायगे।

मै यहा एक पखवाडे रहूगा और उसके वाद कलकत्ता वापस चला जाऊगा।

भवदीय
जी० डी० विडला

वाद को प्रस्ताव के तीसरे पैरे म थोडा-सा सशोधन कर दिया गया। मैने फिर लिखा

विडला हाउस
नई दिल्ली
२८ मार्च, १९३२

प्रिय सर सेम्युअल,

सघ का वार्पिक अधिवेशन कल समाप्त हो गया और हम लोगो ने गर्मागर्म वहस के वाद प्रस्ताव पास कर ही लिया। इस पत्र के साथ उसकी एक प्रति जाती है। जैसा कि आप स्वय देखेगे, मूल प्रस्ताव के तीसरे पैरे मे कुछ रद्दोवदल किया गया है, पर सार वही है। कई लिहाज से यह प्रस्ताव समिति द्वारा पास किये गए प्रस्ताव से अच्छा है, क्योकि यह गोलमटोल वात न कह कर कुछ शर्तो के साथ निश्चित रूप से सहयोग प्रदान करता है।

मैने अपने अतिम पत्र में जो कुछ कहा है, मुझे उससे अधिक कुछ नही कहना है। मैने लदन मे आपके साथ वातचीत के दौरान में जो विचार रखे थे मुझे यह कहते हुए सतोप होता है कि मै सघ को उन्हे अपनाने को राजी करने मे समर्थ हुआ हू। अतएव आप जव कभी समझे कि हम भारत मे शाति और प्रगति के लिए उपयोगी सिद्ध होगे, हम सहर्ष सहायता करने को तत्पर रहेगे। मेरा तो आपसे यही अनुरोध है कि आप दूरदर्शिता से काम लें। मै ऐसा इसलिए कह रहा हू कि भारत का अधिकारी वर्ग दिन-प्रतिदिन की नीति वरत रहा है और अपने पथप्रदर्शन के लिए अनिश्चित और अज्ञात वातो पर निर्भर करता है। यह नीति राजनेताओं की नही है।

मैं भारतीय स्थिति के इस पहलू पर और अधिक टिप्पणी करना नहीं चाहता हू, पर मेरी बडी अभिलाषा है कि सरकार दोनो देशो के कामचलाऊ शाति के स्थान पर स्थायी शाति की चेष्टा करे। मै तो समझता हू, ऐसा वर्तमान अनुदार पार्लमेंट के होते हुए भी सम्भव है। बीच-बीच में आपका समय लेता रहता हू, क्षमा करियेगा।

भवदीय
जी० डी० बिडला

८ अप्रैल को सर सेम्युअल होर ने उत्तर दिया कि वह मेरे द्वारा उठाये गए मुख्य-मुख्य प्रश्नो पर सावधानी के साथ विचार कर रहे है। उन्होने बाद मे इस विषय पर लिखने का वचन दिया। मेरी डायरी मे लिखा मिलता है

मैं बगाल के गवर्नर से १० अप्रैल, १९३२ के साढे दस बजे प्रात काल मिला। बडे चतुर और बुद्धिमान प्रतीत हुए। बहुत कम बोलते है और आर्थिक समस्याओ को अच्छी तरह समझते मालूम होते है। मैंने मौसम को लेकर बातचीत आरम्भ की और पूछा कि उन्हे गर्मी के कारण कुछ असुविधा तो नही होती है। इसके बाद ही हम अपेक्षाकृत अधिक महत्वपूर्ण प्रश्नो की चर्चा मे लग गये। मैंने आशा प्रकट की कि उनकी शिमला-यात्रा का परिणाम अपेक्षाकृत अधिक अच्छा होगा। उन्होंने पूछा कि क्या मेरा अभिप्राय आर्थिक मामलो से है। मैंने कहा कि मै आर्थिक मामलो मे किसी प्रकार के सुधार की आशा नही रखता, मेरा अभिप्राय तो राजनीतिक मामलो से है। आर्थिक सुधार असम्भव कल्पना है। ससार दोषपूर्ण मौद्रिक व्यवस्था से पीडित है, और जबतक इस व्यवस्था मे परिवर्तन न होगा उसमे स्वाभाविक समायोजन (Natural adjustment) को छोडकर और किसी प्रकार सुधार होना सभव नही है, और इसमे काफी समय लगेगा, सभव है, इसके कारण समाज के ढाचे मे असाधारण अव्यवस्था उत्पन्न हो जाय। वह मुझसे इस बारे मे सहमत हुए कि मूल्यो के स्तर मे स्थिरता अधिक उत्तम है, पर बोले कि प्रबधित चलार्थ (Managed Currency) का प्रबन्ध करने का जटिल काम किसके सुपुर्द किया जाय ? मैंने कहा कि यह तो कोई मुश्किल काम नही है। यदि हम रुपये के एवज में अमुक मात्रा मे सोना लेने को तैयार है, तो हम रुपये के एवज मे १०० दशनाक क्यो नही दे सकते है ? उन्होंने कहा कि दशनाक एक जटिल काम है। मैं सहमत तो हुआ, पर बोला कि ससार मे कोई वस्तु पूर्ण नही है। उन्होने कहा सट्टेबाजी, का बाजार गर्म होगा। मैंने बताया कि सोने को छोडकर और सारी चीजो मे सट्टेबाजी कम होगी।

उन्हें मेरा सुझाव पसन्द तो आया, पर साथ ही उन्होने इस व्यवस्था को कार्यान्वित करने के मामले में घबराहट जाहिर की। मैंने कहा कि यह कार्य केवल तानाशाही के लिए ही सम्भव है। ससार मूर्ख प्रजातन्त्र से पीडित है। हमें प्रजातन्त्रीय तानाशाहो की दरकार है। बात में विरोधाभास-सा दिखाई अवश्य पडा, पर मेरा आशय उनकी समझ मे आ गया। मैंने बताया कि १५ प्रतिशत राजनीतिक व्याधियो का कारण दोषपूर्ण आर्थिक व्यवस्था है। भारत मूल्यो के नीचे स्तर से पीडित है। इस स्तर को ५० प्रतिशत ऊपर उठा देना चाहिए। उन्होने पूछा कि क्या मूल्यो का स्तर इतना ऊचा उठाना आवश्यक है। मैं बोला, हा, सर बैसिल ब्लेकेट की भी यही राय है। मैंने उन्हे समूचे प्रश्न का अध्ययन करने की सलाह दी। १९२१ में किसानो में कोई हलचल नही थी। सारी राजनीतिक अशाति मजदूरो तक सीमित थी। अब यह क्या बात है कि मजदूर खामोश है और देहाती जनता में इतना असतोष फैला हुआ है? वह सहमत हुए और बोले कि काग्रेस ने मजदूरो में अशाति फैलाने की चेष्टा तो की थी, पर वह असफल रही। मैंने बताया कि मैंने इस प्रश्न का अध्ययन किया है, और देखा है कि कपडे की खपत को छोडकर किसान ने अन्य दिशाओ में बचत की है। इस वर्ष उसने सोना बेचकर, आशिक लगान भुगता कर और सूद अदा न करके अपना गुजारा किया है। अगले वर्ष बेचने के लिए उसके पास सोना नही बचा है, इसलिए वह लगान और कर नही देगा। मैंने बताया कि मै छोटा नागपुर में केवल ५ प्रतिशत लगान वसूल कर सका, पर वास्तव मे अवस्था उतनी बुरी नही है। भारत मे और चाहे जो हो, आगामी १५ वर्षो में उस समय तक शाति नही होगी जबतक मूल्यो का स्तर ऊचा नही किया जायगा। परतु यदि राजनीतिक अशाति को दूर कर दिया जाय तो इस अशाति की स्थिति पर बहुत ही साधारण-सा प्रभाव पड कर रह जायगा। मैंने उन्हें बताया कि मुझे यह सारा व्यापार बडा परेशान करने वाला भी लगता है और बडा सहज भी। सहज इसलिए कि हमारा ध्येय एकसमान है। फिलहाल आरक्षणो और अभिरक्षणो सहित औपनिवेशिक स्वराज्य ही हम दोनो का लक्ष्य है। गाधीजी अभिरक्षणो के सम्बन्ध में चर्चा करना चाहते थे। इस विषय की चर्चा क्यो नही की गई और गाधीजी को अनेक मामलो पर विचारविमर्श का अवसर क्यो नही दिया गया?

वह खामोश रहे। मैंने उन्हे बताने की चेष्टा की कि गाधीजी मुनासिब बात मानने को तैयार रहते है, और उन्हें यह भी बताया कि गाधीजी के साथ मेरा क्या सम्बन्ध है। मैंने उन्हे बताया कि मै गाधीजी को १९१६ से जानता हू,-१९२१ से उनका पक्का प्रशसक रहा हू और उनके साथ

गोलमेज परिपद मे काम कर चुका हू। मैंने यह भी कहा कि राजनीतिक और आर्थिक मामलो मे मैं सरकार का कडा आलोचक रहा हू। यद्यपि मैंने सविनय अवज्ञा आदोलन मे भाग नही लिया है और न उसमे रुपया ही लगाया है, तथापि मैंने भी सरकार को अस्तव्यस्त करने की भरसक चेप्टा की है और गाधीजी के रचनात्मक कार्यो मे हाथ खोलकर रुपया दिया है। अतएव मैं गाधीजी के मन की बात जानने का दावा करू तो बेजा नही होगा। गाधीजी वडे ही विवेकशील और वडे ही विनयशील आदमी है। मै मानता हू कि काग्रेस की माग को पूरे तौर से स्वीकार करना सम्भव नही है, पर साथ ही ऐसा शासन-विधान अमल मे लाना सम्भव है जिसे गाधीजी अस्वीकार न करे। ऐसा विधान अमल मे लाने से लाभ ही क्या, जो स्वीकार्य न हो ? वह मुझसे सहमत हुए और बोले कि कुछ भी सही, शासन-विधान तो आ ही रहा है। कहा, यदि शासन-विधान को निष्क्रिय रूप से भी मजूर न किया गया तो उसे अमल मे लाना ही बेकार है। मैंने कहा कि वह बहुत कुछ कर सकते है। मैंने गाधीजी का जो वर्णन किया था उससे वह सहमत हुए। फिन्डलेटर स्टूआर्ट ने उनसे गाधीजी की भूरि-भूरि प्रशसा की थी। उन्होने बताया कि किस प्रकार उन्होने आशका प्रकट की थी कि सम्भव है, गाधीजी से जल्दबाजी मे सविनय अवज्ञा आन्दोलन आरम्भ करा दिया जाय, पर किस प्रकार फिन्डलेटर स्टूआर्ट ने कहा कि ससार मे ऐसा कोई प्राणी नही है जो गाधीजी से उनकी मर्जी के खिलाफ जल्दबाजी करा सके, पर यह अवश्य दुर्भाग्य की बात है कि अपने सहकारी लोगो के कारण उन्हे उलझन मे फसना पडता है। मैंने उन्हे आश्वासन दिया कि उन्होने वस्तुस्थिति को गलत समझा। गाधीजी को जल्दबाजी से काम लेने को बाध्य किया लार्ड विलिंगडन ने। भारत मे कोई विवेक-बुद्धिवाला आदमी मौजूद ही नही था। अब हेली विवेकशील आदमी है, वह स्वय (अर्थात् एण्डरसन) विवेकशील आदमी है। लार्ड विलिंगडन को गाधीजी से कोई सहानुभूति नही है। वह उन्हे जानते नही, उन्हे समझते नही। गवर्नर ने पूछा कि क्या गाधीजी व्यावहारिक व्यक्ति है ? मैंने उत्तर दिया, बेहद। उन्होने कहा कि उन्हे फिन्डलेटर स्टूआर्ट ने बताया है कि वह अधिक व्यावहारिक नही है। मैंने कहा कि एक पाश्चात्य मस्तिष्क के लिए गाधीजी जैसे दार्शनिक मस्तिष्कवाले व्यक्ति को समझना कुछ कठिन है। उन्होने जानना चाहा कि क्या गाधीजी आरक्षण और अभिरक्षण स्वीकार करेगे। सेना के सम्बन्ध मे मैंने उन्हे बताया कि हम जानते है कि हमे तुरन्त ही पूरा अधिकार नही मिलेगा, पर इस सम्बन्ध मे गाधीजी ऐसा फार्मूला रखेगे जो सबके लिए ग्राह्य होगा। आर्थिक मामलो मे हम एक ऐसे फैक्टरी के स्वामी

जैसा आचरण करने को तैयार है जिसने अपने डिवेन्चर बधक रख दिये हो। डिवेचर होल्डर को उस समय तक फैक्टरी के दैनिक कार्यकलाप मे टाग नही अडानी चाहिए जबतक उमे उसका रुपया नियमित रूप से मिलता रहे। मै एक कदम और भी आगे बढा और भविष्य के सम्बन्ध मे कुछ ठोस सुझाव पेश किये। यदि गाधीजी को रिहा कर दिया जाय और आतकवादी आन्दोलन की समस्या के सम्बन्ध मे कोई सतोषजनक हल निकल आवे तो खिचाव दूर हो सकता है और गाधीजी के लिए सहयोग करना सम्भव हो सकता है। उन्होने सारी बातो को बडे ध्यान के साथ सुना और कहा, "आपको भारत के अनेक व्यक्तियो की अपेक्षा अधिक जानकारी है।" उन्होने दार्जिलिग से लौटने पर मुझसे और भी बातचीत करने की इच्छा प्रकट की और कहा आप भी दार्जिलिग चले तो क्या बुराई है ?" मैने जाने का वचन दिया।

: ५ :

लार्ड लोदियन का भारत-आगमन

सन् १९३२ मे लार्ड लोदियन भारतीय मताधिकार समिति के अध्यक्ष बनकर भारत आये। वह इडिया आफिस मे पार्लमिटरी उपसचिव थे और भारत से उन्हे वडी सहानुभूति थी। मेरी उनकी खुलकर बातचीत हुई और समिति की रिपोर्ट प्रकाशित होने से पहले मैंने उन्हे एक पत्र लिखा। मेरी चेष्टा थी कि गाधीजी,जो उन दिनो जेल मे थे, व्यावहारिक दृष्टि से विजयी सिद्ध हो, जिससे भविष्य मे असहयोग-आन्दोलन चलाने की आवश्यकता ही न रह जाय। किन्तु मेरी यह चेष्टा सफल न हो सकी। पत्र इस प्रकार था

कलकत्ता
४ मई, १९३२

प्रिय लार्ड लोदियन,

समाचार-पत्रो मे छपा है कि आपका मिशन पूरा हो गया और अब आप ११ तारीख को इगलैंड हवाई जहाज द्वारा वापस जा रहे है। आपकी समिति की रिपोर्ट शीघ्र ही प्रकाशित हो जायगी और मैंने जो कुछ सुना है उसके आधार पर मुझे आशा होती है कि वह सतोषप्रद सिद्ध होगी। आप भारत मे अपने प्रति मैत्री की भावना उत्पन्न कर सके, यह भी कोई कम लाभ की बात नही है। ईश्वर से प्रार्थना है कि भारत के साथ आपके सम्पर्क के फलस्वरूप दोनो देशो का सम्बन्ध मधुर हो।

मै अभी आपको वर्तमान अवस्था के सम्बन्ध में कुछ नही लिखना चाहता हू। अपनी अवलोकन सम्बन्धी असाधारण क्षमता और मैत्रीपूर्ण अवबोध (appreciation) के फलस्वरूप आप भी हालत को उतना ही समझने लग गये है जितना एक भारतीय के लिए सम्भव है। मै आपको केवल इसलिए लिख

रहा हू कि इस नाजुक अवसर पर, जबकि अनेक महत्वपूर्ण प्रश्नो का निपटारा होनेवाला है, इस तथाकथित दुहेरी नीति की सफलता के सम्बन्ध में अपना सदेह प्रकट कर सकू । जब हमने इस विषय की चर्चा कलकत्ता क्लब मे की थी तो आपने विश्वासपूर्वक कहा था कि भारत की सहायता करने का सबसे अच्छा मार्ग यही है कि सुधार जल्दी-से-जल्दी अमल में लाये जाय । मैने यह बात उठाई थी कि ऐसे सुधारो से क्या लाभ जब राष्ट्रवादी उनसे अलग रहेगे ? बस, मेरे दिमाग मे यही बात बार-बार उठ रही है। मै एक प्रकार से निश्चयपूर्वक कह सकता हू कि जबतक सुधारो को भारत के प्रगतिशील लोकमत का समर्थन प्राप्त नही होगा तबतक वे चाहे जैसे भी हो, सफल नही होगे । मै स्वीकार करता हू कि फिलहाल एक उन्मूलक भारत और एक प्रतिक्रियावादी पार्लमेंट मे समझौता शायद सम्भव न हो, पर अच्छी तरह विचार करने के बाद मुझे बोध होता है कि ऐसा शासन-विधान अमल मे लाना असम्भव नही है जिसे गाधीजी और उनके जैसे विचारोवाले व्यक्तियो की मूक सहमति प्राप्त हो । इससे कम-से-कम भारत को कुछ शाति तो मिलेगी, और यह विश्वास करने को मेरा जी नही करता कि कम-से-कम इस लक्ष्य की सिद्धि का कोई उपाय ढूढ निकालना सम्भव नही है । मै समझता हू, इस उद्देश्य की सिद्धि दो प्रकार से हो सकती है या तो गाधीजी का प्रत्यक्ष सहयोग प्राप्त करके, या उनके अप्रत्यक्ष सहयोग के द्वारा । गाधीजी और सर सेमुअल होर में जो पत्र-व्यवहार चल रहा है उससे मुझे अधिक आशापूर्ण दृष्टिकोण अपनाने का प्रोत्साहन मिलता है । १९३० की असुविधा यह थी कि गाधीजी का शासको से कोई सम्पर्क नही था । सौभाग्य से अब यह असुविधा गायब हो गई है, अतएव यदि दोनो पक्षो में सद्भावना मौजूद हो तो रास्ता निकल सकता है ।

अब हमे दोनो विकल्पो का विश्लेषण करना चाहिए । सबसे पहले हमे यह देखना चाहिए कि क्या उनका प्रत्यक्ष सहयोग प्राप्त करना सम्भव है ? मै तो इसे उतना कठिन नही समझता । फर्ज करिये, आर्डिनेंसो को पुन जीवित नही किया जाय । वैसी अवस्था मे गाधीजी की क्या स्थिति होगी ? कार्यकारिणी का अन्तिम प्रस्ताव था कि यदि आर्डिनेंसो के मामले में ठोस राहत न मिले तो सविनय अवज्ञा की जाय । यदि आर्डिनेन्स दुबारा जारी नही किये जायगे तो अवस्था मे आमूल परिवर्तन हो जायगा । फिर केवल सीमाप्रान्त और बगाल की समस्याओ का हल बाकी रह जायगा । युक्तप्रान्त मे जवाहरलालजी ने लगान मे जितनी छूट की माग की थी, मेरी समझ मे उससे भी अधिक छूट दे दी गई है, इसलिए वहा नई कठिनाइया उत्पन्न नही होगी । अतएव यदि आर्डिनेसो की अवधि न बढाई गई और

गाधीजी को रिहा कर दिया गया, उन्हे वायसराय से भेट करने दी गई, वगाल और सीमाप्रान्त मे आर्डिनेसो मे उत्पन्न अवस्था पर विचार-विमर्श किया गया, और इन दोनो स्थानो मे गुत्थी सुलझ गई तो उसके वाद विधान-रचना-कार्य मे सहयोग ओर राजनीतिक वदियो की रिहाई तो आनन-फानन मे हो जायगी। इस दिशा मे मुझे एकमात्र कठिनाई यही दिखाई पड रही है कि भारतीय लोकमत गत वर्ष के मार्च मास की अपेक्षा कही अधिक कडुआ है। सम्भव है, गाधीजी के लिए केवल आर्डिनेसो की मियाद न वढाये जाने मात्र से काग्रेस को सहयोग के लिए राजी करना कठिन हो। जनसाधारण का यह प्रश्न करना सम्भव है "भारत को क्या मिला जो हम सरकार के साथ शाति की वात करे ?" इसम सदेह नही कि गाधीजी काग्रेस को अपने पक्ष मे कर लेगे, पर उसके लिए उन्हे कठोर प्रयास करना पडेगा।

दूसरा मार्ग अपेक्षाकृत अधिक आसान है। फर्ज करिये, आर्डिनेसो की मियाद नही वढाई गई, वैसी अवस्था मे क्या यह सभव नही है कि कोई गाधीजी के मत्रीपूर्ण पथप्रदर्शन के अनुसार विधान-रचना-कार्य मे भाग ले ? इस प्रकार जो समझौता होगा उसे गाधीजी का अप्रत्यक्ष आशीर्वाद तो प्राप्त होगा ही। कह नही सकता, गाधीजी को यह तरीका कितना रुचेगा, पर मै समझता हू, इसकी व्यावहारिकता की खोज करना ठीक ही होगा। कुछ भी कहिये, गाधीजी एकमात्र यही चाहते है कि अच्छा शासन-विधान प्राप्त हो, और यदि ऐसा विधान मिल सके जो गाधीजी को नापसन्द न हो, तो विधान के निष्कटकरूप से अमल मे आने की सम्भावना वहुत वढ जायगी।

मै ये सारी वाते आपके विचारार्थ लिख रहा हू, क्योकि मेरी प्रवल धारणा है कि यदि सरकार मुसलमानो, अस्पृश्यो और नरेशो पर निर्भर करके विधान अमल मे लाई और उसे राष्ट्रवादी भारत की सहमति प्रदान न हुई तो वह वहुत भारी भूल करेगी। वैसी परिस्थिति मे कशमकश जारी रहेगी और भारत को वहुत दिनो तक शाति नही मिलेगी। सरकार को केवल उसी हालत मे काग्रेस की उपेक्षा करनी चाहिए यदि उसका यह इरादा हो कि कोई ठोस प्रगति नही करनी है। और इस दुहेरी नीति को देखकर जनसाधारण को स्वभावतया ही सरकार की नीयत पर सदेह होता है, और उसे जिज्ञासा होती है कि काग्रेस के सहयोग की उपेक्षा करने का और क्या कारण हो सकता है ? कलकत्ते मे जो धारणा व्याप्त है उसके आधार पर मै कह सकता हू कि गैर-सरकारी यूरोपियन तक यह प्रश्न उठा रहे है कि सुधारो को अमल मे कौन लायगा। परसो के 'इगलिशमैन' मे जो अग्रलेख निकला उसमे भी यही भाव व्यक्त किये गए है। इसलिए मै चाहता हू कि

सरकार ऐसी कोई भूल न करे, और कांग्रेस का सहयोग प्राप्त करने के लिए सभी उपायों को खोज निकाला जाय।

आपकी सकुशल समुद्र-यात्रा की कामना करता हूं और आपकी रिपोर्ट प्रकाशित होने पर आपको बधाई भेजने की आशा करता हूं।

मैं १० तारीख को सर जान एडरसन से मिल रहा हूं। आपको जो कुछ लिखा है, उन्हें भी बताने का इरादा है।

भवदीय
जी० डी० बिडला

लार्ड लोदियन ने तुरत वचन दिया कि भारत-मंत्री के इंगलैंड लौटते ही वह इन विषयों को लेकर उनसे बातचीत करेंगे।

१४ मई, १९३२

प्रिय लार्ड लोदियन,

आपके १८ तारीख के पत्र के लिए अनेक धन्यवाद। आशा है, आपकी यात्रा बड़ी सुखद और आनन्ददायक सिद्ध हुई होगी। क्या आपको यह यात्रा समुद्र-यात्रा की अपेक्षा अधिक अच्छी लगी? कम-से-कम मुझे तो हवाई जहाज से यात्रा करना अच्छा नहीं लगता।

कांग्रेस के आत्मत्याग के सम्बन्ध में आपने जो कुछ कहा, बड़ा ही सुंदर रहा। ऐसे उद्गारों का जो अच्छा प्रभाव पड़ता है उसका ठीक-ठीक अंदाजा लगाना सम्भव नहीं है।

मुझे यह जान कर प्रसन्नता हुई कि मैंने अपने पत्र में जिन बातों को उठाया है उनकी चर्चा आप भारत-सचिव के साथ करेंगे। मुझे ऐसा लगता है कि यहां रंग-ढंग में परिवर्तन होनेवाला है, पर सम्भव है, यह मेरा खयाली पुलाव मात्र हो। मैंने अपने पिछले पत्र में जो कुछ कहा है उसकी पुष्टि में मुझे इतना और कहना है कि नेताओं की रिहाई के बगैर साम्प्रदायिक प्रश्न तक के निपटारे की सम्भावना नहीं है। यह प्रसन्नता की बात है कि अभी तक सरकार ने हस्तक्षेप नहीं किया है, और मेरी समझ में श्री जयकर, डा० मुंजे या पंडित मालवीय जैसे हिन्दू-सभाई नेताओं के लिए मुसलमानों की मांगों के स्वीकार किये जाने के लिए आवश्यक बुनियादी तैयारी करना सम्भव नहीं है। यह अकेले गांधीजी के बूते की बात है, और जबतक गांधीजी और अधिकांश नेता जेल में बंद हैं तबतक सरकार का भारतीयों को इस मामले का निपटारा करने में असमर्थ रहने के लिए दोष देना बेकार है। आप

पूछ सकते हैं कि गांधीजी के लदन के लिए रवाना होने से पहले ही भारत मे इस प्रश्न का निपटारा क्यो नही कर लिया गया ? मै इस अभियोग को आशिक रूप मे स्वीकार करता हू, पर मेरा कहना है कि भारतीयो ने साम्प्रदायिक फूट को दूर करने की आवश्यकता को जितना अब समझा है, उतना पहले कभी नही समझा था। मेरी समझ मे यदि नेताओ को रिहा कर दिया जाय और सारे महत्वपूर्ण मामलो पर शात भाव से विचार करने योग्य वातावरण तैयार कर दिया जाय तो साम्प्रदायिक समझौते की सम्भावना बहुत बढ जायगी और साम्प्रदायिक मामले के निपटारे के बाद यदि सर सेम्युअल होर गांधीजी को आगामी सितम्बर मास मे लदन बुला ले और उनसे अर्विन-प्रणाली के अनुरूप बर्ताव करे तो मै समझता हू कि हम लोग बहुत-कुछ प्रगति कर सकेगे।

एक और ऐसी समस्या है, जिसकी ओर गम्भीर भाव मे ध्यान देना आवश्यक है वह है आर्थिक मदी। मुझे आशका है कि इगलैड मे इस बात को अच्छी तरह नही समझा जा रहा है कि भारत मे कैसी नाजुक अवस्था उत्पन्न हो गई है। यदि मूल्यो का स्तर अच्छी तरह ऊँचा नही उठा तो मुझे भय है कि अगले वर्ष मे परले दर्जे की अव्यवस्था हुई रखी है। मैने इसकी चर्चा सर जान एडरसन से भी की थी और मै समझता हू उन्होने अवस्था की गुरुता को समझा भी।

ओटावा-परिषद तो आरम्भ से ही एक प्रकार से श्मशान-भूमि के सिपुर्द हो गई। सरकार को अपने ही ढग से काम करने की टेव-सी है। १९३० मे रेनी रुई की चुगी के मामले मे ब्रिटेन के पक्ष मे अधिमान देना चाहते थे, यद्यपि भारत का समूचा व्यापारी-समुदाय इसके खिलाफ था। परिणाम जो हुआ हम सब जानते ही है। इस बार भी ओटावा-परिषद मे भारतीय व्यापारी वर्ग के मनोभावो के विपरीत कुछ करने की बात सोची जा रही है, और इसका परिणाम यह हुआ है कि ओटावा-परिषद के खिलाफ लोकमत इतना प्रबल हो उठा है कि सम्बद्ध विषयो पर उन्हीके गुण-दोषो के अनुरूप शातभाव से विचार करना असम्भव हो गया है। मैत्रीपूर्ण समझोते के द्वारा क्या कुछ प्राप्त करना सम्भव था, इसका अदाजा तो मैनचेस्टर मे अधिमान के पक्ष मे गांधीजी के उद्‌गारो से ही लग सकता था। पर भारत मे सरकार उचित मनोवृत्ति के साथ काम करना तो चाहती ही नही। वह तो चीज लादना चाहती है। यह सब मै आपको यह बताने के लिए लिख रहा हू कि किस प्रकार भारत मे यदाकदा व्यवहार-कुशलता के अभाव के कारण उपद्रव हुआ करते है।

मुझे आपके इन मनोभावो से बडा ही अह्लाद हुआ कि नवीन विधान

के द्वारा विधान के मुख्य अगो को समान रूप से अधिकार मिलने चाहिए।

आपने पूछा है कि क्या मेरा इन गर्मियो में लदन में आपसे मिलना सम्भव है ? मै यही प्रश्न तो आपसे करना चाहता हू। आप गाधीजी को बुलाइये, हम सब भी साथ हो लेगे।

आशा है, आप सानन्द है।

भवदीय
जी० डी० बिडला

इसी साल १९ जुलाई को मैने सर जॉन एडरसन से मुलाकात करके उनकी और गाधीजी की भेट कराने की चेष्टा की। सर जॉन इस बात के लिए बडे उत्सुक थे कि अपने कार्यकाल मे वह गाधीजी से मिल ले। सच पूछिये तो प्राय सभी ब्रिटिश गवर्नर ऐसा ही चाहते थे, यद्यपि उनमे से कुछ सिर्फ कौतूहलवश ऐसा करना चाहते थे। वे यह नही चाहते थे कि उन्हे अपने देश लौटकर यह कहना पडे कि भारत के सबसे महान् व्यक्ति से उनकी मुलाकात नही हुई। पर जहातक सर जॉन एडरसन का सम्बन्ध था, उनमे सिर्फ कौतूहल की भावना नही थी, वह तो कई गम्भीर कारणो से गाधीजी से मिलने के इच्छुक थे। किन्तु वायसराय लार्ड विलिगडन प्रान्तीय गवर्नरो के गाधीजी से मिलनेपर राजनीतिक दृष्टिकोण से आपत्ति किया करते थे। फिर भी मुझे यह कहते खुशी होती है कि सर जॉन और गाधीजी के बीच मुलाकात हुई, यद्यपि वह बडी ही कठिनाइयो और परेशानियो के बाद सम्भव हो पाई। इन कठिनाइयो और परेशानियो से आसानी के साथ बचा जा सकता था। मैने उनसे प्रस्ताव किया था कि मुझे गाधीजी से जेल मे मिलने दिया जाय। इन दिनो की मेरी डायरी मे, जो कभी लिखी गई और कभी नही लिखी गई, सर जॉन से की गई मेरी बातचीत के बारे मे यह सक्षिप्त नोट दर्ज है

१९ जुलाई १९३२ को जान एडरसन के साथ मुलाकात उन्होने बताया कि वह वायसराय से दो बार बात कर चुके है . वायसराय

को आपत्ति नही है , जान एडरसन लिखेगे मैंने कहा, गाधीजी अनुमति वगैर राजनीति की चर्चा नही करेगे जान एडरसन ने उत्तर दिया कि मै वायसराय के नाम चिट्ठी और उनका उत्तर दिखा सकता हू।
मै स्वय अपने पथप्रदर्शन के लिए जाता हू यह स्पष्ट हो ही जायगा उन्होने मेरे भाषण की चर्चा की मैंने उत्तर दिया कि वास्तव मे वह मुलाकात थी। उन्होने मेरी स्थिति को समझा मैंने स्पष्ट रूप से कह दिया कि हमारा भाग लेना गाधीजी पर निर्भर करता है हम लोग खुद कुछ नही कर सकते मैंने सुझाया कि आर्डिनेंस के बावजूद भी गाधीजी को आमत्रित क्यो न किया जाय उन्होने कहा, अनुदार दलवाले अडचन पैदा करेगे मैंने कहा, इसकी समाप्ति कैसे होगी। वह सहमत हुए आर्थिक मामलो की चर्चा हुई .. उन्होने कहा, आवकारी की चुगी पर वातचीत की जा रही है।

इसके वाद गाधीजी का आमरण अनशन आरम्भ हुआ।
इस समय मेरी मुख्य चिन्ता यह थी कि गाधीजी को जेल से छुडा लिया जाय। उन्होने जेल मे हरिजनो के मताधिकार के प्रश्न पर अनशन शुरु कर दिया था। मैंने सर तेज वहादुर सप्रू, सर सेम्युअल होर और लार्ड लोदियन को निम्नलिखित तार भेजे

जरूरी तार
सर तेज वहादुर सप्रू, इलाहावाद

अनुरोध करता हू, आप गाधीजी की रिहाई के लिए चेष्टा करिये। मै समझता हू अस्पृश्यो के साथ समझौता करने मे सकट टल सकता है, पर यह केवल गाधीजी के व्यक्तिगत प्रभाव के द्वारा ही सम्भव है। इसके अतिरिक्त उनकी रिहाई से अन्य महत्वपूर्ण उद्देश्यो की भी सिद्धि होगी। इसलिए आशा है, आप सभी आवश्यक कार्रवाई करेगे।

घनश्यामदास बिडला

समुद्री तार
सर सेम्युअल होर
इडिया आफिस, लदन

सकट इतना गभीर है कि आपको यह तार भेजना कर्त्तव्य समझता हू। मेरी विनम्र सम्मति मे यदि सरकार सचमुच सहायता करे तो समस्या

हल हो सकती है। सबसे पहले गांधीजी को अन्य प्रमुख नेताओं के साथ तुरत रिहा कर देना चाहिए। गांधीजी की उपस्थिति अस्पृश्यों के साथ समझौता करने में बड़ी सहायक होगी। बाद को सरकार को इस समझौते की पुष्टि करना चाहिए। इससे अन्य महत्वपूर्ण समस्याओं के हल का मार्ग भी खुल जायगा। अतएव अनुनय है कि गांधीजी की रिहाई में विलम्ब न किया जाय। कहना अनावश्यक है, उनकी मृत्यु भारत के लिए ही नहीं, समूचे साम्राज्य के लिए दुर्भाग्य की बात होगी। व्यक्तिगत रूप में विश्वास-पूर्वक कह सकता हूं और आशा है, आपका भी यही विश्वास है कि वह ब्रिटेन के भी उतने ही बड़े मित्र हैं, जितने भारत के।

जी० डी० बिड़ला
८, रायल एक्सचेंज प्लेस
१३-९-३२

इस अंतिम तार के उत्तर में मुझे इंडिया आफिस से यह पत्र मिला :

इंडिया आफिस
व्हाइट हॉल
१४, सितम्बर, १९३२

प्रिय श्री बिड़ला

मैं आपको यह पत्र यह बताने के लिए लिख रहा हूं कि सर सेम्युअल होर के नाम आपका १३ सितम्बर का तार मिल गया है। इस समय सर सैम्युअल बालमोरल कैसल गये हुए हैं, वहीं आपका तार भेज रहा हूं।

भवदीय
डब्ल्यू० डी० क्रोफ्ट

मैंने लार्ड लोदियन को जो तार भेजे थे उनकी शायद कोई नकल मैंने नहीं रखी है, पर मुझे उनकी पहुंच की निम्न-लिखित सूचना मिली। बाद में मैंने उन्हें नीचे लिखा पत्र भेजा

इडिया आफिस
ह्वाइट हॉल
१४ सितम्बर, १९३२

प्रिय श्री बिडला

लार्ड लोदियन ने मुझे आपके १३ सितम्बर के तार की, जिसमे आपने बताया है कि गाधीजी का अनशन करने का विचार है, पहुच स्वीकार करने की आज्ञा दी है। उन्होने आपके तार की नकल लार्ड अर्विन के पास भेज दी है।

१६ सितम्बर, १९३२

प्रिय लार्ड लोदियन

मैने आपके पास गाधीजी की रिहाई के सम्बन्ध मे एक तार भेजा था और मै समझता हू, आपके पास ऐसे ही और बहुत सारे तार पहुचे होगे। मैने सर सैम्युअल के पास भी ऐसा ही तार भेजा था, और आज सुबह के पत्रो मे देखता हू कि गाधीजी को कुछ शर्तो पर रिहा किया जायगा। ये शर्ते उनके अनशन आरम्भ करने के बाद लागू होगी। यह कुछ हद तक ठीक ही हुआ, पर मुझे कहना पडता है कि इस मामले मे भी काम भौडे ढग से किया गया। यदि सरकार उन्हे तुरत और बगैर किसी शर्त के रिहा कर देती तो उसका कुछ बिगडता नही। यदि सरकार उनके कुछ प्रमुख सहयोगियो को भी रिहा कर देती तो और भी अच्छा रहता, क्योकि इस सकट के अवसर पर सभी को उनकी सहायता की जरूरत पडेगी। प्रधान मत्री की तर्क-शैली समझ मे नही आई। वह सर्वसम्मत समझौता चाहते है, पर इस वृद्ध को बम्बई तट पर पाव रखते ही जेल मे ठूस देते है और मरणासन्न अवस्था मे रिहा करते है। ऐसी अवस्था मे सर्वसम्मत समझोता क्योकर सम्भव है, यह साधारण कोटि के मनुष्यो की समझ के बाहर की बात है। इस गर्मी के लिए क्षमा करियेगा, पर जब हम देखते है कि इस सकट के अवसर पर अच्छे ढग से पेश आने के बजाय सरकार स्थिति को और भी कठिन बना रही है, तो हमारे चित्त की अवस्था का आप खुद अदाजा लगा सकते है।

आप जैसी भी सहायता कर सकते है, अवश्य करिये। हमे सलाह भी दीजिये। मै कुछ हफ्ते गाधीजी के पास रहूगा और बम्बई मे मेरा पता "बिडला हाउस, मलाबार हिल, बम्बई" रहेगा। आप मत्री अवश्य है, पर मुझे आशा है कि आप सरकारी कायदे-कानून की परवाह न कर यथा-सम्भव हमारी सहायता करेगे।

भवदीय
जी० डी० बिडला

अम्बेदकर के साथ किये गए समझौते के इतिहास का ब्यौरा यहा देने की आवश्यकता नही है। उसे सम्पन्न कराने मे मेरा काफी हाथ था।

: ६ :

फिर संरक्षण

सर सेम्युअल होर के इस समय के रुख से मुझे बडी निराशा हुई। जब गाधीजी गोलमेज-परिषद् मे भाग लेने के लिए लदन गये थे तब तो ऐसा लगा था कि उनके महत्व को सर सेम्युअल कुछ-कुछ समझते है, पर अब ऐसा मालूम दे रहा था जैसे वह इस बात को समझ ही नही पा रहे है कि ब्रिटिश सरकार की कोई भी योजना, या भारत के लिए विधान बनाने का कोई भी वचन, उस समय तक सफल नही हो सकता, जबतक वह गाधीजी को पसन्द न हो। इसलिए मैने सर सेम्युअल को एक पत्र लिखा, जिसमे मैने अपनी निराशा की भावना साफ-साफ व्यक्त कर दी। पत्र लिखने का तात्कालिक कारण वह निमत्रण था, जो सर सेम्युअल ने गोलमेज-परिषद् की आर्थिक और व्यावसायिक सरक्षणो की विशेष समिति मे भाग लेने के लिए मुझे भेजा था। मैने अपने पत्र मे लिखा

बिडला हाउस, नई दिल्ली
२ नवम्बर, १९३२

प्रिय सर सेम्युअल

आज मुझे बगाल के गवर्नर महोदय के पास से तार मिला है, जिसमे उन्होने मुझे आपकी ओर से उस विशेष उपसमिति मे भाग लेने को आमन्त्रित किया है जो आर्थिक और व्यापारिक अभिरक्षणो पर विचार करने के लिए नियुक्त की जानेवाली है। मै इस निमत्रण के लिए आभारी हू, और इस विचार-विमर्श मे भाग लेने मे मुझे प्रसन्नता होती, पर कुछ ऐसी परिस्थितिया है, जिनके कारण मेरा भाग लेना कठिन हो गया है। उन कठिनाइयो को कुछ विस्तार के साथ दे रहा हू। आशा है, आप इसे ठीक ही समझेंगे।

मैंने जो गत मार्च मास मे अपने प्रभाव मे काम लेकर भारतीय वाणिज्य-उद्योग-सघ को एक निर्दिष्ट पथ अपनाने को राजी किया था सो एक निश्चित उद्देश्य से प्रेरित होकर ही किया था। बहुत सम्भव है, वह उद्देश्य कुछ स्वार्थपूर्ण रहा हो, पर वह मौजूद अवश्य था, और मैंने सोचा था कि आपको अपने लोगो का सहयोग प्रदान करके—वह सहयोग चाहे कितना ही मर्यादित क्यो न हो—मै आपको विश्वास दिला दूगा कि हम लोग सच्चे मित्र है और दोनो देशो मे स्थायी मैत्री स्थापित करने को हृदय से उत्सुक है। मने समझा था कि जहा एक बार आपका हमारे ऊपर विश्वास जमा कि हमारे लिए आपको यह दिलजमई करना कठिन नही होगा कि हमारी सलाह कितनी विवेक-पूर्ण है। इस उद्देश्य मे मै पूर्णतया असफल रहा।

मेरे १४ और १८ मार्च, १९३२ के पत्रो के उत्तर में आपने अपने ८ अप्रैल, १९३२ के पत्र मे लिखा था कि आप मुझे फिर लिखेंगे, पर मुझे उसके बाद कोई पत्र नही मिला। आपने ओटावा-परिषद और भारतीय व्यापारियो के सहयोग के प्रश्न पर मुझसे सलाह लेने की अनुकम्पा दिखाई, और मैंने सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास को ओटावा जाने को राजी किया, पर जिस ढग से पत्र-व्यवहार अचानक बन्द कर दिया गया और भारत सरकार ने जो रवैया अख्तियार किया, उससे मेरी स्पष्ट धारणा हो गई कि हमारा मैत्री का आश्वासन स्वीकार नही किया गया है। ओटावा के सम्बन्ध में भारतीय वाणिज्य-उद्योग-सघ की बिल्कुल उपेक्षा की गई, और जब आपने विधान-विषयक कार्य-प्रणाली के सम्बन्ध मे वक्तव्य दिया और कहा कि आर्थिक अभिरक्षणो की चर्चा विशेषज्ञो की समिति करेगी, तब भी मुझे पता तक नही था कि आप क्या कार्य-प्रणाली अपनाने जा रहे है। मुझे तो अब भी विशेष उपसमिति के गठन और अधिकारियो के सम्बन्ध में कुछ पता नही है। और, किसी बात का पता न होते हुए भी मुझसे वक्त-बे-वक्त कहा जा रहा है कि लन्दन को रवाना हो जाऊ, जबकि भारतीय व्यापारी-वर्ग की पूर्ण उपेक्षा की गई है और सब चिढे हुए है। मैने वह प्रस्ताव अपने मण्डल में स्वय सयोजित किया था, इसलिए जबतक मुझे यह विश्वास न हो जाय कि स्वतत्र रूप से आचरण करने मे मै प्रस्ताव की आत्मा के विरुद्ध नही जा रहा हू, तबतक मेरे लिए वैसा करना ईमानदारी का काम नही होगा। यदि मै प्रस्ताव की आत्मा के प्रति बलात्कार करूगा तो स्वय अपनी दृष्टि मे गिर जाऊगा। मुझे आशा है कि आप इस बात को और सबसे पहले समझ लेंगे।

मै आपको विश्वास दिलाता हू कि मै किसी प्रकार की शिकायत नही कर रहा हू। मै तो इस बात का क्षण भर के लिए भी दावा नही कर सकता कि भारत-सचिव मुझे भेद की बातें बता दे। सम्भव है, आपको यह बताया

गया हो कि भारत-सचिव को मेरे जैसे साधारण व्यक्ति के साथ पत्र-व्यवहार नही करना चाहिए, और इसी कारण पत्र-व्यवहार का अन्त हो गया हो। खुद मुझे भी आपको सीधे लिखने का साहस नही होता, पर आपने लदन मे मुझे निश्चिन्त करने की और यह सुझाने की कृपा की थी कि मुझे जब-कभी कोई उपयोगी बात कहनी हो, मै आपको पत्र लिख सकता हू। अतएव मै किसी तरह की शिकायत नही कर रहा हू, मै तो केवल यही बताना चाहता हू कि दूसरी ओर से उत्तर न मिलने पर किसी आदमी के लिए किसी प्रकार का उपयोगी कार्य करना कितना कठिन हो जाता है। इसलिए जबतक हम लोगो को मित्र के रूप मे ग्रहण नही किया जायगा और वास्तविक शाति-प्रस्थापन की दिशा मे उपयोगी कार्य करने के लिए हमे कुछ ढील न दी जायगी तबतक मेरे या सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास के लदन जाने से कोई प्रयोजन सिद्ध नही होगा।

यहाँ मै यह बता दू कि 'ढील' से मेरा क्या अभिप्राय है। मै आपका ध्यान मघ के तीसरे प्रस्ताव के 'अ' पैरे की ओर आकृष्ट करना चाहता हू जिसका आरम्भ 'कोई वास्तविक इच्छा नही है' से होता है। मैने इन शब्दो का हमेशा अपना ही अर्थ लगाया है। मेरी धारणा है कि हम व्यापारियो का प्रभाव सीमित है, पर यदि उसका ठीक-ठीक उपयोग किया जाय तो उससे काफी सहायता मिल सकती है। अतएव मैने वास्तविक इच्छा का यही अर्थ लगाया है कि जब कभी सरकार हमारे प्रभाव का ठीक-ठीक उपयोग करना चाहेगी उसका मतलब यही लिया जायगा कि भारत के प्रगतिशील लोकमत के साथ समझौता करने की उसकी वास्तविक इच्छा है, और मेरा निवेदन है कि आर्थिक चर्चा मे भाग लेने देना मात्र हमारे प्रभाव का ठीक-ठीक उपयोग करना नही है। यदि हमे समर्थन प्राप्त नही होगा तो मै या सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास इगलैड मे क्या करेगे? भारतीय व्यापारी समाज हमारा समर्थन नही करेगा। मेरे मित्र सर पुरुषोत्तमदास की आलोचना आरम्भ हो ही गई है, और चूकि हम लोग राजनीतिज्ञ नही है, इसलिए हम राष्ट्रवादी वर्ग के समर्थन का दावा नही कर सकते। अतएव यदि हम लदन मे कुछ अभिरक्षणो को स्वीकार करने का निश्चय कर ले तो भी जहा, तक भारतीय लोकमत का सम्बन्ध है, वह निश्चय किसी पर लागू नही होता। अत यदि हम किसी प्रकार के समर्थन के बगैर काम करेगे तो अवस्था और भी बिगाड देगे। हम लोग उचित समर्थन-सहित बडे उपयोगी सिद्ध होगे, और उसके बगैर, बिल्कुल बेकार। हम केवल इसी तरह उपयोगी सिद्ध हो सकते है कि इस अभिरक्षण-सम्बन्धी चर्चा मे भाग लेने से पहले हमे इस मामले मे ढील दी जाय कि हम गाधीजी को नये विधान मे साथ देने को राजी

करने मे अपने प्रभाव मे काम ले, बशर्ते कि हम उससे सतुष्ट हो, और मेरा निवेदन है कि वैसी परिस्थिति उत्पन्न करने मे हमारी सेवाए बडी उपयोगी सिद्ध होगी। मै मानता हू कि मत्रिमडल के लिए गाधीजी की माग पूरी तौर से स्वीकार करना शायद सभव नही होगा, पर मेरा कहना यह है, और मैने अपने अन्तिम पत्र मे भी यही बात कही थी कि वर्तमान अनुदार पार्लमेट तक के लिए ऐसा विधान देना तो सम्भव है ही कि वह काग्रेस को ग्राह्य न होने पर भी गाधीजी द्वारा रद न किया जाय। मुझे आशा है, आप ऐसी स्थिति की कल्पना स्वय कर लेगे जिसमे उन्ही लोगो की सदाकाक्षा अथवा सहयोग के बगैर विधान अमल मे लाया जाय जो श्री चर्चिल के हाल मे व्यक्त किये शब्दो मे "राजनीतिक भावनाओ को शात अथवा उद्दीप्त करने मे समर्थ है।" मै यह बात आत्मविश्वास के साथ लिख रहा हू, क्योकि मै गाधीजी को हमेशा समझौते मे विश्वास रखनेवाला जानता आ रहा हू। आप उनके घनिष्ट मित्र है ही, इसलिए आप यह बात समझ ही लेगे।

उनके उपवास आरम्भ करने से पहले मैने उनसे मिलकर स्थिति के सम्बन्ध मे बातचीत करने की अनुमति प्राप्त करने की चेष्टा की थी, और सर जॉन एडरसन ने मेरी सहायता भी की थी। पर मै सरकार की अनुमति प्राप्त नही कर सका। इसके बाद उनके उपवास के आरम्भ करने के थोडे ही पहले मुझे उनसे बात करने का अवसर मिला, पर उस समय तक अन्य बाते अपेक्षाकृत कही अधिक महत्व धारण कर चुकी थी, इसलिए मैने रुकना मुनासिब समझा। उपवास के दौरान मे वह अत्यन्त दुर्बल हो गये थे, इसलिए मैने उनकी शक्ति पर भार डालना ठीक नही समझा। उपवास के बाद सारी मुलाकाते बन्द कर दी गई, पर मुझे अस्पृश्यता-निवारण-कार्य के सिलसिले मे उनसे मिलने की इजाजत मिल गई। मैने उनसे चार घटे तक बातचीत की, पर किसी प्रकार की सविस्तर राजनीतिक चर्चा मे उन्होने दिलचस्पी नही ली। उन्होने कहा, और ठीक ही कहा कि मुझे इन बातो की चर्चा नही करनी चाहिए। परतु उन्होने यह बात स्पष्ट रूप से इगित कर दी कि वह शाति-प्रस्थापन के लिए अत्यन्त उत्सुक है, और उन्होने वचन दिया कि यदि मै इन विषयो की चर्चा करने की अनुमति प्राप्त कर लूगा तो वह मुझे कुछ लिखकर देगे। मैने एक बार फिर हिज़ एक्सीलेसी सर जान एण्डरसन से सहायता की याचना की, और उन्होने एक बार फिर शिमला को लिखने का वचन दिया। उन्होने ऐसा किया भी होगा, पर उसका कोई फल नही निकला। इस समय स्थिति यह है कि अस्पृश्यता-निवारण-विषयक कार्य से सम्बन्ध रखनेवाले पत्र-व्यवहार तक पर बन्दिश लगा दी गई है। आशा है, यह प्रतिबन्ध उठा लिया जायगा। मैने एक पखवाडे पहले एक पत्र

लिखा था, जिसमे अस्पृश्यता-सम्बन्धी कई महत्वपूर्ण प्रश्नो की चर्चा की गई थी, पर वह यरवदा मे अभी वैसे ही पडा है। आप शायद जानते ही होगे, मै अस्पृश्यता-निवारक सघ का प्रधान नियुक्त हुआ हू और हमे देश के कोने-कोने मे आश्चर्यजनक सफलता मिल रही है। परतु इस विशुद्ध रचनात्मक और सामाजिक कार्य तक मे सरकार हमारे साथ 'अस्पृश्यो' जैसा व्यवहार कर रही है। जब ऐसा वातावरण फैला हुआ है तो आप एक व्यावहारिक आदमी के नाते यह आशा कैसे कर सकते है कि सुधारो से कुछ भलाई होगी? विधान अमल मे लाने से पहले विश्वास के वातावरण की दरकार है।

मैने कुछ विस्तार के साथ लिखा है, और ऐसा करने का मुझे साहस इसलिए हुआ कि मेरा विश्वास है कि अडचन ह्वाइट हॉल ने नही, शिमला ने पैदा की है। मै आपकी कठिनाइयो को अच्छी तरह समझता हू, पर मेरा कहना यही है कि पारस्परिक सहयोग के द्वारा उनपर काबू पाया जा सकता है। यह स्पष्ट ही है कि आप सचमुच ठोस काम चाहते है, अन्यथा आप आर्थिक अभिरक्षणो की चर्चा के लिए समिति नियुक्त नही करते। पर मै एक ऐसे आदमी के नाते, जो आपका बडा आदर करता है,यही सलाह दूगा कि आप सुधार जारी करने मे पहले गाधीजी का वचन प्राप्त करे, और इस क्षेत्र मे मै दिलोजान से आपके साथ काम करने को तैयार हू। बाद को मै आर्थिक अभिरक्षणो के मामले मे भी सहायता करूगा। यदि मुझे अनुमति मिल गई तो मै गाधीजी से इन विषयो की इस प्रकार चर्चा करूगा कि किसी को कानोकान खबर न हो, और न अटकलबाजी का बाजार ही गर्म हो। उनका सहयोग किस प्रकार प्राप्त किया जाय, इस निमित्त चर्चा करने के लिए मै लदन तक आने को तैयार हू। पर मै उस आदमी-जैसा ढोग नही रखना चाहता, जो कुछ सामर्थ्य न रहते हुए भी वैसा भाव जतावे।

आशा है, मैने स्थिति अच्छी तरह स्पष्ट कर दी है। आशा है यह पत्र जिन मनोभावो से प्रेरित होकर लिखा गया है उन्हीके साथ इसे ग्रहण किया जायेगा।

मैने आपका निमत्रण और यह पत्र दोनो गुप्त रखे है।

सघ के प्रस्ताव की एक प्रति भी साथ भेज रहा हू, जिससे आपको हवाले के लिए कष्ट न उठाना पडे।

भवदीय
जी० डी० बिडला

: ७ :

हरिजनोत्थान-कार्य

गाधीजी यरवदा जेल मे ही हरिजनो के काम मे लग गये थे। इस समय हम लोग 'अखिल भारत हरिजन-सेवक सघ' की स्थापना कर रहे थे। मै उसका अध्यक्ष बना और इस हैसियत से मैने डाक्टर विधानचद्र राय को सघ की बगाल-शाखा का अध्यक्ष बनने को कहा। डाक्टर विधानचद्र राय, जो कि इस समय पश्चिमी बगाल के मुख्य मत्री है, इस पद के लिए मुझे बहुत ही उपयुक्त मालूम हुए, क्योकि वह हरिजनो के उद्धार के प्रबल समर्थक तो थे ही, साथ ही गाधीजी के पक्के अनुयायी और उनके सलाहकार-चिकित्सक भी थे। कुछ लोगो की राय थी कि डाक्टर राय राजनीति मे भाग लेते है, इसलिए उन्हे सघ का अध्यक्ष चुनने से इस विशुद्ध सामाजिक और मानवीय आन्दोलन मे अवाछनीय राजनीतिक पुट आ जायगा। गाधीजी ने पहले तो डाक्टर राय के अध्यक्ष चुने जाने का समर्थन किया, पर बाद मे आलोचको की टीका-टिप्पणी सुनकर अपना विचार बदल दिया और डाक्टर राय को एक पत्र लिखकर उनसे अध्यक्ष पद से हट जाने को कहा। डाक्टर राय ने जो उत्तर दिया, उसमे क्रोध की मात्रा कम, क्षोभ की अधिक थी, और उनके विरोध का ढग भी इतना मर्यादा-पूर्ण था कि उससे गाधीजी के विचारो मे फौरन परिवर्तन आ गया। उन्होने जो कुछ लिखा था, उसे उन्होने बिना किसी शर्त के वापस ले लिया और डाक्टर राय से अपने पद पर बने रहने का अनुरोध किया। आज शायद इस सारी घटना का कोई बडा महत्त्व नही है, फिर

भी इसका उल्लेख इसलिए आवश्यक है कि इससे न केवल गाधीजी की भावुकता का ही, अपितु उनके उदार स्वभाव का भी एक दृष्टात मिलता है, और यह भी पता चलता है कि हम सब किस प्रकार उनके प्रेम की डोर मे वधे हुए थे। मित्रो की वाते सुनते समय जहा वह सहृदयतापूर्ण भावुकता व्यक्त किया करते थे, वहा वडी समस्याओ और सिद्धान्तो की वात आने पर अपनी इस्पात-जैसी न झुकनेवाली आत्मशक्ति का भी परिचय देते थे।

नवम्बर महीने के अन्त मे जेल से लिखे गए गाधीजी के पत्र से प्रकट होगा कि हमारी सस्था का नाम उन्होने ही चुना था।

यरवडा मन्दिर
२८-११-३२

भाई घनश्यामदास

शिंदेजी की वडी शिकायत है कि हमने उनकी सस्था का नाम चुरा लिया। यह शिकायत ठीक मालूम होती है। हमको काम के साथ काम है, नाम के साथ नही, इसलिये मेरी सूचना है कि हम अखिल भारत हरिजन-सेवा सघ नाम रखे और अग्रेजी और देशी भाषा मे यही नाम रखे। तुम आ तो रहे हो लेकिन शायद यह तुम्हे वक्त पर मिल जायगा।

वापू के आशीर्वाद

यह पत्र मुझे और डाक्टर राय को आगे वढने के लिए हरी झडी स्वरूप था। पर टीका-टिप्पणी करने वाले कव चुप वैठने वाले थे? जल्दी ही गाधीजी ने डाक्टर राय को यह पत्र लिखा·

यरवडा केन्द्रीय जेल
पूना
७ दिसम्वर १९३२

प्रिय डाक्टर विधान

मैने वगाल के अस्पृश्यता-निवारक वोर्ड के सम्वन्ध मे श्री घनश्यामदास विडला और सतीशवावू से देर तक वात की। मेरे पास वगाल से कई पत्र

भी आये है, जिनमे बोर्ड के गठन के सम्बन्ध में शिकायत की गई है। बोर्ड के गठन से पहले घनश्यामदास ने मुझे बताया था कि वह इसके लिए आपसे कहेगे, मैंने भी बात पर पूरी तौर से विचार किये बगैर उनके सुझाव का अनुमोदन कर दिया था। पर अब देखता हू कि बगाल में यह विचार नही रुचा, खासतौर से सतीश बाबू और डाक्टर सुरेश को। उनकी धारणा है कि बोर्ड दलबन्दी से मुक्त नही रह सकता है। नही जानता कि उनकी यह आशका कहा तक ठीक है, पर मै इतना तो अवश्य जानता हू कि अस्पृश्यता-निवारण-कार्य मे किसी भी प्रकार की दलबन्दी को प्रश्रय नही मिलना चाहिये। हम तो यही चाहते है कि जो कोई भी सस्था बने, सुधार की इच्छा रखने वाले व्यक्तियो को उसके साथ हृदय से और स्वतत्रता-पूर्वक सहयोग करना चाहिये। इसलिए, मेरा यह सुझाव है कि आप विभिन्न दलो और वर्गों का प्रतिनिधित्व करने वाले कार्य-कर्ताओ की एक बैठक बुलावें, अपनी सेवाए उनके अर्पण करे, और वे जिसे भी सभापति चुने या जैसा भी बोर्ड बनावे उन्हें हृदय से सहायता प्रदान करे। मै जानता हू कि इनके लिए आत्मत्याग की आवश्यकता है। यदि मै आपको अच्छी तरह जान सका हू तो मै यह भी जानता हू कि ऐसा करना आपके लिए सभव है। पर यदि आप समझे कि इन शिकायतो मे कोई तथ्य नही है और आप सारी कठिनाइयो को दूर करने मे और सभी दलो को साथ लेने मे समर्थ होगे तो मुझे कुछ नही कहना है। मैंने जो सुझाव पेश किया है वह यह समझकर ही किया है कि इस समय बोर्ड जैसा कुछ गठित हुआ है उसके साथ सारे दलो के लिए सहयोग करना सभव नही है। मैंने सारी बात आपके सामने रख दी है, अब आप देशहित के लिए जैसा ठीक समझें, करे।

श्री सेनान ने बसन्ती देवी के सबन्ध मे मुझे आपका सन्देश दिया। मैंने उनसे कह दिया है कि यह तो वह स्वय तय करेगी कि क्या करना उत्तम होगा, पर मै तो यही चाहूगा कि वह अस्पृश्यता-निवारण-कार्य मे लगन के साथ जुट जावे। वह कोई सार्वजनिक पद ग्रहण करे, मै यह आवश्यक नही समझता हू। जब मैं देशबन्धु-स्मारक-कोष के लिए रुपया इकट्ठा करने के सिलसिले में वहा उनके पास था, तो उन्होने मुझे बताया था कि वह किसी सस्था का सचालन करना नही चाहती है, वह तो इच्छा होने पर कार्य करना भर चाहती है। कृपया डा० आलम के सबन्ध में समाचार दीजिये।

आपका
मो क गाधी

डाक्टर राय का उत्तर इस प्रकार था

२६, वेलिगटन स्ट्रीट
कलकत्ता
१२-१२-१६३२

प्रिय महात्माजी

आपका पत्र मुझे कल मिला। वगाल अस्पृश्यता-निवारक-वोर्ड के सम्बन्ध मे आपने श्री खेतान से जो वातचीत की थी, मुझे उनसे उसका समाचार मिल गया था। आपने उनसे कहा था कि आप मुझे पत्र लिखेगे। श्री खेतान से वात करने के वाद मै आपसे ऐसा पत्र पाने के लिए जैसा आपने मुझे भेजा है, तैयार था। सवसे पहले मै यह कहने की अनुमति चाहता हू कि वगाल वोर्ड के सभापतित्व के पद की मैने आकाक्षा नही की थी, और अव मुझे पता चला है कि श्री विडला ने आपसे मशवरा करके आपकी रजामदी से मुझे सभापति चुना था। जव मुझसे पद ग्रहण करने को कहा गया तो अपनी अयोग्यता और अन्य कार्यो के वावजूद भी मैने आह्वान स्वीकार कर लिया। मै यह वात नही भूला हू कि इसका श्रीगणेश आपके और उन मित्रो के द्वारा किया गया जो पूना मे एकत्र हुए थे। अतएव जव इन सवने मुझसे यह पद ग्रहण करने का अनुरोध किया तो मैने उत्तरदायित्व स्वीकार कर लिया। आप चाहते थे कि मै सभापतित्व ग्रहण करू, क्योकि आपका विश्वास था कि मै काम कर सकता हू। अव आपकी धारणा दूसरी है और आप चाहते है कि मै हट जाऊ तो मै प्रसन्नता-पूर्वक हट रहा हू। मै आज ही श्री विडला को पत्र लिखकर इस्तीफा दे रहा हू। यह कोई आत्मत्याग की वात भी नही है, क्योकि मैने अपने जीवन मे ऐसा कोई पद या स्थान ग्रहण नही किया, जिसके सम्वन्ध मे मुझे मालूम होने लगा हो कि जिनके हाथ मे वह पद या स्थान देने की सामर्थ्य है वे मेरा वने रहना नही चाहते है।

आपने अपने पत्र मे सुझाया है कि विभिन्न वर्गो और दलो के सारे कार्यकर्त्ताओ को वुलाऊ, जिससे वे जिसे चाहे सभापति चुन सके। मै यह वताना चाहता हू कि लीग के व्यवस्था-विधान के अन्तर्गत केन्द्रीय वोर्ड का सभापति ही प्रान्तीय वोर्डो के सभापति नामजद करता है, और ये प्रान्तीय सभापति प्रान्तीय वोर्डो के सदस्य नामजद करते है। वगाल मे वने हुए वोर्ड को तोडना मेरी सामर्थ्य के वाहर की वात है। अतएव यदि मै चाहू तो भी आपकी आज्ञा-पालन करना मेरी सामर्थ्य मे नही है। पर मै सारा मामला श्री विडला के पास भेज रहा हू। वह अखिल भारत वोर्ड के सभापति है, और वह जो कार्रवाई उचित समझेगे, करेगे।

आप अपने पत्र मे कहते है, "परन्तु मै देखता हू कि बगाल मे यह विचार नही रुचा।" आपको यह सूचना देना मेरा कर्त्तव्य है कि बगाल मे श्री सतीश दास गुप्त और डाक्टर सुरेश बनर्जी के नेतृत्व मे रहनेवाले दल के अलावा और अनेक दल और वर्ग है। श्री सतीश दास गुप्त और डा० सुरेश बनर्जी, दोनो ही अस्पृश्यता-निवारण-कार्य मे दिलचस्पी रखते है और इस समय बहुमूल्य काम कर रहे है। हमने बगाल बोर्ड का गठन बडी समझदारी के साथ किया था, और जैसा कि आपको श्री देवी-प्रसाद खेतान ने बताया ही होगा, बोर्ड मे विभिन्न वर्गों के प्रतिनिधि मौजूद थे। अनेक जिला सस्थाओ ने हमे लिखकर बोर्ड के साथ सहयोग करने की तत्परता प्रकट की थी। वास्तव मे, जैसा कि श्री खेतान ने आपको बताया ही होगा, श्री दास गुप्त और डा० बनर्जी को छोड और किसी ने सहयोग प्रदान करने से इन्कार नही किया, और सो भी अलग कारणो से। परतु आपकी यह धारणा प्रतीत होती है कि बगाल मे उस समय तक कोई बोर्ड काम नही कर सकता जबतक उसे श्री दास गुप्त और डा० बनर्जी का सहयोग प्राप्त न हो, और उन्होने यह सहयोग प्रदान करने से इन्कार कर ही दिया है, इसलिए बोर्ड को भग करने के अलावा और कोई चारा नही है।

बगाल में लीग का काम आरम्भ हो गया है। इसलिए यदि आप मुझे इस पत्र को और अपने पत्र के पहले पैरे को प्रेस मे देने की अनुमति नही देंगे तो मेरे और बोर्ड के सदस्यो के लिए स्थिति समझाना कठिन हो जायगा। आशा है, आपको कोई आपत्ति नही होगी।

आपका
विधान चद्र राय

गाधीजी को क्षोभ हुआ। उन्होने तुरत यह पत्र भेजा

यरवडा केन्द्रीय जेल
१५ दिसम्बर, १९३२

प्रिय डा० विधान,

आपके पत्र से मै तो अवसन्न रह गया। उसे पढने के तुरत बाद ही मैने आपको तार भेजा। मै तो समझता था कि हम दोनो एक दूसरे के इतने निकट है कि मेरे मैत्रीपूर्ण पत्र के आप कभी गलत मानी नही लगायगे। पर अब देखता हू कि मैने भारी भूल कर डाली। मुझे आपको वह पत्र नही लिखना चाहिये था। अत मैने उसे पूर्णतया और बगैर किसी शर्त

के वापस ले लिया है। अब जबकि वह पत्र वापस ले लिया गया है, आपको उनमें से कोई भी काम नही करना है जिनका आपने उल्लेख किया है। कृपया बोर्ड वाला काम बदस्तूर जारी रखिये, मानो मैंने आपको कोई पत्र लिखा ही न हो। आपके दिल को जो चोट पहुची है उसे आप उदारहृदयता के साथ भूल जायगे। पर आपको मैंने वह पत्र लिखा, इसके लिए मैं अपने आपको आसानी से क्षमा नही कर सकूगा। किसी ने, याद नही किसने, कहा था कि मेरे पत्र के आप गलत मानी लगायेंगे, पर मैंने मूर्खतावश कहा कि मैं कुछ भी लिखू, आप उसके गलत मानी कभी नही लगायेंगे। विनाश का पूर्वाभास गर्व से और पतन का पूर्वाभास मिथ्या-गर्व से होता है। इतना सब कहने के बाद, अब तो मैं नही समझता कि आप हमारे पत्र-व्यवहार को प्रकाशित करना जरूरी समझेंगे। परतु यदि आप सार्वजनिक हित के लिए उसका प्रकाशन आवश्यक समझते हो तो जहा तक प्रकाशित करना आवश्यक हो आप अवश्य प्रकाशित कर सकते हैं।

कृपया लिखिये, कमला[1] और आलम[2] का स्वास्थ्य कैसा है, और कमला से कहिये, मुझे पत्र लिखे।

आपका
मो० क० गांधी

उसी दिन उन्होंने मुझे भी लिखा

यरवडा केन्द्रीय जेल
पूना
१५।१२।३२

भाई घनश्यामदास,

आज मैंने तुम्हारे पास एक तार लीग के नाम के सम्बन्ध में भेजा है। एक दूसरा तार कलको बगाल प्रान्तीय सभा के सम्बन्ध मे जायेगा।

सबसे पहले नाम की बात को लो। राजाजी का पत्र भेजता हू। मैं समझता हू कि उनके तर्क के बाद कोई बात बाकी नही रह जाती है,

---

१ प० जवाहरलाल नेहरू की धर्मपत्नी कमला नेहरू, और २. पजाब के महान् राष्ट्रीय कार्यकर्ता, गांधीजी के मित्र और कांग्रेस कार्यकारिणी के सदस्य डा० आलम। ये दोनो ही कलकत्ते में डा० विधानचन्द्र राय की चिकित्सा में थे।

इसलिए उनका सुझाव अपनाना तनिक भी सम्भव हो तो तुम नाम में तदनुसार परिवर्तन कर लेना। मैं सेवा के भाव में इतना तन्मय हो गया था कि जिस अर्थ की ओर राजाजी ने मेरा ध्यान दिलाया है उसकी मैंने बात तक नहीं सोची थी।

अब बंगाल प्रान्तीय संस्था की बात लो। मैंने भूल की। मैंने डा० विधान के ऊपर अपने प्रभाव का गलत अन्दाजा लगाया। मैंने उन्हें पीड़ा पहुंचाई, इसका मुझे दुःख है। मैंने तुम्हें ऐसी भोंडी स्थिति में डाल दिया, इसका भी मुझे दुःख है। वह अपनी पीड़ा से निस्तार पा जायगे, तुम भी अपनी भोंडी स्थिति पर काबू पा जाओगे, पर मैं अपनी मूर्खता की बात आसानी से नहीं भूल सकूंगा।

मैंने डा० राय के पास निम्नलिखित तार भेजा है

"आपका हस्ताक्षर शून्य पत्र आज मिला। पत्र-व्यवहार प्रकाशन के लिए नहीं है। आपको मैंने स्पष्टतया बता दिया है कि यदि आपको अपने ऊपर भरोसा हो तो आरम्भ किये हुए कार्य को जारी रखिये। मैं अब समझता हूं कि मैंने हस्तक्षेप की अनधिकार चेष्टा की। क्षमा करिये। वैसे मैंने यह सुझाव मित्रता के नाते दिया था। अपना पत्र वापस लेता हूं। —गांधी।"

उनके पास मैंने जो पत्र भेजा उसकी भी एक प्रति भेजता हूं। कुछ अधिक कहना अनावश्यक समझता हूं और आशा करता हूं कि अब इस मामले का अन्त हुआ समझा जायेगा और तुम्हें और अधिक परेशानी नहीं होगी। डा० विधान के उत्तर की नकल भी भेजता हूं।

तुम्हारा १२ दिसम्बर का पत्र भी मिला। ठक्कर बापा ने तुम्हारे पास जो परिभाषा भेजी थी मैंने उसमें और भी परिवर्तन कर दिया है। इस संशोधित परिभाषा की नकल भेजता हूं। ठक्कर बापा ने तुम्हारे पास जो परिभाषा भेजी थी उसे मेरे पास पंडित कुंजरू ने भेजा था। मैंने उसमें परिवर्तन करके संशोधित प्रति उनके पास भेज दी है। देखता हूं कि जब ठक्कर बापा ने आपको लिखा था उस समय तक उन्हें वह संशोधित प्रति नहीं मिली थी।

आज डा० अम्बेदकर के लगभग सात मित्र और अनुकरण करने वाले आये। वे शिकायत कर रहे थे या बता रहे थे (उन्होंने कहा कि वह शिकायत करने नहीं आये हैं, सिर्फ बताना चाहते हैं) कि डा० अम्बेदकर ने स्टीमर पर ठक्कर बापा के नाम एक चिट्ठी लिखी थी जिसमें उन्होंने कई सुझाव पेश किये थे। पर संघ की पूना वाली बैठक में उसका जिक्र तक नहीं किया गया। मैंने उनसे कहा कि उसका जिक्र किया गया हो या न किया गया हो, संघ ने उसपर विचार अवश्य किया होगा, उसकी उपेक्षा न की होगी। तुम

उन्हें या मुझे लिख देना कि उस पत्र के सम्बन्ध मे क्या कार्रवाई की गई है।

इन मित्रो ने यह भी वताया कि हमारी सस्थाए हरिजनो मे पडी हुई फूट को कायम रखती है और जहा कही सम्भव होता है राव वहादुर राजा के दल का पक्ष लेती है। मैंने उन्हें आश्वासन दिया कि सघ का यह इरादा कभी नही हो सकता है, वोर्ड दलवन्दियो से दूर रहेगा और वोर्ड और उनकी समस्त शाखाओ की यही चेष्टा रहेगी कि दोनो दलो का मन-मुटाव दूर हो जाय, क्योकि राजनीतिक प्रश्न हल हो जाने के वाद अव दो दलो की कोई आवश्यकता नही रह गई है।

मेरे पास श्री छगनलाल जोशी आ गये है और एक अच्छा-सा स्टेनोग्राफर भी मिल गया है। पर इतनी सहायता प्राप्त होने पर भी मुझे चैन नही मिल रहा है। वास्तव मे इस आवश्यक सहायता की वदौलत ही मैं वढते हुए काम को निवटाने मे समर्थ हो रहा हू। मुलाकातो मे काफी समय निकल जाता है, पर वे जरूरी है, इसलिए मुझे कोई शिकायत नही है।

आशा है, तुम स्वस्थ होगे। तुम्हे नीद लाने के लिए कुछ न कुछ अवश्य करना चाहिए। औपधिया ठीक नही है, प्राकृतिक उपाय वरतने चाहिये और भोजन सम्वन्धी परिवर्तन करना चाहिये। मैंने जिस ढग से वताया उस ढग से तुम प्राणायाम कर रहे हो? कुछ आसानी से किये जाने वाले आसनो से और गहरा सास लेने से पाचन शक्ति को सहायता मिलती है और नीद भी आती है।

तुम्हारा
वापू

पुनश्च

उपरिलिखित पत्र लिखाने के वाद मुझे अव डा० विधान का यह तार मिला है 'तार के लिये धन्यवाद। सादर निवेदन है कि मैं नही समझा कि अपने पर भरोसे मे आपका क्या अभिप्राय है। पत्र मे लिख ही चुका हू कि वगाल मे जैसा उत्साह है उसके फलस्वरूप कोई भी प्रधान और वोर्ड अस्पृश्यता-निवारण कार्य कर सकता है। यदि आपका अभिप्राय ऐसे लोगो का सहयोग प्राप्त करने के मामले मे भरोसा रखने से हो जो सहयोग प्रदान करने के लिए तैयार न हो तो उसे कोई प्राप्त नही कर सकता है। कितनी सफलता होती है, यह धन-सग्रह और उसके उचित उपयोग पर निर्भर है। कृपया तार दीजिये कि यदि हम लोग काम करना जारी रखे तो मुझे और वोर्ड को आपका समर्थन मिलेगा।—विधान राय।

उसका मैंने निम्नलिखित उत्तर दिया है

१६।१२।३२

तार के लिये धन्यवाद। भरोसे से मेरा मतलब आत्मविश्वास से है। मेरी सामर्थ्य में जितनी सहायता देना है आप उसपर निर्भर कर सकते हैं।—गाधी

लगभग इन्ही दिनो राजाजी ने सस्था के नाम के बारे मे अपनी विशेषताओ से भरा कालीकट से एक पत्र भेजा, जिसका साराश नीचे दिया जाता है

लीग के नाम मे परिवर्तन करने के मामले मे मैं आपसे सहमत नही हू। अस्पृश्य सेवक-सघ नाम अच्छा खासा है, पर इसका अर्थ यही है कि हम अस्पृश्यो के अस्पृश्य बने रहने की बात स्वीकार करते है। भारत सेवक, भील सेवक, या ईश्वर सेवक सब ठीक है, क्योकि भारत रहेगा ही, भील एक नस्ल का नाम है और हीनता-द्योतक नाम नही है, और ईश्वर तो हमेशा मौजूद रहेगा ही। पर यदि हम अस्पृश्यता या दासता का मूलोच्छेदन करना चाहते है तो अस्पृश्य सेवक या दास सेवक नाम ठीक नही रहेगा। हो सकता है कि दासता अथवा अस्पृश्यता का निवारण होते ही सघ बन्द कर दिया जाय, पर यह तर्क ठीक नही ठहरता है, क्योकि जो बात तत्काल आवश्यक है वह है मनुष्य की मनोवृत्ति मे परिवर्तन। आपको तथाकथित अस्पृश्य सेवक कहना होगा, पर नाम भौंडा हो जायगा, और उसके विरुद्ध आपत्ति वैसी ही बनी रहेगी। मै अस्पृश्यता-निवारक लीग या सघ नाम पसन्द करता। अस्पृश्यता-विरोधी वाक्य मुझे अच्छा नही लगता, मुझे उसमे बर्बरता की गध आती है। अस्पृश्यता-निवारक सब हिन्दी, गुजराती तथा अन्य भारतीय भाषाओ में प्रचलित नामो का शब्दश अनुवाद होगा, और इसमे कोई आपत्तिजनक बात भी नही होगी। वास्तव में दासत्व के दर्जे का मूलोच्छेदन अभीष्ट और निवारण शब्द से वाक्य को बल भी प्राप्त होगा, ठीक जिस प्रकार मद्यपान और मादक द्रव्य-सेवन के सम्बन्ध में निषेध शब्द लोकप्रसिद्ध हो गया है। यदि हम अच्छी तरह सोचे तो मनुष्य के एक वर्ग की सेवा अभीष्ट है। ऐसे विचारो के लोग भी है जो यह चाहेगे कि किसी विशिष्ट वर्ग को अलग रखा जाय, पर उन्हे अच्छी तरह खाने को दिया जाय। पर हमे केवल इतना ही तो नही करना है।

कालीकट

१२ अक्तूबर १९३२

मैंने पत्र-व्यवहार जारी रखा और लिखा

२१ दिसम्बर, १९३२

परमपूज्य बापू

आपका टाइप किया हुआ पत्र और उसके साथ भेजे कागज मिले। डा० राय ने जो आपको चिट्ठी लिखी है उसकी नकल उन्होंने पहले ही मेरे पास भेज दी थी। उसका आपने जो उत्तर दिया है उसकी नकल भी मुझे मिल गई है। इस प्रकार अब मेरे पास पूरा पत्र-व्यवहार मौजूद है। मैं इस मामले को लेकर आपका और अधिक समय नष्ट करना नही चाहता, पर साथ ही आपको यह लिखने का लोभ भी सवरण नही कर सकता कि आपने अपनी भूल को जिस ढग से समझा, वास्तव मे वह उससे बिल्कुल दूसरे ही ढग की है। मुझे भोडी स्थिति मे पटकने का प्रश्न ही नही उठता है। आप मुझे इससे कही अधिक भोडी स्थिति मे पटकना चाहे तो खुशी से पटक सकते है। परतु मै इस बात मे अब भी आपसे सहमत नही हू कि आपकी भूल डा० राय के ऊपर अपने प्रभाव का गलत अन्दाजा लगाने तक ही सीमित थी। यदि डा० राय के साथ न्याय किया जाय तो कहना होगा कि उनका बुरा मानना स्वाभाविक था। मेरी समझ मे भूल इसी बात मे हुई कि आपने सुरेश बाबू और सतीश बाबू का, जो आपके इतने निकट है, सहयोग प्राप्त करने मे डा० राय की सहायता करने के बजाय डा० राय से केवल इस कारण इस्तीफा देने को कहा कि सुरेशबाबू और सतीशबाबू ने उन्हे सहयोग प्रदान नही किया। मै मानता हू कि सुरेश बाबू और सतीशबाबू ने जो उन्हे सहयोग प्रदान नही किया उसका कारण था, पर तो भी आपको बलिदान के लिए डा० राय को नही छाटना चाहिए था। मेरी राय मे आपने यही भूल की। जब मैने डा० राय के नाम आपका पहला पत्र देखा तो मुझे आश्चर्य हुआ, क्योकि इस प्रकार की भूले करना आपके लिए असम्भव-सा है। हम आपके देवोपम व्यक्तित्व से इतने चकाचौंध है कि हमने अपने भीतर विश्वास खो-सा दिया है। इसके परिणाम स्वरूप मुझे जब कभी किसी बात मे शका होती है तो मै यह कहकर अपने आपको समझा लेता हू कि दोष मेरी बुद्धि का है जो मै आपके निश्चय के मर्म को नही समझ सका। इस मामले मे भी यही हुआ। मेरी अब भी यही धारणा है कि आपको अपने अन्तिम पत्र मे डा० विधान को आपके पत्र के गलत अर्थ निकालने के लिए डाटना नही चाहिए था। आशा है, मै आपका समय नष्ट नही कर रहा हू। यह सब मै आत्म-सतोष के लिए लिख रहा हू। यदि आप लिखने की आवश्यकता समझे तो जरूर लिखे।

परिभाषा के सम्बन्ध मे मेरा कहना यही है कि आप जानते ही है मै ऐसी बातो को लेकर बहुत ही कम माथापच्ची करता हू। पर आपकी ताजी परिभाषा उन सारी परिभाषाओ मे अच्छी रही, जिनपर चर्चा हो चुकी है।

डा० अम्बेदकर के मित्रो की इस शिकायत के सम्बन्ध में कि हमने डा० के पत्र पर अच्छी तरह विचार नही किया, मेरा कहना यही है कि उन्हे कुछ गलतफहमी हो गई है। डा० अम्बेदकर के सुझावो के अलावा और भी अनेक सुझाव थे जिनपर विचार करना था और जिन्हे नीली पुस्तिका में देना था। पर हमने इतनी बडी बैठक में इस पुस्तिका की चर्चा न उठाना ही ठीक समझा। अतएव हमने एक छोटी-सी समिति का गठन किया जिसके जिम्मे डा० अम्बेदकर के सुझावो के अलावा प्रान्तीय बोर्डो से आये सुझाओ को भी ध्यान मे रखकर नीली पुस्तिका की पुनरावृति करने का काम किया गया है। परतु मुझे कहना पडता है कि हमारे कर्मचारी उतने दक्ष नही है। बेचारे वृद्ध ठक्कर बापा एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते रहते है, और उनकी अनुपस्थिति मे आफिस मे किसी योग्य सेक्रेटरी का रहना आवश्यक है। इस सघ का श्रीगणेश होने से पहले देवदास ने मुझे सहायता देने का वचन दिया था, परतु वह और कामो मे लगे हुए है। कल जब वह मिले तो मैने उनसे इसकी शिकायत भी की थी। उन्होने एक अच्छा-सा आदमी देने का वादा किया है। मैने उनसे कह दिया है कि वरना काम का हर्जा होगा। मुझे अच्छा आदमी मिल सकता है, पर मेरे अच्छा आदमी पाने का अर्थ होगा अधिक पैसा देना। मुझे तो अच्छा आदमी बाजार-भाव पर ही मिलेगा। इस ढग की सस्थाओ मे तो ऐसा आदमी चाहिए जो स्वार्थ त्याग करना चाहे। पता नही, आप इस मामले में मेरी सहायता कर सकेंगे या नहीं। यदि देवदास इस काम को अपने हाथ में ले ले तो बडा काम कर डाले, पर दुर्भाग्य से वह आने को तैयार नही है।

हम पत्र जनवरी के आरम्भ मे निकाल रहे है। आपके लेख की बाट जोह रहा हू। मुझे लेख अभी मिला है। वियोगी हरि को हिन्दी के पत्र का सम्पादन करने के लि कोई योग्य आदमी अभी तक नही मिला है, इसलिए मै आफिस के आदमियो से ही काम ले रहा हू। पर, जैसा कि आप स्वय जानते है, इसके लिए एक अच्छे आफिस सेक्रेटरी की दरकार है।

सघ का नाम तीसरी बार बदलना उपहासास्पद होगा। राजाजी के पत्र का आपके ऊपर इतना गहरा प्रभाव पडा, पर मेरे ऊपर तो नही पडा। इसका कारण यह भी हो सकता है कि ऐसी बातो की ओर से मै उदासीन-सा रहता हू।

आशा है, आप विल्कुल स्वस्थ हे। कृपया मेरे स्वास्थ्य की चिन्ता मत करिये। मैं अच्छा खासा हू। अभी मैंने वेरो का व्यवहार नही किया है, पर करूगा।

विनीत
घनश्यामदास

जैसा कि ऊपर के पत्र से पता लगेगा, उस समय हम साप्ताहिक 'हरिजन' का श्रीगणेश कर रहे थे। उसका सम्पादन गाधीजी ने स्वय किया और उसे लोकप्रिय वना दिया। पर उसका प्रारम्भ करने मे अनेक कठिनाइयो का सामना करना पडा, जिससे उसके प्रकाशन मे देर लग गई

२७ दिसम्वर, १९३२

परम पूज्य वापू
आपके दोनो लेख मिले। दुर्भाग्यवश पहला अक निकालने मे अभी थोडी कठिनाई होगी, क्योकि अभी हमे सरकार से अनुमति प्राप्त नही हुई है। कायदे-कानून की पावन्दी के सिलसिले मे भी अभी कई वाते करना वाकी हे और अधिकारी पूछताछ कर रहे हे। पर, आशा है, एक सप्ताह से अधिक देर नही लगेगी।

आपके उपवास के सम्वन्ध मे मेरा कहना यही है कि जवतक सरकार से निश्चित रूप से मालूम न हो जाय तवतक वह विचार स्थगित रखा जाय। मुझे इसमे तनिक भी सन्देह नही है कि सरकार स्वीकृति दे देगी। पर सरकार अपने निश्चय की घोपणा २ जनवरी को करेगी या उसके वाद, यह वताना कठिन है। परतु आप सरकार से सीधे पूछ सकते हे और वह आपको वता देगी। एक वार सरकार ने विल के पेश किये जाने की अनुमति दी कि वाकी सारे काम आसान हो जायगे। मैंने अभी विल को देखा नही है। यदि विल मे अनुमति मात्र देने की व्यवस्था होगी तो वह काफी नही होगा, क्योकि वात फिर जमोरिन की इच्छा के ऊपर निर्भर करेगी। इसलिए कुछ करना आवश्यक होगा।

मैंने राजाजी से मित्रो सहित आपसे मिलने का आग्रह किया है, और सम्भवत वह आपसे शीघ्र ही मिलेगे।

विनीत
घनश्यामदास

यरवडा केन्द्रीय जेल
२९ दिसम्बर, १९३२

भाई घनश्यामदास

तुम्हारी चिट्ठी मिली। अपने व्यक्तित्व की चकाचौंध तुम्हारे जैसे मित्रों की अपेक्षा खुद मुझे अधिक परेशान करनेवाली है, क्योंकि मैं चाहता हू कि सब समान भाव मे मिलजुल कर काम करें और विचार विनिमय करें। मुझे यह बिल्कुल अच्छा नहीं लगता है कि मैं कोई बात कहू तो उसके लिए मुझे वैसी ही बात कहने वाले किसी अन्य व्यक्ति की अपेक्षा अधिक महत्त्व दिया जाय। इस भूमिका के बाद मेरा कहना यह है कि व्याधि का जो निदान तुमने किया है मैं उससे बिल्कुल सहमत नहीं हू। यदि मैं वैसा ही पत्र फर्ज करो तुम्हें लिखता तो तुम शायद बुरा न मानते। दूसरे शब्दों मे मैं तुम्हारे ऊपर अपने प्रभाव का गलत अन्दाजा नही लगाता। जब मैं जानता था कि सतीश बाबू और सुरेश बाबू के लिए डा० राय को सहयोग प्रदान करना असम्भव है तो मैं उनके लिए वह सहयोग उनमें कैसे प्राप्त कर सकता था? हा, यदि उन्हें सहयोग करने को बाध्य करता तो बात दूसरी थी, और मै वैसे सहयोग की बात सुरेश बाबू और सतीश बाबू तक के बीच मे नही सोच सकता हू। आश्रम मे मेरा प्रभाव सबपर एक समान समझा जाता है, पर वहा भी भिन्न-भिन्न प्रकृतियों के व्यक्ति रहते हैं, और उनके बीच सहयोग स्थापित करने की बात तक सोचना मेरे लिए असम्भव-सा है। मैंने सोचा था कि सुरेश बाबू और सतीश बाबू मैदान मे काम करने वाले आदमी हैं इसलिए यह काम उनके हाथों अधिक अच्छी तरह होगा और मेरी धारणा थी कि डा० राय को भी मेरा सुझाव रुचेगा। यदि किसी के कधो मे भार उठाकर भार वहन करने में अधिक समर्थ समझे जाने वाले व्यक्ति के कधो पर रखा जाय तो इसमें बुरा मानने की क्या बात है? और, जैसा कि अब प्रकट है, मैंने यह गलत धारणा की कि डा० विधान मेरे पत्र के गलत मानी नही लगायगे, उसमें कही हुई बात का खण्डन करना चाहेंगे तो करेंगे, पर बुरा कभी न मानेंगे। और तुम यह कैसे कहते हो कि मैंने डा० राय को दूसरे पत्र मे टाटा है? मैंने तो सिर्फ वस्तुस्थिति को सामने रखा है। यदि तुम पत्र को ठीक तरह से नहीं समझे तो उसे फिर पढो। मैं चाहता हू कि दूसरे पत्र की नीयत को समझो। मैं तुम्हारे लिए किसी ऐसे सेक्रेटरी की तलाश करूगा जो काम की खातिर काम करे।

जबतक अग्रेजी पत्र अच्छी तरह न निकल सके, उसमें पढने लायक अग्रेजी न हो, और उसमें दिया जाने वाला अनुवाद ठीक न हो, तबतक केवल हिन्दी सस्करण से ही सतोष कर लेना ठीक होगा।

मै जानता हू कि पक्षपात का कोई प्रश्न नही है, पर यह बात भी ध्यान मे रखनी चाहिए कि हम जो कुछ करते है उसके सम्बन्ध में डा० अम्बेदकर के दलवालो की क्या धारणा है।

तुम्हारा
बापू

इसके बाद ही मन्दिर-प्रवेश बिल उपस्थित हुआ।

यरवडा केन्द्रीय जेल
१ जनवरी, १९३३

भाई घनश्यामदास

तुम्हारा २७ तारीख का पत्र मिला। मैंने बिल देखा था। बिल मन्दिर-प्रवेश की अनुमति देने वाला इन अर्थों मे कहा जा सकता है कि वह सारे मन्दिरो को अस्पृश्यो के लिए खोलने की घोषणा नही करता है। पर मन्दिर उपासको के बहुमत से खोले जा सकते है, ट्रस्टियो की मर्जी पर नही।

बिल पेश करने की अनुमति सरकार से मिलने के बारे मे तुम्हे जो भरोसा है, आशा है वह ठीक निकलेगा। राजाजी यहा तीन दिन तक रहे, और हमने बिल और गुरुवयूर मदिर की अवस्था के सम्बन्ध मे आमतौर से बातचीत की।

आशा है, साप्ताहिक पत्र के प्रकाशन के सम्बन्ध में आवश्यक कानूनी कार्रवाई पूरी हो गई होगी।

तुम्हारा
बापू

२ जनवरी, १९३३

परमपूज्य बापू

आपके २७ और २८ के पत्र एक ही लिफाफे में मिले। आपका तर्क मेरी समझ मे नही आया, पर आप जो कहते है उसमे कुछ तथ्य अवश्य है। मैं आपका समय नष्ट करना नही चाहता हू। जब मिलूगा तो बाते होगी। वास्तव मे जब मैं पिछली बार पूना गया था तो आपसे कई बातो की आत्म-सतोष के लिए चर्चा करना चाहता था, पर मैंने आपको बेतरह कार्य-व्यस्त देखा तो इरादा छोड दिया। आपने अपने पत्र मे डा० बिधान को लिखे पत्र की नकल भेजने की बात लिखी है, पर मुझे वह नही मिली।

अग्रेजी सस्करण के सम्बन्ध मे आपने जो कहा सो जाना। मैं आदमी को चुनने मे इस बात का ध्यान रखूगा।

आपके उपवास के स्थगित होने की बात से मेरी चिन्ता दूर-सी हो गई पर इसका अर्थ यह नहीं है कि हम अपनी चेष्टाएं शिथिल कर देंगे। मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि १५ तारीख से पहले-पहले वायसराय की स्वीकृति मिल जायगी। मुझे आशा है कि बिल जिस रूप में पेश किया जा रहा है उससे आप सतुष्ट है। पूना में जैसी बात हुई थी, क्या काशी के विश्वनाथ के मंदिर का प्रश्न उठाया जाय? मंदिर निकट भविष्य में खोल दिया जायगा, ऐसी सम्भावना तो नहीं है, पर उस क्षेत्र में प्रचार तो आरम्भ कर ही दिया जाय। आशा है, आप सहमत होंगे।

विनीत
घनश्यामदास

४ जनवरी, १९३३

परमपूज्य बापू

हिन्दी पत्र तो जल्दी ही निकल आयगा, पर अंग्रेजी संस्करण निकलने में देर लगेगी।

मैं यही सोच रहा हूं कि अंग्रेजी पत्र का क्या नाम रखा जाय, पर कोई अच्छा-सा नाम ध्यान में नहीं आ रहा है। 'प्रायश्चित्त' नाम के सम्बन्ध मे आपका क्या विचार है? इस नाम से हमारे उद्देश्य का भी पता लगता है, इसलिए मैंने सोचा कि आपको यह नाम शायद पसन्द आवे।

कृपया तार के जरिये सूचित करिये कि आपको यह नाम पसन्द है या नहीं। यदि नही तो कोई दूसरा नाम सुझाइयेगा।

विनीत
घनश्यामदास

६ जनवरी, १९३३

परमपूज्य बापू

इस पत्र के साथ एक पत्र भेजता हूं जिसका विषय स्पष्ट ही है। क्या आप इस पत्र के लेखक को थोडा-बहुत जानते हैं? इसे किस काम में लिया जाय, सो मैं नहीं जानता। पर सम्भवत आप यह पत्र-लेखक को स्वयं बता देंगे।

कस्तूरभाई ने ५,०००) रुपये भेजे हैं। मैंने चीनूभाई को भी इतनी ही रकम देने को लिखा है। अभी तक कोई आर्थिक कठिनाई सामने नहीं आई है। हम प्रांतों को तभी देंगे जब वे अपने हिस्से का व्यय स्वयं एकत्र कर लेंगे। प्रांतों ने इस मामले में ढील दिखाई है, इसलिए हमने भी

अपने पास से भेजी जाने वाली रकम मे कमी कर दी है। पर इसका मतलव यह नही है कि काम में किसी प्रकार की शिथिलता आ गई है। आपका जादू देश के कोने-कोने में काम कर रहा है और काम को आगे वढाने मे हमें कोई खास चेप्टा नही करनी पड रही है। मुझे तो इसी वात का सतोष है कि मेरा इस कार्य के साथ सम्वन्ध है।

विनीत
घनश्यामदास

७ जनवरी, १९३३

परमपूज्य वापू

आपका ३ तारीख का पत्र मिला। पत्र के साथ भेजे दो अन्य पत्र भी एक रामानन्द सन्यासी का, और दूसरा गणेशीलाल मिस्तरी का—मिले। गणेशीलाल मिस्तरी के सम्वन्ध मे अच्छी तरह पूछताछ करके आपको फिर लिखूगा। पर सक्षेप मे इतना तो कह दू कि दिल्ली मे दल-वन्दी का वडा जोर है, इसीलिए ये सारी परेशानिया है।

रामानन्द सन्यासी वाली वात को ही लीजिये। यह वात सच्ची है कि रग्घूमल चैरिटी ट्रस्ट ने उनकी सस्था को मासिक सहायता देना वन्द कर दिया है। वैसे भी उसे यह सहायता देते हुए, यदि मुझे ठीक याद है तो, १८ महीने हो गये थे, इसलिए वह वन्द तो होती ही। पर यदि सहायता वन्द न की जाती तो भी उनकी सस्था के कार्यकलाप के सम्वन्ध मे कुछ अधिक छानवीन की जरूरत है।

दिल्ली मे आर्यसमाजियो के दो दल है और दोनो निहायत ही शर्मनाक ढग से आपस मे लड रहे है। हाल ही मे रामानन्द सन्यासी की सस्था के ऊपर एक दल ने अधिकार कर लिया है। यह छीछालेदर इसीलिए हो रही है। अतएव इस अवस्था मे इन सस्थाओ को आर्थिक सहायता देने मे मुझे तो हिचकिचाहट-सी होती है। जव रामानन्द सन्यासी जेल से छूटेगे तो मै उनसे वात करूगा।

जव मैने यहा वोर्ड की स्थापना की थी तो लाला श्रीराम, देशवन्धु और पडित इन्द्र से वातचीत की थी। अछूतो ने वोर्ड में इतनी वडी सख्या में घुसने की चेप्टा की कि यद्यपि हमने अछूतो के दोनो दलो मे से कई कई आदमी लिये, तथापि एक दल असतुप्ट ही रहा, और एक वार तो हमे इस्तीफा देने की धमकी दी गई। वाद मे शायद इस्तीफे वापस ले लिये गये। सवर्ण हिन्दुओ ने भी वोर्ड में घुसने मे ऐसी ही उतावली दिखाई। फलत इस समय वोर्ड में पचास सदस्य है। आर्य समाज की तरह दलितो मे

भी दलवन्दी है। दिल्ली मे राजा-पार्टी या अम्वेदकर-पार्टी जैसी कोई चीज नही है। यहा तो पहले आपसी ईर्ष्या-द्वेष के फलस्वरूप दल का जन्म होता है, उसके वाद नेता चुना जाता है। इसलिए सतोपजनक प्रवन्ध करना असम्भव-सा है। प० इन्द्र स्थानिक अवस्था से अधिक अच्छी तरह परिचित है, इसलिए मैंने उनसे अनुरोव किया है कि वह आपको यह सारा व्यापार पूरी तरह समझा दे।

हाल ही में यहाँ जूता वनाने के धधे को प्रोत्साहन देने के लिए कोआपरेटिव सोसायटी वनाई गई है। सरकारी अफसर भी इसमे दिलचस्पी ले रहे है। मुझे इस धधे मे सहायता देने की सचमुच की चेष्टा दिखाई दी, इसलिए मैंने नाममात्र के व्याज पर ५,०००) रुपये कर्ज देने का वचन दे दिया। पर अव मुझे पता चला है कि यह कोआपरेटिव वैंक भी एक ही दल का है, और चूकि दूसरा दल इससे सतुष्ट नही है, इसलिए इस दूसरे दल के लाभ के लिए एक और कोआपरेटिव वैंक खोलने की वात हो रही है। वस, काम इसी गन्दे वातावरण मे हो रहा है।

परतु, जैसा कि मै कह चुका हू, इस मामले मे प० इन्द्र आपको अधिक विस्तृत रूप से लिखेंगे।

विनीत
घनश्यामदास

यरवडा केन्द्रीय जेल
८-१-३३

भाई घनश्यामदास

तुम्हारे ४ तारीख के पत्र के उत्तर मे मैंने कल एक तार भेजा था। मैंने अपने इस पुराने सुझाव को अव फिर दुहराया है कि कमसे कम अग्रेजी "हरिजन" पूना से निकले, और हिन्दी और अग्रेजी सस्करणो का एक ही दिन निकलना जरूरी नही है। यदि हिन्दी का शुक्रवार को निकले तो अग्रेजी का सोमवार को निकाला जाय। अग्रेजी हरिजन मेरी देखरेख मे निकलेगा और जितना आवश्यक होगा हिन्दी से लेगा। खवरे, आकडे, रिपोर्ट आदि हिन्दी से ली जायगी और उसमे मौलिक सामग्री भी रहेगी। ऐसी अवस्था में यदि वहाँ से कोई आदमी भेजने के लिए नही हो तो किसी को मत भेजना। मै यहाँ किसी न किसी आदमी का इन्तजाम कर लूगा।

मैंने कल इस वारे मे श्री ठक्कर वापा से वात की और उन्हे विचार पसन्द आया। मैंने उनसे कहा कि वह तुमसे भी वात कर ले, पर उन्होने उत्तर दिया कि इससे व्यर्थ की देर होगी, इसलिए अपने विचार तुम्हारे पास डाक

के जरिये ही भेज दिये जाय। यदि तुम इस विचार का हृदय से समर्थन करते हो तो काम को आगे बढाओ और जरूरी समझो तो आकर मुझसे बातचीत कर जाओ। पर इसकी खातिर हिन्दी सस्करण निकालने मे देर नही करनी चाहिये। अग्रेजी सस्करण दो-एक हफ्ते बाद निकल जायगा।

इस पत्र के साथ लाला श्यामलाल का तार और पत्र भेजता हू। अपने उत्तर की नकल भी भेजता हू।

तुम्हारा
बापू

ग्वालियर
१० जनवरी, १९३३

परमपूज्य बापू

जैसा कि आपको इस पत्र से मालूम हो गया होगा, मै ग्वालियर काम के सिलसिले मे आया हू और यहा कोई एक पखवाडे ठहरूगा। दिल्ली से रवाना होने से पहले मैने पण्डित इन्द्र के पास कहला भेजा था कि वह आपको गणेशीलाल के सम्बन्ध मे विस्तृत रूप से लिखे। आपको अब इसी तरह की शिकायते मिला करेगी। इसका कारण यही है कि शिक्षित हरिजनो मे इस प्रकार की आशाए विशेष रूप मे उत्पन्न हो गई है कि हमारा यह सघ एक नवीन युग ला उपस्थित करेगा। बेकार हमसे नौकरी पाने की आशा करता है, कष्ट मे फसा व्यापारी यह उम्मीद करता है कि उसकी परेशानियो को हम दूर करेगे। जब मै पूना मे था तो हरिजन विद्यार्थियो का एक दल मुझसे मिलने आया। मैने उन्हे बता दिया कि उन्हे हम लोगो से यह उम्मीद नही करनी चाहिए कि हम आसमान के तारे तोडकर ला देगे। मैने उन्हे बताया कि यदि हम छह लाख रुपये साल सग्रह करने मे सफल हो और उनके ऊपर वह सारी रकम खर्च कर दे तो भी फी हरिजन एक रुपया वार्षिक का औसत आयेगा। हमारे साधन सीमित है और उन्हे इस बात को समझ लेना चाहिए। पर दुर्भाग्य से वे इसे नही समझेगे और इसका एकमात्र परिणाम यही होगा कि क्षोभ उत्पन्न होगा और ढेर-की-ढेर शिकायते आने लगेगी।

परतु जहा तक हृदयो के परिवर्तन का सवाल है, हमे इस दिशा में बडी सफलता प्राप्त हुई है। वातावरण मे जो इतना परिवर्तन दिखाई देता है, इसका श्रेय एकमात्र आपको है।

यदि पत्र का अग्रेजी सस्करण भी दिल्ली से ही निकले तो नाम में कुछ परिवर्तन होना आवश्यक है, नही तो प्रबन्ध-सम्बन्धी असुविधाए उत्पन्न होगी। पर यदि अग्रेजी सस्करण पूना से निकले तो यह कठिनाई उपस्थित

नही होगी । मुझे अभी तक अग्रेजी सस्करण का सम्पादन करने के लिए अच्छा-सा आदमी नही मिला है । यदि आप इसका प्रवन्ध पूना में ही कर ले तो मै इस उत्तरदायित्व से छुटकारा पा जाऊगा । साथ ही मै यह भी नही चाहता हू कि आप अपने ऊपर एक नया बोझ लाद ले । परतु यदि आप समझें कि पूना से निकालना ज्यादा अच्छा रहेगा तो मुझे कोई आपत्ति नही होगी । इसका फैसला एकमात्र आपके ही हाथ में है । परतु यदि मै पूना मे आपके किसी काम आ सकू तो आप मेरी सेवाओ का पूरी तरह उपयोग करे ।

विनीत
घनश्यामदास

यरवडा केन्द्रीय जेल
११-१-३३

प्रिय घनश्यामदास

तुम्हारा ७ जनवरी का दु ख की कहानी भरा पत्र मिला । पर हताश या भग्नोत्साह होने की कोई वात नही है । तुमने जो कुछ लिखा है सो अधिकाश सस्थाओ पर ऐसी ही वीतती है । जब ऐसी सस्थाओ का पूरा उत्तरदायित्व सिर पर आता है तभी सवसे अच्छे और सबसे बुरे आदमी की परीक्षा होती है । कोई सबसे अच्छा आदमी तभी साबित होता है जब वह निर्लेप होकर काम करे ।

तुम्हारा
बापू

: ८ :

'हरिजन' का जन्म

१४ जनवरी, १९३३

परमपूज्य बापू

अंग्रेजी 'हरिजन' के सम्बन्ध मे लिख ही चुका हू । मुझे इस सम्बन्ध में और कुछ नही कहना है । आशा है, आप पत्र को पूना से निकालने का प्रबन्ध कर रहे हैं । यदि आप चाहे तो श्यामलाल को वहाँ भेज दिया जाय, नही तो उनसे दिल्ली मे ही काम लिया जायगा ।

आपके और ला० श्यामलाल के बीच मे जो पत्र-व्यवहार हुआ है उसके सम्बन्ध मे मेरा कहना यह है कि आपको लिखने से पहले ही ठाकुरदास भार्गव मेरे पास सघ से दान मागने के लिए आ चुके थे । मैंने उन्हे बताया कि उनका कार्य मुख्यत हरिजनो के लिए नही है इसलिए मैं सघ से रुपया देने मे असमर्थ हू । पर मैंने उन्हे अपनी जेब से १,१००) रुपये अवश्य दे दिये । मैंने उनसे यह भी कह दिया कि यदि हरिजनो के लिए खासतौर से कुछ करने की बात होगी तो उन्हे प्रान्तीय बोर्ड के पास पहुचना होगा और हम प्रान्तीय बोर्ड को उस कार्य के लिए रुपये दे देगे । मेरी धारणा है कि यह कार्य मुख्यत हरिजनो के लाभ के लिए नही है, हरिजन नाम का व्यर्थ ही उपयोग किया जा रहा है । हा, उसका उपयोग अच्छे काम मे अवश्य किया जा रहा है । किन्तु अच्छे काम मे भी मनुष्य को सीमा का उल्लघन नही करना चाहिए । अतएव आपका उत्तर बिल्कुल ठीक रहा ।

विनीत

घनश्यामदास

१७ जनवरी, १९३३

परमपूज्य बापू

इधर कुछ दिनो से बगाल मे अपना मतलब सिद्ध करने के लिए कुछ आदमियो ने पूना पैक्ट के खिलाफ आन्दोलन खडा किया है । मै यह बात पूरे निश्चय के साथ कह सकता हू कि ये लोग बगाली सवर्ण हिन्दुओ की भावना

को व्यक्त नही कर रहे है । अधिकाश काग्रेसी इस आन्दोलन मे अलग है । आपको याद होगा कि आपके अनशन आरम्भ करने से कुछ ही पहले डा० मुजे ने कहा था कि यदि ऐसी ही वात है तो हिन्दू दलित जातियो की खातिर अपने हिस्से मे आई सारी सीटे अर्पण कर देगे । डा० मुजे ने यह वात मेरे कहने मे कही थी, और श्री रामानन्द चटर्जी के साथ परामर्श करने के वाद ही ऐसा कहा गया था । इसलिए यह कहना ठीक नही है कि इस मामले मे किसी प्रमुख वगाली की सलाह नही ली गई । अव रामानन्दवावू को पूना पैक्ट के खिलाफ शिकायत है । उस अवसर पर पडित मालवीयजी ने वगाल के सभी प्रमुख व्यक्तियो को वुलाया था । पर किसीको आने तक की फुर्सत नही थी ।

मेरा इस वाद-विवाद मे पडना शायद ठीक नही रहेगा । यह मामला नाजुक है, इसलिए एक गैर-वगाली का अलग रहना ही ठीक है । परन्तु क्या आप डा० राय और श्री जे० सी० गुप्त को कुछ लिखना ठीक नही समझते है ? और क्या आप मुझे सार्वजनिक रूप मे कुछ कहने की सलाह देते है ? मै डा० राय को लिख ही चुका हू ।

मुझे आपका ११ जनवरी का पत्र, जिसमे आपने नीली पुस्तिका के सम्वन्ध मे जमनालालजी के विचारो की चर्चा की है, अभी मिला है । जी हा, प्रस्ताव पूरा नही है । इस ओर मेरा ध्यान सवसे पहले देवदास ने आकर्पित किया । वस्तुत पुस्तिका का यह अश स्वय मेरे द्वारा लिखा गया था और मैने श्री ठक्कर वापा से सम्वद्ध प्रस्ताव जोडने को कहा था । यद्यपि यह भूल उनकी थी, तथापि इस गलती के लिए मै भी उतना ही उत्तरदायी हू । मुझे वाध्य होकर कार्यालय के निकम्मेपन की फिर शिकायत करनी पड रही है । किसी हद तक यह भूल स्वाभाविक भी थी, क्योकि अधिकाश पत्रो ने प्रस्ताव के इस अश को नही दिया था । मैने और देवदास ने इस सम्वन्ध मे पूना मे वात की थी और हम दोनो को ताज्जुव हुआ था कि वम्वई के पत्रो ने यही अश क्यो नही दिया । मेरे लिए तो यह वरावर रहस्य ही वना रहा । पर हमने यह निश्चय कर लिया था कि पुस्तिका की पुनरावृत्ति के समय यह त्रुटि दूर कर दी जायगी ।

जमनालालजी ने जो दूसरी वाते उठाई है, उन्हे हम पुस्तिका की पुनरावृत्ति के समय ध्यान मे रखेगे । मै उनसे इस वात मे सहमत हू कि लीग को अपना नाम वदल डालने का अधिकार देनेवाले प्रस्ताव मे कोई सृजनात्मक वात नही है, पर मै नही समझता कि इन साधारण-सी कायदे-क़ानून वाली वातो को इतना महत्व देने की क्या जरूरत है । प्रस्ताव व्यापक नही था, और हमने वहुतसे ऐसे अधिकारो को स्वय जन्म दिया है, जिनके लिए पहले

से कोई स्वीकृति नही ली गई थी, पर जो वर्तमान परिस्थिति मे आवश्यक है। हम सस्था की रजिस्ट्री तो करा ही रहे है।

मैने अपनी मिल के मैनेजर को सघ का खजाची नियुक्त किया है। सघ का कार्यालय मिल मे होने के कारण मेरी अनुपस्थिति मे अब बैक से चेक भुनाने मे अधिक सुविधा रहेगी।

श्री पुणताम्बेकर के सम्बन्ध मे जमनालालजी ने जो सुझाव दिया है, उसके सम्बन्ध मे मेरा कहना यही है कि हिन्दू विश्वविद्यालय मे उन्हे अच्छा वेतन मिल रहा है। इसलिए वह सघ में काम करने शायद ही जावे। मुझे स्वय एक अच्छे दफ्तर का अभाव खल रहा है, और मै इस सम्बन्ध मे आपको लिख भी चुका हू। यदि आपकी निगाह मे कोई अच्छा आदमी न हो तो मै ही अपनी पसन्द के किसी आदमी को नियुक्त कर लूगा। आप जानते ही होगे कि मै इस काम की ओर पूरा ध्यान नही दे रहा हू जो कि वर्तमान अवस्था मे स्वाभाविक ही है। मै अभी व्यापार मे ही हू और इस ओर अपना काफी समय देता हू। आजकल कुछ अधिक समय दे रहा हू, क्योकि मिल मे माल का पहाड लगा पडा है। जब मिल कमा रही थी तो मै इतना समय नही देता था। पर अब उसे घाटा हो रहा है, इसलिए मुझे स्वभावतया ही अपने समय का अधिकाश उसे देना पडता है। मैने यह सब तो आपको वस्तुस्थिति से अवगत कराने के लिए लिखा है। पर वैसे भी एक अच्छे सेक्रेटरी की नितान्त आवश्यकता है। मै खुद सघ के काम मे अधिक समय लगाना चाहता, पर परिस्थिति ऐसी है कि मै पूरे मनोयोग के साथ सघ का काम नही देख सकता। हा, अपने काम के बाद मै सघ के काम मे सतोपजनक मात्रा मे भाग ले रहा हू। मदिर और कुए खोले जाने के पूरे समाचार प्रान्तीय बोर्ड से नही मिलते है, पर हरएक प्रान्त से पाक्षिक आकडे अवश्य मिलते है। वे जितनी सूचना दे सकते है, देते ही है।

विनीत
घनश्यामदास

यरवडा केन्द्रीय जेल
पूना
१७ जनवरी, १९३३

भाई घनश्यामदास

तुम्हारा १० तारीख का ग्वालियर से लिखा पत्र मिला। मै अग्रेजी सस्करण के सम्बन्ध मे कल बुधवार को श्री देवधर और श्री वजे से बात कर रहा हू। वैसे तुम्हारा पत्र मिलने के बाद मै वजे से प्रारम्भिक बातचीत

कर भी चुका हू । ऐसा मालूम पडता है कि यहा से पत्र निकालने मे कोई अडचन नही होगी, पर मै कोई काम उतावली मे नही करूगा । काम को सचमुच हाथ लगाने से पहले मै तुम्हे पूरी सूचना दे दूगा ।

बगाल मे यह यरवडा पैक्ट का कैसा विरोध हो रहा है ? मै डा० विधान को भी लिखकर पूछ रहा हू ।

बेरो के असर के सम्बन्ध मे जो लिखा सो जाना । क्या कभी तुमने व्यवहार किया है ?

तुम्हारा
बापू

यरवडा केन्द्रीय जेल
१६ जनवरी, १६३३

भाई घनश्यामदास

तुम्हारा १४ तारीख का पत्र मिला । कल मैने अग्रेजी सस्करण के बारे मे श्री देवधर और श्री बजे से देर तक बात की और इस बातचीत के फलस्वरूप मैने अमृतलाल ठक्कर को तार दे दिया है कि यदि शास्त्री को छोड सके तो तुरत भेज दे । बजे का कहना है कि सम्पादकीय कार्य के लिए शास्त्री सबसे ठीक रहेगा । बजे ने सहायता देने का वचन दिया है, पर वह पूर्णतया पत्र के साथ नही हो सकेगे । पर दोनो ने यह कहा कि यद्यपि शास्त्री ने भारत सेवक सघ मे लिये जाने का प्रार्थना पत्र दिया है, तथापि यदि वह सम्पादकीय भार ग्रहण करेगा तो उसे (अर्थात् भारत सेवक सघ को) उसे कोई आपत्ति नही होगी । जहा तक महादेव को और मुझे समय मिलेगा, पत्र के स्तम्भ हम भरेगे और शास्त्री हिदायत के मुताबिक काम करेगा । धीरे-धीरे वह स्वय मौलिक लेख लिखने लगेगा ।

हिन्दी सस्करण कौन जाने कब निकलेगा ?

तुम्हारा
बापू

यरवडा केन्द्रीय जेल
पूना
२१ जनवरी, १६३३

भाई घनश्यामदास

तुम्हारा पत्र मिला । बगाल के प्रश्न पर तुम कोई सार्वजनिक वक्तव्य दो, यह मै नही चाहता । तुम देख ही रहे हो कि मैने खुद कोई वक्तव्य नही

दिया है। मै भी यह खयाल करके कि तुम भी उनको लिखोगे, तुम्हारा अनुकरण कर रहा हू और तुमसे पहले ही डा० विधान और रामानन्द-बाबू को लिख रहा हू। मैने श्री जे० सी० गुप्त को पत्र नही लिखा है, और न लिखना जरूरी ही समझता हू। मै उनसे मिल भी लेता, पर मै नही कह सकता कि उनके साथ मेरा पहला परिचय है भी या नही।

जो प्रतिया रह गई है उनकी समाप्ति तक पुस्तिका की पुनरावृत्ति स्थगित करना ठीक नही है। तुम दो मे से एक काम कर सकते हो। या तो पुरानी पुस्तिका को रद करते हुए एक नई पुस्तिका जारी करो, जो प्रतिया रह गई है उनमे अपूर्ण प्रस्ताव के ऊपर पूरा प्रस्ताव चिपका दो, और सरकूलर भेज दो कि भूल से पुस्तिका मे अपूर्ण प्रस्ताव छप गया। उस सरकूलर मे भी वह पूरा प्रस्ताव दे दो।

मै अच्छी तरह समझता हू कि तुम्हे अपना कामकाज भी देखना है, खास तौर से इन दिनो।

'हरिजन सेवक' निकालने मे क्या कठिनाई है?

तुम्हारे स्वास्थ्य सम्बन्धी समाचार चिन्ता उत्पन्न करते है। यदि कोई विश्वसनीय डाक्टर आपरेशन की सलाह देता है तो क्यो नही करा डालते? मुझे अनुभव ने सिखाया है कि नपी-तुली खुराक और उपवास की उपयोगिता भी सीमित ही है। उनसे सदैव ही इच्छित फल प्राप्त नही होता है। और जितने आराम की जरूरत हो, लो। ऐसे मामलो मे टालमटोल करना पाप है।

तुम्हारा
बापू

२४ जनवरी, १९३३

परमपूज्य बापू

सरकार के निश्चय पर मुझे बडा आश्चर्य होता है, पर इधर मै कई सवाद एजेसियो की बुद्धिमत्तापूर्ण भविष्यवाणियो को ध्यान से पढता आ रहा था, इसलिए जो कुछ हुआ है उसके लिए पहले से ही तैयार-सा हो गया था। मुझे सरकारी निश्चय मे न तर्क दिखाई देता है, न न्याय-बुद्धि। अब मै इस प्रतीक्षा मे हू कि इस परिस्थिति के सम्बन्ध मे आपका क्या दृष्टि-कोण है।

इस समय व्यवस्थापिका सभा का जैसा कुछ ढग-ढाचा है, उसे देखते हुए यही कहा जा सकता है कि वह अनेक अच्छी चीजे रद करने और बुरी चीजे पास करने मे समर्थ है। पहली बात तो यह है कि सरकार की विलम्ब

करने की नीति के फलस्वरूप, सम्भव है, यह बिल व्यवस्थापिका सभा मे पेश ही न हो सके, और यदि पेश हो भी जाय तो बहुत सम्भव है, वह पास न हो। इसलिए श्री रगा अय्यर के बिल के ऊपर अधिक निर्भर करना ठीक नही होगा। हमे तो आपसी चेष्टाओ का ही सहारा लेना चाहिए। परतु गुरुवयूर मन्दिर के मामले मे तो आपसी चेष्टाओ का अधिक मूल्य नही है। इसलिए मै यह जानना चाहूगा कि आप हमे क्या करने को कहते है।

यदि आपको भी रगा अय्यर का बिल पसन्द हो तो उसकी भाषा मे फेरफार करना आवश्यक होगा, क्योकि इस समय वह जैसा कुछ है, आज की अवस्था के लिए अपर्याप्त सिद्ध होगा। भाषा बडी अस्पष्ट है, और कानूनी पहलू से उसका शब्द-गठन ठीक नही हुआ है। यदि आप इसके पेश किये जाने के पक्ष मे हो तो आपकी सलाह मे इसकी भाषा का परिमार्जन करना आवश्यक होगा। इसीलिए मैने आपके पास एक तार भेजा है। आपके पाससे कल तक उत्तर मिलने की आशा है। यदि आप चाहे कि मै पूना आऊ तो मै वहा के लिए तुरत चल पडूगा। वैसे तो मै परसो दिल्ली जा रहा हू।

विनीत
घनश्यामदास

यरवडा केन्द्रीय जेल
पूना
२५-१-१९३३

भाई घनश्यामदास

हरिजन सेवक के अग्रेजी सस्करण की आय-व्यय का अनुमान यह रहा। तुम देखोगे कि रकम मामूली-सी है। क्लर्को को भी कुछ दिया जायगा और शास्त्री का शुल्क भी जोडना होगा। शास्त्री पत्र का सम्पादन करने को राजी हो गया है।

मेरा १०,००० प्रतिया निकालने का इरादा है। यदि इतनी प्रतियो की माग नही हुई तो कम कर दी जायगी। तुम जानते ही हो कि मै या तो पत्र को हाथ नही लगाऊगा और यदि लगाऊगा तो उसे स्वावलबी बनाने के लिए। यदि पत्र अपना खर्च स्वय न निकाल सका तो मै समझूगा कि प्रबन्ध या सम्पादन का दोष है, या जनता मे ऐसे पत्र की माग नही है। इनमे से किसी भी दशा मे यदि दोष दूर न किया जा सकेगा तो पत्र को बन्द कर दिया जायगा। मै पत्र को तीन महीने तक चलाकर देखूगा। इसी बीच मे उसे आत्म-निर्भर बनाना है।

अतएव मैं चाहूगा कि तुम ठक्कर बापा और जिन किन्ही से परामर्श करना चाहो उनसे परामर्श करके मुझे तार द्वारा सूचना दो कि अधिक-से-अधिक कितनी रकम तक के खर्चे की मजूरी दे सकते हो। जो अनुमान की हुई रकम है उसमे डाक खर्च और तार खर्च के अलावा २००) रुपये और जोड लेना ठीक रहेगा। मै अधिक पक्के आकडे शास्त्री के मिलने के बाद दूगा। यदि तुम बजट पास कर सको तो क्या मै पत्र निकालने का काम, इस बात का खयाल किये बगैर कि हिन्दी पत्र निकलेगा या नही, शुरू कर सकता हू? मै समझता हू, पत्र निकालने मे यहा कोई असुविधा नही होगी।

अस्पृश्यता-निवारक बिलो के सम्बन्ध मे सरकार के निर्णय वाला तुम्हारा तार ग्वालियर से मिल गया। आशा है, तुम्हे मेरा उत्तर मिल गया होगा और तुमने मेरा सविस्तर वक्तव्य भी पढ लिया होगा। मुझे उस वक्तव्य से अधिक और कुछ नही कहना है।

सघ को सरकारी सहायता की याचना करना या उसे ग्रहण करना चाहिये या नही इस सम्बन्ध मे भी मुझे और अधिक कुछ नही कहना है। पत्र स्वय ही स्पष्ट है।

आशा है, तुम अब पहले से अच्छे होगे। अपने स्वास्थ्य के साथ भी तुम्हे ऐसा ही बर्ताव करना चाहिये जैसा अपने अन्य धधो के साथ करते हो। उसकी उपेक्षा करने से काम नही चलेगा।

तुम्हारा
बापू

९ फरवरी, १९३३

परमपूज्य बापू

स्थिति का अध्ययन करने के बाद मै इस नतीजे पर पहुचा हू कि यदि सरकार सहायता करे तो बिल इसी अधिवेशन मे पेश हो सकता है और शिमला के अधिवेशन मे पास हो सकता है। निर्वाचन समिति की नियुक्ति भी इसी अधिवेशन के दौरान मे हो सकती है। यदि सरकार सहायता नही करेगी तो शायद बिल इस अधिवेशन मे पेश न हो सके। पर लक्षणो से ऐसा लगता है कि सरकार बिल के पेश किये जाने मे सहायता तो करेगी, पर इससे आगे बढने को तैयार नही होगी। सरकार हठ पकडेगी कि सदस्यो की राय लेने के लिए बिल की प्रतिया बाटी जाय। वैसे तो सदस्यो मे घुमाये जाने के बाद भी बिल का शिमला अधिवेशन मे पास किया जाना सम्भव है, पर उसके लिए यह आवश्यक है कि सरकार हर तरह की सुविधाए दे। यदि सरकार की सहायता नही मिली तो बिल खटाई मे पडा रहेगा।

मैं जब से यहां आया हूं हम लोगों ने कई बैठकें बुलाईं, जिनमें से कल रात की बैठक सबसे अधिक महत्वपूर्ण रही। उसमें यह तय हुआ कि व्यवस्थापिका सभा के प्रमुख सदस्य सरकार से बिल पर चर्चा करने के लिए विशेष सुविधाएं देने का अनुरोध करें। एक पत्र तैयार किया गया जिसपर कई प्रमुख सदस्यों ने हस्ताक्षर किये। आज और भी अधिक हस्ताक्षर हुए होंगे, और मैं समझता हूं अबतक पत्र लीडर आफ दी हाउस के हाथ में पहुंच गया होगा। परंतु मुझे विशेष आशा नहीं है कि सरकार विशेष सुविधाएं देगी। स्वयं सदस्य यह नहीं चाहते हैं कि बिल की कार्रवाई वर्तमान अधिवेशन के दौरान में झटपट पूरी कर दी जाय। इनमें से अधिकांश इस मामले में एकमत हैं कि बिल को सदस्यों में घुमाना जरूरी है, पर साथ ही वे यह भी नहीं चाहते हैं कि उसे पास करने के मामले में उतावली से काम लिया जाय। मैं आपको व्यवस्थापिका सभा की प्रणाली को विस्तार के साथ बताना जरूरी नहीं समझता हूं, क्योंकि मेरा विश्वास है कि आप स्वयं अच्छी तरह जानते होंगे। पर मैं इतना तो कह ही दूं कि यदि सरकार बिल को गजट में प्रकाशित कर दे तो उसे औपचारिक रूप से पेश करने की झंझट मिट जाय। इस प्रकार यदि सरकार चाहे तो हमारे मार्ग में एक रुकावट दूर हो जाय, पर शायद सरकार हमारी मदद करने को यहाँ तक आगे नहीं बढ़ेगी।

आज फिर एक बैठक है जिसमें प्रमुख सदस्य भाग लेंगे। उनमें से कुछ को हम उनके नाम में खड़े हुए बिल वापस लेने के लिए राजी करने की चेष्टा करेंगे जिससे श्री रंगा अय्यर के बिल के लिए रास्ता साफ हो जाय। मुझे भरोसा है कि अधिकांश सदस्य हमारी सहायता करेंगे। ऐसी भी आशंका है कि दो-एक का रुख सहायतापूर्ण न हो, पर इससे बिल का २७ फरवरी को बाकायदा पेश होना नहीं रुकेगा। हां, यदि सरकार इससे पहले ही बिल को गजट में प्रकाशित कर दे और विशेष सुविधाएं दे तो उसे बाकायदा पेश करना गैरजरूरी हो जायगा।

बस, एक बात और रह गई। व्यवस्थापिका सभा में एक रिवाज चला आता है कि जिस दिन बिल पेश किया गया हो उसी दिन उसपर चर्चा नहीं की जाती है। इसका अर्थ यह है कि यदि बिल २७ फरवरी को पेश हो गया तो भी उसपर उसी दिन विचार नहीं किया जायगा। यह रिवाज सदस्यों, सभापति और सरकार की सहमति से शिथिल भी किया जा सकता है। पर शायद तीनों पक्ष इसके लिए राजी न हों। स्वयं हाउस इन रिवाजों के पालन किये जाने के पक्ष में रहता है। मैं स्वयं चार वर्ष तक सदस्य रह चुका हूं, इसलिए मेरी सहानुभूति इन रिवाजों के साथ है।

जब मुझे ऐसा लगने लगेगा कि यहा और कुछ करना सभव नही है तो मेरा विचार कलकत्ते के लिए रवाना होने का है। यहा तो मेरी नाक का आपरेशन करनेवाला कोई विशेषज्ञ है नही, इसलिए अबकी बार मै कलकत्ते मे यह काम भी पूरा करा डालूगा।

विनीत
घनश्यामदास

(चक्रवर्ती राजगोपालाचारी के नाम महात्मा गाधी के तारीख १३-२-३३ के पत्र की नकल)

आपने और घनश्यामदास ने जनता के नाम जो अपील निकाली है वह मैने पढी है। आप लोगो ने उपवास और उसकी सम्भावना की चर्चा मात्र भी क्यो की? यदि उपवास करना ही पडा और यदि उसे आध्यात्मिक रूप देना पडा तो आप इस प्रकार उसकी आध्यात्मकिता नष्ट कर रहे है। यदि मन्दिर-प्रवेश सबन्धी बिल व्यवस्थापिका सभा के वर्तमान अधिवेशन मे, अथवा बिल्कुल ही, पास न हुए तो भी मै स्वय नही कह सकता हू कि उपवास निश्चित है। मै नही जानता वह कब आयेगा। आप लोगो को उसे अपने दिमाग से बिल्कुल निकाल देना चाहिए और जनता को स्वतन्त्र रूप से कार्य करने की छूट दे देनी चाहिये। जब उपवास आयेगा और उसका स्वरूप आध्यात्मिक होगा तो उसका प्रभाव स्वत ही पडेगा। यदि वह उपवास रुग्ण अथवा अहम्मन्य मस्तिष्क की उपज होगा तो उसकी खबर सुनने वाले को या तो तरस आयेगा, या घृणा होगी—जिसकी जैसी मनोवृत्ति होगी। इसलिए एक विशेषज्ञ की सलाह मानकर उसीके अनुरूप पूरी तरह आचरण करिये।

इसके साथ ही आपको मालवीयजी के रुख पर भी गम्भीरता-पूर्वक ध्यान देना है। वह बिलो के बिल्कुल खिलाफ है, विशेषकर यदि जनमत निर्धारित करने के लिए उन्हे घुमाया न गया तो। यह ठीक है कि मै उनके मत से सहमत नहीं हू। मै उनको लिख रहा हूँ। पर यदि आपको तनिक भी अवकाश हो तो उनसे अवश्य मिलिये, या सिर्फ देवदास को ही भेज दीजिये। लेकिन मै इस बारे मे दृढता के साथ कोई सम्मति नही दे सकता हू। जो कुछ आपको बिल्कुल ठीक जचे वही करिये। बाहर के वातावरण से तो आप लोग ही अच्छी तरह परिचित है। मै तो जो कुछ जानता हू, सुनी सुनाई, इसलिए उसका मूल्य नही के बराबर है।

डा० अ[1] के साथ मुलाकात हुई। मुलाकात को अत्यन्त असतोपजनक कहना ठीक होगा। उनके साथ मेल होना सम्भव नही है। एक प्रकार से मुलाकात सफल भी रही। मै उन्हे अब पहले की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह जानने लगा हू।

कृपया यह पत्र घनश्यामदास और ठक्कर बापा को भी दिखा दीजिये।

बापू

इस समय हम जिन दो कामो मे जुटे हुए थे वे ये थे हिन्दू-मन्दिरो मे अछूतो का प्रवेश कराने के लिए मन्दिर-प्रवेश-बिल को पास कराना, और उनके हितो का समर्थन करने के लिए साप्ताहिक 'हरिजन' निकालना।

१४ फरवरी १९३३

परमपूज्य बापू

भरसक चेष्टा करने पर भी हम आगे नही बढ सके है। बिल के लिए २७ तारीख निश्चित हुई है और यदि सबकुछ ठीक-ठाक रहा तो श्री गया-प्रसाद सिंह या श्री एस सी मित्र उसे उसी दिन पेश कर देंगे। परतु मुझे उनके उस दिन पेश होने मे काफी सन्देह है। सबसे पहली बात तो यह है कि बहुत से बिल आगे से पडे हुए है। यदि उन सबका वापस लिया जाना सम्भव हो तो भी कम-से-कम एक बिल—हाजी वजीहुद्दीन का शारदा एक्ट को रद्द करने वाला बिल—तो रहेगा ही, और सारा दिन उसीमे लग जायगा। इस प्रकार बिल शायद २७ तारीख को पेश ही न हो सके, और आप जानते ही है कि केवल बिल पेश होने से ही कुछ काम न बनेगा। यदि सरकार बिल को पेश करने की विशेष सुविधाए दे दे तो अन्य बिलो के बावजूद वह २७ को पेश किया जा सकता है।

मै आपको लिख ही चुका हू कि यदि बिल गजट मे प्रकाशित हो जाय तो उसे बाकायदा पेश हुआ करार दिया जायगा। श्री रगा अय्यर ने सरकार को लिखा भी है, परतु अभी तक उन्हे कोई उत्तर नही मिला है। मेरे सुनने मे तो अभी तक यही आया है कि हमें कोई विशेष सुविधाए नहीं मिलेगी। विशेष सुविधाए मागने के लिए व्यवस्थापिका सभा के सदस्यो के हस्ताक्षरो-सहित जो पत्र भेजा जाने वाला था वह भेज दिया गया है। केवल १२ हस्ताक्षर कराये जा सके है।

---

१ डा० अम्बेदकर से अभिप्राय है।

नेशनलिस्ट पार्टी मे दलवन्दी हो रही है। इसके अलावा नेशनलिस्ट पार्टी और इन्डिपेन्डेन्ट पार्टी मे भी प्रतिद्वन्द्विता चल रही है। चेष्टा की जा रही है कि इन्डिपेन्डेन्ट पार्टी भी ऐसा ही एक पत्र भेज दे।

विल-सम्वन्धी धीमी प्रगति के कारण जो निराशा हो रही है उसकी ओर ध्यान न दिया जाय तो स्थिति काफी सतोपजनक है और देश वडी तेजी के साथ आगे वढ रहा है। लोग अस्पृश्यता-निवारण मे अधिकाधिक रुचि दिखा रहे हैं और परिणाम सतोषजनक है।

पडितजी एक वडा वुरा वक्तव्य देने वाले थे, जिसमे वह विल के पेश किये जाने का जोरदार विरोध करते, पर उन्हे फिलहाल वैसा वक्तव्य न देने को राजी कर लिया गया है।

हिन्दी 'हरिजन' की वात अभी तक अनिश्चित है। हमने श्री गुप्ते का नाम मुद्रक और प्रकाशक के स्थान पर दिया था। सी आई डी उनके सम्वन्ध मे जाच कर रही है। अव नागपुर पुलिस ने उनके सम्वध मे पूरी रिपोर्ट भेजने को लिखा है। वहुत चेष्टा करने पर भी काम जल्दी से आगे नही वढ रहा है। श्री ठक्कर वापा डिप्टी कमिश्नर से दो वार मिले, पर तो भी कोई प्रगति नही हुई।

विनीत
घनश्यामदास

१८ फरवरी, १९३३

परमपूज्य वापू

फिलहाल कोई महत्वपूर्ण वात लिखने योग्य नही है। दोनो ओर से प्रचार-कार्य जारी है। हम भी लगे हुए है, सनातनी लोग भी। जव हमने कुछ सदस्यो मे विशेष सुविधाओ के लिए सरकार से अनुरोध कराया तो विपक्षी दल ने भी कई सदस्यो से इसका विरोध कराया। फलत हमने निश्चय किया है कि यदि हमे सदस्यो से अपेक्षाकृत अधिक सहायता प्राप्त करनी है तो विल को व्यवस्थापिका सभा द्वारा पास कराने के मामले मे जल्दवाजी से काम न लेकर उसके वितरण से ही सतोष करना पडेगा। मै जानता हू कि आप इस मामले मे सहमत नही है। पर मेरी अपनी धारणा तो यह है कि विल के वितरण मे और निर्वाचक समिति की नियुक्ति मे वास्तव मे कोई भेद नही है। यदि निर्वाचक समिति नियुक्त हो जाय तो भी शिमला अधिवेशन से पहले कुछ होना सभव नही है और यदि विल को एक निश्चित अवधि का निर्देश करके सदस्यो मे वाट दिया जाय तो भी निर्वाचक समिति की नियुक्ति सम्भव है, और विल पर उसके वाद ही

विचार किया जायगा। अतएव बिल के वितरण पर सहमत होकर हम उससे अधिक समय नष्ट नहीं करेंगे जितना हमें वैसे भी करना पड़ता। इसलिए हमने कुछ सदस्यों से सरकार से अनुरोध कराया है कि बिल पेश हो सके, इसके लिए वह सुविधाएं प्रदान करे जिससे जनमत निर्धारित करने के लिए उसे इस शर्त के साथ बांटा जा सके कि वह शिमला अधिवेशन तक व्यवस्थापिका सभा में लौट आयेगा। आशा है, आपको इस कार्य-प्रणाली पर विशेष आपत्ति नहीं होगी।

मैंने सुना है कि सनातनी वर्ग ने काफी रुपया इकट्ठा किया है। रुपया दक्षिण से भी आ रहा है और रकम का काफी अच्छा भाग कलकत्ता और बम्बई के मारवाड़ियों से आया है। कठवा के महाराज ने भी काफी रुपया दिया है। पता नहीं, इस खबर में कहां तक सचाई है, पर कुछ सचाई है अवश्य।

खेद है कि आपको राजाजी को और मुझे सार्वजनिक रूप से डांटना पड़ा। हम दोनों आपस में झगड़ रहे हैं कि उस विशिष्ट अंश के लिए किसको दोष देना चाहिए। पर मुझे अच्छी तरह याद पड़ता है कि मैंने राजाजी से कहा था कि उपवास के सम्बन्ध में कुछ मत कहिये। हां, मेरे कारण भिन्न थे। प्रेस मुलाकात का मसविदा स्वयं राजाजी ने तैयार किया था, और मूल मसविदे में आपके उपवास की चर्चा तक नहीं थी। मूल में जो वाक्य था उसका आशय यही था कि हमने पहले से दुगनी शक्ति के साथ काम करने का और बिल को वर्तमान अधिवेशन में पास कराने का आपको वचन दिया है। मैंने कहा है कि मैं इसपर हस्ताक्षर करने को तैयार नहीं हूं, क्योंकि न तो मैंने कोई ऐसा वादा किया ही था, और न मैं अपने आपको इतना बड़ा ही समझता हूं कि ऐसा वादा कर सकूं। इसके अलावा यह कहना भी गलत होगा कि मैं पहले से दुगनी शक्ति के साथ काम करूंगा। इसपर यह सुझाया गया कि जनता को इस बात का कुछ तो इशारा जरूर ही देना चाहिए कि इस बिल की ओर आपका ध्यान कितना लगा हुआ है। बस, उपवास-सम्बन्धी अंश का जन्म उसी उत्सुकता से हुआ। पर मैं आपकी बात समझ गया, और मैं आपसे इस मामले में सहमत हूं कि उसकी चर्चा नहीं करनी चाहिए थी।

आशा है, आपका स्वास्थ्य ठीक है।

विनीत
घनश्यामदास

२३ फरवरी, १९३३

परमपूज्य वापू

कल हमने वेस्टर्न होटल मे चायपार्टी का आयोजन किया, जिसमे व्यवस्थापिका सभा के प्राय ३५ सदस्यो ने भाग लिया। जितनी की आशा थी हमे उससे भी अधिक सफलता मिली। कुछ सदस्यो ने विल के विरोधी होते हुए भी उसके पेश किये जाने और लोकमत का पता लगाने के लिए उसके घुमाए जाने का पक्ष लिया। अब हमारी माग मामूली-सी है, इसलिए हमे पहले से अधिक समर्थन प्राप्त हो रहा है। अतएव ऐसा प्रतीत होता है कि विल २७ फरवरी को पेश हो जायगा और २४ मार्च को वाट दिया जायगा। कई सदस्यो ने वादा किया कि जो अन्य विल रास्ता रोके पडे है उसके कारण व्यर्थ ही समय नष्ट न हो, इसका वे ध्यान रखेगे। मदिर-प्रवेश-सम्वन्धी दूसरा विल २७ फरवरी को आनेवाला नही है, इसलिए वह सम्भवत उस दिन पेश नही होगा। मैने सर व्रजेन्द्र सिह से देर तक वाते की, और उन्हे याद दिलाया कि शारदा विल के अवसर पर विशेष सुविधाए दी गई थी। पर उन्होने कहा कि जवतक सरकार को विश्वास नही होगा कि विल के लिए जगह किये वगैर वह भवन के सामने नही आ सकेगा तवतक वह विशेष सुविधाए देने की वात तक न सोचेगी।

सरकारी क्षेत्र मे अभी तक यह भ्रान्त धारणा फैली हुई है कि अस्पृश्यता-निवारण एक राजनीतिक पैतरा मात्र है। यह वडे परिताप का विषय है, पर अभी उन्हे वास्तविकता पर विश्वास करने मे दिन लगेगे। परतु मालवीयजी के रुख ने कम-से-कम एक वात सावित कर दी है, और वह यह है कि अस्पृश्यता-निवारण कार्य को हाथ मे ले कर आप अपने कई सवसे गहरे राजनीतिक मित्रो की मित्रता से वचित हो गये है।

कल की चाय-पार्टी मे राजाजी की वक्तृत्ता वडी ही प्रभावोत्पादिनी रही, कई सदस्यो ने तो भूरि-भूरि प्रशसा की। मै भी अनेक पुराने मित्रो से इतने दिनो के वाद मिला था, इसलिए वडा प्रफुल्लित था। इस प्रकार पार्टी वहुत ही सफल रही।

विनीत

घनश्यामदास

वनारस

५ मार्च, १९३३

परमपूज्य वापू

मै दिल्ली से यहा आया हू और ५-६ दिन ठहरूगा। इसके वाद कलकत्ता जाऊगा। पहले मेरा इरादा था कि इस वार कलकत्ते मे आपरेशन करा

लूगा, पर मुझे २० तारीख तक दिल्ली वापस लौटना है, क्योकि बिल २४ को लिया जायगा। वैसे इस दफा बिल क सम्बन्ध मे और कुछ नही करना है। कलकत्ते मे मुझे मुश्किल मे एक सप्ताह मिलेगा। इस प्रकार आपरेशन इस दफा भी मुल्तवी रहा।

मैने पडितजी[1] के साथ देर तक बातचीत की। मुझे मालूम हुआ कि उनमे मथुरादास मिल चुके है। पडितजी का दृष्टिकोण बिल्कुल भिन्न है। वह धीरे-धीरे आगे बढना चाहते है और किसी को अप्रसन्न नही करना चाहते। इसलिए वह जो ढग अपना रहे है वह आपको नही भायगा।

बातचीत के दौरान मे पडितजी ने स्वीकार किया कि कानूनी बाधाए है, पर उन्होने यह नही माना कि उन बाधाओ को विधान सभा की सहायता के बगैर दूर नही किया जा सकता है। उन्होने तो यहा तक कहा कि यदि उन्हे विश्वास हो जाय कि कुछ सचमुच की कानूनी बाधाए है तो वह व्यवस्थापिका सभा की सहायता से या अदालत मे परीक्षा के बतौर मामला ले जाकर इस त्रुटि को दूर करने की चेष्टा करेगे। जब मैने उन्हे सुझाया कि हम काशी विश्वनाथ मदिर के मामले को परीक्षा के बतौर अदालत मे ले जा सकते है तो उन्होने कहा कि वैसा करना वाछनीय नही होगा। पडितजी को विश्वास है कि आपने जो ढग अपनाया है उसमे अस्पृश्यो को मदिर मे ले जाने मे और भी देर लगेगी। वास्तव मे वह सनातनी वर्ग के साथ सघर्ष मे बचना चाहते है।

उन्होने जो कहा उससे प्रयागवाले प्रस्ताव के सम्बन्ध मे मेरी धारणा की और भी पुष्टि हो गई। उस प्रस्ताव के अनुसार अस्पृश्य लोग विश्वनाथ मदिर मे प्रवेश नही कर सकते है।

दिल्ली से रवाना होने से पहले मैने सरकारी क्षेत्रो से पता लगाया कि बिल के २४ तारीख को पेश होने की क्या सम्भावना है। उन्होने आश्वासन दिया कि उन्हे कोई बाधा दिखाई नही देती है। इसलिए सम्भवत हम २४ को पहली पाली जीत लेगे। पर उसकी भावी प्रगति के बारे मे मुझे उतनी आशा नही है। मै यह तो स्वीकार करने को तैयार नही हू कि बिल के वितरण मे कोई खास समय नष्ट होगा, पर और भी बहुत-सी ऐसी कठिनाइया है जिन्हे आप खुद ही समझते होगे।

विनीत
घनश्यामदास

---

१ मालवीयजी

विडला हाउस
वनारस
८ मार्च, १९३३

परमपूज्य वापू

आपका २ मार्च का पत्र देखा। श्री डेविड की योजना[1] के सम्बन्ध मे वात यह है कि अभी तक हमे रग्घूमल चैरिटी ट्रस्ट से सिर्फ छात्रवृत्तियो के लिए १०००) रुपये मासिक का वचन मिला है। यह रकम केवल वारह महीने तक मिलेगी, पर मुझे आशा है कि साल भर वाद इसे फिर जारी करा लिया जायगा। यह रकम श्री डेविड की योजना वाले काम मे आसानी मे लाई जा सकती है।

इस कार्य के लिए अधिक रुपया सग्रह करने के वारे में मेरा कहना यह है कि अव और अधिक वचन मिलना कठिन-सा हो रहा है, क्योकि जिन्हे देना था वे हमारे सघ के विभिन्न वोर्डो मे से एक-न-एक वोर्ड को पहले से ही दे चुके है। अभी हमने रुपया अधिक खर्च नही किया है, और यदि आप सहमत हो तो मेरा सुझाव तो यही है कि फिलहाल केन्द्रीय वोर्ड इस निमित्त कुछ रुपया निकाल दे। वास्तव मे हम शिक्षण-कार्य मे कुछ रुपया खर्च करने की वात पहले से ही सोच रहे है और हमने प्रान्तीय वोर्डो से भी कह दिया है कि यदि वे अपने हिस्से का भार वहन करने को तैयार होगे तो केन्द्रीय वोर्ड भी अपने भाग मे आया हुआ भार वहन करेगा। परन्तु मुझे प्रान्तीय वोर्डो से कोई सतोपजनक उत्तर मिलने की आशा नही है, इसलिए फिलहाल केन्द्रीय वोर्ड से ही खर्च करना सवसे अच्छा रहेगा। फर्ज करिये, हम केन्द्रीय वोर्ड से २०,०००) रुपये खर्च करे, और १९३३ भर के लिए १२,०००) रुपये का वचन रग्घूमल चैरिटी ट्रस्ट से मिल ही गया है, तो कुल मिलाकर ३२०००) रुपये हुए। आप यदि अम्वालाल जैसे मित्रो को २,५००) रुपया देने को लिखे तो वे अवश्य ही देगे। मै भी इतनी ही रकम दे दूगा। इस प्रकार अच्छा खासा श्रीगणेश हो जायगा। कृपया मुझे कलकत्ते के पते पर लिखिये कि मेरे प्रस्ताव के सम्वन्ध मे आपकी क्या राय है।

हमने हरिजन-कार्य के लिए अवतक प्रान्तो के सग्रह को मिला कर दो लाख से कुछ ऊपर इकट्ठा कर लिया है। दाता लोगो को इससे सरोकार नही है कि हम उनके पास श्री डेविड की योजना के सिलसिले में जाते है या केन्द्रीय या प्रान्तीय वोर्डो के सग्रह के सिलसिले में। उनसे रुपया हरिजन-कार्य

---

१ हरिजनो को उच्च शिक्षा देने के निमित्त सवर्ण हिन्दुओं से चन्दा लेने की योजना।

के लिए मागा गया था और उन्होंने दे दिया। इसलिए मै तो यह उचित नही
समझता हू कि उनके पास श्री डेविड की योजना के सिलसिले मे खासतौर
से पहुचा जाय। हा, यदि आप चाहेगे तो मै दिल्ली पहुचने पर लाला
श्रीराम से जरूर मागूगा। आप भी उन्हे अपनी ओर से लिख दीजिये।

हिन्दी 'हरिजन' के मामले में मै स्वय दिलचस्पी ले रहा हू। आपने
देखा होगा कि मै उसमे अपने लेख दे रहा हू। आपने जो दोप इगित किये
है उनकी ओर मैने हरिजी का ध्यान पहले से ही दिला दिया है। आपकी
आलोचना सम्भवत पत्र के केवल प्रथम अक के सम्बन्ध मे है। मेरी राय
मे दूसरा अक पहले की अपेक्षा निश्चय ही अच्छा हुआ है। पर इसमे सन्देह
नही कि पत्र को अभी और भी आकर्पक वनाना है। हमे आगा है कि
हम भविष्य मे आपको अधिक सन्तुष्ट कर सकेगे। परतु यदि कोई आलोचना
योग्य वात दिखाई पडे तो कृपया मुझे लिखते रहियेगा।

मेरा स्वास्थ्य अच्छा ही चल रहा है, और नाक भी कोई विशेप कप्ट
नही दे रही है। फिर भी उसकी ओर ध्यान देना तो है ही। अभी इसमे
देर लगेगी, क्योकि उसके लिए एक पखवाडे के विश्राम की जरूरत पडेगी
और यह मार्च २४ से आगे सम्भव नही है।

अपने पत्र के अन्त मे आपने "पुनश्च" करके जो नोट दिया है उसमे
निर्वाचक वोर्ड की चर्चा है। सम्भवत श्री डेविड की योजना से अभिप्राय
है, पर मुझे आपका सुझाव अच्छी तरह याद नही रहा। कम-से-कम
दिल्ली पहुचने से पहले इस मामले को उठाने मे असमर्थ रहूगा। मै १६
की सुवह को दिल्ली पहुचूगा और ठक्करजी से फिर वातचीत करूगा।
इस वीच आपके उत्तर की प्रतीक्षा कलकत्ते मे करूगा।

विनीत
घनश्यामदास

'हरिजन' को तत्काल सफलता मिली, जैसा कि निम्न-
लिखित पत्र से स्पष्ट है

यरवडा केन्द्रीय जेल
९ मार्च, १९३३

भाई घनश्यामदास

अग्रेजी 'हरिजन' अपना खर्च खुद निकाल लेता है। वाजार मे
वेचकर और चन्दे के द्वारा जो रकम इकट्ठी हुई उसमे से भी वच रहा है,
और केन्द्रीय वोर्ड द्वारा दी गई १०४४) रुपये की रकम वैसी ही मौजूद है।

इसलिए इसे वापस किया जा सकता है। बताओ, यह रुपया तुम्हारे पास कैसे भेजा जाय? तुम्हें महाराष्ट्र बोर्ड को भी तो कुछ देना है। रुपया वापस करने के ढंग के बारे में इसलिए पूछ रहा हूं कि मनीआर्डर, हुंडी या चेक के द्वारा रुपया भेजने से कमीशन लगेगा, और मैं वह बचाना चाहता हूं।

गुजराती 'हरिजन' निकालने का भी प्रबन्ध हो गया है। पूना से निकल रहा है। यदि घाटा हुआ तो पहले तीन मास के घाटे का भार बम्बई बोर्ड ने वहन करने की गारंटी दे दी है। पर मुझे तो ऐसी आशंका नहीं है।

तुम्हारा
बापू

पुनश्च

काशी से लिखा हुआ खत मिल गया है। आपरेशन मुल्तवी रहता जाता है, यह मुझे अच्छा नहीं लगता।

कलकत्ता
१६ मार्च, १९३३

परमपूज्य बापू

मैं कल यहां से दिल्ली जा रहा हूं। देखता हूं कि नाक का आपरेशन स्थगित करने से आप मुझपर नाराज हो गये हैं। पर क्या करूं, लाचार हूं। दिल्ली में कोई अच्छा डाक्टर नहीं है, और कलकत्ते में मैं ठहर नहीं सकता हूं। परंतु यहां मैंने डाक्टर राय और एक नासिका-विशेषज्ञ से अपनी परीक्षा करा ली है। नासिका-विशेषज्ञ आपरेशन कराने की सलाह देता है। उसकी राय है कि नासिका की भीतरी नाली की दिशा फेरने के बजाय नाली को स्थायी रूप से ऐसा बनाना होगा कि फिर बहाव में कोई बाधा उत्पन्न न हो। वास्तव में कई विशेषज्ञों ने मुझे इन दोनों प्रकार के आपरेशनों की सलाह दी है। डा० राय एक-आध महीने बाह्य उपचार कराने की सलाह देते हैं। हर हालत में आपरेशन दिल्ली से वापसी के बाद ही होगा।

जहां तक रचनात्मक कार्य-क्रम का सम्बन्ध है, खास कलकत्ता नगर में काम संतोषजनक ढंग से हो रहा है। प्रायः बीस पाठशालाएं चल रही हैं। हां, सबका संचालन कुछ मारवाड़ी कार्यकर्त्ता ही कर रहे हैं। पर सतीश-बाबू कड़ा परिश्रम कर रहे हैं। मुझे कहना पड़ता है कि प्रान्तीय बोर्ड का काम प्रायः नहीं के बराबर है। रुपया इकट्ठा किया जा रहा है, पर यह

भी खेतान और कई अन्य मित्रो के द्वारा ही। मैंने डा० राय से कलकत्ते की बस्तियो के बाबत बात की थी। आज तीसरे पहर मैं उन्हे कुछेक स्थान दिखाने ले जा रहा हू। आशा है, भविष्य में यह अधिक हाथ बँटायेगे। यह सुझाये जाने पर कि सतीशबाबू को प्रान्तीय बोर्ड मे ले लिया जायगा तो कार्यअधिक सफलता-पूर्वक किया जा सकेगा, मैंने डा० राय को इशारा किया और अब सारा मामला उन्हीके ऊपर छोड दिया है।

मैंने कुछ मित्रो से श्री डेविड की योजना के लिए ४००) रुपये वार्षिक देने को कहा है। बाजार की हालत इतनी खराब है कि रुपया मागने मे सकोच होता है। पर आशा है कि कुछ लोग देगे। हर हालत मे, जैसा कि मै कह चुका हू, जो रुपया हमारे पास मौजूद है उससे काम मजे में शुरू किया जा सकता है। यह जानकर प्रसन्नता हुई कि अग्रेजी 'हरिजन' स्वावलबी हो गया है। आप जबतक अग्रेजी 'हरिजन' मे अपने कुछ लेखो के द्वारा विशेष आशीर्वाद नही देंगे तबतक हिन्दी 'हरिजन' आपकी बराबरी न कर सकेगा। पत्र की माग बढ रही है। इस सम्बन्ध मे अधिक दिल्ली पहुचने पर लिखूगा।

जी हा, हमे महाराष्ट्र बोर्ड को रुपया देना होगा, बशर्ते कि अपने बजट का एक तिहाई वे लोग खुद इकट्ठा करे। सम्भवत वे अभी तक कुछ इकट्ठा नही कर सके है। केन्द्रीय बोर्ड को रुपया भेजने का सुगम उपाय यह है कि रुपया बम्बई मे मेरी फर्म को भेज दिया जाय। वहा से दिल्ली आ जायगा। इससे कमीशन भी बच जायगा।

आपने अखबारो में पढा ही होगा कि बगाल कौंसिल ने पूना पैक्ट को धिक्कारा है। हार भारी नहीं हुई, पर मुझे कौसिल का रवैया बिलकुल पसद नही आया। मैंने इस मामले पर समाचार-पत्रो में प्रकाशन के लिए तो कुछ नही कहा, जैसा कि उचित भी था, पर साथ ही मेरा विश्वास है कि पूना पैक्ट के विरुद्ध जो प्रचार-कार्य हो रहा है उसका निराकरण करने के लिए कुछ-न-कुछ करना आवश्यक है। मै इस चिट्ठी के साथ 'एडवास' और 'लिबर्टी' पत्रो के कटिंग भेजता हू जिनसे आपको सम्पादकीय रवैये का अन्दाजा होगा। पर सतीशबाबू[1] का कहना है कि आम जनता पैक्ट के खिलाफ बिलकुल नही है। यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण नही होगा कि बगाल मे जनमत विभाजित है। स्वय बिधानबाबू[2] पैक्ट के पक्ष मे नही है, इसलिए अबतक एक भी प्रमुख नेता ने पैक्ट के पक्ष मे जबान नही खोली है।

---

१ श्री सतीश दास गुप्त
२ डा० बिधानचद्र राय

आज सुवह मैने सतीशवावू से वात की और उन्हे सर प्रफुल्लचन्द्र राय और डा० रवीन्द्रनाथ ठाकुर के पास जाने की सलाह दी। यदि वे सहमत हो गये तो प्रस्ताव पास किया जा सकता है। आज तीसरे पहर मे डा० राय से भी वात करूगा। यह सब सूचनार्थ है।

विनीत
घनश्यामदास

अछूतो के हित के लिए हम जो काम कर रहे थे उसके निमित्त चदा इकट्ठा करने मे कठिनाई हो रही थी।

२१ मार्च, १९३३

परमपूज्य वापू

मै यहा परसो आया। कुछ दिन यही रहूगा। सघ[1] का वार्षिक अधिवेशन अप्रैल के मध्य मे होगा। तवतक मै यही हू।

जव मै कलकत्ते मे था तो डा० विधान को कई वस्तियो मे ले गया था। इनमे हरिजन लोग रहते है। कुल मिलाकर ६०० वस्तिया है जिनमे से लगभग २००वस्तिया पिछले कुछ वर्षो से सुधर गई है। ये वस्तिया 'सुधरी हुई वस्तिया' कहलाती है। उनमे रोशनी, जल और नाली आदि की व्यवस्था है, इसलिए इनमे सार्वजनिक पाखाने खोलना सम्भव है। वाकी ४०० वस्तियो की दशा अकथनीय है। इनमे कुछ वस्तिया तो शहर के उस पार है, और इनमे नाली आदि की कोई व्यवस्था नही है। ये वस्तिया सडक की सतह के नीचे है, इसलिए पानी की एक-एक वूद इकट्ठी हो जाती है। पानी इकट्ठा न हो, इसलिए हौज वनाने को प्रोत्साहन नही दिया जाता है। पाखानो की व्यवस्था भयकर है, क्योकि नालिया नही है। आदमी गलियो मे निवृत्त होते है और झोपडियो मे रहने वालो को सडक पर इन्हीमे से होकर जाना पडता है। गर्मियो मे अवस्था वडी भयकर हो जाती है और वरसात मे घुटनो तक पानी हो जाता है, क्योकि उसके वह निकलने का कोई मार्ग नही है। इस अवस्था का अत दो प्रकार से ही किया जा सकता है। या तो इन वस्तियो को ढहा दिया जाय, या नालियो की व्यवस्था की जाय। मुझे वताया गया है कि सारे इलाके मे नालियो की व्यवस्था करने मे ५० लाख रुपये लगेगे, जिसका प्रश्न ही उठाना वेकार है। एक और उपाय यह भी है कि इन इलाको मे कुछ पप लगा दिये जाय, जो इकट्ठे हुए पानी को पम्प कर दे। समस्या का हल आसान नही है, और समस्या को हल करना

---

१ भारतीय वाणिज्य उद्योग-सघ

नितान्त आवश्यक भी है। डा० राय का कहना है कि वह अपने कारपोरेशन के अमले के सामने भी लाचार है और कौंसिलरों के सामने भी। अधिकांश कौंसिलरों का इन बस्तियों में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष हित है। परन्तु जब इन बस्तियों को सुधारने का प्रश्न उठाया जाता है तो ये लोग विरोध करते है। मैंने देखा कि डा० विधान हृदय से कुछ करना चाहते है। वास्तव मे जिन बस्तियों में सुधार की गुंजाइश थी, उन्हे पहले से ही सुधार दिया गया है। उन्होंने अन्य बस्तियों को भी हाथ मे लेने का वचन दे दिया है। यह आपकी सूचनार्थ है।

मैंने 'हरिजन' में आपका लेख देखा है, जिसमे टट्टी ले जाने के आधुनिक ढग की चर्चा की गई है। मैंने इस प्रश्न पर भी डा० विधान से बात की। उन्होंने मुझे बताया कि जब उन्होंने अपनी इस नई प्रणाली को कारपोरेशन में जारी करना चाहा तो मेहतरो ने घोर विरोध किया। बात यह है कि यदि टट्टी गाड़ियों में ढोई जायगी तो उसके लिए इतने भगियों की दरकार नही होगी, इसलिए जब उन्होंने इस सुधार की बात सुनी तो तुरत विरोध करना शुरू कर दिया। साथ ही कुछ कौंसिलर भी ऐसे है जो मेहतरो के हितैषी होने का दम भरते है। उन्होंने भी इन मेहतरों को भड़काया। आप कह सकते है कि मेहतरो की सख्या घटाये बगैर भी टट्टी गाड़ियो मे ढोई जा सकती है, पर आदमियों की दरकार न होने पर भी उन्हें रखे रहने की आशा करना कारपोरेशन के साथ न्याय नही होगा।

हिन्दी 'हरिजन' मे मै बड़ी दिलचस्पी ले रहा हू। इस सम्बन्ध मे मै आपको दो-एक दिन बाद फिर लिखूगा। मैंने खुद भी उसमे कई लेख लिखे थे। पर अब नही लिख रहा हू, क्योकि पता नही वे आपको अच्छे भी लगे या नही। मुझे कलकत्ते में मालूम हुआ कि उन्हे मारवाड़ियो ने ध्यान-पूर्वक पढा और सभी हिन्दी पत्रो ने उन्हे उद्धृत किया। आपके कुछ लेखो का अनुवाद मुझे पसन्द नहीं आया। रा० द्वारा किया गया अनुवाद तो सबसे बुरा था। इसलिए यदि अनुवाद स्वय आपकी पसन्द का हो तब तो बात दूसरी है, अन्यथा अपने लेख उनके पास सीधे न भेजिये। पत्र के सम्बन्ध मे अब आपकी क्या राय है, सो लिखने की कृपा करियेगा।

श्री डेविड की योजना के सम्बन्ध मे यह जानकर मुझे सचमुच दु ख हुआ कि इस प्रगति से आप सन्तुष्ट नही है। मै जानता हू कि मैंने यह काम सरगर्मी के साथ हाथ मे लिया था, परतु धन-सग्रह के सम्बन्ध मे जैसा मैंने अनुमान कर रखा था उसके विपरीत परिणाम से मुझे घोर निराशा हुई। मैंने समझा था कि जिनके पास पैसा है, कम-से-कम वे तो खुशी-खुशी देगे, पर कलकत्ते में मै ५०,०००) रुपये से अधिक एकत्र नही कर सका। दिल्ली

मे मै दरवाजे-दरवाजे फिरा और फिर भी १,५००) रुपये वडी मुश्किल से एकत्र कर सका। एक वडे ठेकेदार ने, जो काग्रेसवादी है, और काफी पैसे वाला है, देने का वादा तो किया, पर दिया कुछ नही। मैने कानपुर मे अपने कई मित्रो को लिखा है। वे पत्र तो सुन्दर लिखते है, पर देते-दिलाते कुछ नही है। अहमदावाद से भी निराशा ही हुई। वम्वई मे चार मारवाडी फर्मो ने देने का वचन दिया था, पर अभी तक कुछ नही दिया है। इसका कारण यह नही है कि लोग इस कार्य को पसन्द नही करते है। असली वात यह है कि हर कोई जेव से पैसा निकालने मे वचना चाहता है। मुझे यह जानकर वडा दु ख होगा यदि आपकी यह धारणा हो कि पहले तो मैने काम सरगर्मी के साथ हाथ मे लिया, और फिर रुपया इकट्ठा नही कर सका। आप मुझसे जितना देने को कहे, देने को तैयार हू, पर दूसरो से पैसा निकालना मेरे वूते के वाहर की वात है। आपको पत्र लिखने के वाद से मै तीन और जगहो से २,५००) रुपये एकत्र करने मे सफल हुआ हू। इस रुपये का उपयोग भी श्री डेविड की योजना मे हो सकता है। मैने कलकत्ते मे कई मित्रो को सुझाया कि किश्तो मे दे दो, पर सतोषजनक उत्तर नही मिला। ताजा सग्रह के सम्वन्ध मे यही स्थिति है। पर मै आपसे इस वात मे सहमत नही हू कि केन्द्रीय कोष से रुपया न लिया जाय। जव रुपया मौजूद है तो उसे काम मे क्यो न लिया जाय ? यदि उसे काम मे नही लिया जायगा तो वह धीरे-धीरे कार्यालयो के खर्च और आवश्यक वातो मे खप जायगा। कई प्रान्तीय वोर्ड तो रचनात्मक कार्य पर एक पैसा तक खर्च नही कर रहे है। दिल्ली प्रान्तीय वोर्ड को ठक्कर वापा ने और मैने इसके लिए आडे हाथो लिया है। अव मैने सारे प्रान्तीय वोर्डो से कैफियत तलव की है कि उन्होने दफ्तर के खर्च मे कितना लगाया और रचनात्मक कार्य मे क्या खर्च किया। इसलिए मै तो फिर यही कहूगा कि आप डेविड-योजना पर २०,०००) रुपये केन्द्रीय वोर्ड मे से और ६,०००) रुपये रग्घूमल चैरिटी ट्रस्ट के खर्च कर सकते है। रग्घूमल चैरिटी ट्रस्ट ने १२,०००) रुपये का वचन दिया है, पर इसका आधा वगाल मे खर्च किया जायगा। डा० विधान राय छोटी-छोटी छात्रवृत्तियो मे खर्च करना चाहते है, इसलिए वगाल के हिस्से मे आया हुआ रुपया डेविड-योजना के काम मे नही आ सकेगा। इस प्रकार आपके पास २०,०००) रुपये केन्द्रीय वोर्ड के, ६,०००) रुपये रग्घूमल चैरिटी ट्रस्ट के, २५००) रुपये मेरे, २५००) रुपये जानकी देवी के और वे २,५००) रुपये हो जायगे जो मैने हाल मे इकट्ठा किये है। कुल मिलाकर ३३,५००) रुपये हुए। कुछ और भी सग्रह हो जायगा। पर यदि हम ४०,०००) रुपये से काम आरम्भ करे तो रकम अच्छी खासी है। जव आप निश्चय कर लेगे तो मै श्री

ठक्कर बापा से निर्वाचन-समिति के बारे में बात करूंगा। कृपया मेरे सुझाव पर अच्छी तरह विचार करने के बाद मुझे लिखियेगा।

मैं कलकत्ते के कुछ सनातनी मित्रों से भी मिला। वे भी मीठी-मीठी बातें तो करते हैं, पर देने-दिलाने कुछ नहीं।

आशा है, आप सानन्द हैं। सरदार, महादेवभाई और जमनालालजी को मेरा नमस्कार।

विनीत
घनश्यामदास

बापू ने अपने दूसरे पत्र में सबसे पहले इस बात पर जोर दिया कि मैं आपरेशन को स्थगित न करूं.

यरवडा केन्द्रीय जेल
२३ मार्च, १९३३

भाई घनश्यामदास

तुम्हारा पत्र और कटिंग मिले। तुम जबतक आपरेशन के लिए समय नहीं निकालोगे तब तक तुम्हें समय नहीं मिलेगा। कार्यव्यस्त आदमियों का ऐसा ही होता है। इसलिए स्वास्थ्य की बात को भी व्यापार की बात जैसा समझना आवश्यक है। मैं यह एक दार्शनिक तथ्य नहीं, बल्कि एक ऐसा व्यावहारिक सत्य बता रहा हूं जिसका प्रयोग मैंने स्वयं अपने जीवन में भी किया है और दूसरों के जीवन में भी। इसलिए मुझे आशा है कि तुम इलाज के लिए एक महीना अलग निकाल लोगे और डाक्टर के साथ पहले ही तय कर लोगे, और यह भी संकल्प कर लोगे कि डाक्टर को दिया हुआ वक्त टल न जाय।

कलकत्ते के कार्य के सम्बन्ध में जो लिखा सो जाना।

श्री डेविड की योजना के सम्बन्ध में मैं और अधिक सुनने की आशा करता हूं।

जब मैं हिन्दी 'हरिजन' को इस योग्य देखूंगा कि उसके सम्बन्ध में अंग्रेजी 'हरिजन' के स्तम्भों में कुछ लिखूं, तो तुरत लिखूंगा। इस सम्बन्ध में मैं ठक्कर बापा और वियोगी हरि को खुलासा करके लिख ही चुका हूं, इसलिए और अधिक लिखना अनावश्यक है। तुम उसके लिए जितना समय दे सकते हो दोगे, और उसमें इतनी खबर और हिदायतें दोगे कि किसी कार्यकर्ता का काम उसके बगैर नहीं चले। तुम कहते हो कि केन्द्रीय बोर्ड को दिया जाने वाला रुपया मैं बम्बई में तुम्हारी फर्म के पास भेज दूं।

इस तरह कमीशन कैसे बचेगा ? यदि नोट किसी वम्बई आते जाते के हाथ भेज दिये जाये तो बात दूसरी है, पर उसमे रुपया खो जाने का भी तो भय है। मुझमे इतना साहस नही है।

यरवडा पैक्ट को बगाल कौसिल ने धिक्कारा है, पर उससे मै विशेप उद्विग्न नही हुआ हू, न मेरा यही खयाल है कि यह समय मुकाबले का प्रचार कार्य आरम्भ करने का है। जब तक सारे दल राजी न होगे, पैक्ट मे हेर-फेर असम्भव है। जब दलो के साथ बाकायदा मशवरा कर लिया जायगा तो बगाल के विरोध की ओर ध्यान देने के लिए काफी समय मिलेगा। मेरी सलाह ली गई थी, और मैने अपनी राय भेज दी है। साथ मे उसकी नकल भेजता हू। परतु बगाल मे क्या करना उचित होगा, यह तो मेरी अपेक्षा तुम और सतीश बाबू ही ज्यादा अच्छी तरह समझ सकते हो।

तुम्हारा
बापू

तीन दिन बाद उन्होने फिर लिखा,

२६ मार्च, १९३३

भाई घनश्यामदास

दो तीन बात अभी लिखता हू, बाकी पीछे।

हिन्दी हरिजन मे पढने के लायक हम एक ही चीज पाते है, वह तुम्हारे लेख। तुम्हारी भाषा मीठी और तेजस्विनी है। लेकिन इतने ही मे मुझे सतोष नही हो सकता है। जबतक वहा अच्छा प्रबन्ध नही हुआ है तबतक ज्यादातर यही से लेख भेजे जायगे। महादेव और मै अनुवाद करेगे, वियोगीजी हम लोगो की हिन्दी को दुरस्त कर लेवे। इसके उपरात सघ की तरफ से नोटिस, सूचना, प्रान्तीय खबरे इत्यादि आनी चाहिए। तब तो हिन्दी हरिजन की हजारो कापिया बिकनी चाहिए। सेवा सघ का यह मुख्य गजट बन जाना चाहिए। रामदासजी को और किसी को अनुवाद के लिए यहा से लेख भेजने का मैने इन्कार किया है। ऐसे हरिजन चल ही नही सकता है। हिन्दी मे अनुवाद न मिले, या वियोगीजी खुद न कर सके और कोई दूसरा प्रबन्ध न हो सके तो हि० स बन्द करना आवश्यक समझता हू।

कलकत्ते की बस्ती के बारे मे कुछ ज्यादा कार्य होने की आवश्यकता देखता हू।

डेविड योजना के बारे में मैं समझता हू कि इसका चिन्तन किया जाय। मैं अधिक लिखूगा। परीक्षक बोर्ड बनाओ।

बापू के आशीर्वाद

२८ मार्च, ३३

परमपूज्य बापू

मैं दो एक बातो के बारे मे आपकी सलाह चाहता हू।

जब मैं बनारस मे था तो मुझे मालूम हुआ कि कुछ डोम जिन्होने कुछ दिन पहले अपना धर्म छोड दिया था, अब इस आन्दोलन के फलस्वरूप हिन्दू धर्म मे वापस आना चाहते है। वहा के आर्य समाजियो ने सघ से आर्थिक सहायता मागी जिसमे उन्हे शुद्ध किया जा सके। मुझे इसमे कोई बुराई दिखाई नही दी, इसलिए मैने अपनी जेब से सहायता देने का वचन दे दिया। अब प्रश्न यह है कि सघ को ऐसे मामलो मे दिलचस्पी लेनी चाहिए या नही, और यदि नही तो क्यो? जब हम ऐसे मामलो मे दिलचस्पी लेने से इन्कार कर देते है तो लोगो को यह वैध शिकायत करने का अवसर मिल जाता है कि हम दूसरो को खुश करने के लिए हिन्दू हितो का बलिदान करने को तैयार रहते है। इस आलोचना मे काफी सच्चाई है। मैं शुद्धि की खातिर 'शुद्ध' करने के और ईसाइयो और मुसलमानो को अपना धर्म छोडने को राजी करने के पक्ष मे नही हू। परतु यदि किसी हिन्दू ने अपना धर्म छोड दिया है और वह हिन्दू धर्म मे पुन वापस आना चाहता है तो मैं तो उसे प्रोत्साहित न करने का कोई कारण नही देखता हू।

मैने बेथल[1] को लिखा था कि हिन्दी 'हरिजन' के लिए कागज मुफ्त दे। आपको पता ही होगा कि वह टीटागढ पेपर मिल्स के मैनेजिंग एजेंट है। बेथल ने कहा कि पत्र मे विज्ञापन देने की बात पर तो विचार किया जा सकता है, पर कागज उपहार-स्वरूप देना सम्भव नही है। मैने कहा कि पत्र मे लिख देगे कि टीटागढ पेपर मिल्स ने हमे कागज मुफ्त दिया है, तो यही विज्ञापन का काम करेगा। उन्होने कहा कि इतने से काम नही चलेगा। मैने कहा कि हम पत्र मे विज्ञापन बिल्कुल नही छापते है, इसलिए टीटागढ पेपर मिल्स का विज्ञापन छापने मे असमर्थ है। अब मामला डायरेक्टरो के बोर्ड के सामने पेश है। टीटागढ पेपर मिल्स का विज्ञापन लेने के सम्बन्ध मे आपकी क्या सम्मति है?

पता नही, हिंदी 'हरिजन' के सम्बन्ध मे आपकी क्या राय है। मेरा

---

१ सर एडवर्ड बेथल।

तो खयाल है कि कुल मिलाकर पत्र अच्छा-खासा है। अभी इसे आर्थिक दृष्टि से स्वावलवी होने मे देर लगेगी। पर मैं समझता हू कि पत्र वरावर उन्नति करता जा रहा है और तीन-चार महीने मे पूर्णतया अपने आप पर निर्भर करने लगेगा।

विनीत
घनश्यामदास

वापू के दूसरे पत्र से पता चलता है कि कलकत्ते की गन्दी गलियो की सफाई के वारे मे उनका दिमाग किस प्रकार व्यावहारिक ढग से काम कर रहा था

यरवडा सेन्ट्रल जेल
२८ मार्च, १९३३

भाई घनश्यामदास

मैंने २६ तारीख को हिन्दी मे जो पत्र लिखा था, आशा है, वह तुम्हे मिल गया होगा। कलकत्ते की वस्तियो की समस्या को सामूहिक रूप से हल करना होगा, एक-एक, दो-दो वस्तिया करके नही। इसलिए अव जव कलकत्ता जाओ तो वहा कारपोरेशन के प्रमुख कौसिलरो की एक आपसी वैठक वुलवाकर उनसे मिलो। यदि इस समस्या का हल करने मे कुछ व्यक्तियो के स्वार्थो को आघात पहुचता है तो इससे क्या, काम तो करना ही है। तुमने मुझे जो कुछ लिखा है उससे मै तो यही समझता हू कि सवसे सस्ता उपाय वस्तियो को तोड देना है। पाखाना हटाने के उन्नत और मानवतापूर्ण साधन काम मे लाना जरूरी भी है और आगे चलकर मितव्ययितापूर्ण भी सिद्ध होगा। सभी आधुनिक साधनो को काम मे लाने मे आरम्भ मे तो अधिक खर्च होता है, पर अन्त मे वे मितव्ययितापूर्ण सिद्ध होते है। उनका विरोध व्यर्थ की वात है। इस समस्या को हल करने मे जो कठिनाइया उत्पन्न होती है उनके पीछे उन लोगो की उदासीनता छिपी हुई है, जो मुह से तो सुधार की आवश्यकता वताते है, पर उसके लिए किसी प्रकार का त्याग करने को तैयार नही होते है। तुम्हे इस उदासीनता को सक्रिय सहानुभूति मे परिणत करना है। मार्ग अपने आप निकल आयगा।

हिन्दी 'हरिजन' के सम्वन्ध मे मै तुम्हे परसो लिख चुका हू कि पहले लेख को छोडकर वाकी लेखो में यदि कोई लेख पढने योग्य थे तो वे तुम्हारे लेख थे। तुम्हारी शैली मनोहर, सीधी-सादी और मुहावरेदार है। तुम विषय पर सीधे और वोधगम्य ढग से पहुचते हो। मेरे लेखो का अनुवाद

दोपपूर्ण अवश्य था, पर अव तो अनुवाद यही मे भेजे जायगे, उनकी हिन्दी वहा परिष्कृत कर ली जाया करेगी। उससे खर्च भी कम होगा और पत्र का स्टैण्डर्ड भी ऊचा होगा।

डेविड-योजना की चिन्ता मत करो। मै तो तुम्हे वताना चाहता था कि उस पर मैने कैसे लिखा। पर तुम्हारी कठिनाई को मै समझता हू। यदि जरूरत हुई तो केन्द्रीय कोप का तो सहारा लेना पडेगा ही। परन्तु पहले देख ले कि पूरी रकम देनेवाले आधे दर्जन दाता भी मिलते है या नही। मै निराश नही हुआ हू, पर सुन्दर पत्र तैयार करने का समय ही नही मिलता है। पर इधर मै समय निकालूगा। जहा एक दो नाम मिले कि उनके साथ तुम्हारे नाम की भी घोपणा कर दूगा।

तुम्हारा
वापू

इन दिनो हमारा पत्र-व्यवहार अधिकतर 'हरिजन' के प्रकाशन और उसकी रूपरेखा तथा विपय-सूची तय करने के वारे मे होता था।

३१ मार्च, १९३३

परमपूज्य वापू

आपका २३ तारीख का पत्र मिला और २६ तारीख का हाथ का लिखा पत्र भी मिला। १५ अप्रैल को सघ[1] की वार्पिक बैठक होगी। इसमे दो-तीन दिन लगेंगे। इसके वाद अर्थात् अप्रैल के अन्त में, मैं कलकत्ता जा कर आपरेशन करा डालूगा। मैंने आपरेशन का लगभग निश्चय कर लिया है।

केन्द्रीय वोर्ड के पास रुपया भेजने का एक और अमली सुझाव पेश करता हू। पूना मे श्री शिवलाल मोतीलाल की एक काटन मिल है। यदि रुपया उन्हे दे दिया जायगा तो वे दिल्ली मे केन्द्रीय वोर्ड को रुपया दे देगे।

यरवडा पैक्ट के विरुद्ध वगाल की तू-तू, मैं-मैं मे अव कोई दिलचस्पी नही ले रहा हू। जव मैं कलकत्ते मे था तो सतीशवावू से भी मिला था। उनका कहना है कि जव कवीन्द्र और आचार्य दौरे पर से लौटेंगे तो उस समय कुछ करना आवश्यक समझा गया तो कार्रवाई करेंगे।

श्री ठक्कर वापा आपसे मिलने जा ही रहे है। निर्वाचन वोर्ड के

---

१ भारतीय वाणिज्य उद्योग-सघ

सम्बन्ध मे आपसे खुलासा बात कर लेगे। इसके बाद आपकी इच्छा के अनुरूप बोर्ड नियुक्त कर दिया जायगा।

विनीत
घनश्यामदास

३१ मार्च १९३३

परमपूज्य बापू

हिन्दी 'हरिजन' के सम्बन्ध मे आपका सुझाव पढ ही चुका हू। मेरी अपनी सम्मति तो यह है कि पत्र उन्नति करता जा रहा है। आर्थिक दृष्टि से भी पत्र समय आने पर अपना खर्च स्वय निकालने लगेगा। पत्र की वर्तमान आर्थिक अवस्था इस प्रकार है

हम कोई १,००० प्रतिया बेच रहे है। यदि २,५०० प्रतिया बिकने लगेगी तो पत्र स्वावलबी हो जायगा। १२ पृष्ठो की २,५०० प्रतियो पर प्रति सप्ताह इस प्रकार खर्च बैठेगा

छपाई	४५) रुपये
कागज	३३) रुपये
मुडाई	५) रुपये
डाक और रेल-खर्च	२८) रुपये

लगभग ४८०) रुपये प्रतिमास आयगा। कर्मचारियो का खर्च १६०) रुपये प्रतिमास लगाने के बाद २,५०० प्रतियो पर ६४०) रुपये प्रतिमास खर्च बैठेगा।

यदि हम ये सारी २,५०० प्रतिया बेच सकें, आधी ग्राहको को और बाकी एजेटो के जरिये, तो हमे औसत तीन रुपये प्रति पट जायगा, जो साल भर मे ७,५००) रुपये हुए। २,५०० प्रतिया खपाना मुश्किल नही है। पत्र का विज्ञापन अच्छी तरह नही हुआ है। मैने अपने कई निजी मित्रो को पत्र की बिक्री बढाने को लिखा है। पता नही वे कहा तक सफल होगे। हम एक एजेट को घूमफिर कर ग्राहक जुटाने के लिए बाहर भेज रहे है। आशा है कि इस तरह भी काफी ग्राहक मिल जायगे। यदि आप पत्र की मौजूदा क्वालिटी से सतुष्ट हो और एक विशेष सार्वजनिक अपील निकाले तो अच्छा रहे। इसकी तुलना गुजराती के पत्र से की जाय तो यह कुछ बहुत घटिया साबित नही होगा। कृपया पत्र का छठा अर्थात् ३१ मार्च का सस्करण देखियेगा। इसमे श्री ठक्कर बापा के दो लेखो को, श्री कालेलकर के एक लेख को, और सम्पादकीय

टिप्पणियो को छोडकर बाकी सब आपके ही लेख है। श्री ठक्कर बापाके लेख मेरी राय मे अच्छे है, कम-से-कम उनका वह लेख जो १०वे पृष्ठ पर छपा है। श्री कालेलकर का लेख भी बुरा नही है, पर उसे न दिया जाता तो कोई हानि नही थी। बाकी सब लेख आपके है। साप्ताहिक समाचार अधिक महत्व के नही है, पर जो भी मिले उन्हे छापना चाहिए। इस समय मेरी शिकायत तो अनुवाद के सम्बन्ध में है। हरिजी ने अग्रेजी से शब्दश अनुवाद किया है सो मुझे पसन्द नही आया। मैंने उनसे कह दिया है कि अग्रेजी के मुहाविरो का ज्यो-का-त्यो अनुवाद करने के बजाय शुद्ध हिन्दी के मुहाविरे व्यवहार मे लावे। आशा है कि आपको भी यह बात पसन्द आयेगी। महादेवभाई द्वारा किये गए अनुवाद भी उतने ही बुरे है, इसके अलावा मै यह भी नही चाहता हू कि आप अपने ऊपर व्यर्थ का भार लादे। कृपया अनुवाद का काम वियोगीजी के जिम्मे छोड दीजिये, देखे हम कहा तक सफल होते है। यदि आप किसी लेख का स्वय अनुवाद करना चाहे तो मेरी प्रार्थना यही है कि शब्दश अनुवाद करने के बजाय उसी विषय पर स्वतत्र लेख लिखे। वह पढने मे भी अधिक रोचक होगा। उदाहरण के लिए आपके लेख का जो अनुवाद ३१ मार्च के सस्करण मे ८वे पृष्ठ पर छपा है वह पढने मे महादेवभाई के कई अनुवादो की अपेक्षा कही भला लगता है। इसी प्रकार आपका तीसरे पृष्ठ पर छपा गुजराती का अनुवाद भी बडा सुन्दर हुआ है। बाकी अच्छे नही रहे। इसलिए मै यही निवेदन करूगा कि या तो आप मूल लेख भेज दिया करे या स्वतत्र अनुवाद भेजा करे। यदि आप चाहे तो अग्रेजी या गुजराती के मूल लेखो के अविकल अनुवाद का काम हमारे जिम्मे कर दे। अनुवाद-सम्बन्धी दोष को बाद देने पर मेरी अपनी राय तो यह है कि ३१ मार्च का अक तो स्टैण्डर्ड के अनुरूप ही हुआ है। कृपया बताइये, आप इस मामले मे मुझसे सहमत है या नही। यदि आपकी राय दूसरी हो तो अपनी निश्चित आलोचना भेजने की कृपा करियेगा।

भविष्य के लिए मेरा सुझाव है, और मैने यही बात वियोगीजी से कही है, कि पत्र १२ पृष्ठ का रहे और छोटे टाइप मे छपे। सामग्री के सम्बन्ध मे बात यह है कि जहा तक आपके लेखो का ताल्लुक है, मूल और अनुवाद सब जाने चाहिए। दो-एक टिप्पणिया सम्पादक की ओर से हो, पर दो कालम से अधिक नही। यदि आपके मूल लेख मिल सके तो अग्र-लेख का स्थान उन्हे दिया जाया करे। उसके अलावा साप्ताहिक रिपोर्ट भी छपनी चाहिए। पौराणिक कहानिया या भक्तमाल जैसी पुस्तको मे से ली गई कहानिया भी दी जानी चाहिए। इस प्रकार की सामग्री के लिए

भी एक पृष्ठ लिखना चाहिए। आशा है, आपको मेरा सुझाव पसन्द आयगा,। यदि नहीं तो कृपया अपने सुझाव से सूचित करियेगा। आशा है, १२ पृष्ठों का पत्र निकालने की बात आपको पसन्द आयेगी। घटाकर ८ पृष्ठों का भी किया जा सकता है। पर मेरी राय मे १२ पृष्ठो लायक काफी सामग्री है, इसलिए पत्र के साइज को घटाना जरूरी नही है। अवतक जो रिपोर्टें निकली हैं वे महत्वपूर्ण नही हैं। मैं प्रान्तीय वोर्डो का ध्यान इस ओर दिला रहा हू।

इस पत्र के साथ 'पतित वन्धु' से एक कटिंग भेज रहा हू। इससे आपको पता चल जायगा कि हम किस प्रकार की कहानिया छापना चाहते हैं।

पता नही, अंग्रेजी 'हरिजन' की एक प्रति वंगाल के गवर्नर के सेक्रेटरी के पास भेजना आपको पसन्द आयेगा या नही। गवर्नर के सम्बन्ध मे मेरी राय का आपको पता है ही। आदमी अच्छा है और आपको हृदय से समझना चाहता है। खर्च मैं दूगा। यदि आप मुझसे सहमत हो तो एक प्रति हर शुक्रवार को प्राइवेट सेक्रेटरी के पास भेजी जा सकती है। एक पत्र प्राइवेट सेक्रेटरी के नाम इस विषय का भेजा जा सकता है कि यह प्रति गवर्नर के लिए है।

कल मैं ग्वालियर जा रहा हू। कोई दस-वारह दिन वाद लौटूगा।

विनीत

घनश्यामदास

१० अप्रैल १९३३

परमपूज्य वापू

आपका २८ मार्च का पत्र मिला। कलकत्ते से हरिजन-कार्य के सम्वन्ध मे मैं तो खुद ही कहता हू कि कुछ-न-कुछ करना पडेगा। मैं कलकत्ता पहुच कर इस मामले को उठाऊगा। कठिनाइया मौजूद है ही, इसलिए सफलता प्राप्त करना उतना आसान नहीं है। पर हमे तो भरसक चेष्टा करनी है इसलिए मैं इस मामले को पूरी लगन के साथ हाथ मे लूगा।

आपने यह नही लिखा कि आप टीटागढ पेपर मिल का विज्ञापन स्वीकार कर सकते हैं या नही। वेंथल हमें विज्ञापन देने को तैयार है, पर कागज मुफ्त देने को तैयार नही है।

मुझे कानपुर के लाला कमलापत से ३,०००) रुपये मिले है। यह रुपया वह छात्रवृत्तियों मे खर्च करना चाहते है। मैंने पंडित कुंजरू को लिखकर पूछा है कि यह रकम वह किस रूप मे खर्च करना चाहते है। यदि वह इसे श्री डेविड की योजना पर खर्च करने को तैयार होंगे तो हमें ३,०००) रुपये और मिल जायगे। हर हालत मे रुपया युक्तप्रान्त मे ही खर्च किया जायगा।

वैसे तो अन्य सस्थाए भी खामोशी के साथ काम कर रही है, पर उस दिन मैंने एक हरिजन बालिका विद्यालय के पारितोषिक वितरणोत्सव का सभापतित्व किया तो वहा के कार्यकर्त्ताओ की कार्यशीलता का मेरे ऊपर अच्छा प्रभाव पडा। मैंने उनसे अपनी कार्यशीलता की सूची तैयार करने को कहा है। यदि हम सतुष्ट हुए तो मेरी राय मे बोर्ड को इस सस्थाओ की सहायता के लिए कुछ रकम निकालनी चाहिए।

विनीत
घनश्यामदास

११ अप्रैल, १९३३

परमपूज्य बापू,

आपका ३—८ अप्रैल का पत्र मिला। 'हरिजन' की एक प्रति बगाल के गवर्नर के प्राइवेट सेक्रेटरी के पास भेजने के सम्बन्ध मे आप जो कहते है सो जाना। यदि मै आपके तर्क को ठीक समझता हू तो प्रधान की हैसियत से मेरा अपने किसी भी मित्र को हरिजन भेजना औचित्यपूर्ण होगा। अतएव मै चाहूगा कि 'हरिजन' की एक-एक प्रति मेरे खर्च से निम्नलिखित सज्जनो के पास भेज दी जाया करे

१ बगाल के गवर्नर के निजी मत्री
२ सर एडवर्ड बैन्थल, कलकत्ता
३ सर वाल्टर लिटन मार्फत 'इकानामिस्ट', लन्दन
४ सर हैनरी स्ट्रेकोश, इडिया आफिस, लन्दन
५ लार्ड रीडिंग, लन्दन
६ लार्ड लोदियन, लन्दन

मै ३-४ दिन के लिए दिल्ली जाऊगा और यहा फिर वापस आकर पिताजी के नासिक से लौटने तक उनकी प्रतीक्षा करूगा। पिताजी यहा हरद्वार को जाते हुए मई के पहले सप्ताह मे आयेंगे। उन्हे विदा करके मै सीधा कलकत्ते के लिए रवाना हो जाऊगा और वहा कम-से-कम दो महीने रहूगा।

मेरा लडका और पुत्रवधू जल्दी ही पूना जायगे। दोनो का स्वास्थ्य अच्छा नही है। वहू तो काफी बीमार है। मैंने उनसे प्राकृतिक चिकित्सा-विशेषज्ञ डा० मेहता का इलाज कराने को कह दिया है। वहू तो चल तक नही सकती है, पर लडका केवल दुर्बल है, कोई खास शिकायत नही है। वह बीच-बीच मे आपके दर्शन करने आयगा। आशा है, आप उसे अनुमति देगे।

विनीत
घनश्यामदास

: ६ :

हरिजनों के सम्बन्ध में कुछ और

सन् १९३३ मे वापू के जेल से वाहर आने से हमारे हरिजन-उद्धार-कार्य मे नई जान आ गई।

ग्वालियर
२६ अप्रैल १९३३

परमपूज्य वापू

जैसा कि आप इस पत्र से देख लेगे, मै ग्वालियर मे पिताजी की प्रतीक्षा कर रहा हू। वह अगले महीने की तीसरी तारीख को यहा पहुचने वाले है। इसके वाद मै हरद्वार जाऊगा और उन्हे विदा करने के वाद कलकत्ते के लिए रवाना हो जाऊगा। कलकत्ता ७या ८ मई तक पहुच जाऊगा।

'हरिजन' मे स्वय लेख लिखने के सम्वन्ध मे सवसे वडी रुकावट यह है कि मै तभी लिख पाता हू जव लिखने की इच्छा होती है। पर मै अनुवाद-कार्य मे हाथ वटा रहा हू। 'हरिजन' के गताक मे एड्रयूज के पत्र के सम्वन्ध मे आपके लेख का अनुवाद प्राय मेरे ही द्वारा, या मेरी सहायता से, तैयार किया गया था। मै कलकत्ते से लेख लिखकर भेजने की फिर चेष्टा करूगा। हो सकता है, मै पत्र का उपयोग कलकत्ते की वस्तियो के सुधार के प्रचार-कार्य के लिए करू।

पिताजी आपसे मिले, इससे मुझे आनन्द हुआ। मामूली-सी शिक्षा है, पता नही उनकी वातचीत का आप पर कैसा प्रभाव पडा। पर उनका हृदय वडा निर्मल है, और वह आपकी वडी भक्ति करते है। स्वय कट्टर सनातनी होते हुए भी वह आपके विचारो की सराहना करते है और अपने निजी ढग से आपके पक्ष मे प्रचार करते रहते है।

जी हा, कलकत्ता पहुचते ही आपरेशन करा डालूगा। आपको याद ही होगा कि पूना और वम्वई मे डाक्टरो की राय थी कि मुझे अपनी नासिका के दोनो छिद्रो को अलग करने वाली दीवार को, जो अपने स्थान से हट गई है, निकलवा देना चाहिए। कलकत्ते के विशेषज्ञ का कहना है कि उस दीवार

को हटाना उतना जरूरी नही है जितना छिद्र मे स्थायी नाली बनाना। अमरीका मे डाक्टरो ने दोनो काम कराने की सलाह दी। अतएव मै पहले तो नासिका की नाली ठीक कराऊगा, और यदि इसमे लाभ न हुआ तो बाद मे दूसरा आपरेशन करा डालूगा।

मेरी पुत्रवधू ने डा० मेहता का इलाज शुरू किया तो, पर उसे बीस दिन से अधिक जारी रखने का धैर्य नही हुआ। अब लडका और पुत्रवधू दोनो महाबलेश्वर गये है।

महादेवभाई पूछते है कि लार्ड रीडिग और लार्ड लोदियन को जो 'हरिजन' भेजा जा रहा है उसके पैसे क्या मै दूगा। मामूली-सी बात है। यदि पत्र को सहायता देने के लिए मेरा पैसा देना जरूरी समझा जाय तो शास्त्री को ताकीद कर दीजियेगा।

विनीत
घनश्यामदास

१२ अगस्त, १९३३

परमपूज्य बापू

आपकी अभीतक कोई खबर नही मिली। परतु आशा है कि यह पत्र आप तक पहुचने मे कोई कठिनाई नही होगी।

हम अग्रेजी 'हरिजन' के लिए सामग्री यहासे भेजते है। आपके लेखो का अभाव बडा खल रहा है। पर किसी-न-किसी तरह काम चला लेते है। मुझे एक ऐसा विशेषज्ञ मिल गया है जो कपडा रगने और तैयार करने की विद्या पर लेख लिखेगा। आशा है, ऐसे लेख पाठको के लिए रुचिकर होगे। हम इसी तरह काम चलाते रहेगे, पर आपके लेख मिले बगैर पत्र को अच्छी तरह रोचक नही बनाया जा सकता।

ठक्कर बापा दौरे पर है। १८ तारीख तक लौट आवेगे।

मै जब से यहा आया हू, एक चमडा तैयार करने का स्कूल और एक छात्रावास खोलने की चेष्टा कर रहा हू। यह छात्रावास खासतौर से हरिजनो के लिए होगा। मै अच्छी-सी जमीन की तलाश मे हू। कुछ हफ्तो मे श्रीगणेश हो जायगा, ऐसी आशा है। यदि आप कोई बात सुझाना चाहे तो लिख भेजे। मेरा अनुमान है कि कोई ५०००) रुपये जमीन मोल लेने मे लगेगे, और ५०००) रुपये इमारत बनवाने मे। यह रुपया मै सघ के धन मे से खर्च करने की बात सोच रहा हू। सदस्यो की स्वीकृति अवश्य लेनी होगी, पर मै समझता हू कि इस काम को आगे बढाने के मामले मे आप सहमत है। रही चमडे के स्कूल की बात, सो इसका चालू खर्च एक वर्ष के लिए मै खुद वहन करने की बात सोच रहा हू।

लक्ष्मी सानन्द है और पूरे आराम मे है। मैं बिल्कुल स्वस्थ हू और आशा करता हू कि आप और महादेवभाई अच्छी तरह से हैं।

विनीत
घनश्यामदास

सत्याग्रहाश्रम
वर्धा
३० सितम्बर, १९३३

प्रिय घनश्यामदास

आपको मालूम ही है कि आश्रम-वासियो ने गत १० अगस्त को साबरमती के सत्याग्रह आश्रम और उसकी भूमि को त्याग दिया था। मुझे आशा थी कि सरकार मेरे पत्र के अनुसार इस त्यक्त सम्पति पर अधिकार कर लेगी। ऐसी अवस्था म अपना कर्तव्य निर्धारित करना मेरा फर्ज हो जाता है। मुझे प्रतीत हुआ कि कीमती इमारतो और उतनी ही कीमती खेती और पेडो को यो ही नष्ट होने देना एक गलती होगा। मैंने मित्रो और सहकर्मियो के साथ परामर्श किया और मैं इस नतीजे पर पहुचा कि आश्रम का सबसे अच्छा उपयोग यही हो सकता है कि उसे हमेशा के लिए हरिजन सेवा के निमित्त अर्पित कर दिया जाय। मैंने अपना सुझाव आश्रम के ट्रस्टियो के, जो बाहर हैं, और सहसदस्यो के सन्मुख रखा, और मुझे यह कहते हुए प्रसन्नता होती है कि वे इससे हृदय से सहमत हैं। जब इस सम्पत्ति का त्याग किया गया था तो यह आशा अवश्य की जा रही है कि किसी दिन सम्मानपूर्ण समझौते के द्वारा, अथवा भारत की लक्ष्य सिद्धि होने पर, ट्रस्टी सम्पत्ति पर पुन अधिकार कर सकेंगे। इस नवीन सुझाव के अनुरुप ट्रस्टी लोग सम्पत्ति से पूरी तरह हाथ धो रहे हैं। वसीयतनामे के अनुसार ऐसा करने का उन्हे अधिकार है क्योकि ट्रस्ट का एक उद्देश्य हरिजन सेवा भी है। अतएव यह नया सुझाव आश्रम और ट्रस्ट के व्यवस्था-विधान के पूर्णतया अनुरूप है।

ट्रस्टियो के और मेरे लिए विचारणीय प्रश्न यही था कि जिस विशेष उपयोग का मैंने उल्लेख किया है उसके लिए सम्पत्ति किसके सिपुर्द की जाय, और हम सब सर्वसम्मति से इस निष्कर्ष पर पहुचे कि उसे भारत-व्यापी उपयोग के लिए अखिल भारतीय हरिजन सघ के सिपुर्द करना चाहिए। ट्रस्ट के उद्देश्य निम्नलिखित हैं

१ भविष्य मे बनाये जाने वाले नियमोपनियमो के अनुरूप आश्रम की भूमि पर वाछनीय हरिजन परिवार बसाये जाय, २, हरिजन बालको

और बालिकाओं के लिए छात्रावास खोला जाय जिसमें गैर-हरिजनों को भर्ती करने की स्वतन्त्रता रहे, ३ खाल उतारने, रंगने, चमड़ा तैयार करने और इस प्रकार तैयार किये गये चमड़े के जूते, चप्पल और दैनिक आवश्यकताओं की ऐसी ही अन्य चीजें तैयार करने की कला में दीक्षित करने के लिए एक शिक्षा विभाग खोला जाय, और ४, इमारतों को गुजरात प्रान्तीय या केन्द्रीय बोर्ड के कार्यालय के रूप में, और उन सारे उपयोगों के लिए काम में लाया जाय जिन्हें निम्नलिखित पैरे में निर्दिष्ट समिति उचित समझे।

मैं ट्रस्टियों की ओर से यह सुझाव पेश करता हूं कि हरिजन सेवक संघ एक विशेष समिति नियुक्त करे जिसमें आप और मंत्री पदेन (एक्स आफीशियो) सदस्य रहें और अन्य सदस्य अहमदाबाद के तीन नागरिक रहें। इस समिति को अपनी संख्या में वृद्धि करने का अधिकार रहे, और यही इस ट्रस्ट को हाथ में लेकर उसके उद्देश्यों की पूर्ति करे।

दो मित्र, श्री बुधाभाई और श्री जूथाभाई इस आश्रम के साथ हमेशा से रहे हैं। उन्होंने आश्रम में अवैतनिक प्रबन्धकों की हैसियत से रहने की तत्परता प्रकट की है। उनके जीवन-निर्वाह के अपने स्वतंत्र साधन हैं और ये हरिजन सेवा कार्य में बहुत काल से लगे हुए हैं। एक ऐसा आश्रमवासी भी है जिसने हरिजन सेवा के लिए अपना जीवन अर्पण कर दिया है। वह भी आश्रम में खुशी खुशी रहने को तैयार हो जायेगा। हरिजन बालकों और बालिकाओं के शिक्षण कार्य में तो इसने कमाल हासिल किया है। अतएव मैंने जैसी समिति बताई है उसे ट्रस्ट का प्रबन्ध करने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिये, न यह जरूरी है कि मैंने जितने काम बताये हैं वे एक साथ और तुरत ही हाथ में ले लिये जायं। आपको पता है ही कि कुछ हरिजन परिवार वहां इस समय भी रहते हैं। आश्रम के सदस्यों का यह स्वप्न रहा है कि हरिजन परिवारों की एक नगरी बसाई जाय, पर कुछेक को बसाने को छोड़कर हम इस दिशा में अधिक आगे नहीं बढ़ सके। वहां चमड़ा रंगने का प्रयोग भी जारी रखा गया था और आश्रम-वासियों को इतस्तत बखेरने के समय तक वहां चप्पल भी बनते थे। इमारत में बड़ा-सा छात्रावास है जिसमें १००जन आसानी से रह सकते हैं। इसमें बुनाई करने का काफी बड़ा पटा हुआ स्थान है, और मैंने जो-जो काम गिनाये हैं उनके लिए पूरी व्यवस्था है। १०० एकड़ भूमि है। इस प्रकार मैं कह सकता हूं कि उपरोक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए स्थान काफी बड़ा तो नहीं है, पर फिर भी फिलहाल उनकी जितनी पूर्ति की आवश्यकता है, उसे देखते हुए अच्छा खासा है। आशा है, मेरा प्रस्ताव स्वीकार करने में और इस

स्वीकृतिजन्य उत्तरदायित्व की पूर्ति मे, सघ को कोई आपत्ति नही होगी।

आपका
मो० क० गाधी

४ अक्तूबर, १९३३

प्रिय गाधीजी

आपने अपने ३० सितम्बर १९३४ के पत्र के द्वारा सावरमती आश्रम की भूमि और इमारत को हरिजन सेवा कार्य के निमित्त अर्पित करने और इस उद्देश्य से उन्हे हरिजन सेवक सघ के सिपुर्द करने का प्रस्ताव किया है। यह आपकी और आश्रम के ट्रस्टियो की महती उदारता है। मै इस प्रस्ताव को अविलम्ब स्वीकार करता हू और आशा करता हू कि सघ अपने आपको आपके विश्वास के योग्य प्रमाणित करेगा। मै केन्द्रीय वोर्ड के सदस्यो की सम्मति की प्रतीक्षा किये वगैर ही इस प्रस्ताव को स्वीकार करता हू, क्योकि मुझे पूरा भरोसा है कि वे मेरे कार्य का अनुमोदन करेगे।

जिन चार उद्देश्यो की पूर्ति के लिए इस सम्पत्ति के उपयोग की वात आपने पत्र के दूसरे पैरे मे कही है, सघ उन्हे सदैव अपने ध्यान मे रखेगा और सवकी पूर्ति अविलम्ब की जायगी। सर्वश्री वुधाभाई और जूथाभाई और तीसरे सज्जन की, जिनका नाम शायद भगवानजी गाधी है, सेवाओ से लाभ उठाया जायगा। आशा है, ये सज्जन मूल्यवान सहायक सिद्ध होगे। आपने अपने पत्र के तीसरे पैरे मे कहा है कि सघ को एक विशेष समिति नियुक्त करनी चाहिए जिसमें पाच आदमी रहे और इस सख्या मे वृद्धि करने का उसे अधिकार रहे, यह समिति ट्रस्ट को अपने जिम्मे ले और इसके उद्देश्यो की पूर्ति करे। आपका सुझाव है कि मेरे और प्रधान मत्री के अतिरिक्त अहमदावाद के तीन नागरिक उस समिति मे रहे। इन तीनो सज्जनो को आपके मशवरे से लिया जायगा। क्या मै यह सुझाव पेश कर सकता हू कि प्रवन्ध कारिणी समिति के गठन का कार्य विलकुल सघ के ऊपर ही छोड दिया जाय और सघ को ही ट्रस्ट के उद्देश्यो की पूर्ति के लिए उत्तरदायी समझा जाय? यदि अहमदावाद के तीन नागरिक इस सघ के केन्द्रीय वोर्ड के सदस्य निर्वाचित हुए और साथ ही ट्रस्ट की प्रवन्धकारिणी समिति के सदस्य नियुक्त हुए तो समिति मे सव सघ के सदस्य ही भर जायगे, यह नही होगा कि कुछ लोग इस सघ के सदस्यो मे से रहे, और

कुछ वाहर से लिये जाय। परतु यह एक साधारण-सी वात है जिसके ऊपर, आवश्यकता पडने पर, व्यक्तिगत रूप से वातचीत करके निर्णय कर लिया जायगा।

सघ को सम्पत्ति और उसकी खेती और पेडो का चार्ज लेने मे कुछ देर लगेगी। इसीलिए मेरा आपसे अनुरोध है कि जो लोग इस समय देखभाल कर रहे है उनसे आप इसी प्रकार देखभाल करते रहने को कह दें।

आपकी उदारहृदयता के प्रति कृतज्ञता प्रगट करता हुआ,

मै हू
आपका
घनश्यामदास
प्रधान, हरिजन सेवक सघ

५ अक्तूवर, १९३३

परमपूज्य वापू

आश्रम को मडल के सिपुर्द करने के आपके प्रस्ताव की मैने तार द्वारा स्वीकृति भेज दी थी। आरम्भ में तो मुझे सदेह था कि हम आश्रम का प्रवन्ध दूर वैठकर कर भी सकेगे या नही, पर अव मालूम हुआ है कि आपके कुछ विश्वासी आदमी आश्रम में रहेगे और अपना सारा समय देगे। अव मुझे कोई चिन्ता नही है। आपने हमारे जिम्मे यह भरोसे का काम दिया है, हम भी अपनेको आपके विश्वास के योग्य सावित करने मे कुछ उठा न रखेगे। मैने आपके प्रस्ताव को केन्द्रीय वोर्ड के अन्य सदस्यो की सम्मति का इन्तजार किये वगैर स्वीकार कर लिया है, क्योकि मुझे पूरी आशा है कि वे मेरे इस कार्य का अनुमोदन करेंगे। सघ इस सम्पत्ति का उपयोग करने के मामले में उन चारो उद्देश्यो को सामने रखेगा जो आपके पत्र के दूसरे पैरे मे दिये गए हैं।

आपके दान और हमारी स्वीकृति के फलस्वरूप दो-एक वातो की ओर आपका ध्यान दिलाना आवश्यक है। अवतक हमारे पास वैक मे जमा रुपये को छोडकर कोई सम्पत्ति नही थी। हम लोग हरिजन छात्रावास वनाने के लिए जमीन खरीदने का विचार कर रहे थे, पर अव हमारे पास आपकी दी हुई वहुमूल्य स्थावर सम्पत्ति हो जायगी। अव यह प्रश्न तुरत ही उठ खडा होगा कि इस सम्पत्ति का स्वामी कौन होगा। हरिजन मडल? यदि हरिजन मडल ही इसका स्वामी हुआ तो उसीकी वाध्यता के अनुरूप

इसका अस्तित्व रहेगा, और हमारे सघ मे बाध्यता नाम की चीज अभी तक नही है। इसलिए हमे यही तय करना है कि हम भविष्य के लिए किस प्रकार का व्यवस्था-सम्बन्धी ढाचा रखेगे।' मुझे विशेष प्रजातन्त्रीय ढाचा पसन्द नही है, क्योंकि व्यवस्था के मामले मे प्रजातन्त्र के द्वारा असुविधाए उत्पन्न हो जाती है और दलबन्दी होने लगती है। पर साथ ही, जहा किसी सस्था के पास लाखो रुपये की सम्पत्ति हो वहा नितान्त निरकुश ढग की शासन-व्यवस्था भी वाछनीय नही है। इन दोनो दूषणो मे से अपेक्षाकृत कम हानिकर दूषण नियन्त्रित निरकुशता, या यो कहिये कि किन्ही शर्तो के साथ दिया गया प्रजातन्त्र, ठीक रहेगा। इस सुझाव के बारे मे आपकी क्या राय है कि सघ के कार्यक्रम मे दिलोजान से लगे रहने वाले एक दर्जन आदमी संस्थापक सदस्य बने और राय देने का अधिकार केवल उन्हीको रहे? इस समय प्रधान को जो विशेषाधिकार दिये गए है वे उन सदस्यो को सौप दिये जाय। यदि आप इसे ठीक न समझे तो सम्पत्ति रखने के लिए ट्रस्टियो का एक अलग बोर्ड बना दिया जाय। इस बोर्ड को विशेषाधिकार दिये जाय और यदि वह यह समझे कि हरिजन बोर्ड सम्पत्ति का अच्छा उपयोग नही कर रहा है तो वह उससे वह सम्पत्ति वापस ले सके। यह दूसरा सुझाव तभी अपनाना चाहिए यदि हम सघ के लिए प्रजातन्त्रीय ढग की व्यवस्था रखे। आपने पाच व्यक्तियो की एक ऐसी समिति बनाने की बात कही है जिसके सदस्यो मे से तीन अहमदाबाद के निवासी हो, और सघ के प्रधान और मत्री पदेन (एक्स आफीशियो) सदस्य रहे। मुझे पता नही कि आप यह चाहते है कि यह समिति आश्रम की सम्पत्ति रखने और चलाने के मामले मे ट्रस्टियो जैसा काम करे या यह कि वह परामर्शदायिनी समिति मात्र रहे। यदि यह समिति ट्रस्टियो की भाति आचरण करेगी तो सघ की क्या स्थिति रहेगी और अहमदाबाद के नागरिको को किस ढग से निर्वाचित किया जायगा? और यदि हरिजन मडल प्रजातन्त्रीय ढाचे का बना तो यह पता नही कि ट्रस्ट बोर्ड मे उसका प्रतिनिधित्व करने वाले प्रधान और मन्त्री किस तरह के होगे? वर्तमान व्यवस्था मे अथवा अत्यधिक प्रजातन्त्रीय व्यवस्था मे किस प्रकार की कठिनाइया उत्पन्न होना सम्भव है, मैने यह स्पष्ट करने की भरसक चेष्टा की है। कृपया इस मामले पर अच्छी तरह विचार करके मुझे अपने सुझाव दीजियेगा। यदि हमलोगो के जिम्मे कोई सम्पत्ति नही दी जायगी तब तो वर्तमान व्यवस्था ही ठीक है।

विनीत
घनश्यामदास

मत्याग्रह अश्रम
वर्धा
८ अक्तूवर, १९३३

भाई घनश्यामदास

तुम्हारा पत्र मिला।

तुमने जिस कठिनाई की वात कही है वह तो मौजूद है ही। उमीकी वात मोचकर तो मैंने ट्रस्ट वोर्ड के गठन की वात कही थी। मेरी राय है कि यह सम्पत्ति ट्रस्टियो के पास स्थायी रूप मे रहे और उन्हे उमे वेचने तक का अधिकार रहे। हरिजन मेवक मघ का भविष्य चाहे जो हो, तुम और ठक्कर वापा उसके स्थायी मदस्य रहे। इस प्रस्ताव मे उस प्रश्न का भी निपटारा हो गया जिसमे अपेक्षाकृत अधिक वडे प्रश्न का जन्म हुआ है और जिसकी मै यहा समयाभाव के कारण चर्चा नही करना चाहता हू। इस वीच मे तुम्हें अखिल भारतीय चर्खा सघ का व्यवस्था-विधान पढ जाने को कहूगा। मुलाकात होने तक इसकी चर्चा मुल्तवी रही। मै यहा ७ नवम्वर तक तो हू ही, इसलिए यदि सम्भव हो तो उम प्रश्न की खातिर ही सही, एक दिन के लिए आ सकते हो।

तुमने दिल्ली मे छात्रावास खोलने की वात कही है। अव आश्रम की जमीन और इमारते अपने पास होने के वाद भी क्या दिल्ली वाले छात्रावास की कोई खास जरूरत रह गई है? एक और नई योजना आरम्भ करने से पहले क्या सावरमती की योजना की प्रगति देखना अच्छा नही रहेगा? मै तो समझता हू कि हमें सावरमती वाली योजना को सफलीभूत वनाने की ओर ही सारा ध्यान देना चाहिए, और उमे मफल वनाने के काम मे हममे से अनेक की पूरी शक्ति के उपयोग की आवश्यकता पडेगी।

आशा है, तुम स्वस्थ होगे। नाक का क्या रहा? इन दिनो तो दिल्ली का मौसम वडा अच्छा होगा।

तुम्हारा
वापू

सत्याग्रह आश्रम
वर्धा
२६ अक्तूवर, १९३३

भाई घनश्यामदास

तुम्हारे हिन्दी के पत्र का उत्तर अग्रेजी मे वोलकर लिखा रहा हू। हरिजन सेवक सघ के व्यवस्था-विधान के सम्वन्ध मे मुझे अधिक लिखना

नही था। विचारणीय प्रश्न यही है कि हमे अर्द्ध-प्रजातत्रीय सस्था को तुरत ही जन्म देना चाहिये या नही। पता नियुक्ति के अन्तर्गत यह अधिकार भी दिया गया है या नही, पर मैंने जो वात सुझाई है उस पर तो तुरत ही अमल किया जा सकता है। मेरा सुझाव यही है कि आश्रम को उन ट्रस्टियो के नाम मे जिनके नाम मैं वता चुका हू, रजिस्ट्री करा दिया जाय। तुम्हे अपने विचार के सम्वन्ध मे ठक्कर वापा और हरिजी के साथ वात करनी चाहिये।

रही चर्खा सघ की वात, सो इस सम्वन्ध मे मुझे पूरी स्वतन्त्रता थी, इसलिए मैंने जो योजना वनाई उसके फलस्वरूप एक मजवूत और आसानी से चलने वाली सस्था वन गई--ऐसी सस्था जिसे मनमाना प्रजातन्त्रीय रूप दिया जा सके। आश्रम को हरिजन सेवक सघ के निमित्त देने का निश्चय होने के तुरत वाद ही मैं तुम्हे लिखना चाहता था कि दिल्लीवाली महत्वाकाक्षापूर्ण योजना को त्याग दिया जाय। इसमे सदेह नही कि ऐसे अनेक छात्रावासो की जरूरत पडेगी और यदि उनकी व्यवस्था ठीक-ठीक हो सकी तो उनके द्वारा वहुत कुछ ठोस काम होने की सम्भावना है। जव मैं दिल्ली मे होऊ तो मुझसे जो काम चाहो, ले सकते हो।

विहारीलाल यदि छात्रावास आदि की योजनाओ के सिलसिले मे काम करने को तैयार हो तो उससे काम लिया जा सकता है। पर मैं वेतनभोगी उपदेशक रखने के विलकुल खिलाफ हू, चाहे वह हरिजन हो, चाहे कोई और। इस मामले मे जितनी दृढता वरती जाय, थोडी है।

तुम्हारा
वापू

२४ जनवरी, १९३४

भाई घनश्यामदास

लोगो के विचार का खूव परिवर्तन हुआ है। देखे क्या होता है। मुझे तो ईश्वर का हाथ इस कार्य मे देखा जाता है (दिखाई देता है) यह एक रूढ वचन नही है। यह कार्य कोई एक मनुष्य की शक्ति से हो ही नही सकता, न हजारो मे। लेकिन इस वारे मे अधिक लिखा या कहा नही जा सकता है। इसका तात्पर्य इतना ही है कि ईश्वर पर मेरा विश्वास वढता ही जाता है। अपनी शक्ति की अल्पता का प्रत्यक्ष अनुभव हो रहा है।

तुम्हारा शरीर अच्छा रहता होगा।

वापू के आशीर्वाद

विहार भूकम्प के बारे मे मैंने इस समय वापू को जो पत्र लिखा उसकी नकल मेरे पास नही है, किन्तु वापू का उत्तर इस प्रकार था

३१ जनवरी, १९३४

भाई घनश्यामदास

तुम्हारा खत मिला है। भूकम्प और हरिजन प्रश्न का मुकाविला मुझे वहुत प्रिय लगा है, क्योकि वह सत्य है। विलकुल गरीवो को कम भुगतना पडा है यह तो स्वयसिद्ध है। लेकिन जिसके पास दो कौडी थी, वह आज भिखारी वन गये है यह भी इतना ही सत्य है न ? मै यहा वैठा हुआ जितना सम्भावित है, कर रहा हू।

वगाल के दौरे ने मुझे कर्तव्यमूढ वना दिया है। अच्छा है, तुम वही हो। आज डाक्टर विवान को लम्वा खत लिखा है। उसे देखो और वही निश्चय करो। मुझे लगता है कि मेरे से तो एक ही निश्चय हो सकता है।

अगर आप लोग न रुकें तो जाना।

वापू के आशीर्वाद

लार्ड हेलीफेक्स ने भी, जिसके पिता की तभी मृत्यु हुई थी, भूकम्प के वारे मे लिखा

वोर्ड आफ एजूकेशन
ह्वाइट हाल, लन्दन
१३ फरवरी, १९३४

प्रिय श्री विडला

कृपापत्र के लिए अनेक धन्यवाद। यह आपकी सद्भावना है कि आपने एक ऐसे समय मे हमारा ध्यान रखा जव पिताजी की मृत्यु मे उनके सभी मित्र इतने लम्वे और सुखमय सौहार्द का अन्त हो जाने पर शोक मे निमग्न है। किन्तु पिताजी के लिए मेरे पास कृतज्ञता को छोडकर और है ही क्या ?

विहार मे भूकम्प मे धन-जन की हानि के समाचारो से मुझे वडा दुख हुआ। वहा के सम्वाद-साधनो के भग हो जाने के कारण हम शुरु-शुरु मे इस भारी क्षति का अन्दाजा नही लगा पाये थे। जिन लोगो को नुकसान पहुचा है उनके साथ मेरी गहरी सहानुभूति है और मुझे आपसे यह जानकर खुशी हुई है कि कष्ट-पीडितो के दुख-निवारण-कार्य मे सभी कोई हाथ वटा रहे है।

आपका
हेलीफैक्स

: १० :

राजनीतिक विश्रांति

इस समय बापू सर जान एडरसन से मिलने को उत्सुक थे।

१२ फरवरी, १९३४

भाई घनश्यामदास

मिस लेस्टर से मैं ने मिदनापुर[1] की बात की और कहा गवर्नर से मिले। उसने गवर्नर को खत लिखा और गवर्नर ने तार भेजा। अब वह जा रही है। मैंने जो खत उसको दिया है उसे पढो। मैंने उनसे कहा है कि तुमसे मिले और सब जान लेवे। सब हाल बतलाइये। आवश्यकता समझ जाय तो डाक्टर विधान से और सतीश बाबू से भी मिला दे। शुक्र को वहा से मेरे पास चली आयेगी। उसको खर्च के लिए यहा से पैसे दिये है। टिकट यही से कटवा दी है। उसका खर्च तुम्हारे से लू? जमनालाल से तो है ही। क्या उचित है वह नही जानता हू।

पत्र बहुत जल्दी से लिखा है। तुम्हारे पत्र मिले है उसका उत्तर दूगा। समय ही नही मिलता है।

बापू के आशीर्वाद

१२ फरवरी, १९३४

भाई घनश्यामदास

तुम्हारा खत मिला। मै देखता हू गवर्नर को कुछ लिखू या नही। मिदनापुर की सलामी तो बन्द हुई। लेकिन अपने दोष को स्वीकार नही किया। मिस लेस्टर ने अब वायसराय से मिलने का समय मागा है। इन सब चीजो से आज कुछ परिणाम नही निकल सकता है। लेकिन समझौते का एक भी मौका हम छोडना नही चाहते है।

---

१ जहां उन्ही दिनो मजिस्ट्रेट की हत्या हुई थी।

विधान राय को मिलने का प्रयत्न पूरा करना चाहिये। भले कांग्रेस-वादी कुछ भी कहे।

मेरा वहा आने का कम से कम विहार तक तो मौकूफ कर दिया है। पीछे देखेंगे।

जवाहरलाल से मिलने की कोशिश करोगे ना?

मिस हैरिसन २ मार्च को विलायत से छूटेगी। उसका आना अच्छा ही है। मैंने इस बारे मे पहले भी लिखा ही था न?

बापू के आशीर्वाद

पटना
१३ ३ ५४

भाई घनश्यामदास

सर सैम्युअल को मैंने खत लिखा है, उसकी एक प्रतिलिपि इसके साथ रखता हू। और एक धारवाड के मेजिस्ट्रेट को पत्र लिखा था। धारवाड का केवल तुम्हारे जानने के लिए है। सर सेम्युअल के बारे मे कुछ काम लेना चाहता हू। स्कार्पा[1] अगर वहा है तो उनसे पूछो कभी उस मिटिंग में (क्या) हुआ था, क्योंकि वह वहा मौजूद था। अगर वह न था तो उसीके जरिये मिटिंग हुई थी। जो लोग हाजिर थे उनके नाम-ठाम देवे तो भी अच्छा होगा। जो कुछ भी हकीकत मिल सकती है वह इकट्ठा करना चाहता हू। आज तक इस चीज की बाते अंग्रेजी मे हो रही है। और है सब की सब जाल। 'अजमेर' का 'आजमरा' बनाया गया है।

मुझे मिलने के लिये आना चाहते हैं। हरिजन कार्य के लिये थोडी देर बाद बुलाऊंगा। ठक्कर बापा को दिल्ली जाने दिये हैं। उनका यहा काम नहीं था। यों तो सब कार्य मे उनके जैसा सेवक मदद दे सकता है, विशेषतया आवश्यकता न थी। लेकिन विहार के बारे में अथवा सर सैम्यूअल से जो पत्र व्यवहार इधर किया है उस बारे मे आना है तो दिल चाहे तब आ सकते हो। बुध से शुक्र तक मोतीहारी की तरफ रहूगा। शुक्र की शाम को वापस आऊंगा।

अगाथा हैरीसन १६ को मुंबई पहुचेगी। लेस्टर वायसराय से मिली है। कल यहा आती है।

बापू के आशीर्वाद

---

१ डा० स्कार्पा, जो १९३१ में कलकत्ते में इटली के कौंसल जनरल थे। जब बापू रोम में थे तो यह वहा थे।

सर सेम्युअल होर को भेजा गया पत्र बापू के साथ की गई एक झूठी मुलाकात के बारे मे था जिसका विवरण इटली के एक पत्र मे प्रकाशित हुआ था। यह विवरण 'टाइम्स' के रोम-स्थित सम्वाददाता ने अपने पत्र मे दिया था

वर्धा
जनवरी, १९३४

प्रिय सर सेम्युअल

आपको याद होगा कि जब मै १९३१ के दिसम्बर मे वापस लौट रहा था तो आपने रोम में मेरे द्वारा एक पत्रकार को दी गई तथाकथित मुलाकात के सम्बन्ध मे मेरे पास एक तार भिजवाया था और मैंने उत्तर देकर समाचार का खण्डन किया था। इस खण्डन का भी खण्डन निकला, पर मैने उसे हाल ही मे देखा है, क्योकि बम्बई मे कदम रखने के एक सप्ताह के भीतर ही मुझे पकड कर जेल भेज दिया गया था।

गत अगस्त मे आखिरी दफा जेल से छूटने के बाद मुझे मीराबाई (स्लेड) ने बताया कि एक अग्रेज मित्र, बम्बई के विल्सन कालेज के प्रोफेसर मैकलीन की धारणा है कि यद्यपि बात पुरानी पड गई है तथापि उसकी सफाई हो जाना अच्छा है, क्योकि जिस समय रोम के सम्वाददाता ने मेरे कथन का खण्डन प्रकाशित कराया था तो उसका बडा गहरा प्रभाव पडा था और सम्भवत उसीके फलस्वरूप वायसराय द्वारा मेरे विरुद्ध १९३२ की कार्रवाई की गई थी। मै प्रोफेसर मैकलीन से सहमत हुआ और मैंने मीराबाई से मिस अगाथा हैरिसन को तत्सम्बन्धी कटिंग सग्रह करने को लिखने को कहा। इनमे जो सबसे जरूरी कटिंग थी वह मुझे गत मास के मध्य मे मिली। मै उस समय अस्पृश्यता-निवारण-कार्य मे तेजी के साथ इधर-उधर दौरा कर रहा था। आपके अविलम्ब हवाले के लिये मै वे कटिंग 'क' 'ख' और 'ग' का चिन्ह लगाकर भेजता हू।

यह बात स्मरण रखनी होगी कि मैंने कटिंग मिस अगाथा हैरिसन से प्राप्त होने पर पहली बार देखी। मैंने इन कटिंगो को कई बार पढा है, और मै यह बगैर किसी सकोच के कह सकता हू कि, 'क' 'ग' और कटिंग, जो कुछ वास्तव मे हुआ था उसका उपहासजनक खाका मात्र है। 'क' को इटालियन पत्रकार को दिये गए तथाकथित लम्बे वक्तव्य का सक्षिप्त सस्करण बताया गया है। 'ग' मे टाइम्स का सम्वाददाता, तथाकथित मुलाकात के समाचार का मेरे द्वारा खण्डन देखकर अनिच्छापूर्वक स्वीकार करता है कि, सम्भव है, मेरी बात ही ठीक हो, क्योकि सीनोर ग्याडा

ने वाकायदा मुलाकात की अनुमति नहीं चाही थी, पर इतने पर भी वह प्रतिपादन करता है कि मेरे द्वारा दिया गया वताया वक्तव्य साररूप में ठीक है। परन्तु यदि मै अपनी जानकारी की वात न वताकर केवल 'क' और 'ग' का विश्लेपण मात्र कर दू तो सत्य की रक्षा अच्छी तरह हो जायगी।

१ 'क' मे जो कहा गया है कि मैंने ग्याडा को एक लम्वा वक्तव्य दिया सो मैंने न कभी लम्वा वक्तव्य दिया, न छोटा।

२ मुझे सीनोर ग्याडा मे किसी भी स्थान पर मिलने को नही कहा गया। हा, मुझे एक निजी मकान के ड्राइग रूम मे कुछ इटालियन नागरिको से मिलने का निमत्रण अवश्य दिया गया। उस अवसर पर मेरी मुलाकात जिन लोगो मे कराई गई उनके नाम अव मुझे याद नही है, न मैं उनके नाम उस भेंट के दूसरे दिन ही याद रख सकता था। मुलाकात विल्कुल साधारण ढग से कराई गई थी।

३ इस अवसर पर वार्तालाप आम ढग मे हो रहा था और किसी को सम्वोधन करके नही किया जा रहा था। कई मित्रो ने प्रश्न किये और असम्वद्ध रूप मे वातचीत चलती रही जेसा कि ऐसे अवसरो पर हुआ करता है।

४ अतएव मीनोर ग्याडा या 'टाइम्स' के सम्वाददाता ने मेरी वातो को एक सम्वद्ध वक्तव्य का रूप देकर, मानो वह किमी व्यक्ति को सम्वोधन करके दिया गया हो, गलती की।

५ मीनोर ग्याडा ने मेरी तसदीक के लिए कुछ नही दिखाया कि क्या लिखा है।

६ वार्तालाप अनेक विपयो पर हुआ, जैसे गोलमेज परिपद, मेरी तत्सम्वन्धी धारणा, और मेरा भावी कार्यक्रम। 'क' मे मेरे द्वारा जो अनेक वाते कहलाई गई है वे मैंने कभी नहीं कही। अपनी आशाओ, आशकाओ और भावी कार्यक्रम के सम्वन्ध मे मुझे जो कुछ कहना था मैंने गोलमेज परिपद की समाप्ति पर अपने भापण के दौरान मे नपी तुली भाषा मे कह दिया था। आपसी वार्तालाप के दौरान मे मैंने जो कुछ कहा वह उस भापण का रूपान्तर मात्र था। मेरा यह स्वभाव नही है कि सार्वजनिक रूप मे कुछ कहू और आपसी वातचीत मे कुछ, या एक मित्र मे कुछ कहू, और दूसरे से कुछ। मैं यह कैसे कह सकता था कि भारतीय राष्ट्र और ब्रिटिश सरकार मे निश्चित रूप से झगडा खडा हो गया है, क्योकि मैंने उसी अवसर पर यह कहा था कि गाधी-इर्विन पैक्ट के द्वारा जो मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित हुआ है उसे अक्षुण्ण रखने की मैं पूरी शक्ति

के साथ चेष्टा करूगा और भेद नही पडने दूगा। मै तो आशावादी हू, इसलिए मनुष्यो मे अमिट झगडा खडा होने की सम्भावना मे मेरा विश्वास नही है।

७ मैने यह कभी नही कहा था कि मै इगलैड के विरुद्ध सघर्ष नये सिरे से छेडने के लिए भारत लौट रहा हू। उस वार्तालाप के अवसर पर मुझ से कई प्रकार की सम्भावनाओ के बारे मे प्रश्न किये गए थे, और 'क' मे उस वातचीत को इस रूप मे रखा गया मानो मै भारत उन सम्भावनाओ को प्रकृत रूप देने के लिए लौट रहा होऊ।

८ मै यह भी कहूगा कि जनता ने न सीनोर ग्याडा द्वारा तैयार किये मूल नोट देखे है, न उनके द्वारा तैयार और प्रकाशित की गई कहानी। 'क' और 'ग' मे तो 'टाइम्स' के सम्वाददाता की अपनी धारणाए है जो उसने सीनोर ग्याडा के लेख या कथन से ग्रहण की।

पता नही, 'ग' का सबके ऊपर क्या प्रभाव पडा। यदि मेरे खण्डन की सत्यता के सम्बन्ध मे आपको शका होने लगी थी तो जिस प्रकार आपने पहली रिपोर्ट की ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया था, उसी प्रकार मेरे खण्डन के खण्डन की ओर भी करना चाहिए था। पता नही आप इस पत्र को किस रूप मे लेगे, परतु यदि आपको मेरी सत्यता मे कुछ सदेह हो गया है तो मै यथाशक्ति उसका निवारण करना चाहूगा। 'ग' मे जिस अनुचरी का जिक्र किया गया है वह मिस स्लेड है। मै इस पत्र के साथ उनके उक्त वार्तालाप सम्बन्धी सस्मरण भेजता हू।

मै इस पत्र को प्रकाशित नही करा रहा हू, पर इसकी प्रतिलिपिया अपने कुछ मित्रो को उनके निजी उपयोग के लिए भेज रहा हू। पर मै चाहूगा कि आप स्वय इसे प्रकाशित करवाए, या प्रोफेसर एन्ड्रयूज से, जिनका पता वुडब्रुक सैली ओक वर्मिघम है, इसका जिस प्रकार चाहे उपयोग करने को कह दे।

आपका
मो० क० गाधी

'क'

एक नया व्यापारिक बहिष्कार
निजी सम्वाददाता द्वारा

रोम
१४ दिसम्बर

श्री गाधी ने, जो अवतक अनेक इटालियन ओर विदेशी पत्रकारो को वक्तव्य देने मे इन्कार करते आ रहे थे, 'जरनेल द इटालिया' के सीनोर ग्याटा को एक लम्बा ववतव्य दिया है।

श्री गाधी ने कहा कि गोलमेज परिषद भारतीयो के लिए दीर्घ-कालीन ओर धीरे-धीरे दी जानेवाली व्यथा का साधन थी, अव उसके अन्त के साथ ही ब्रिटिश सरकार ओर भारतीय राष्ट्र मे निश्चित रूप से सम्वन्ध विच्छेद हो गया है। पर इसके द्वारा ब्रिटिश सरकार को भारतीय राष्ट्र ओर उसके नेताओ की वास्तविक भावनाओ का पता लग गया है और यह भी मालूम पड गया है कि इगलैंड का क्या इरादा है। श्री गाधी ने कहा कि वह भारत को इगलैंड के विरुद्ध तुरत सघर्ष आरम्भ करने के लिए लोट रहे है, यह सघर्ष निष्क्रिय प्रतिरोध और ब्रिटिश माल के वहिष्कार का रूप धारण करेगा। उनकी धारणा है कि मुद्रा सम्वन्धी सकट और वेकारी के कारण इगलैंड को जिस विपत्ति का सामना करना पड रहा है, वहिष्कार के द्वारा उसमे और भी वृद्धि हो जायगी। भारतीय वाजार मे ब्रिटिश माल की खपत न होने के फलस्वरूप ब्रिटिश औद्योगिक कार्यशीलता मे वहुत कमी हो जायगी, जिससे वकारी और वढेगी ओर पौड की दर और भी कम हो जायगी।

श्री गाधी ने अन्त मे कहा कि यूरोप के वहुत ही कम देश भारतीय समस्या मे दिलचस्पी दिखाते है, यह वडे खेद का विषय है, क्योकि स्वतन्त्र और समृद्ध भारत का अर्थ है अन्य राष्ट्रो के माल की अधिक खपत। उन्होने यह भी कहा कि भारतीय स्वतन्त्रता के फलस्वरूप अन्य सारे देशो के साथ व्यापारिक और वौद्धिक विनिमय होगा।

'ग'

(लन्दन टाइम्स से उद्धृत)

२१ दिसम्वर १९३१

श्री गाधी ने उस मुलाकात का जो उन्होने रोम मे स्वल्पकालीन आवास के समय 'जरनेल द इटालिया' को दिया वताते है और जिसका सक्षिप्त विवरण

१५ दिसम्बर के 'टाइम्स' मे छप चुका है, अक्षरश खण्डन किया है। उनके द्वारा कही गई बात भारत मे सविनय आदोलन के पुन, आरम्भ होने की संभावना के सम्बन्ध मे उनकी अवतक की सारी युक्तियो से इतनी बढ-चढकर थी कि उनसे यह पूछना जरूरी समझा गया कि वास्तव मे उन्होने क्या कहा था। फलत अधिकारपूर्ण क्षेत्र से उनके पास भूमध्यसागर मे इटालियन स्टीमर पिल्सना पर एक तार भेजा गया जिसमे कहा गया

"प्रेस रिपोर्टो का कहना है कि जहाज पर सवार होने से पहले आपने 'जरनेल द इटालिया' को एक वक्तव्य दिया जिसमे निम्नलिखित उद्गार थे

"१ 'गोलमेज परिपद के द्वारा भारतीय राष्ट्र और ब्रिटिश सरकार मे निश्चित रूप से सम्बन्ध विच्छेद हो गया है।'

"२ आप भारत इगलैड के विरुद्ध तुरत सघर्ष आरम्भ करने के लिए लौट रहे है।

"३ 'वहिष्कार ब्रिटेन के सकट मे वृद्धि करने का शक्तिशाली साधन सिद्ध होगा।'

"४ 'हम कर नही देगे, हम इगलैड के लिए किसी रूप मे काम नही करेगे, हम अग्रेज अधिकारियो, उनकी राजनीति और उनकी सस्थाओ से बिल्कुल नाता तोड लेगे, और हम ब्रिटिश माल का पूरी तौर से वहिष्कार कर देगे।'

"यहा आपके कुछ मित्रो का कहना है कि आपने जो कुछ कहा होगा, यह उसीकी गलत रिपोर्ट है। यदि ऐसी बात है तो खण्डन वाछनीय है।"

कल श्री गाधी के पास से तार द्वारा निम्नलिखित उत्तर मिला

"जरनेल द इटालिया का कथन बिल्कुल असत्य है। मैने रोम मे पत्र-प्रतिनिधियो को कोई वक्तव्य नही दिया। मेरी अन्तिम मुलाकात स्विट्जरलैड के विलेन्यूव नामक स्थान पर रायटर के साथ हुई जिसके दौरान मे मैने भारतीय जनता से झटपट किसी नतीजे पर न पहुचकर मेरे वक्तव्य की प्रतीक्षा करने को कहा था। यदि सीधी कार्रवाई अभाग्यवश अनिवार्य हुई तो भी मै कोई कदम जल्दबाजी मे नही उठाऊगा और पहले अधिकारियो की चिरौरी करूगा। कृपया इस वक्तव्य को पूरा प्रकाशन दीजिए।"

'जरनेल द इटालिया' मे श्री गाधी का जो तथाकथित वक्तव्य छपा था, श्री गाधी ने उसका खण्डन किया है, पर सीनोर ग्याडा उनके इस खण्डन को स्वीकार करने को बिल्कुल तैयार नही है। सीनोर ग्याडा ने एक सक्षिप्त से नोट मे कहा है कि जो शब्द महात्मा द्वारा कहे बताये गये है उन्हे उन्होने स्वय उनके सामने और अन्य साक्षियो के सामने लिखा है। जहा तक मै

समझता हू, श्री गाधी का खण्डन सत्यतापूर्ण भी हो सकता है, क्योकि सीनोर ग्याडा ने बाकायदा मुलाकात का अनुरोध नही किया और न वैसी मुलाकात हुई ही।

मुझे यह खबर मिली है कि महात्मा के साथ सीनोर ग्याडा की मुलाकात एक निजी मकान मे कराई गई और श्री गाधी को यह स्पष्टरूप से बता दिया गया कि सीनोर ग्याडा कौन है। जब श्री गाधी ने वह उल्लेखनीय वक्तव्य देना आरम्भ किया, जो उनके द्वारा दिया गया बताते है, तो सीनोर ग्याडा ने उसके महत्व को समझकर, और किसी प्रकार की भूल न करने की इच्छा से प्रेरित होकर, कागज और पेन्सिल मागी जो उन्हे दी गई। सीनोर ग्याडा ने उनका वक्तव्य वही उसी समय श्री गाधी और उनकी एक अनुचरी के सामने नोट कर लिया। इन दोनो मे से किसी ने इस विषय मे एक शब्द तक नही कहा कि जो कुछ कहा गया है वह प्रकाशन के लिए नही है।

इससे यह प्रकट है कि जहा तक श्री गाधी के उद्गारो के तथ्य का सम्बन्ध है, सीनोर ग्याडा ने, जिनके अग्रेजी भाषा विषयक ज्ञान की बात मै स्वय जानता हू, वे सारी बाते विशेष सावधानी के साथ नोट की।

मीराबहन का वक्तव्य

अब से दो वर्ष तीन मास पहले की घटना के सम्बन्ध मे मेरे सस्मरण निम्नलिखित है

गाधीजी और उनके साथियो को रोम मे एक इटालियन काउण्टेस के घर, आपसी मुलाकात के लिए आमत्रित किया गया। यह काउण्टेस इटली के बम्बई स्थित कौसल की, जो उस समय रोम मे ही थे, मित्र थी। बैठक काफी देर तक रही। पहले वार्तालाप हुआ, फिर जलपान, उसके बाद फिर वार्तालाप। आरम्भ मे गाधीजी के साथ अकेली मै ही थी, बाद को अन्य साथी एक-एक करके आने लगे। इस मुलाकात के दौरान में मै बराबर गाधीजी के साथ ही रही। हा, उनके लिए कुछ फल आदि तैयार करने और स्वय जलपान करने के लिये १५-२० मिनट के लिए भोजनालय मे अवश्य गई थी।

जहा तक मुझे याद है, आरम्भ मे बातचीत खानगी विषयो पर होती रही। काउण्टेस मुलाकातियो का परिचय गाधीजी से कराने और बातचीत का सिलसिला जारी रखने मे लगी हुई थी। जब बातचीत ने जोर पकडा तो मैने देखा कि दो या तीन सज्जन राजनीतिक और आर्थिक विषयो पर भाति-भाति के प्रश्न कर रहे है। उनमे से एक ने कागज और पेसिल मागी,

और नोट करना शुरू किया। कुछ समय वाद हमारे अन्य साथी भी आने लगे और हम सव भोजनालय के पास वाले वडे कमरे मे चले गये। यहा फिर आम ढग की वातचीत होने लगी। हा, किसी एक सज्जन के साथ थोडीमी गम्भीर वातचीत अवश्य हुई थी, पर मुझे उस वातचीत का विवरण याद नही है।

थोड़े मिनटो को छोडकर, जवकि मै वहा नही थी, मैने गाधीजी द्वारा कही गई सारी बाते सुनी। वह राजनीतिक और आर्थिक ढग के उत्तर मे यथासम्भव जो कुछ कह रहे थे, विशेप जोर ओर स्पष्टता के साथ कह रहे थे, क्योकि इटालियन सज्जन को अग्रेजी समझने मे कठिनाई हो रही थी, ओर साथ ही प्रश्नकर्ता वरावर प्रश्न कर रहे थे। 'टाइम्स' के सम्वाददाता ने जो वाते गाधीजी द्वारा कही वताई है यदि वह वैसी कोई वात कहते तो मै अवाक् रह जाती। इसका अर्थ यही होता कि उन्होने अपने आदर्शो और सिद्धान्तो को एक ओर फेक दिया है। वैमी अवस्था मे मै उन्हे अपना पथ-प्रदर्शक और पिता कभी न मानती रहती।

मीरा (मिस स्लेड)

स्वराज्य पार्लमेंटरी पार्टी ने कुछ साल पहले केन्द्रीय धारा सभा का परित्याग कर दिया था। सन् १९३४ मे वह फिर वनी। मै काग्रेस के साथ उस पार्टी के सम्वन्ध को लेकर वडा उद्विग्न था। वापू उस समय आसाम मे थे। मैने उन्हे वही यह पत्र लिखा

१४ अप्रैल, १९३४

परमपूज्य वापू

आप पहले कार्यकारिणी की आपसी वैठक ओर वाद को अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी की वाकायदा बैठक वुला रहे है, इसलिए मैने सोचा कि स्वराज्य पार्टी के गठन के सम्वन्ध मे मै भी अपने विचार रख दूँ। जहा तक आपकी दोनो प्रेस मुलाकातो का सवाल है, मुझे उसके सम्वन्ध मे कुछ नही कहना है। किसी-न-किसी प्रकार मै आपसे सहमत हो जाता हू। पर इससे आप यह न समझे कि मुझमे वुद्धि-विवेक का अभाव है। जव आपकी वाते हमेशा ठीक ही हो तो मै क्या कर सकता हू? अव स्वराज्य पार्टी के सम्वन्ध मे जवसे डा० अन्सारी, भूलाभाई ओर डा० राय ने नई पार्टी के जन्म की घोपणा की है, तव से पडित मालवीयजी वडे उद्विग्न हो गए है। उन्हे पूरी तोर से निश्चय नही है कि निर्वाचन के अवसर पर

वह कौनसा रुख अख्तियार करेगे। आप जानते ही है कि साम्प्रदायिक निर्णय के मामले मे उनके विचार बडे कठोर है और जो हिन्दू-सभाई व्यवस्थापिका सभा मे जाने की इच्छा रखते है उन्होंने उनका दुरुपयोग करना अभी से आरम्भ कर दिया है। यदि परिस्थिति के अनुसार ठीक-ठीक आचरण नही किया गया तो, सम्भव है, पण्डितजी के नेतृत्व मे एक और दल का जन्म हो जाय। साम्प्रदायिक प्रश्न पर पण्डितजी काग्रेस और हिन्दू महासभा, दोनो के बीच मे है। वह दोनो मे से किसीसे सहमत नही है। वह मैत्रीपूर्ण समझौता तो चाहते है, पर औचित्य की परिधि मे रहकर मुसलमानो को सन्तुष्ट करने को तत्पर नही है। इस समय वह इस बात की हठ पकडे हुए है कि साम्प्रदायिक निर्णय का अन्त कर दिया जाय, जो कि असम्भव बात है। वह कहते है कि मुसलमानो को केन्द्र मे ३३ प्रतिशत और बगाल मे ५१ प्रतिशत सीटे दी जा सकती है, पर अवशिष्ट सीटो को वह हिन्दुओ और यूरोपियनो मे बाटना नही चाहते। वह चाहते है कि बाकी सारी सीटे हिन्दुओ को मिले। वह जो कहते है उसमे बुद्धि-विवेक की मात्रा पर्याप्त है, पर उनकी कार्यप्रणाली आपके लिए रुचिकर नही होगी। वह मुसलमानो की सहायता पाने के लिए सचेष्ट है, पर वह उन्हे कभी प्राप्त नही होगी, और वह वायसराय और ब्रिटेन के मत्रिमडल के पास डेपुटेशन ले जाना चाहते है,जो निष्फल सिद्ध होगा। पता नही, साम्प्रदायिक मामलो मे स्वराज्य पार्टी की क्या नीति रहेगी, पर यदि वह अपने सदस्यो को साम्प्रदायिक निर्णय का विरोध अपने-अपने ढग से करने को स्वतत्र छोड दे तो पण्डितजी और स्वराज्य पार्टी के दृष्टिकोणो मे सामजस्य स्थापित करना सम्भव है। यदि ऐसा नही हुआ तो राष्ट्रीय विचार वाले हिन्दुओ मे फूट पडने की सम्भावना है और यह कदापि वाछनीय नही है। पण्डितजी तो केवल यही चाहते है कि नई स्वराज्य पार्टी साम्प्रदायिक निर्णय के प्रति कोई लगाव न दिखावे।

दूसरा प्रश्न स्वराज्य पार्टी के नियत्रण का है। मै पण्डितजी की इस बात से सहमत हू कि या तो काग्रेस को स्वराज्य पार्टी को पूरी तौर से अपने काबू मे रखना चाहिये, या फिर उससे कोई सरोकार नही रखना चाहिए, क्योकि यदि आसफअली जैसे आदमियो को पूरा अधिकार दे दिया जायगा और काग्रेस केवल आशीर्वाद देगी और किसी प्रकार का अनुशासन नही रखेगी तो वह अपने कर्त्तव्य का पालन नही करेगी। इससे पार्टी कमजोर पड जायगी, साधारण श्रेणी के सदस्यो मे भ्रष्टाचार की वृद्धि होगी और अन्त मे काग्रेस की ही बदनामी होगी। पुरानी स्वराज्य पार्टी का मेरा जो अपना अनुभव है, उसके आधार पर मै कह सकता हू कि बहुत बडा खतरा पैदा हो जायगा, विशेषकर इसलिए कि अब मोतीलाल-जैसे व्यक्ति मौजूद नही है।

पार्टी के अनुशासन द्वारा ही सही, पर किसी-न-किसी रूप मे काग्रेस द्वारा नियत्रण अत्यावश्यक है। पर यदि काग्रेस किसी प्रकार का नियत्रण नही रखना चाहती है तो उसका आशीर्वाद भी अनावश्यक है। आपको इस मामले मे पूर्ण निश्चय कर लेना चाहिए। मै तो काग्रेस के नियत्रण के पक्ष मे हू।

विनीत

घनश्यामदास

इसके बारे मे गाधीजी ने अपनी राय दी और अपने अप्रैल के एक पत्र मे, जिस पर तारीख नही लिखी है, साम्प्रदायिक निर्णय की भी चर्चा की

डिब्रूगढ

अप्रैल, १९३४

भाई घनश्यामदास

एवार्ड की बात बहुत मुश्किल है। यदि मैने जो रास्ता बताया है उसका स्वीकार मुसलमान करे तो कुछ हो सकता है, न भी करे तो वह रास्ता बिल्कुल सीधा है। मुझे डर है कि वह स्वराज्यवादियो को अच्छा नही जचेगा। हिन्दू-मुसलिम-सिख ऐक्य आज सिद्ध होने के लिये मै कोई वायुमडल नही पाता हू।

धारासभा प्रवेश को मैने स्वतत्रतया देखा है। मुझे लगता है कि काग्रेस मे हमेशा धारासभा प्रवेश का दल रहेगा ही। उसी दल के हाथ मे काग्रेस की बागडोर होनी चाहिये। और वही दल को काग्रेस के नाम की आवश्यकता रहती है। मैने यह बात हमेशा के लिय मान ली है। वही लोग कोई वार वहिष्कार भी करना होगा तो करे।

धारासभा प्रवेश मे मुसीवत काफी है। इसका फैसला तो होता रहेगा, गलतिया होती रहेगी, दुरुस्ती होगी, नही होगी ऐसे चलता रहेगा।

कलकत्ता से राची मुझको तो ज्यादा अच्छा लगता है। राची मे लोगो के लिये सुभीता न रहे यह दूसरी बात है। रांची मे शान्ति मिलेगी। कलकत्ते मे असम्भावित है। मैने राजेन्द्रबाबू पर छोड दिया है।

तुम्हारा फेडरेशन का व्याख्यान पढूगा और पढने के वाद अभिप्राय भेजूगा।

राची मे मिटिंग होवे तो और आना शक्य है तो आ जाना अच्छा हो सकता है। निश्चयपूर्वक नही कह सकता हू।

वापू के आशीर्वाद

अव मैने लार्ड हेलीफेक्स को पत्र लिखने का निश्चय किया

२३ अप्रैल, १९३४

प्रिय लार्ड हेलीफैक्स

मै यह पत्र वडे हताश भाव से लिख रहा हू, पर प्रवृत्ति इतनी प्रवल थी कि मै रोक नही सका।

तीन वर्ष से अधिक हुए, इतिहास मे पहली वार दो महान् पुरुपो की भेट हुई। दोनो अपने-अपने देश की ओर से मिले और दोनो ने भारत और इग्लैड को एक-दूसरे के इतना निकट ला दिया जितना वे पहले कभी नही आये थे। आपने पहला कदम उठाकर दोनो देशो के आगे एक उदाहरण रख दिया कि एकमात्र पारस्परिक अववोव और वातचीत के द्वारा ही शाति और सद्भावना का लक्ष्य सिद्ध हो सकता है। उसके वाद का इतिहास वडा दु खद है। पर मुझे मालूम हुआ है कि हाल ही मे एक प्रान्तीय गवर्नर ने मेरे एक मित्र से कहा था कि गाधी ने पैक्ट के अतर्गत अपनी जिम्मेदारिया सोलह आने पूरी की।

जो हो, वर्तमान अवस्था तो अत्यन्त दु खदायी और असह्य है। अग्रेजो की प्रतिज्ञाओ के प्रति इस समय जितना अविश्वास दिखाई देता है और वातावरण मे जितनी कडुआहट दृष्टिगोचर होती है, उतनी पहले कभी नही थी। यह सव तो है ही, इसमे भी वुरी वात यह है कि पारस्परिक अववोव और मानवीय सम्पर्क के चिर-परिचित मार्ग को हमेशा के लिए त्याग दिया गया है। इस वयोवृद्ध पुरुप को कभी अव्यावहारिक और अरचनात्मक कल्पनावादी वताया जाता है, कभी वेईमान, चालाक और कपटी राजनीतिज्ञ। उनके लिए एक साथ दोनो ही होना सम्भव नही है, और आप स्वय जानते है कि वह वास्तव मे क्या है। उन्हे समझने की कोई इच्छा नही है। मानवीय सम्पर्क मात्र को हौआ समझा जाता है। हाल ही मे गाधीजी ने लार्ड विलिगडन को एक पत्र लिखा था जिसे मैने भी देखा था। उसमे उन्होने कहा था, "विश्वास करिये, मै आपका और इग्लैड का सच्चा मित्र हू।" वास्तव मे उन्होने यथार्थ वात कही थी। विहार की पुनर्रचना के कार्य मे उन्होने मर्यादा पर अडने के वजाय वगैर किसी शर्त के सहयोग प्रदान किया और इस प्रकार यह प्रमाणित कर दिया कि यद्यपि वह अपने आपको पक्का असहयोगी वताते है, तथापि वह सवमे अच्छे सहयोगी है। अव उन्होने सविनय अवज्ञा आन्दोलन भी उठा लिया है और ऐसा करके काग्रेस के वामपथियो को रुष्ट कर दिया है। मुझे इसमे तनिक भी सन्देह नही है कि उन्होने जो कदम उठाया है काग्रेस उसपर अपनी सही कर

देगी। काग्रेस और देश मे उनका जितना प्रभाव था, जब उससे भी अधिक हो गया है।

पर उसके बाद क्या ? मेरी राय मे तो इस समय सबसे अधिक आवश्यक वस्तु अपेक्षाकृत अच्छे विधान की नही, अपेक्षाकृत अधिक पारस्परिक अवबोध की है। अविश्वास के वातावरण मे तैयार किया गया विधान कभी सफल नही हो सकता है। इसके विपरीत, पारस्परिक अवबोध स्वय वैधानिक गुत्थिया सुलझाने मे सहायक होगा। मै तो यहा तक कहूगा कि यही एकमात्र ऐसा उपाय है जिसके द्वारा चर्चिलो की दिलजमई कराई जा सकती है कि भारत पर विश्वास करके वे इग्लैड के हितो को खतरे मे नही डालेगे। अतएव इग्लैड और भारत के प्रत्येक हितैषी का इस समय एकमात्र यही मिशन हो सकता है कि दोनो देशो के नेता एक-दूसरे को समझे। महोदय, इस महान सत्य का पता सबसे पहले आपने लगाया और इस सत्य को हृदयगम करने की आवश्यकता जितनी इस समय है उतनी पहले कभी नही थी। मेरा कहना यही है कि समुद्र के इस ओर जिन लोगो का अब भी इस सत्य मे विश्वास है वे आपकी सक्रिय सहायता की अपेक्षा करते है। इन दुर्दिनो मे आपके प्रशसको की जबान पर एकमात्र प्रश्न यह है "लार्ड इर्विन क्या कर रहे है?" आप हमारे मामलो मे इस समय भी जितनी रुचि लेते है, मै जानता हू। पर यदि मुझे अनुमति दी जाय तो मै कहूगा कि आपने पहले भारत को जिस प्रकार उदारतापूर्वक सहायता दी थी वह अब आपसे उससे भी अधिक सहायता की आशा करता है। आपने १९३१ मे एक उदाहरण रखा था, पर उससे पूरी तौर से लाभ नही उठाया गया। मेरी अब भी यही धारणा है कि दोनो देशो के लिए यही एकमात्र मार्ग है और मेरी आपसे यही अपील है कि आपने १९३१ मे जिस चीज का श्रीगणेश किया था उसे आगे बढाइये। इस समय जैसा कुछ वातावरण है उसके कारण सफलता दूर भले ही दिखाई देती हो, पर केवल इसी कारण स्तुत्य प्रयास का त्याग क्यो किया जाय

इस लम्बे पत्र के लिए क्षमा करिये। अपनी सफाई मे मै केवल गाधीजी के प्रति अपनी भक्ति, आपके प्रति अपनी प्रशसा और अपने देश के प्रति अपने प्रेम का हवाला दे सकता हू।

भवदीय

जी० डी० बिडला

उन्होने बडे ही आश्वासन-पूर्ण शब्दो मे उत्तर दिया

प्रिय श्री बिड़ला

कुछ दिन हुए आपका पत्र मिला था। अनेक धन्यवाद। विश्वास रखिये, आजकल की कठिन परिस्थिति में भी भारत को संतोष और शांति देने वाले हर मामले में सद्भावना पैदा कराने के काम मे जितनी भी सहायता मैं दे सकता हू, अवश्य दूगा। मुझे आज भी पक्का विश्वास है कि जो लोग इस लक्ष्य को प्राप्त करने की सच्ची आकाक्षा रखते है उनकी चेष्टाओ से यह महान् कार्य अवश्य पूरा होगा। इसलिए निश्चय मानिये कि मैं जो कुछ भी कर सकता हू, सहर्ष करूगा। मेरी सदा से ही यह धारणा रही है कि आजकल की स्थिति मे सभी पक्षो को बडे धैर्य से काम लेना चाहिए और वर्तमान कण्टकाकीर्ण मार्ग को भविष्य की आशा के प्रकाश मे आलोकित रखना चाहिए।

आपका
हेलीफेक्स

इस अध्याय को मैं बापू के एक पत्र के साथ समाप्त करता हू। इस पत्र से इस बात का एक और प्रमाण मिलता है कि किस प्रकार वह अपने कामो मे आर्थिक सहायता के लिए मुझपर निर्भर रहते थे। इस बार वह निम्नवर्ग के लोगो की आर्थिक अवस्था सुधारने के लिए घरेलू उद्योगो की स्थापना करना चाहते थे।

वर्धा
२९-११-३४

भाई घनश्यामदास

तुम्हारा पत्र मिला।

मै कैसे कहू मुझे क्या चाहिये। जब सौ दो सौ, हजार दो हजार की बात रहती है तब तो माग लेता हूं। यह ग्राम उद्योग का बहुत बडा काम लेकर मैंने निजी हाजत बढा दी है। इसलिये मैं तो यह कह सकता हू कि दूसरा जो आवश्यक दान हो उसे बाद कर बाकी जो रहे सो मुझे दे दिया जाय।

ग्राम उद्योग का बोर्ड बनाने मे कुछ मुसीबत पैदा हो रही है। मै बोर्ड बहुत छोटा, कम से कम तीन का, ज्यादा से ज्यादा दस का, उन्ही आदमी को चाहता हू जो उद्देश्य मे पूर्ण विश्वास रखते है जो करीब-करीब अपना पूर्ण समय देवे। यह काम थोडी तकलीफ दे रही है, इसमे कुछ ख्याल रखते होगे।

उतमनजाई खान साहब की देहात है। वहा जाकर बैठने का इरादा कब से रहा है। गुरुवार के रोज दिल्ली खत भेज दिया है। जाने का कारण बताया है और पूछा है क्या कुछ हर्ज है मेरे सरहदी सूबे मे जाने मे? देखे, क्या उत्तर आता है।

आपरेशन का समय क्या निश्चय हुआ?

बापू के आशीर्वाद

: ११ :

भारतीय शासन बिल

जिस समय ब्रिटिश लोकसभा मे भारतीय शासन बिल पर विचार हो रहा था, उस समय स्वभावत सारे भारतवर्ष की दृष्टि उधर ही लगी हुई थी। इस बिल मे भारतवर्ष के लिए पूर्ण स्वतत्रता की व्यवस्था नही थी, पर गाधीजी हरिजन-आदोलन को स्वतन्त्रता की ओर बढने का एक आवश्यक उपकरण निश्चय मानकर अपना सारा ध्यान उसीपर केन्द्रित कर रहे थे। वह जानते थे कि यदि ठीक भावना से काम किया जाय तो बिल से ही लाभ होगा। इसके विपरीत कुछ काग्रेस-वादियो को इस बिल मे कोई तथ्य नही दिखाई देता था और उनका मत था कि इसे माटेग्यू ऐक्ट से भी बुरा समझकर उसका तिरस्कार करना चाहिए। अब जबकि भारत पूर्णरूप से स्वतत्र हो गया है, हम भारतवासी इस स्थिति मे है कि अतीत पर अपेक्षाकृत अधिक निष्पक्ष भाव से विचार करे और इस बात को स्वीकार करे कि भारतीय शासन बिल मे निश्चय ही वे बीज मौजूद थे जो आगे चलकर अकुरित, पुष्पित, पल्लवित होकर अन्त मे हमे हमारी मनोवाछित स्वतत्रता देने वाले थे। आज हमने अपने राष्ट्र का जो सविधान बनाया है उसमे भारतीय शासन-विधान के अनेक अगो को ले लिया गया है जिससे पता चलता है कि उसे हमारी भावी योजनाओ के साचे मे ढाला गया था।

कलकत्ता
१४ दिसम्बर १९३४

प्रिय महादेवभाई

कल यही अपने यहां मूर के साथ कोई ढाई घंटे तक बातें होती रही। श्री मुगरिज जो नये आये है, भी, उनके साथ थे। वार्तालाप का विषय आरम्भ से अन्त तक बापू थे। उन्होने योही रिपोर्ट के विषय मे मेरी सम्मति मागी। मैने कहा कि रिपोर्ट उतनी महत्वपूर्ण नही है जितना महत्वपूर्ण वर्तमान वातावरण है। मैने पारस्परिक सम्पर्क के अभाव की कडी आलोचना की। वह भी सहमत हुए, पर उन्होने कहा कि सरकारी हल्को मे सबको यही आशका है कि गांधीजी के साथ जहा किसी प्रकार का सम्पर्क स्थापित किया गया कि तरह-तरह की अटकलबाजियो को जन्म मिल जायगा। मेरे साथ उनकी जो बातचीत हुई है, वह वायसराय को बतायगे। उन्होने मुझे यह भी बताया कि अग्रेज लोग गांधीजी मे अब पहले से अधिक दिलचस्पी दिखाने लगे है। उन्होने कहा कि वायसराय से कल ही उन्होने बातचीत की थी, और वायसराय ने पूछा कि सरहद सम्बन्धी पत्रव्यवहार को बापू ने किस उद्देश्य से प्रकाशित कराया। मूर ने कहा कि बापू का उद्देश्य बिल्कुल ईमानदारी से भरा हुआ था। वह कबीले के लोगो को सविनय अवज्ञा की सलाह देना नही चाहते है। उन्होने कहा कि वायसराय तो उनके दृष्टिकोण से सहमत हो भी जाते, पर एक वर्ग ऐसा भी है जिसका विश्वास है कि गांधीजी को समझना कठिन है, उनकी हर एक बात मे चाल रहती है। बहुतो की धारणा है कि वह सरकार के खिलाफ नये सिरे से आन्दोलन आरम्भ करने के मौके की तलाश मे है। उन्होने यह भी कहा कि वायसराय को जो दूसरा पत्र लिखा गया था उसमे सविनय अवज्ञा की धमकी देना ठीक नही हुआ। मुझे जो कुछ मालूम हो सका है उससे तो मै इसी नतीजे पर पहुचा हू कि काफी गलतफहमी मौजूद है। यह गलतफहमी दूर हो जायगी, पर समय लगेगा। खबर है कि सीमाप्रान्त के गवर्नर कनिंघम को, जो बापू को जानता है, आशका है कि बापू के आगमनसे सरहद मे उत्तेजना फैल जायगी और इससे वहा की सरकार को परेशानी होगी। मुझे मूर ने बताया कि बगाल के गवर्नर बापू से मिलने को बडे उत्सुक थे, पर किसी-न-किसी कारण से मुलाकात न हो सकी। उन्होने मुझसे पूछा कि क्या बापू कलकत्ता आ रहे है, जिसका अभिप्राय यह था कि यदि वह आवे तो मुलाकात करा दी जाय। मैने उत्तर दिया कि बापू को बगाल मे कुछ करना नही है, इसलिए वह बगाल नही जायगे, पर यदि अधिकारी उनसे मिलना चाहे तो बात दूसरी है।

मेरी धारणा है कि उनके ऊपर जो प्रतिबंध लगाया गया है उसका एक कारण अविश्वास है, साथ ही यह भी आशंका है कि उनकी सरहद यात्रा से सरकार को परेशानी होगी। मैं समझता हूं कि इस अविश्वास का निवारण बहुत जरूरी है, और निवारण होगा भी। मुझे यह भी मालूम हुआ है कि विलिंगडन बापू के प्रति विरोध की भावना से उतने प्रेरित नहीं है, जितने अविश्वास की भावना से। इन लोगों के लिए सत्याग्रह का मर्म समझना बड़ा कठिन है। मूर ने कहा कि बापू के उपवास को तो सत्याग्रह कहा जा सकता है, पर और जो कुछ हुआ उसे तो सत्याग्रह न कहकर हिंसा कहना ही ठीक होगा। वह तो अतिशयोक्ति से काम ले रहे थे, पर इसमें भी कोई सदेह नहीं है कि जनता ने जो कुछ किया उसे सत्याग्रह किसी प्रकार नहीं कहा जा सकता है।

मैंने यह भी देखा है कि एंड्रयूज आदि व्यक्तियों के प्रति इन लोगों की भावना में कोमलता की प्रचुरता नहीं है। उनके बुद्धि-विवेक के सम्बन्ध में तो उनकी धारणा बड़ी हीन है ही, साथ ही इन लोगों में उनके प्रति एक ऐसी कुत्सा-सी है, जिसका पता मुझे अभी लगा है।

आपका
घनश्यामदास

१ फरवरी १९३५

परमपूज्य बापू

आपके विदा होने के तुरन्त बाद ही होम मेम्बर और वायसराय के साथ मेरी मुलाकात हुई। इस पत्र के साथ उस मुलाकात का ब्यौरा भेज रहा हूँ। मैं शब्दचित्र खींचने में पटु नहीं हूं, विशेषकर अंग्रेजी के शब्दचित्र, इसलिए मैं यह नहीं कह सकता कि इससे आपको सही अंदाजा हो सकेगा या नहीं। पर मैं इस ब्यौरे के पूरकस्वरूप यह तो कह ही दूं कि होम मेम्बर के साथ जो मुलाकात हुई उसके दौरान में अधिकतर मैं ही बोलता रहा, जबकि वायसराय वाली मुलाकात में अधिकतर वही बोलते रहे। होम मेम्बर बड़ी सहृदयता से पेश आया। कोई तीक्ष्ण बुद्धि तो नहीं है, पर वैसे वह बड़ा स्पष्टवादी है। उसे शासनपटु कहा जा सकता है। यदि आप उसके अनुदार होने का अंदाजा लगाना चाहें तो लगा सकते हैं, पर यदि वह अनुदार है तो ईमानदार ढंग का अनुदार है। इसके विपरीत वायसराय ने उस ढंग का आचरण नहीं किया जिस ढंग का पहली मुलाकातों में किया था। कांग्रेसियोंने अपने नाम नहीं लिखे, इससे उसके दिलको सचमुच ही चोट पहुंची है। पता नहीं, भूलाभाई इस मामले में अन्य कांग्रेसी सदस्यों

की बात छोडकर स्वय अपनी स्थिति पर पुन विचार करने को तैयार होगे या नही। आप स्वय भी तो सविनय अवज्ञा आन्दोलन के सम्बन्ध मे पत्र लिखने का विचार कर रहे थे। उसी प्रकार भूलाभाई भी प्राइवेट सेक्रेटरी को लिखकर आश्वासन दे सकते है कि उनका किसी प्रकार का व्यक्तिगत अपमान करने का उद्देश्य नही था। इसके बाद आवश्यकता होने पर वह अपना नाम लिख सकते है, क्योकि पहले नाम न लिखना अपमान-जनक समझा गया था। मै कम-से-कम बगाल के गवर्नर के साथ तो एक बार फिर बात करूगा ही। इसके बाद मै घटनाओ को स्वय अपनी रूपरेखा निश्चित करने के लिए छोड दूगा। इसमे थोडा समय तो अवश्य लगेगा, पर मेरी धारणा है कि यदि धैर्य से काम लिया गया तो बहुत-सी बाते स्वत ही समय पर हो जायगी। जब उचित समझे, मुझे लिख सकते है। होम मेम्बर कम-से कम वल्लभभाई से तो भेट करेगे ही, सो अच्छा ही है।

विनीत

घनश्यामदास

१५ फरवरी १९३५

परमपूज्य बापू

इस पत्र के साथ सर सेम्युअल होर के अभी आये हुए पत्र की नकल, मेरे उत्तर की नकल तथा बगाल के गवर्नर के साथ मेरी मुलाकात का ब्यौरा भेज रहा हूँ। अब गवर्नर निश्चित रूप से कह रहे है कि बिल पास हो जाने के बाद ऐसी बातो को लेकर मित्रता का हाथ बढाया जायगा, जिनपर दोनो पक्ष सहमत है। आपने भी यही कहा था कि यदि वे लोग कुछ करेगे तो बिल पास होने के बाद ही करेगे। यह अटकल लगाना तो बेकार है कि लोग क्या करेगे, पर फिलहाल यह सतोप की बात है कि उन लोगो ने कोई योजना बना रखी है। सर सेम्युअल होर का पत्र भी उतना ही स्पष्टवादिता और सहृदयतापूर्ण है, पर यह स्पष्ट है कि जितना परिस्थितियो के अनुरूप उनके लिए कहना सम्भव है वह उससे अधिक नही कहना चाहते है। मुझे गवर्नर ने जो बात बताई है सर सेम्युअल होर उसे ध्यान मे रख सकते है। बिल पास होने के बाद काग्रेसवादियो के लिए समझोता करना कठिन होगा, पर हमे आशा करनी चाहिए कि ठीक समय पर आपकी सूझ हमारी सहायता करेगी। इस पत्र को पढने के बाद लिखिये कि स्थिति के सम्बन्ध मे आपका क्या विचार है और यह भी बताइये कि मुझे क्या करना है।

शायद वल्लभभाई और सर हेनरी क्रेक के बीच मे एक और मुलाकात हो। मुलाकात मेरे यहा भी हो सकती है और भूलाभाई और होम मेम्बर

द्वारा निश्चित किये गये किसी आम स्थान पर भी। होम मेम्बर ने इच्छा प्रकट की है कि उसे वल्लभभाई के आगमन की सूचना दे दी जाय। इसलिए कल सुबह भूलाभाई उनसे बात करेंगे और यदि वल्लभभाई ने बातचीत करने की इच्छा प्रकट की तो बातचीत का समय निश्चित कर लेंगे।

आप होम मेम्बर को लिखें या न लिखें, इस असमंजस के सम्बन्ध में मेरा कहना यही है कि जबतक मामला एक-न-एक प्रकार से तय नहीं हो जाता तबतक लिखने में कोई लाभ नहीं है। फिलहाल तो भूलाभाई के मुलाकाती रजिस्टर में अपना नाम लिखने का प्रश्न ही नहीं उठता है, पर यदि दूसरा पक्ष निश्चित रूपसे कहे कि एकमात्र यही अड़चन है तो, जैसा कि मुझे बताया गया है, इस सम्बन्ध में कोई कठिनाई नहीं होगी। परन्तु जब वातावरण में परिवर्तन होगा तो ऐसी छोटी-छोटी बातों का महत्व बिलकुल जाता रहेगा।

मैं अपने इस विचार पर कायम हूं और मित्रों के साथ बातचीत करने के बाद मेरा यह विचार और भी दृढ़ हो गया है कि प्रस्तावित शासन-विधान मान्टेग्यू सुधारों से गया-बीता नहीं है। उसे उससे भी बुरा और अत्याचार-पूर्ण रूप दिया जा सकता है, पर साथ ही उसे अच्छा रूप भी देना सम्भव है। इसलिए मेरा आपसे यही अनुरोध है कि आप संधि का द्वार बन्द न करें। यदि आपके साथ समझौता न हुआ तब तो योजना रद्द हुई रखी है। पर उस समय तक के लिए दरवाजा खुला रखना क्या ठीक न रहेगा?

अच्छा, तो अब मेरे जाने के सम्बन्ध में क्या रहा? गवर्नर के साथ बात करने के बाद से तो मेरी जाने की इच्छा हो रही है, पर अन्तिम निश्चय तो आप ही करेंगे।

साम्प्रदायिक समझौते के बारे में राजेन्द्रबाबू ने एक फार्मूला तैयार किया है जिसे जिन्ना ने मान लिया है। इस फार्मूले का आधार संयुक्त निर्वाचन है। सीटें उतनी ही रहेंगी और वोट देने के अधिकार की व्यवस्था इस प्रकार रखी गई है जिससे विभिन्न इलाकों की दोनों जातियों के संख्या-सम्बन्धी परिमाण का ठीक-ठीक अन्दाजा लगाया जा सके। वह मेरे साथ निकट सम्पर्क बनाये हुए हैं और मैंने उन्हें सलाह दी है कि बंगाल के सम्बन्ध में बातचीत करने के लिए कलकत्ता जाने के बजाय रामानन्द चटर्जी और जे० एन० बसु को यहीं बुला लिया जाय। बंगाल का वातावरण ठीक नहीं है, इसलिए दिल्ली को ही बातचीत का केन्द्र रखना ठीक है। पर असली अड़चन सिखों को लेकर होगी। पंजाब तक के हिन्दुओं को राजी करना सम्भव है। पर काम कठिन अवश्य है। मुझे आशंका है कि हमेशा की तरह इस बार भी मालवीयजी से सहायता नहीं मिलेगी।

यदि मैने किसी मामले मे गलती कर दी हो तो कृपया भूल सुधार कर दीजिये। मै इस क्षेत्र मे नौसिखुआ हू, पर वैसे मै आपके विचारो और तर्कवुद्धि से भली-भाति परिचित हू।

विनीत
घनश्यामदास

मालवीयजी का इस विल मे दिलचस्पी लेना स्वाभाविक ही था। हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न को दृष्टि मे रखते हुए मताधिकार के बारे मे उनके अपने निश्चित विचार थे। अपने कट्टर हिन्दूपन और जात-पात के प्रति अनुराग के कारण उन्होने गाधीजी के हरिजन आन्दोलन को पसन्द नही किया। उनके इन विचारो के कारण और भी दूसरी कठिनाइया सामने आई, जिनकी चर्चा मैने महादेव देसाई के नाम गाधीजी के लिए भेजे गये अपने २७ फरवरी के पत्र मे की

पडितजी आज विदा हो गये है। हस्वमामूल वह न तो घोर सम्प्रदायवादियो से सहमत है, न जिन्ना-राजेन्द्रप्रसाद-फार्मूला से। उन्होने मुझे कई सुझाव वताये है, पर उनकी चर्चा करने से कोई लाभ नही है, क्योकि मै जानता हू कि अत मे हमे काग्रेस-लीग समझौते का आश्रय लेना ही पडेगा। अव तो यह वात निश्चित-सी होती जा रही है कि पडितजी इग्लैड जायगे। वास्तव मे वम्वई के लिए रवाना होने से पहले उन्होने मुझे निश्चयात्मक रूप से वताया कि वह १५ मार्च को रवाना हो रहे है।

मेरे ये दिन परेशानी मे कटे। पडितजी वरावर 'हिन्दुस्तान टाइम्स' की नीति वाली वात पर जोर देते रहे और कहते रहे कि मुझे पत्र को सोलह आने उन्हीके हाथ मे छोड देना चाहिए। उन्होने तो यहा तक कहा कि यदि मुझे उनकी नीति पसन्द नही है तो मै त्यागपत्र दे सकता हू। मै उनका सुझाव स्वीकार करने मे असमर्थ था, क्योकि सवाल सिर्फ मेरे ही इस्तीफा देने का नही था, वल्कि पारसनाथ और देवदास दोनो ही मेरा अनुकरण करते, जिसके फलस्वरूप सकट आया ही रखा था। परिणामस्वरूप पत्र नष्ट हो जाता। अतएव मैने निश्चयात्मक रूप से कहा 'नही', और वताया कि सारा मामला डाइरेक्टरो और शेयर होल्डरो के सामने पेश किया जाय। इससे पडितजी कुछ समय तक क्षुव्ध रहे, पर अत मे पत्र द्वारा तटस्थ नीति वरते जाने पर राजी हो गये। इस प्रकार अव 'हिन्दुस्तान टाइम्स' न पडितजी के खिलाफ ही टीका-टिप्पणी करेगा, न पक्ष मे ही। मेरी समझ मे वर्तमान परिस्थिति मे यही सवसे अच्छा उपाय रहा। मैने वोर्ड से हटाकर उन्हे दुखी नही करना चाहा।

: १२ :

संकट-काल

उधर ब्रिटिश पार्लमेंट मे भारतीय शासन विधान मथर गति से पास हो रहा था, इधर उसे लेकर भारत और इगलैंड मे विचार-विमर्श का सिलसिला जारी था। यह सिलसिला बिल के पास हो जाने के बाद भी बना रहा। इस विचार-विमर्श के शुरू के दौर मे आर्थर मूर ने मुझे बताया कि सी० एफ० एड्रयूज के सम्बन्ध मे उनके देशवासियो की धारणा कुछ विशेप अच्छी नही है। मेरी धारणा वैसी नही थी और मै उनकी साधु प्रकृति और नेकनीयती पर तनिक भी सदेह करने को तैयार नही था। पर उनमे ये गुण शायद उनकी बुद्धि की अपेक्षा अधिक परिमाण मे थे, जिसके कारण वह अग्रेजो की निगाह मे व्यर्थ ही टाग अडानेवाले जचने लगे थे। फलत उन्हे मध्यस्थता के काम मे सफलता प्राप्त नही हुई। एक बात और थी। उनका अपना चरित्र बहुत ही अच्छा था और उसके आधार पर उनका आत्मविश्वास क्षन्तव्य भी माना जाता, पर विचित्र बात यह थी कि वह दूसरे की छाया को छोडकर अपना निजी अस्तित्व कायम रखने मे असमर्थ थे। यही कारण था कि कभी उनमे गाधीजी के प्रति भक्ति की भावना जोर पकडती, कभी कवीन्द्र रवीन्द्र के प्रति उतनी ही प्रबल आसक्ति। रवीन्द्रबाबू को तो वह हमेशा 'गुरुदेव' के नाम से पुकारा करते थे।

वर्धा
१६-१२-३४

प्रिय घनश्यामदासजी

मूर के साथ आपकी बातचीत के अत्यत रोचक वर्णन का पत्र प्राप्त हुआ। तदर्थ धन्यवाद। आप जो कहते है सो तो ठीक है, परतु इस सन्देह का निवारण कैसे हो ? सी०एफ० ए० जैसे मध्यस्थो के द्वारा तो यह सम्भव नही है, क्योकि उनके सम्बन्ध मे उच्च पदस्थ व्यक्तियो की तुच्छ धारणा है। यह तो केवल उन्ही लोगो के द्वारा सम्भव है जो बापू को अच्छी तरह जानते हो और दूसरे पक्ष मे भी भलीभाति परिचित हो और उनके विश्वास-भाजन हो। परतु यह दुर्भाग्य की बात है कि जो लोग इस गणना मे आते है उनमे से अधिकाश भीरु है और उन्हे धमकाया या नीचा दिखाया जा सकता है।

सी०एफ०ए० दिल्ली होम सेक्रेटरी और होम मेम्बर से मिलने गये थे। वह दोनो से मिलने मे सफल हुए या एक से, पता नही। वह अपने स्वभावसिद्ध भ्रामक ढग के तार भेजते है "लम्बी मुलाकात हुई। आया, अच्छा ही हुआ। विवरण लिख रहा हू। अपने कार्यक्रम का तार भेजिये।" इसके बाद दूसरा तार आया जिसमे उन्होने कहा, "कल पहुच रहा हू।" ऐसा मालूम होता है कि हमेशा की तरह इस बार भी वह कुछ नही कर सके है, परतु देखे। मै आपको सूचना दे दूगा।

सप्रेम,

आपका ही
महादेव

जिस दिन महादेवभाई ने यह पत्र लिखा उस दिन मै स्वय भी अपने नीचे लिखे पत्र मे भारतमत्री के सामने भारतीय दृष्टिकोण पेश करने की चेष्टा कर रहा था।

कलकत्ता
१६ दिसम्बर, १९३४

प्रिय सर सेम्युअल होर

मै यह पत्र सयुक्त प्रवर समिति की रिपोर्ट को ध्यानपूर्वक पढने और कामन्स सभा मे दी गई आपकी सुन्दर स्पीच का अवलोकन करने के बाद ही लिख रहा हू।

मै पत्र कुछ हिचकिचाहट के साथ लिख रहा हू, क्योकि मै जानता हू कि प्राय मेरा और आपका दृष्टिकोण एक नही होता है। पर मै आपका आदर करता हू और जिन क्षेत्रो मे आपके प्रयासो के गलत मानी लगाये जाते

हैं उनमें उन्हें मैत्रीपूर्ण प्रकाश में पेश करता हूं। इसलिए मैं अपने हृदय के भावों को आपके सामने रखने का अधिकार-सा समझने लगा हूं और इस प्रेरणा को दबाना ठीक नहीं समझता हूं।

मुझे रिपोर्ट के सम्बन्ध में कुछ नहीं कहना है। आपने पार्लमेंट में ठीक ही कहा है कि भारत में उसके द्वारा इनेगिने आदमी सन्तुष्ट हुए हों तो हुए हों। इधर मेरे कानों में आपके वे शब्द गूंज रहे हैं जो आपने मेरी अंतिम मुलाकात के मौके पर कहे थे "भारतसचिव चाहे कितने ही उन्मूलक विचारों वाला हो, वर्तमान पार्लमेंट में वह एक खास हद तक ही आगे बढ़ सकता है।" मैं मानता हूं कि वर्तमान पार्लमेंट में संयुक्त प्रवर समिति द्वारा की गई सिफारिशों में बहुत आगे बढ़ना शायद सम्भव नहीं होगा, पर मैं तो स्थिति को बिल्कुल दूसरे ही दृष्टिकोण से देख रहा हूं।

जिस योजना की सिफारिश की गई है मैं उसकी तुलना व्यापारिक फर्मों में दिये जाने वाले मुख्तारनामों से करता हूं। हम लोग आवश्यकतानुसार अपने मैनेजरों और मातहतों को मुख्तारआम और मुख्तारखास के अधिकार देते हैं। हम वे अधिकार छीन भी सकते हैं और यदि उनपर से हमारा विश्वास उठ गया हो तो उन्हें बर्खास्त तक कर सकते हैं। पर मेरी फर्म में तथा और बहुत-सी फर्मों में, इस प्रकार अधिकार छीनने और बर्खास्त करने के मौके शायद ही कभी आते हों। यह व्यवस्था बड़ी सफल सिद्ध हुई है, क्योंकि मालिक मैनेजर पर विश्वास करता है और मैनेजर मालिक पर, और दोनों एक ही लक्ष्य की सिद्धि के लिए काम करते हैं। इसका अर्थ यह है कि पारस्परिक विश्वास और एकसमान लक्ष्य मुख्तारनामे के विषय में अधिक महत्वपूर्ण है। जहां तक हमारा सम्बन्ध है, मैं समझता हूं कि हम सभी का लक्ष्य सोलह आने उत्तरदायित्वपूर्ण सरकार है। इस लक्ष्य की दिशा में उठाया गया पहला कदम मामूली सुधार भी हो सकता है और भारी सुधार भी। पर अभीष्ट की सिद्धि के लिए जो चीज सबसे अधिक आवश्यक है, वह है पारस्परिक विश्वास, सद्भावना, सहानुभूति और पारस्परिक अवबोध। क्या हम कह सकते हैं कि ये इस समय भारत में मौजूद हैं? मैं किसी दल को दोष नहीं दे रहा हूं, पर मेरे मन के भाव यही हैं कि चूंकि सरकार शासक दल है, इसलिए उसीको वैसी अवस्था को जन्म देना है।

मैं आपसे अनुरोध करूंगा कि आप इस घटनाक्रम के मनोविज्ञान का विश्लेषण करें, क्योंकि योजना में संशोधन करने के बजाय उसके रद्द किये जाने की जो बात सुनाई पड़ रही है उसका कारण उसकी त्रुटियां नहीं, बल्कि यह घटनाक्रम ही है।

गाधी-इर्विन पैक्ट ने स्वीकार किया था कि

१ केन्द्र उत्तरदायित्वपूर्ण हो।

२ सघ सरकार बने।

३ जो आरक्षण और अभिरक्षण हो वे स्पष्टतया ही भारत के हितमे हो।

यह स्पष्ट है कि पैक्ट पर हस्ताक्षर करने वाले व्यक्तियो के द्वारा यह बात मान ली गई थी कि अन्तिम लक्ष्य चाहे जो हो, अतरिम समय के लिए उनका रहना जरूरी है। जो लोग स्वतन्त्रता की बात करते थे—और इस शब्द के भिन्न-भिन्न व्यक्ति भिन्न-भिन्न अर्थ लगाते थे—वे भी आरक्षणो को अतरिम समय के लिए पूर्ण और सोलहो आने उत्तरदायित्वपूर्ण सरकार वाले अतिम लक्ष्य का विरोधी नही समझते थे। क्या इसका कारण यह नही था कि इस समय जिस वैयक्तिक नाते का अभाव है, वह उस गाधी-इर्विन पैक्ट मे मौजूद था? आपने साझेदारी की भावना पर जोर दिया सो ठीक ही किया, पर जबतक वह पारस्परिक सम्पर्क स्थापित नही होता जिसके द्वारा दोनो देशो मे पारस्परिक अवबोध और विश्वास हो सकता है तबतक उस साझेदारी को प्रकृत रूप कैसे दिया जा सकता है? क्या मै यह निवेदन कर सकता हू कि प्रगति की मात्रा नही, उसका ढग ही असली चीज है? माटेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधारो को एक दुर्भाग्यपूर्ण वातावरण मे अमल मे लाया गया था और मुझे आशा है कि उसकी पुनरावृत्ति नही की जायगी।

यह न जानते हुए भी कि आपकी निगाह मे मेरी क्या साख है मैने यह सब इसलिए लिखने का साहस किया कि मै दोनो देशो के बीच मैत्री और शान्ति का सम्बन्ध स्थापित होते देखना चाहता हू, और इस दिशा मे विनम्र ढग से बराबर काम भी करता जा रहा हू।

सदाकाक्षाओ के साथ,

मै हू
आपका
जी० डी० बिडला

साथ ही मैने बगाल के गवर्नर से भी भेट की जिसका विवरण मैने बापू की जानकारी के लिए महादेव देसाई के नाम अपने इस पत्र मे दिया

कलकत्ता,
१८ दिसम्बर, १९३४

मूर से मिलने के बाद मै गवर्नर से मिला और उसी विषय पर चर्चा की। वह मुझसे सहमत तो हुए, पर साथ ही उन्होने अपनी असमर्थता

प्रकट करते हुए कहा, "आप वायसराय से क्यों नहीं मिलते ?" मैंने कहा "वायसराय के लिये तो मैं अछूत जैसा हूं ।" इस पर वह बोले" "आप उनसे गत वर्ष तो मिले थे ?" मैंने कहा, "नहीं।" मैंने उनसे कहा कि मैं वायसराय से तभी मिल सकता हूं जब इस विषय पर बात करने का उनकी ओर से बढ़ावा मिले, पर यदि वह समझें कि मैं ख्वामख्वाह टांग अड़ाता फिरता हूं और अपना कोई स्वार्थ सिद्ध करना चाहता हूं, तो मेरा जाना ठीक नहीं है। उन्होंने कहा कि यदि वायसराय समझेंगे कि आप गांधी के दूत बनकर आये हैं तो उन्हें बातचीत करने में हिचकिचाहट होगी। मैंने उत्तर दिया, "मैं किसी का दूत नहीं हूं, और जहां तक मुझे मालूम है, गांधीजी ने किसी को अपना दूत नियुक्त नहीं किया है।" उन्होंने मेरी नेकनीयती में पूरा विश्वास प्रकट करते हुए कहा, "वायसराय से बात करके देखूंगा और यदि उनसे भेंट करने में कोई लाभ दिखाई देगा तो आपको लिखूंगा।" उन्होंने मुझसे पूछा "अभी कलकत्ते में ही रहेंगे ?" मैंने उत्तर दिया, "हां।" मेरी धारणा है कि सी० एफ० ए० का उनसे मिलना निरर्थक होगा। कहना तो यह चाहिए कि वह बना-बनाया खेल बिगाड़ देंगे।

मैं इन लोगों के साथ घनिष्टता बढ़ाना चाहता हूं, जिससे बापू का प्रतिनिधित्व अच्छी तरह किया जा सके। ऐसा किया भी जा सकता था, पर इसके लिए अनुकूल अवसर दिखाई नहीं देता है। यदि मैं व्यवस्थापिका सभा में होता तो बात दूसरी होती। पर इस समय तो मैं अपने निजी ढंग से काम कर रहा हूं और स्थिति को अपने ही ढंग से चलने देना चाहता हूं।

एक सप्ताह भर सोच में पड़े रहने के बाद मैंने कल यह निश्चय किया कि मैं इसी ढंग से सेम्युअल होर को भी लिखूं। मैं समझता हूं कि मौजूदा हालत में सरकार के लिए यह सम्भव नहीं कि वह बापू के साथ विधान-सम्बन्धी मामलों पर बातचीत शुरू करे और इसलिए मैं इस बात पर जोर नहीं दे रहा हूं। मैं तो केवल इस बात पर जोर दे रहा हूं कि वे लोग बापू को समझें और उनके व्यक्तिगत सम्पर्क में आवें। मेरे विचार में ऐसा करने से बाकी सब गुत्थियां अपने आप सुलझ जायंगी। बापू और सरकार के बीच केवल बापू ही मध्यस्थ बन सकते हैं।

संयुक्त प्रवर समिति की रिपोर्ट में कुछ नहीं रखा है। उसकी सिफारिशों का मतलब केवल इतना ही है कि स्वामी अपने नौकर को ऐसे अधिकार सौंपे जो इच्छानुसार छीने जा सकें। पर यदि सरकार और बापू के बीच उचित समझौता हो जाय तो यह बात भी हमें स्वराज्य के निकट ले जा सकती

है और कुछ समय के वाद वेहतर विधान प्राप्त करने मे हमारी सहायक हो सकती है। इसलिए वापू जिसे हृदय-परिवर्तन कहते है, उसे मै वैधानिक मामले की अपेक्षा अधिक महत्व देता हू।

मैने वडे विश्वस्त सूत्र से सुना है कि वायसराय भवन मे यह वडी जवर्दस्त धारणा है कि वापू गावो मे यह सारा सगठन कार्य इसीलिए चालू कर रहे है कि वाद मे सविनय अवज्ञा के आन्दोलन मे गावो के लोगोको भी सम्मिलित कर सके।

मुझे यह जानकर खुशी हुई है कि वापू केवल मेरी खातिर नही आ रहे है। यदि ऐसा होता तो मुझे वडा सकोच होता। अब कुछ दिन उनके ससर्ग का आनन्द लेने की आशा है, पर क्या लोग उन्हे शाति से रहने देगे?

राजाजी को भ्रम हो गया कि मै वीमार हू। उन्होने मुझे मेरे स्वास्थ्य के वारे मे एक पत्र लिखा और मैने निम्नलिखित उत्तर दिया

कलकत्ता
२० सितम्वर, १९३४

प्रिय राजाजी

आपके पत्र के लिए धन्यवाद।

मै थोडे या वहुत समय के लिए खाट पर विल्कुल नही पडा। हा, तीन-चार दिन तक आराम जरूर किया, पर मुझे अपने घर मे घूमने-फिरने की पूरी आजादी थी। मुझे आफिस या कलकत्ते के वाहर नही जाने दिया गया, क्योकि डाक्टरो को भय था कि कोई रोग न घेर ले।

आपके दिल्ली जाने की खवर सुनी और सयुक्त प्रवर समिति की रिपोर्ट पर आपकी प्रेस मुलाकात भी पढी। मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि आपने उसे वर्तमान शासन-व्यवस्था से भी गया-वीता वताया। मै तो समझे वैठा था कि हम दोनो इस मामले मे सहमत है कि उसकी सारी वुराइयो को ध्यान मे रखते हुए भी वह वर्तमान शासन-व्यवस्था से वुरी नही है। हो सकता है, आपकी स्पीच की गलत रिपोर्ट ली गई हो। मेरी अपनी राय तो यह है कि इस समय जिस चीज की सवसे अधिक आवश्यकता है, और जो सम्भव भी है, वह वैधानिक परिवर्तन नही, वल्कि वर्तमान वातावरण मे परिवर्तन है। यदि दोनो ओर का वातावरण

मैत्रीपूर्ण हो और ब्रिटेन की ओर से सद्भावना प्रकट की जाय तो असतोप-जनक होते हुए भी वर्तमान शासन-व्यवस्था अच्छी तरह अमल मे लाई जा सकती है। पर यदि वातावरण मे सुधार नही हुआ तो इससे भी अच्छी शासन-व्यवस्था को अमल में नही लाया जा सकता। अतएव मै तो इस बात की अपेक्षा कि कितनी प्रगति हुई, वातावरण को अधिक महत्व देता हू।

अगाथा का कहना है कि आपको लदन जाना चाहिए। स्वय मेरी राय भी यही है कि अच्छे-से-अच्छे इरादे लेकर इधर-उधर फिरने और कुछ हासिल न कर सकने वाले श्री एण्ड्रयूज की अपेक्षा आपका और वल्लभभाई का लदन जाना कही अच्छा रहेगा। इस समय श्री एण्ड्रयूज मेरे पास ही है, और कल वायसराय से मिल रहे है। वायसराय से मिलने के लिए भूलाभाई सबसे उपयुक्त है, और अब तो उन्हे वैधानिक मर्यादा भी प्राप्त है, इसलिए उनके जाने से कुछ लाभ भी निकलेगा।

आशा है, लक्ष्मी और बच्ची दोनो सकुशल है। देवदास भी एक दूसरे तुषार कान्ति होते जा रहे है, जो दिन भर 'पत्रिका' के लिए परिश्रम करते है और रात को उसके स्वप्न देखते है।

आपका
घनश्यामदास

सर सेम्युअल का उत्तर नए वर्ष के बिलकुल शुरू मे आया। उसपर ४ जनवरी, १९३५ की तारीख पडी हुई है

(निजी)
प्रिय श्री बिडला

मुझे फिर से आपका पत्र पाकर खुशी हुई। मेरे भाषण के बारे मे आपने जो कुछ लिखा है उसके लिए अनेक धन्यवाद। विधान के सवाल पर आपकी और मेरी राय एक नही है। फिर भी यह अच्छी बात है कि हम एक-दूसरे के दृष्टिकोण को समझ ले। यह तो स्पष्ट ही है कि आपके विचार मे सरक्षणो की बात प्रमुख है। यहा हम लोगो को बडी बात यह मालूम देती है कि स्वराज्य का क्षेत्र कितना विस्तीर्ण हो रहा है। कठिनाई की—बहुत बडी कठिनाई की—बात यह है कि लोगो को यह कैसे समझाया जाय कि सरक्षण काफी ठोस है। और वे सचमुच के सरक्षण है, केवल कागजी नही। यहा कुछ आदमी ऐसे है जो यह मानने को कभी

तैयार न होगे, पर मै समझता हू कि ऐसे समझदार लोगो की सख्या अब बहुत अधिक हो गई है जो इस बात पर विश्वास करने लगे है। ये वे लोग है जो सारी समस्या पर गम्भीरता के साथ विचार करते है और इस बात के लिए उत्सुक है कि भारत के साथ उचित व्यवहार किया जाय। हमारी चेष्टाओ के फलस्वरूप आजकल यहा जो लोकमत तैयार हुआ है उसे अभी पिछले दिनो हमारे एक चोटी के राजनीतिक लेखक ने इन शब्दो मे व्यक्त किया "जहा एक ओर हमने स्वतत्र सस्थाए प्रदान की है, वहा सरक्षणो के रूप मे भारत मे ब्रिटिश राज्य-सम्बन्धी एक नई भावना की रूपरेखा तैयार हो रही है। हम आजादी देने के साथ-ही-साथ उसके खतरो का बीमा भी कर रहे है।" मुझे उम्मीद है कि आप व्यापारिक भाषा मे व्यक्त किये गए इन अतिम शब्दो को पसन्द करेगे। मै चाहता हू कि आप और आपके मित्र इस मामले को इसी दृष्टिकोण से देखे। यहा की आम भावना सोच-समझकर काम करने की है। आप शायद इसे सतर्कता कहेगे, किन्तु निश्चय ही इसमे अनुदारता की भावना का समावेश नही है। यह बात भारत के कुछ लोग नही समझ रहे है, लेकिन मुझे अब भी उम्मीद है कि यह सबकुछ आपको जैसा प्रतीत हो रहा है, अन्त मे वह उससे अच्छा सिद्ध होगा।

आपका
सेम्युअल होर

इस पत्र को पाते ही मैने फिर लिखा

१९ जनवरी, १९३५

प्रिय सर सेम्युअल होर

आपके ४ जनवरी के पत्र के लिए धन्यवाद। मुझे ऐसा लगता है कि अपने पिछले पत्र मे मै अपने को पूरी तरह स्पष्ट नही कर पाया, नही तो आप यह न कहते कि मेरे चित्त मे सरक्षण की बात ही सबसे मुख्य है। मै सरक्षणो से बिल्कुल भयभीत नही हू। भारत के हित मे भी कुछ-न-कुछ सरक्षण की तो आवश्यकता होगी ही, पर मै यह नही कह सकता कि रिपोर्ट मे जिन सरक्षणो की व्यवस्था की गई है वे भारत के लिए हितकर है। इसके अतिरिक्त रिपोर्ट मे इसका कोई भी उल्लेख नही है कि अतिम लक्ष्य की ओर अगला कदम क्या होगा। यह कोई साधारण त्रुटि नही है। फिर भी मै जानता हू—और मैने अपने पिछले पत्र मे भी माना था—कि आपकी अपनी कठिनाइया है। मै यह भी मानता हू कि अब जबकि

पासा फेंका जा चुका है, मेरा आपसे यह कहना कि आप अपनी योजनाओं में भारतवासियों के मत के अनुकूल परिवर्तन कर दें शायद तथ्य की ओर से आंखें बन्द करने के समान होगा। इसलिए अपने पिछले पत्र में मैंने आपसे जो बात कहनी चाही थी वह यह थी कि संरक्षणों का रूप चाहे कुछ भी हो, उनके पीछे यदि सच्ची सहानुभूति और सद्भावना होगी तो उनसे प्रगति में बाधा नहीं पड़ेगी। मैं आपका यह कथन स्वीकार करने को तैयार हूं कि योजना में अनुदारता की नहीं, बल्कि सोच-समझकर काम करने की भावना है। पर क्या आप यह नहीं चाहेंगे कि भारतवर्ष के सभी अच्छे व्यक्ति आपसे सहमत हों और कह उठें, "विधान वैसा तो नहीं है जैसा हम चाहते हैं, फिर भी निर्माण के उद्देश्य को सामने रखकर हम इसे पूरी ईमानदारी के साथ चलाने की चेष्टा करेंगे, क्योंकि लिखित रूप में जिस वस्तु का अभाव रह गया है उसकी पूर्ति भावना के द्वारा हो जायगी।" मैं चाहता हूं कि आपके शासन-कार्य में जो नये साझी बनने वाले हैं (अर्थात् भारतवासी) उन्हें उनके ब्रिटिश साझी स्वयं यह विश्वास दिलावें कि वे भारत के साथ न्याय करना चाहते हैं और इस मामले में उदारता की कमी नहीं है। मैं ये बातें अनिश्चित विचारों वाले लोगों की तरह नहीं लिख रहा हूं, बल्कि एक ऐसे व्यवहारी, कामकाजी व्यक्ति की हैसियत से लिख रहा हूं, जिसे इस बात का विश्वास है कि सद्भावना मौजूद रहेगी तो यह काम पूरा हो सकता है और अवश्य पूरा होना चाहिए। कभी-कभी तो मैं यह महसूस करता हूं कि मैं लंदन जाकर और आपसे मिलकर आपसे भी अपना यह दृष्टिकोण मनवाऊं कि पारस्परिक सद्भावना से बुरे संरक्षण भी खतरों के लिए बीमे का काम कर सकते हैं, जबकि मानवीय भावनाओं के अभाव में अच्छे संरक्षण भी शांति और सहज कार्य-संचालन के मार्ग में बाधक सिद्ध होंगे।

मैंने यह सबकुछ आपके पिछले पत्र की स्पष्टवादिता से प्रोत्साहित होकर ही लिखा है और मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि मित्रता की भावना उत्पन्न करने के लिए आप जो भी कदम उठायेंगे उसमें आपको मेरा पूरा सहयोग मिलेगा। इस भावना का भारतवर्ष के आजकल के वातावरण में अभाव-सा है। भाग्य ने दोनों देशों को एक साथ बांध दिया है, इसलिए यह भावना नितान्त आवश्यक है।

आपका
जी० डी० बिड़ला

पिछले अध्याय मे मैंने होम मेम्बर सर हैनरी क्रेक के साथ ३० जून, सन् १९३५ को की गई अपनी मुलाकात की चर्चा की थी। इस बात का दृष्टात देने के लिए कि व्यक्तिगत सम्पर्क के महत्व मे मेरा कितना दृढ विश्वास रहा है और किस प्रकार मै हर सम्भव अवसर पर इसकी आवश्यकता पर जोर देता रहता हू, मै उक्त मुलाकात का विवरण कुछ विस्तार के साथ देना पसन्द करूगा

आदमी ६० वर्ष के लगभग है। शक्ल-सूरत से निश्छल और ईमानदार दिखाई दिये। आरम्भ ही मे भेट करने को आने के लिए धन्यवाद दिया। बोले कि उन्हे वायसराय से पता चला है कि मेरा उन लोगो से मतभेद है, जिनके विचार मे प्रस्तावित सुधार माटेग्यू सुधारो से भी गये-बीते है। मैंने कहा, "सो तो है, पर मेरी सम्मति अमर्यादित नही है। मैंने तो वायसराय से कहा भी था कि मै अबतक जिन लोगो से मिला हू उनमे से एक भी तो ऐसा नही है जिसका यह विचार न हो कि प्रस्तावित सुधार माटेग्यू-सुधारो से भी गये-बीते है, और यदि मेरा इन लोगो से मतभेद है तो केवल मेरी इस धारणा के कारण कि यदि दोनो पक्षो ने सद्भावना और सहानुभूति का परिचय दिया तो इन प्रस्तावित सुधारो के द्वारा हम अपने लक्ष्य-स्थान तक पहुच सकते है।" मैंने कहा, "मै तो रिपोर्ट को जाचने की कसौटी उसकी सामग्री को नही, बल्कि उसे जिसे नीयत के साथ कार्यान्वित किया जायगा, उसे मानूगा। यदि ब्रिटेन ने नेकनीयती से काम नही लिया तो सरक्षण मार्ग के रोडे मात्र सिद्ध होगे, और यदि नेकनीयती और सहानुभूति के दर्शन हुए तो यही सरक्षण खतरे का बीमा सिद्ध होगे।" उन्होने कहा, "मै आपको विश्वास दिलाता हू कि हार्दिक सहानुभूति और नेकनीयती मौजूद है। मै चर्चिल और उसके अनुयायियो की तो बात नही कहता, पर अनुदार दल मे युवक समाज काफी सख्या मे है और उन लोगो की सहानुभूति वास्तविक है। वे अनुभव कर रहे है कि वे भारी अधिकारो का त्याग कर रहे है। सरक्षण केवल जोखिम के अवसर के लिए है, और मै तो नही समझता कि उन्हे कभी काम मे लाया जायगा। यदि भारत ने इन्कार किया तो इसमे बडी गलती दूसरी नही होगी। इसमे सदेह नही कि योजना का असतोषजनक पहलू भी है। हमे तो वह तक नही मिला जो हम—अर्थात् सरकार—चाहती थी। अग्रेज लोग काग्रेसियो के उद्गारो से सशकित हो उठे थे, इसीलिए इन सरक्षणो का जन्म हुआ।

पर आप श्री गांधी को आश्वासन दीजिये कि हम हृदय से भारत की भलाई करना और श्री गांधी का सहयोग प्राप्त करना चाहते है।" मैंने उत्तर दिया, "मै आपका आश्वासन स्वीकार करने को तैयार हू और यह भी मानने को तैयार हू कि आप सब लोग सहानुभूति रखते है और भलाई करना चाहते हैं। पर जब मैं गांधीजी के चरणों मे जाकर बैठता हू तो देखता हू कि वह भी देश के कल्याण के लिए सहयोग करने को अत्यत उत्सुक है। जब मैं देखता हूँ कि यहा भी मेल-मिलाप की इच्छा है, और वहा भी वैसी ही इच्छा है, पर तो भी खाई बदस्तूर है तो मेरा आश्चर्य-चकित होना स्वाभाविक ही है। यदि आप गांधीजी की ओर मैत्री का हाथ नहीं बढा सकते है तो आपकी मेल-मिलाप सम्बन्धी अभिलाषा मे कोई-न-कोई त्रुटि अवश्य है।" उन्होने उत्तर दिया, "आपकी बात मेरी समझ मे नही आई। क्या आप यह चाहते है कि वायसराय श्री गांधी से मिले ? हिज ऐक्सीलेन्सी उनसे मिलना तो चाहते हैं, पर व्यवस्थापिका सभा के सदस्यो ने बहिष्कार करके नई जटिलताए उत्पन्न कर दी है। यदि आप इस सम्बन्ध मे कुछ कर सके तो बडी बात हो, क्योकि उससे सहायता मिलेगी।" मैने कहा, "इसके लिए आपको भूलाभाई से बात करनी चाहिए, परतु व्यवस्थापिका सभा के सदस्यो के सम्बन्ध मे कोई निष्कर्ष निकालने से पहले आप इस बात की ओर ध्यान न देकर कि उन्होने क्या किया है, इस बात की ओर ध्यान दे कि उन्होने क्या कुछ नही किया है।" और मैंने बताया कि किस प्रकार व्यवस्थापिका सभा के सदस्यो ने वायसराय की स्पीच के समय मौजूद न रहने का निश्चय किया था। वह काफी प्रभावित हुए।

मैंने कहा, "गांधीजी की न्यायप्रियता का एक और उदाहरण लीजिए। उन्होने जानबूझकर ६१/२ प्रतिशत की छाट मजूर कर ली, जिससे पता चलता है कि समझौते और रचनात्मक कार्य मे उनका कितना विश्वास है। सर हैनरी क्रेक, आप जैसे आदमी के सम्बन्ध मे, जिसने हजारो आदमियो की खोपडिया तोड दी है और जिसने आर्डिनेन्स जारी किये है, पिस्तौल और तलवार हाथ मे लेकर चलने की कल्पना आसानी से की जा सकती है। पर जब मैं आपसे मिलता और बात करता हू तो आपको स्पष्टवादी और ईमानदार आदमी पाता हू। आप गांधीजी और उनका अनुसरण करने वालो के सम्बन्ध मे भी इसी प्रकार की बाते सुनते रहते है और उनके सम्बन्ध मे आपके मन पर सदेह के बादल छाये रहते होगे। आप यह भूल जाते है कि मनुष्य मनुष्य ही है, उसके पास हृदय है, और उसमे भाव उठते हैं। क्या आपने कभी गांधीजी के हृदय को स्पर्श करने की चेष्ट

की है ?" उन्होने कहा "हा, मै मानता हू कि यह सबकुछ बडे परिताप का विषय है, पर आप मुझे यह बताइये कि सुधारो के सम्बन्ध मे श्री गाधी के क्या विचार है ?" मैंने उत्तर दिया, "आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि उन्होने अभी रिपोर्ट पढी तक नही है और यह उनके अनुरूप ही है। वह बडी-बडी चीजो को साधारण-सी घटनाओ से जाचते है। यदि उन्हे छोटी-छोटी चीजो मे उदारता के दर्शन नही हुए तो वह स्वगत कहेगे, "रिपोर्ट मे भी उदारता के दर्शन होने की क्या आशा है?" पर मै उनकी विचार-धारा के सम्बन्ध मे एक बात कह दू। उनके पास लोग-बाग आते है और कहते है कि प्रस्तावित सुधार माटेग्यू-सुधारो से भी गये-बीते है और वह उनकी बात का अनुमोदन करते है। और जब मै उनसे कहता हू कि यदि दोनो ओर सहानुभूति और सदाकाक्षा प्रचुर मात्रा मे मौजूद रहे तो आयोजित योजना को व्यवहार मे लाया जा सकता है, तो वह मेरी बात का भी अनु-मोदन करते है, और उनके इस रवैये मे किसी प्रकार का विरोधाभास भी नही है। वह अपना दृष्टिकोण इस प्रकार समझाते है 'जब माटेग्यू ने अपने सुधारो का श्रीगणेश किया था तो कम-से-कम कुछ लोगो को अपना विश्वास-भाजन अवश्य बना लिया था, और उसे उनका समर्थन भी प्राप्त हुआ था। इससे पता चलता था कि उसने भारतीय जनमत को अपने साथ लेने की दिल से कोशिश की। पर इस प्रस्तावित योजना के लिए सरकार के साथ जनता का कोई भी वर्ग नही है। इससे पता चलता है कि सरकार को इसकी कोई चिन्ता नही है कि उसे जनता का विश्वास प्राप्त होगा या नही। इस प्रकार प्रस्तावित सुधार माटेग्यू सुधारो से भी गये-बीते सिद्ध हो रहे है।' आप साझेदारी की बात तो करते है, पर जो लोग आपके साथ साझे मे आने वाले है उनके साथ आप किसी प्रकार का सम्पर्क स्थापित करना नही चाहते। इससे सदाकाक्षा या सहानुभूति कैसे प्रमाणित होगी ? यदि आप यह प्रमाणित कर सके कि सदाकाक्षा और सहानुभूति तो मौजूद है, पर परिस्थिति ही ऐसी है कि आप आगे कदम नही बढा सकते तो गाधीजी समस्या का हल ढूढ निकालेगे और आपकी ओर सहायता का हाथ बढायगे। तब वह इन सुधारो को वर्तमान शासन-विधान के मुकाबिले मे अच्छा समझकर ग्रहण कर लेगे। एक बार गाधीजी मे स्वराज्य की परिभाषा करने को कहा गया तो उन्होने उसकी कोई कानूनी परिभाषा करने के बजाय दस या चौदह मुद्दे रखे और उन्हे स्वराज्य का प्रतीक बताया। आपको गाधीजी की विचार-शैली का इसीसे पता चल जायगा।' उन्होने कहा, "इससे पता चलता है कि गाधीजी व्यावहारिक आदमी नही है।" मैंने उत्तर दिया, "न, इससे पता चलता है कि गाधीजी सब से

अधिक व्यावहारिक आदमी है और जो लोग व्यावहारिक आदमी नही होते वे लकीर के फकीर बनकर चलते है। गाधीजी बिल्कुल भिन्न है। और मै एक व्यवसायी की हैसियत से कह सकता हू कि यदि सदाकाक्षा और सहानुभूति उपस्थित रही तो इन प्रस्तावित सुधारो तक की सहायता से लक्ष्य-स्थान तक पहुचा जा सकता है।"

उनकी समझ में तुरत ही आ गया कि उन्होने गाधीजी को अव्यावहारिक बताकर गलती की। मैने कहना जारी रखा, "गाधीजी के आगमन से पहले लोगो की राजनीतिक दीक्षा विध्वसात्मक प्रणाली मे हुई थी। हमें यह सोचना बताया गया था कि राजनीति का अर्थ है सरकार की विध्वसात्मक आलोचना करना। गाधीजी ने एक नई भावना प्रदान की। उन्होने कहा, "कातो और बुनो। अस्पृश्यता का निवारण करो, अल्पसख्यक जातियो के साथ मेल करो", इत्यादि-इत्यादि। जनता के सामने पहली बार रचनात्मक पहलू रखा गया। पर हमने अभी तक सरकार की प्रशसा करना नही सीखा है, क्योकि आप लोगो ने हमे अभी तक इसका मौका ही नही दिया। जो हो, इस प्रकार की शिक्षा बडी खतरनाक है। एक खास वर्ग धीरे-धीरे बढ रहा है, जिसका विश्वास है कि वैधानिक उपायो से अच्छी-से-अच्छी चीज भी प्राप्त नही करना चाहिए। उस वर्ग की धारणा है कि वैधानिक उपायो से प्राप्त किया गया स्वराज्य भी स्वराज्य नही है। उनके निकट स्वराज्य से भी अधिक क्रान्ति का महत्व है। यह वर्ग विभिन्न श्रेणियो और सरकार के खिलाफ घृणा का प्रचार जारी रखेगा, सरकार चाहे विदेशी हो चाहे देशी[1] गाधीजी इस मनोवृत्ति के खिलाफ लड रहे है। वह हरएक कदम पर कटुता से बचना चाहते है। हिंसा के द्वारा प्राप्त किये गए स्वराज्य का उनके निकट कोई उपयोग नही है। वह तो अहिंसा को स्वराज्य से भी अधिक महत्व देते है। उनके निकटतम सहकारी उनकी नीति मे आस्था रखते है। पर गाधीजी कितने दिन जीवित रहेगे? यह अतीव आवश्यक है कि उनके जीवन-काल मे ही ऐसा समझौता हो जाय जिसके द्वारा जनता और सरकार एक-दूसरे के निकटतर आ जाय। इस प्रकार एक दूसरे प्रकार की शिक्षा का प्रारम्भ हो जाय जिसके द्वारा लोग यह जानना सीखेगे कि सरकार उन्हीकी सस्था है, इसलिए उसका विध्वस नही, सुधार करना चाहिए। यदि शिक्षा-प्रणाली मे तुरत ही परिवर्त्तन नही किया गया तो बडा भारी अहित होगा।

---

१ बाद की घटनाओ ने इस कथन की सचाई को अच्छी तरह प्रमाणित कर दिया।

रक्तपातपूर्ण क्राति अनिवार्य हो जायगी, और यह न केवल भारत के लिए ही, वल्कि इग्लैंड के लिए भी घोर दुर्भाग्य की वात होगी। अनुदार दलवाले कह सकते है कि यह भारत का जनाजा होगा, मै तो कहूगा कि यह दोनो का जनाजा होगा। अकेले गाधीजी ही ऐसे व्यक्ति है जो न्यायपूर्ण वात के लिए अड सकते है, चाहे इससे उनकी वदनामी ही क्यो न होती हो।"

उन्होने कहा, "इसमे सदेह नही कि श्री गाधी साहस मे अपना सानी नही रखते है। उनकी नेकनीयती मे मुझे विल्कुल सदेह नही है और मै यह भी स्वीकार करता हू कि उन्होने साम्यवाद के वढते हुए प्रवाह को रोक दिया है। परतु मान लिया कि हम लोग श्री गाधी को अपनी नेकनीयती का विश्वास दिला सके और उनके साथ किसी प्रकार का समझौता भी हो जाय, पर क्या देश उनकी वात मान लेगा?" मैने कहा, "हा। मुझे इसमे तनिक भी सदेह नही है। और उनमे अन्याय का प्रतिरोध करने की क्षमता है, चाहे वह अन्याय स्वय उन्हीके आदमियो ने किया हो।" उन्होने कहा, 'मेरे पास तो काग्रेसियो का मापदड समाचार-पत्र है, जो कि आजकल वहुत ही खराव है।" मैने कहा, "हम लोग एक दुष्ट चक्र मे घूम रहे है। अविश्वास से अविश्वास उत्पन्न होता है। आपने अविश्वास का वातावरण उत्पन्न करके यह साबित कर दिया है कि आप इस समय जिस साझेदारी की वात करते नही अघाते है वह तवतक मक्कारी समझी जाती रहेगी जवतक आप अपने साझियो से मिलने को तैयार नही होगे।" वह वोले, "आप श्री गाधी को आश्वासन दीजिये कि वह हम सवको वहुत भाते है और हम उन्हे सहयोग देने को तैयार है।" मैने उत्तर दिया, "मेरे सदेशा पहुचाने मे क्या लाभ जव आपको उनके सम्पर्क मे आने मे सकोच है!" उन्होने पूछा, "आप यह सम्पर्क अभी, चाहते है या विल पास होने के वाद?" मैने कहा, "देर करने से क्या लाभ? हम दूसरे ढग से जनता के शिक्षण का कार्य जितनी जल्दी आरम्भ करे हम सवके लिए उतना ही अच्छा है।' उन्होने कहा, "सच वात तो यह है कि मुझे उनसे मिलते डर लगता है। मेरा छोटा-सा दिमाग है और मै सीधा-सादा आदमी हू। सभव है, वह मेरे वूते मे अधिक सिद्ध हो।" मैने कहा, "मुझे यह जानकर दु ख हुआ। जव आप खुद ही स्वीकार करते है कि वह निष्कपट और ईमानदार आदमी है तो आपको तो उनकी शक्ति अपनी ओर करके प्रसन्न होना चाहिए।" मैने उन्हे यकीन दिलाया कि गाधीजी को उनके जैसा स्पष्टवादी और ईमानदार आदमी वहुत ही अच्छा लगेगा। उन्होने पूछा, "क्या आपका सचमुच विश्वास है कि मेरे जैसा

आदमी उन्हे भायेगा ?" मैने कहा, "हा, क्योकि मैने आपको दिल का साफ आदमी पाया है।" उन्होने कहा, "मेरी बात पर विश्वास करिए, मैने भारत में ३७ वर्ष बिताये है, और मै अपने आपको एक भारतवासी कहता हू। मैने भारतीय भावनाओ और आकाक्षाओ का पक्ष लिया है और लेता रहूगा। मै नही कह सकता कि मै ईमानदार हू या नही, पर इतना तो मै कह ही सकता हू कि मैने हमेशा स्पष्टवादी और ईमानदार होने की चेष्टा की है। आप जो कुछ कहते है मै उसपर बडी गम्भीरता के साथ विचार करूगा, और आप श्री गाधी को यह बता दीजिये कि हम लोग प्रस्तावित शासन-विधान मे कही अच्छा शासन-विधान चाहते थे। हम लोगो ने सघर्ष किया, हार ने सघर्ष किया। पर चर्चिल के दलवालो की ओर से जो कठिनाइया पेश की जा रही है वे वास्तविक है और उनकी उपेक्षा नही की जा सकती है। अनुदार दल का युवा समाज भारत की भलाई करने को सचमुच उत्सुक है। हम सबकी सहानुभूति मौजूद है, नेकनीयती भी मौजूद है। आप यह न समझिये कि मजदूर दलवाले आपको कुछ दे देगे।"

इसके बाद हमने वल्लभभाई की चर्चा की। उन्होने उनसे मिलने की उत्सुकता प्रकट की। मैने अपने यहा ६ तारीख को सध्या के ५ बजे मुलाकात का आयोजन किया है।

मै अपनी धारणा के आधार पर कह सकता हू कि ये लोग वैयक्तिक सम्पर्क स्थापित करने को बडे उत्सुक है, पर साथ ही हिचकिचा भी रहे है। उन्होने देख लिया है कि देश उनके साथ नहीं है। उन्होने यह भी अनुभव किया है कि गाधीजी मे साहस है, ईमानदारी है और यदि विधान पर कोई आदमी समझौता कर सकता है तो अकेले वही कर सकते है। इससे उनमे एक नई आशा जागृत हो गई है। मै समझता हू इन लोगो का दिमाग ठीक दिशा मे काम कर रहा है।

: १३ :

हिन्दू और मुसलमान

३० जनवरी, १९३५ को सर सेम्युअल होर ने फिर लिखा

इंडिया आफिस
व्यक्तिगत
ह्वाइट हाल
३० जनवरी, १९३५

प्रिय श्री बिडला

आपके १९ जनवरी के एक और पत्र के लिए अनेक धन्यवाद। उसमे जो उद्‌गार व्यक्त किये गए है उन्हे पढकर मुझे प्रसन्नता हुई। भारत को हमारी वास्तविक सदाकाक्षा का विश्वास दिलाना कठिन कार्य अवश्य दिखाई देता है। मुझे विश्वास है कि उसका प्रचुर भडार है। जो लोग हमारी वर्तमान नीति का विरोध कर रहे है उनमे से अधिकाश लोग भी सदाकाक्षा की भावना से ही प्रेरित है। हा, उनका अपना दृष्टिकोण अवश्य है। दूसरे शब्दो मे उन्हे भारत के जनसाधारण के मगल की हृदय से चिन्ता है, और वे हमारे सुझावो का विरोध इसलिए करते है कि उनका सचमुच यह विश्वास है कि उनसे उस अभीष्ट की सिद्धि नही होगी। यदि आम आश्वासन निष्फल सिद्ध हुआ तो हमे आशा करनी चाहिए कि आप और आपके मित्र जिस सहानुभूति और सदाकाक्षा की खोज कर रहे है उसका प्रत्यक्ष प्रमाण उस समय मिलेगा जब शासन विधान को प्रकृत रूप दिया जायगा। कहावत है, "खीर का स्वाद उसे खाने से ही जाना जा सकता है।" मैने हाल ही मे आक्सफोर्ड मे एक स्पीच के दौरान मे नवीन शासन-विधान की रूपरेखा देने की चेष्टा की थी, उसकी एक प्रतिलिपि भेजता हू, शायद आप उसे पढना चाहे। आप देखेगे ही कि मैने अपने पिछले पत्र मे जो विचार व्यक्त किये थे इस स्पीच मे उन्हे विकसित रूप दिया गया है। जिसे आप मानवी सम्पर्क कहते है, उसे मुझे एक से अधिक विचार-शैलियो के लोगो के साथ बनाए रखना पडता है।

पर अगले सप्ताह बिल का द्वितीय वाचन होगा ही, उस अवसर पर मै यथासम्भव सहानुभूति के साथ अपने दिल की बात कहने की चेष्टा करूगा।

आपका
सैम्युएल होर

हवाई डाक द्वारा

१५ फरवरी, १९३५

प्रिय सर सैम्युअल

आपके पत्र और आपकी स्पीच की प्रति के लिए धन्यवाद। मैंने स्पीच स्थानीय दैनिक 'हिन्दुस्तान टाइम्स' मे प्रकाशनार्थ भेज दी है।

आपकी दलील अच्छी तरह समझता हू। वह इस प्रकार है "हम लोग भारत को पर्याप्त प्रगति प्रदान कर रहे है, पर अभी इस बात को पूरी तौर पर नही समझा जा रहा है। खीर का स्वाद खाने से ही जाना जा सकता है और जब भारतवासी सुधारो को काम मे लायंगे तो उन्हे हमारी नेकनीयती और सदाकाक्षा का पता चलेगा, और साथ ही वे यह भी जानेगे कि कितनी कुछ प्रगति सम्भव है। जब आपकी ओर ऐसी भावनाए है तब तो व्यक्तिगत सम्पर्क की सहायता से पारस्परिक समझौता और भी आसान हो जायगा। पर यह स्पष्ट ही है कि फिलहाल आपको परिस्थितिया इससे अधिक और कुछ कहने की इजाजत नही देती है। मुझे तो सिर्फ इतना ही कहना है कि साझेदारी का दस्तावेज एक ऐसा कागज है जिसपर दोनो साझियो के हस्ताक्षर किये जाते है। वर्तमान बिल पर केवल एक ही दस्तखत है। यदि आप भले फल की कामना करते है तो मेरा निवेदन है कि, आज नही तो कल, आपको अपने साझियो के दस्तखत लेने ही पडेगे। लकाशायर-पैक्ट के सम्बन्ध मे सबसे बडी शिकायत यही है कि वह सम्मत पैक्ट नही था, लादा हुआ पैक्ट था। आशा है, आप असल सुधारो के सम्बन्ध मे इस प्रकार की स्थिति उत्पन्न नही होने देंगे। मै आपको अपने विचारो से और अधिक तग नही करना चाहता हू, इसलिए मगल की आशा करता हुआ इस विषय को यही छोडता हू।

यह कहना अनावश्यक है कि मैंने आपके पत्र की नेकनीयती को अच्छी तरह हृदयगम किया है। इसीसे मुझे आशाजनक दृष्टिकोण अपनाने का साहस होता है।

सदाकाक्षाओ के साथ,

आपका
जी० डी० बिडला

भारतीय शासन विधान के वनने से पहले गोलमेज परिषद् की जितनी भी बैठके हुई उन सभी मे हिन्दू-मुस्लिम-समस्या एक जटिल प्रश्न वनी रही। सभी सम्प्रदायो के लिए एक ही निर्वाचन-सूची और एक ही निर्वाचन-क्षेत्र हो या अलग-अलग हो, या फिर चुनाव तो मिले-जुले हो, लेकिन कुछ स्थान विशेष रूप से सुरक्षित कर लिये जाय—इन सभी प्रश्नो पर वडी सरगर्मी के साथ विचार किया गया। दुर्भाग्यवश कोई पक्का फैसला नही हो सका और इसका दु खान्त परिणाम विभाजन के रूप मे सामने आया। राजनीतिक क्षेत्र के प्रमुख हिन्दू नेता वापू की सलाह मानने को तैयार नही थे, यद्यपि वे उनका आदर करने का बरावर दम भरते थे। गाधीजी सोलहो आने आपसी समझौते के पक्ष मे थे और हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिए अपने प्राण तक न्यौछावर करने को तैयार थे, पर अपेक्षाकृत अधिक सासारिक राजनीतिज्ञ सारी समस्या को अपनी-अपनी जाति के लोगो के लिए रोटी-दाल के सवाल के रूप मे देखते थे। उधर मुसलमानो की ओर से श्री जिन्ना भी अपनी वात पर पूरी तरह से अडे हुए थे। उन्होने मुसलमानो के प्रति वापू की मगल कामना को दुरदुराया और उसे एक ऐसा स्वतत्र पाकिस्तान वनाने की, जिसके वह स्वय प्रधान हो, महत्वाकाक्षा पूर्ण योजना को विफल वनाने के हिन्दू-षड्यन्त्र का एक अग मात्र माना। कहना तो यह चाहिए कि एक वार उनके दिमाग मे इस भडकीली योजना को प्रश्रय मिलने के वाद, विभाजन को छोड और किसी आधार पर समझौते की वातचीत की, और उससे सम्वन्ध रखने वाले सुझावो की, असफलता उस समय तक एक स्वयसिद्ध वात थी, जवतक अपनी जाति के नेतृत्व की वागडोर उनके हाथ मे थी। इतने पर भी वापू के कुछ इने-गिने कट्टर अनुयायियो ने समझौते की आशा नही छोडी और डा० राजेन्द्र प्रसाद ने एक मसविदा तैयार किया। इसके सम्वन्ध मे मैंने २१ फरवरी, १९३५ को महादेव देसाई को एक पत्र लिखा

प्रिय महादेवभाई

मैंने राजेन्द्रबाबू को सलाह दी है कि यदि मुसलमान नेता इस फार्मूले को मान लें (जैसी कि आशा नहीं है) तो हिन्दू महासभा के विरोध के बावजूद हमें उसे हिन्दू जनता द्वारा स्वीकार करा लेना चाहिए। एक बार कांग्रेस निश्चित रुख अख्तियार कर ले, फिर तो परिणाम अच्छा ही होगा। यदि कांग्रेसी नेता फार्मूले को मूर्त रूप दे देंगे तो हिन्दू महासभा भी अपने अधिवेशन में उस पर सही कर देगी। सम्प्रदायवादियों के द्वारा काफी क्षति हुई है। जबतक मुसलमान समझौते का रुख न दिखावें तबतक तो इन सम्प्रदायवादियों के प्रति सहनशीलता दिखाई भी जा सकती है, पर यदि मुसलमान समझौता करने की इच्छा दिखावें तो कांग्रेसी नेताओं को हिन्दुओं को स्पष्टरूप से बता देना चाहिए कि उनके लिए यही ठीक रहेगा। मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि हिन्दू जनता उनके पीछे हो लेगी।

सस्नेह,

तुम्हारा ही
घनश्यामदास

कुछ दिन बाद मैंने इसी विषय पर बापू को भी लिखा

ता० २६-२-१९३५

परमपूज्य बापू

बेचारे राजेन्द्रबाबू बुरी तरह परेशान हैं। राजा नरेन्द्रनाथ और पंडित नानकचंद, इन दोनों नेताओं ने राजेन्द्रबाबू के मसविदे को स्वीकार कर लिया है। पर बंगाली हिन्दुओं और सिखों में काफी मतभेद है। पंडितजी कुछ इनको समझाते हैं, कुछ उनको। किन्तु यह साफ जाहिर है कि जितना जिन्ना-राजेन्द्रबाबू मसविदे में है उसके बाहर जाना उनके लिए सम्भव नहीं है। मेरा खयाल है कि प्रायः लोग कायरता के शिकार बने हुए हैं। उदाहरण के लिए बंगाल के हिन्दू एम० एल० ए० वर्ग को यह चीज अच्छी लगती है, पर हिम्मत नहीं कि उसपर दस्तखत कर दें। 'अमृत बाजार पत्रिका' के सम्पादक को अच्छी लगी तो 'आनन्द बाजार पत्रिका' के सम्पादक को रुचिकर नहीं है। इधर कुछ उग्र लड़के, जो क्रान्तिकारी बताये जाते हैं, उनके सामने सब भीगी बिल्ली बन जाते हैं। नलिनी आ रहे हैं, पर पूर्वी बंगाल के होने के कारण सम्मिलित चुनाव के नाम से घबराते हैं। मंगलसिंह और तारासिंह कुछ-कुछ पसन्द तो करते हैं, पर डरते हैं। ज्ञानी शेरसिंह तो उसे छूना भी नहीं चाहते। गोकुलचंद नारंग वगैरह पसन्द करते हैं, पर सिखों से डरते हैं। यदि व्यक्तियों के दस्तखतों से ही समझौता होनेवाला है तो यह समझ लेना

चाहिए कि आज के वातावरण मे वह प्रलयकाल तक स्वप्न बना रहेगा। हम लोग चेष्टा तो कर ही रहे हैं, पर इधर मैंने राजेन्द्रबाबू को सुझाया है कि कांग्रेस और लीग समझौता कर लें और उसे देश के सामने रख दें। यह सही है कि सरकार उसपर फिलहाल अमल नही करेगी, पर और कोई रास्ता भी तो नहीं है। यदि राजेन्द्रबाबू ने ऐसा किया तो मेरा खयाल है कि समझौते का पक्ष समय पाकर अत्यन्त प्रबल हो जायगा। राजेन्द्रबाबू और वल्लभभाई दोनो ही इस प्रस्ताव को पसन्द करते हैं। देखे, क्या होता है।

हरिजन आश्रम के लिए नक्शे कमेटी के सिपुर्द है। पास होते ही काम शुरू हो जायगा।

मेरे भेड-मेढे आस्ट्रेलिया से आ पहुचे हैं। मै सातेक रोज के लिए पिलानी जा रहा हू। आपके पत्र की प्रतीक्षा करूगा।

विनीत
घनश्यामदास

२८ फरवरी, १९३५

प्रिय महादेवभाई

साम्प्रदायिक समझौते की बातचीत तो भग होती दिखाई देती है। पजाब के हिन्दू तो सुझाव के उतने विरुद्ध नही थे, पर मुख्य कठिनाई सिखो और बगाल के हिन्दुओ के द्वारा उत्पन्न की गई है। बगाली हिन्दुओ मे भी जो लोग पश्चिमी बगाल से आये हैं वे सयुक्त निर्वाचन के पक्ष मे हैं। पर पूर्वी बगाल के हिन्दू तो उसकी सभावना-मात्र से भयातुर हो गये है। सबसे अधिक क्षोभ की बात तो यह है कि बगालियो मे एक भी तो ऐसा नही है जो जिम्मेदारी के साथ बात कर सके। जो लोग सुझाव के पक्ष मे हैं उन तक मे इतना साहस नही है कि यह बात स्पष्ट रूपसे कह दे।

आज सुबह हमने एक छोटी-सी बैठक की, जिसमे राजेन्द्रबाबू, भूलाभाई और वल्लभभाई थे। मै था ही। हमने यही सोचा कि और आगे जाना ठीक नही रहेगा, क्योकि हमे यह जचा कि समझौते की बातचीत को और अधिक दिनो तक घसीटा जायेगा तो उससे मामला और भी पेचीदा हो जायगा। हम सब एक मत थे कि यदि कांग्रेस और लीग मे समझौता सम्भव हो तो हमे कर लेना चाहिए। पर जिन्ना इसके लिए तैयार नही थे, और हमने यह भी देखा कि बगाल के बगैर (कांग्रेसी बगाल तक हमारा समर्थन करने को तैयार नही है) समझौता निरर्थक होगा। यह बडा दु खद प्रसग है, पर हमे इससे शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। सबसे पहली बात तो यह है कि एक भी बगाली दृढतापूर्वक हमारा समर्थन

करने को तैयार नहीं है। यह बात बंगाल के लिए बड़ी शर्म की अवश्य है, पर कांग्रेस का दोष भी कम नहीं है। हमने बंगाल में किसी का समर्थन नहीं किया, फलत बंगाल में हमारे दृष्टिकोण का समर्थन करनेवाला एक भी आदमी नहीं है। साम्प्रदायिक समस्या वैसी-की-वैसी ही है और अपनी विफलता के फलस्वरूप हम संसार की दृष्टि में लाञ्छित हैं।

तुमने देखा ही होगा कि सरकार ने ग्रामोत्थान के निमित्त एक करोड़ रुपये की रकम निकाली है। बापू की चेष्टाओं की बदौलत सरकार के कानों पर जूँ रेंगी तो, पर मुझे आशंका है कि यह रुपया ठीक तरह से खर्च नहीं किया जायगा। सरकार तो वस्तुस्थिति तक से अनभिज्ञ है। इसलिए सम्भव है, वह जनता के लिए भोजन और कपड़े की अपेक्षा रेडियो की अधिक आवश्यकता समझे। यह रुपया प्रान्तों के मंत्रियों द्वारा खर्च किया जायगा। यदि ग्रामोद्योग संघ इस मामले में आगे बढ़कर सरकार की सहायता करने में तत्परता दिखावे तो कैसा रहे? यदि मैं भूल नहीं रहा हूँ तो जब वल्लभ-भाई ने गुजरात बाढ़ रिलीफ फंड का आयोजन किया था तो एक प्रकार से सरकारी चंदे पर कब्जा कर लिया था। मैं समझता हूँ, यदि बापू एक बार संकल्प कर लें और प्रान्तीय सरकारों और मंत्रियों के साथ ठीक ढंग से पेश आया जाय तो इस एक करोड़ की निधि को एक प्रकार से अपने अधिकार में लिया जा सकता है। यह बात बापू के सूचनार्थ है।

सस्नेह,

तुम्हारा ही
घनश्यामदास

: १४ :

पिलानी

मेरी पिलानी वाली प्रिय योजना ने अब एक ऐसी सस्था का रूप ले लिया है कि उसके प्रारम्भिक दिनो की याद करना शायद कुछ रोचक सिद्ध हो। अब पिलानी की सस्था एक यूनीवर्सिटी कालेज के स्तर पर पहुच गई है और राजपूताना मरुभूमि का वह खड गुलाब के फूल की तरह खिल उठा है, पर ऐसी स्थिति सदा से ही नही थी।

महादेव देसाई के नाम बापू के लिए लिखा गया मेरा एक पत्र आरम्भ तो दूसरी बातो से होता है, किन्तु शीघ्र ही उसमे पिलानी की चर्चा छिड जाती है। उस पत्र के पहले भाग मे बगाल सरकार का जिक्र है, जिसने उन्ही दिनो सार्वजनिक रूप से अपनी एक भूल स्वीकार करके उसका परिष्कार किया था। बगाल सरकार के इस कार्य की तुलना मैने अपने पत्र मे कुछ ऐसे नेताओ के रवैये से की है जिन्होने यह जानते हुए भी कि जनता के दोषारोपण ठीक नही हे, उनका खण्डन करने की चेष्टा नही की। उस समय 'नेशनल काल', जो अब बन्द हो गया है, मेरे खिलाफ गदा प्रचार कर रहा था। उससे मुझे बडा क्लेश होता था, खासतौर से इसलिए कि उस पत्र के डायरेक्टरो मे मेरे कुछ ऐसे मित्र थे जो जानते थे कि इन ऊल-जलूल बातो की जड मे हीन अर्थलोलुपता-मात्र है।

बिडला हाउस
नई दिल्ली
१७-१-१९३६

प्रिय महादेवभाई

तुम्हारे पत्र के लिए धन्यवाद। इससे मेरी चिन्ता दूर नही हुई है। इस बार बापू के स्वास्थ्य के सम्बन्ध मे चिन्ता की बात यह है कि उन पर विश्राम या चिकित्सा का पूरा प्रभाव नही पड रहा है। यह जानकर प्रसन्नता हुई कि वह बराबर आराम कर रहे है। सरदार से और बापू से कह देना कि जबतक वे पूरी तरह चगे न हो जाय, दिल्ली बिलकुल न आवे। हा, इसमे सदेह नही कि दिल्ली का जलवायु बडा अच्छा है, इसलिए यदि वे आवे तो केवल विश्राम के लिए आवे, और किसी काम के लिए नही। पर यदि अहमदाबाद उनके स्वास्थ्य के लिए अधिक अच्छा स्थान प्रतीत हो तो स्थान-परिवर्तन की आवश्यकता नही है। सरदार ने मुझसे कहा है कि जब बापू अहमदाबाद मे हो तो मै भी कुछ समय के लिए आ जाऊ। मुझे ट्रस्टी की हैसियत से साबरमती आश्रम भी जाना है, पर मै अपना कार्यक्रम कुछ समय बाद निश्चित करूगा। यदि बापू यहा नही आते है तो फरवरी का महीना कलकत्ते मे बिताऊगा।

देखता हू कि वे दोनो पत्र न तुम्हे रुचे, न बापू को। मै अपने पत्र पर तुम्हारी आलोचना चाहूगा। यदि उस पत्र की भाषा अच्छी न लगी हो तो इसका दोष मेरी मनोवृत्ति को देना चाहिए। यदि मै उसे कुछ दूसरे ढग से लिखता तो मै अपने नही, किसी दूसरे के विचारो को व्यक्त करता। अतएव आलोचना पत्र की नही, बल्कि उसमे व्यक्त किये गए मेरे विचारो की है, इसलिए मै जानना चाहूगा कि तुम्हारी आपत्ति का विषय क्या है। इससे मेरा पथ-प्रदर्शन होगा।

रही गवर्नर के उत्तर की बात, सो मै इस मामले मे तुमसे सहमत नही हू। तुम अपने लोगो से इतने कम की और विरोधियो से इतने अधिक की आशा क्यो करते हो? यदि मै तुलना के लिए एक उदाहरण दू तो गलत मानी मत निकालना। 'नेशनल काल' की ही बात को लो। वह मुझे पिछले तीन साल से आये-दिन दुर्वचन कहता आ रहा है, न डा० अन्सारी ने और,न किसी और डायरेक्टर ने उस सबध मे कुछ कहा है। तुम कहोगे, और मै तुम्हारी बात मान लूगा, कि बेचारे राजेन्द्रबाबू तो सत है, पर न्याय की बात उठाने पर मतपन की ओर ध्यान नही दिया जा सकता। गवर्नर ने एक मामले मे आपत्ति-जनक अशो को हटवा तो दिया पर इस मामले मे तो डा० अन्सारी ने इस बात की ओर ध्यान तक देना

जरूरी नही समझा । मै किसी के खिलाफ शिकायत नही कर रहा हू । तुम स्वय जानते हो कि मै राजेन्द्रबाबू का कितना आदर करता हू । मेरा यह दृष्टात देने का उद्देश्य यही था कि हमे मानव-स्वभाव जैसा है उसे उसी रूप मे लेना चाहिए और ठीक जिस प्रकार हमे 'नेशनल काल' के डायरे-क्टरो के प्रति सहिष्णुता का रुख अख्तियार करना चाहिए, उसी प्रकार बगाल के गवर्नर के प्रति भी । पर मुझे तो अपने पत्र के सम्बन्ध मे, या यो कहो कि अपनी मनोवृत्ति के सम्बन्ध मे, तुम्हारी आलोचना की दरकार है ।

मै पिलानी के सम्बन्ध मे 'हरिजन' मे कुछ लिखना नही चाहता हू । ऐसा करना बेकार की इश्तहारबाजी होगा, क्योकि सारा काम अभी प्रयोग-मात्र है । हमने गतवर्ष तय किया था कि स्कूल और कालेज के सभी ८०० लडको को आध सेर दूध मिला करे और जो लडके मूल्य न दे सके उन्हे दूध मुफ्त दिया जाय । बहुत कोशिश करने के बावजूद पडया २० से अधिक गाये एकत्र नही कर सका और वे सभी अच्छी नस्ल की नही थी । गाववाले उसे खेती-मास्टर कहते है । जब वह हिसार और रोहतक से बुड्ढी गाये लाया तो उन्होने काफी दिल्लगी की । दूध की समस्या ज्यो-की-त्यो बनी हुई है । इसके विपरीत गाव मे तुम्हे रुपये का २६ पौड दूध मिल सकता है । इसलिए पडया से कहा गया कि जबतक पर्याप्त सख्या मे गायो का प्रबन्ध न हो जाय, दूध खरीदकर लडको को पिलाया जाय । इससे पाडया को बडी परे-शानी हुई है । लगभग ६ हडर दूध खरीदना, फिर उसे उबालना और इसके बाद उसे लडको मे बाटना उसके लिए उतनी ही बडी समस्या हो गई होगी जितनी मेरे लिए अपनी किसी बडी मिल की समस्या हो । उसकी अस्तव्यस्तता विनोद की सामग्री है । पर लडको को दूध मिलना शुरू हो गया है । हम लोगो को आशा है कि आगामी १० दिनो मे हर कोई दूध पा सकेगा ।

हम लोग हर ६ महीने बाद डाक्टरी परीक्षा कराते है । इसलिए खुराक के वैज्ञानिक नियमन का परिणाम देखने की चीज होगा । रसोई घर मे मिर्चो का निषेध है और हम लोग रसोई घर का प्रबध लडको को स्वय अपना करने देने के बजाय उस पर नियत्रण करने की बात सोच रहे है । सम्भव है, हमे पाकशास्त्र मे दीक्षा देने के लिए एक कक्षा खोलनी पडे ।

हरिजन होस्टल उन्नति कर रहा है । एक ऊची कक्षा का विद्यार्थी एक बडे होस्टल मे रख दिया गया है जिसमे सवर्ण हिन्दू रहते है । इस हरिजन लडके के आगमन पर अन्य लडको ने किसी प्रकार की आपत्ति नही की ।

इस समय हमारे पास १५० भेडे है । उन चार आस्ट्रेलियन भेडो ने दो मेमने दिये और दो और देनेवाले है । इस प्रकार हमारे पास शीघ्र ही लगभग १० आस्ट्रेलियन भेडे हो जायगी । आस्ट्रेलियन दुम्बो को बीकानेरी

भेडो के साथ लगाया गया, जिसके फलस्वरूप एक कलमी नस्ल तैयार हो रही है। पर पडया ने प्रत्येक भेड की ऊन का ठीक-ठीक ब्यौरा नही रखा, जिसके फलस्वरूप हम लोग सही पता लगाने मे असमर्थ है कि बीकानेर और हिसार की भेडो के मुकाविले मे आस्ट्रेलियन भेड कितनी ऊन देती है।

आर्थिक दृष्टि से डेयरी असफल सिद्ध नही हुई है। अव हम छीजन को हिसाव से अलग रखे तो हमे किसी प्रकार का घाटा नही हुआ है। हम लोग दूव ।।।। पौंड के हिसाव से वेचते है और इस हिसाव से प्रति गाय पर आय और व्यय १० रुपया मासिक आता है। यदि हम छीजन को हिसाव मे नही लेते है तो हमे नवीन उत्पादन को भी हिसाव मे नही लेना है।

मै जिस होल्स्टीन नस्ल के साड को इग्लैड से लाया था उसने गायो के साथ जोडी करना शुरू कर दिया है। वडा वढिया जानवर है और उसकी गाव मे वडी चर्चा है। मुझे लार्ड लिनलिथगो ने इगलैड मे वताया था कि दूध के दृष्टि से होल्स्टीन नस्ल वडी सफल सिद्ध होगी। मै यह प्रयोग इसीलिए कर रहा हू। साहवजी महाराज की भी यही सम्मति है। परमेश्वरी प्रसाद इसके विरुद्ध है और पाड्या की इस नस्ल के सम्बन्ध मे कोई खास सम्मति नहीं है।

रही कृषि-सम्बन्धी प्रयोग की वात, सो गत वर्ष हमे १,५००) रुपये का घाटा हुआ। हमे पता चला कि हम ४) रुपये प्रति वीघा कृषि मे खो रहे है, इसलिए हमने इस लाइन को छोडने का निश्चय कर लिया है। अच्छा वीज तैयार कराने के लिए सिर्फ ५० वीघा जमीन जोती-वोई जायगी।

इस समय हम लोग दस्तकारी के निम्नलिखित विभाग चला रहे है—वढई का काम, टोपी वनाना, चमडे का काम, कालीन वुनना, कम्वल वुनना, रगना, छाटना और छापना। इस वर्ष हम निम्नलिखित विभागो की वृद्धि कर रहे है—दर्जी का काम, राज का काम, जिल्दसाजी, खिलौने वनाना और मधुमक्खी-पालन। कुछ समय वाद हम मुर्गियो का फार्म भी खोलने का विचार रखते है। हमने यह तय किया है कि अगले वर्ष से निम्नतम श्रेणी मे लगाकर इटरमीजियेट तक के लडके को उपरोक्त विषयो मे से कोई एक या दो विषय अवश्य लेने पडेगे। प्रत्येक सप्ताह मे लडके को कम-से-कम ३ घटे इनमे से लिखे हुए विषयो को सीखने मे लगाने पडेगे, जिसके फलस्वरूप जव लडका इटर के वाद छोडेगा तो उसे एक-दो विषयो का ज्ञान अवश्य रहेगा। इससे उद्योग-धधा विभाग स्वावलवी भी हो जायगा, क्योकि हम लोग विद्यार्थियो से नि शुल्क काम लेगे। इस समय हमारा खर्च ८०,०००) रुपये है। तुम कहोगे, यह वहुत है, पर यदि ८०० लडको को अच्छी शिक्षा देनी है तो १००) रुपये प्रति लडका अधिक नही है। कुछ

समय वाद हमे लडको से शुल्क भी मिलने लगेगा, जिससे कुछ सहायता मिल सकती है। लडको की शारीरिक अवस्था वहुत अच्छी है। चार वाते अनिवार्य है सामूहिक प्रार्थना, सामूहिक व्यायाम और खेलकूद, दुग्धपान, और चुनी हुई पुस्तको का स्वाध्याय। पर यद्यपि लडको का स्वास्थ्य वडा अच्छा है, और उनका परीक्षाफल सतोपजनक होता है, तथापि मै यह कहने मे असमर्थ हू कि वे चरित्र के मामले मे अन्य कालेजो के लडको से वढकर है, अथवा नही। कुछ विद्यार्थियो का कहना है कि वडे शहरो के अनेक कालेजो के लडके मद्यपान की कुटेव डाल लेते है। हमारे गाव मे तो एकमात्र पेय पदार्थ या तो जल है या दूध।

कालेज, स्कूल और वालिकाओ क स्कूल के अतिरिक्त हम लोग इस समय १५ ग्राम-पाठशालाए भी चला रह है। अगले वर्प उनकी सख्या २० हो जायगी। इस वर्प हमने यह भी निश्चय किया है कि ग्राम-पाठशालाओ के शिक्षक हरेक घर मे फलो के वृक्ष लगावे। मै इस वसन्त मे दिल्ली से नारगी के २,००० पौधे भेज रहा हू। राजपूताना मे नारगी खूव फलती है। पन्द्रह वर्प पहले हमने प्रयोग किया और स्वय मेरे वाग मे २,००० पौधे लगाये गये। इनमे से २०० पौधो ने तो इस वर्प फल भी दिये। यदि हम ५० मीलकी परिधि मे प्रत्येक घर मे एक पौधा लगा सके तो दर्शनीय दृश्य होगा।

सरदार को मेरा प्रणाम कहना। उनका पत्र अभी मिला। उन्हे अलग से उत्तर नही दे रहा हू। शायद यही चिट्ठी काफी होगी।

तुम्हारा ही
घनश्यामदास

: १५ :

लंदन में सम्पर्क-स्थापन कार्य

मैं अब भी यही चाहता था कि एक ओर ब्रिटिश नेताओ और दूसरी ओर गाधीजी तथा काग्रेसी नेताओं के बीच व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित हो और इसी उद्देश्य से सन् १९३५ की गर्मियो मे लदन गया। इस यात्रा के निमित्त मुझे बापू और बगाल के गवर्नर का आशीर्वाद प्राप्त था और दोनो ने ही मुझे महत्वपूर्ण व्यक्तियो के नाम परिचय-पत्र दिये थे। मेरी पहली मुलाकात इडिया आफिस के सर फिण्डरलेटर स्टीवार्ट के साथ हुई। मैंने उनका रुख बहुत ही सहानुभूतिपूर्ण पाया। यह स्पष्ट था कि उनके हृदय मे गाधीजी के लिए कुछ प्रेम है। गाधीजी से उनकी मुलाकात भारत के अलावा लदन मे भी हुई थी, जहा वह गोलमेज परिषद मे भाग लेने गये थे। १४ जून को मैंने गाधीजी को इस मुलाकात की पूरी रिपोर्ट लिख भेजी। यहा उसके अतिम पैरे का उल्लेख करना ही काफी होगा

उन्होने आपके स्वास्थ्य के बारे मे पूछताछ की और कहा कि आज भी उनको उस रविवार के उन तीन सुखद घटो की याद है जब आपसे उनकी बातचीत हुई थी। मैंने कहा, "यह तो मेरे पक्ष मे एक बहुत ही अच्छा तर्क है। 'राजनीति की दृष्टि मे आप दोनो एक-दूसरे मे सहमत नहीं है, फिर भी आपको उनकी भेट की सुखद याद है। यह व्यक्तिगत सम्पर्क का ही परिणाम है। इस समय इस व्यक्तिगत सम्पर्क का अभाव-सा है। हमे इसीके जरिये मित्रता स्थापित करनी चाहिए।" वह मुझे फिर लिखेगे।

कुछ दिन बाद मै श्री बटलर से मिला। यह इस समय ब्रिटेन के अर्थमत्री है, तब इडिया आफिस मे भारत के उपसचिव थे।

उनसे जो वातचीत हुई उसकी भी लम्वी रिपोर्ट मैने गाधीजी को भेजी। मुझे इसमे सदेह नही रह गया था कि लदन मे रहने वाले अग्रेजो को सचमुच इस वात का पक्का विश्वास है कि भारतीय शासन विल पास होना भारत मे स्वायत्त शासन की दिशा मे एक वहुत वडा कदम होगा। उधर भारत मे ठीक इसके विपरीत यह भावना थी कि यह कानून पीछे ले जाने वाला कदम होगा। श्री वटलर इस तथ्य को समझ गये और हमने गति-अवरोध का अन्त करनेवाले कितने ही सुझावो पर विचार-विमर्श किया। मेरा एक सुझाव यह था कि भारत मे जो नया वायसराय भेजा जाय उसे भारतवासियो के साथ तुरत सम्पर्क स्थापित करने की पूरी ताकीद रहे। दूसरा सुझाव यह था कि या तो स्वय भारत सचिव ही, नही तो उपसचिव भारत आकर व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करे। मैने उनके सामने एक और विकल्प रखा। वह यह था कि गाधीजी को लदन बुलाया जाय और यदि सम्भव हो तो उनके वुलाने का कारण कुछ और वताया जाय, यद्यपि असली उद्देश्य वातचीत करना हो। श्री वटलर ने इस मामले मे काफी सहानुभूति दिखाई। उन्होने कहा, "हमे यह देखकर वडी निराशा होती है कि जिस विल के लिए हमने अपने स्वास्थ्य, अपने मित्रो और अपने समय की चिन्ता नही की, उसे एक पीछे ले जाने वाला कदम समझा जा रहा है। सर सेम्युअल होर का स्वास्थ्य विगड ही गया। मै काम के वोझ को इसलिए वहन कर पाया कि मै जवान था, फिर भी मुझपर वडा श्रम पडा, और उसका पुरस्कार यह मिल रहा है।" उन्होने कहा कि लार्ड हेलीफैक्स ने तो भारत-सम्वन्धी कार्य को अपने जीवन का मिशन वना लिया है। उन्होने जोर दिया कि मै जल्दी-से-जल्दी प्रधान मत्री श्री वाल्डविन और भारत मत्री लार्ड जेटलेड से मिलू।

सर जार्ज शुस्टर से भी मेरी वडी मनोरजक वातचीत हुई। इस मुलाकात के सम्वन्ध मे मैने गाधीजी को अपनी रिपोर्ट

मे लिखा था, "मंने उन्हे वताया कि मै अपने गाव मे क्या-कुछ कर रहा हू। उन्होने वडी दिलचस्पी दिखाई और कहा कि उन्हे दूध के पाउडर से ताजा दूध ज्यादा अच्छा लगता ह। उन्होने मुझसे इसके वारे मे लार्ड लिनलिथगो से वातचीत करने को कहा। उन्होने यह भी कहा, "जव कभी सहायता की जरूरत हो , आ जाइये, मुझसे जो कुछ भी वन पडेगा, मै उठा नही रखूगा।"

इसके वाद जल्दी-जल्दी कई मुलाकाते हुई। ये मुलाकाते ज्यादातर भोजन के समय ही होती थी। पहले सर वैसिल ब्लैकैट से, फिर अनुदार दल के सदस्य सर हैनरी पेजक्रोफ्ट से और फिर मैनचेस्टर के नेताओ के पूरे समूह के साथ वातचीत हुई, जिन्हे श्री किर्क पैट्रिक ने लोकसभा मे दोपहर का भोजन करने को वुलाया था। इसके वाद (स्वर्गीय) लार्ड लोदियन के साथ लम्बी वातचीत हुई। वह भारत के सच्चे मित्र थे। आज हम इस वात को देख सकते है कि उन्होने स्थिति का जो चित्र उस समय खीचा था वह विलकुल सही उतरा। भारतीय शासन-विधान मे अग्रेजो की आगे वढने की इच्छा के दर्शन इतने स्पष्ट रूप से हुए कि काग्रेस ने पद ग्रहण करने का और प्रान्तो मे मत्रिमडल वनाने का निश्चय किया। ये प्रान्त अव राज्य कहलाते है। यदि चार वर्ष वाद लडाई न भडक उठती तो केन्द्र मे भी एक सयुक्त सघीय शासन की स्थापना हो जाती और विभाजन की नौवत न आती। पर युद्ध ने सवकुछ उलट-पुलट दिया । काग्रेसी सरकारो ने तो इस्तीफा दिया ही, समस्त पूर्वीय देशो मे भी राष्ट्रीयता की भावना को जवर्दस्त प्रोत्साहन मिला और युद्ध के दौरान मे ही वह भावना इतनी वलवती हो उठी कि गाधीजी अपना 'भारत छोडो'-आन्दोलन छेडने मे सफल हुए। श्री एटली और ब्रिटिश सरकार ने भी युद्धकाल मे दिये गए अपने वचनो का पालन किया।

मैने लार्ड लोदियन के साथ अपनी वातचीत की जो रिपोर्ट भेजी उसमे उनके उद्गारो का इस प्रकार उल्लेख किया

उन्होने कहा, "आप लोगो ने कोई शासन-विधान नही चलाया है, इस लिए आपके लिए यह अदाजा लगाना सम्भव नही है कि आप लोग कितने वडे अधिकार का उपयोग करनेवाले हैं। यदि आप शासन-विधान को देखेगे तो आपको ऐसा प्रतीत होगा मानो सारे अधिकार गवर्नर जनरल और गवर्नरो को सौप दिये गए हैं। पर क्या यहा भी सारे अधिकार राजा को सौपे हुए नही हैं? सबकुछ राजा के नाम मे किया जाता है, और क्या राजा ने कभी हस्तक्षेप किया है? हम लोग शासन-विधान मे विश्वास रखनेवाले लोग हैं। जहा अधिकार व्यवस्थापिका सभा के सदस्यो के हाथ मे गये कि गवर्नर या गवर्नर जनरल कभी हस्तक्षेप नही करेगे। हा, यदि कानून और व्यवस्था अथवा देश की शाति पर खतरा आया तो आपका भी यह इरादा नहीं है कि शान्ति खतरे मे पडे। सिविल सर्विस हमेशा सहायता करेगी। किसी जमाने मे इग्लैड के मजदूर लोग सिविल सर्विस को गालिया दिया करते थे, पर ज्योही मजदूरो की सरकार बनी कि वे लोग सिविल सर्विस के सबसे अच्छे मित्र सिद्ध हुए। आप भी यही देखेगे। हम लोग अनुशासन-प्रिय लोग हैं। वे लोग आप लोगो को सलाह-मशवरा अवश्य देगे, पर जहा एक बार कोई नीति निर्धारित हुई कि वे लोग वफादारी के साथ उसे कार्यरूप मे परिणत करेगे।" मैने बाधा देते हुए बताया कि यहा की सिविल सर्विस और भारत की विदेशी सिविल सर्विस मे अन्तर है। मैने कहा, "आप लोगो को नौकरियो के भारतीयकरण की गति को तेज करना होगा।" वह सहमत हुए। बोले, "आपको अब जिस सबसे बडे खतरे का मुकाबला करना है वह है सैन्य विभाग के नियत्रण का विरोध। पर आपको बाकी सारी चीजे मिल ही गई हैं।" परन्तु वह मुझसे इस मामले मे सहमत थे कि भारत मे लोगो की मानसिक अवस्था मे सुधार करना आवश्यक है। इस समय वह बहुत खराब है। बोले, "हम इस दिशा मे कुछ नही कर सकते। हमे यहा अनुदार दलवालो के साथ मोर्चा लेना पडा। श्री बाल्डविन और सर सैम्युअल होर ने जिस साहस का परिचय दिया आप उसका अदाजा नहीं लगा सकते थे। यह उदार ढग की राजनीति की भारी विजय थी। हम लोग भारत मे भी इसी ढग की मानसिक अवस्था उत्पन्न नही कर सके, क्योकि हम अनुदार दल वालो को भी नही छोडना चाहते थे। इन लोगो ने इस विधान को आत्म-समर्पण के नाम से पुकारा, इसलिए हमे यहा एक दूसरे ही ढग की भाषा मे बात करनी पडी। इसके अलावा एक और कठिनाई लार्ड विलिंगडन-विषयक थी। उन्हें महात्मा गाधी मे भारी अविश्वास है और वह कुछ अधिक बुद्धिमान भी नही हैं। पर जुलाई के मध्यतक बिल कानून बन जायगा और आगामी अप्रैल मास मे नया

वायसराय चला जायगा । इसलिए हमे कुछ-न-कुछ तो करना ही है।" मैने कहा, "मेरे धीरज का अन्त हो गया है। मै आगामी अप्रैल तक तो ठहरने मे रहा, तवतक तो पासा पड भी चुकेगा। भारतीय जनमत को आने वाले सुधारो को अविश्वास की दृष्टि से देखना सिखाया गया है और आगामी अप्रैल तक उनको विध्वस करने के सिद्धान्त को लेकर नये निर्वाचन लडने की तैयारी कर ली जायगी।" वह इस मामले मे सहमत हुए कि कुछ-न-कुछ तुरत ही करना आवश्यक है, और पूछने लगे, "क्या आपके पास कोई रचनात्मक सुझाव है?" मैने कहा, "पहली वात पारस्परिक सम्पर्क और दूसरी वात समझौता।" उन्होने पूछा कि भारत मे सवमे अच्छा गवर्नर कौन-सा है। मैने कहा, "या तो एडरसन को वातचीत करनी चाहिए, या भारत सचिव को भारत जाना चाहिए, या फिर गाधीजी को यहा वुलाना चाहिए।" उन्होने कहा कि उनकी भी यही राय है कि इस मानसिक अवस्था मे परिवर्तन करने के हेतु कुछ-न-कुछ तुरत करना आवश्यक है। आशा है, लार्ड जेटलैड इस सम्वन्ध मे कुछ कर सकेगे। उन्होने यह भी वताया कि वह लार्ड जेटलैड, लार्ड हेलीफैक्स और श्री मैकडानल्ड से वात करेगे। उन्होने सलाह दी कि मुझे श्री मैकडानल्ड से मिलना चाहिए। वह मेरे सम्वन्ध मे श्री मैकडानल्ड को लिखेगे और इसके वाद मे उनसे मुलाकात का समय निश्चित कर लूगा।

लार्ड जेटलेड उन दिनो भारत सचिव थे। अपने पिता के जीवन-काल मे वह लार्ड रोनाल्डशे के नाम से पुकारे जाते थे और वगाल के गवर्नर रह चुके थे। वहाँ हिन्दू-धर्म से उन्हे कुछ रुचि हो गई थी और उन्होने 'दी हार्ट आफ आर्यावर्त' नाम की एक पुस्तक लिखी थी। लदन मे मै उनसे मिलने गया। और उन्होने मेरी वाते वडे ध्यान से सुनी। वातचीत के दौरान मे उन्होने वहुत ही कम वाधा डाली। वस, एक वार पूछा भर कि क्या गाधीजी एक व्यावहारिक आदमी है? मैने कहा कि होर, हेलीफैक्स, फिन्डलेटर स्टीवार्ट और स्मट्स से पूछ देखिये, वे आपको गाधीजी की व्यावहारिकता का प्रमाण दे सकते है। तव लार्ड जेटलेड ने पूछा, "लेकिन उनकी 'हिन्द-स्वराज्य' पुस्तक के वारे मे आपका क्या खयाल है?" मैने उत्तर दिया, "गाधीजी ने कुछ चरम लक्ष्य निर्धारित कर दिये है।

पर सभव है कि जबतक हम उन लक्ष्यो तक पहुच न जाय तबतक उनके अनुरूप आचरण न कर सके। उदाहरणस्वरूप मैने उन्हे बताया कि यद्यपि गाधीजी ने अपनी पुस्तक मे अस्पतालो की आलोचना की है, फिर भी उन्होने लाजपतराय और सी० आर० दास द्वारा बनाये गए अस्पतालो का उद्घाटन किया। लार्ड जेटलेड बोल उठे, "और खुद श्री गाधी ने भी तो अपना आपरेशन कराया था।" मैने कहा, "आपको उनके व्यावहारिक होने मे कोई शका नही करनी चाहिए। वह मात्रा नही, गुण देखते हैं। वह तो भावना के भूखे है।" लार्ड जेटलेड ने कहा, "मुझे आपकी बात बहुत पसन्द आई। मुझे गलतफहमी से नफरत है। जब मै कलकत्ते मे था तो मेरी समझ मे नही आता था कि गलतफहमी हो ही क्यो। अग्रेजो को काग्रेस के बारे मे कुछ गलतफहमिया हो गई है। ऋण न चुकाने की और इसी प्रकार की अन्य बातो ने उन्हे भयभीत कर दिया है। आशका की यह भावना सिर्फ सरकार के विरोधियो तक ही सीमित नही है, समर्थको ने भी अपने निजी पत्रो मे लिखा है कि वे लोग (अर्थात् भारतवासी) बडा खतरनाक काम कर रहे है।" लार्ड जेटलेड चाहते थे कि भारत मे रहने वाले उनके मित्र इस बात को समझने की चेष्टा करे कि उन्हे भारतीय शासन बिल को पास कराने मे कैसी-कैसी कठिनाइयो का सामना करना पडा है। मैने कहा कि मै यह बात भारतवासियो को तभी समझा सकता हू जब उसके अनुकूल वातावरण उत्पन्न हो। "हमसे न मिलिये" की नीति से सारा वातावरण दूषित हो गया है।

मैने क्वेटा वाले मामले का उदाहरण दिया। गाधीजी और लार्ड विलिगडन के बीच जो पत्र-व्यवहार हुआ था वह उस समय उनके सामने था। मैने उसके सम्बन्धित अगो को पढा और उनसे कहा कि देखिये, दोनो रुखो मे कितना अन्तर है। उन्होने इसे महसूस किया और कहा, "अब क्या किया जाय?" मैने

उत्तर दिया, "वैसे गाधीजी ओर लार्ड विलिगडन की मुलाकात निरर्थक सिद्ध होगी, फिर भी यह मुलाकात होनी अवश्य चाहिए, क्योंकि जवतक वायसराय गाधीजी से नही मिल लेगे तवतक गवर्नर लोग भी उनसे नही मिल सकते।" उन्होने कहा, "मै इस वात को महसूस करता हू। आपको फिन्डलेटर स्टीवार्ट से सम्पर्क रखना चाहिए। मै जितनी भी सहायता कर सकता हू, करूगा और आपसे फिर वातचीत करूगा।"

मैने इसकी एक लम्वी रिपोर्ट गाधीजी को भेजी

२६ जून १६३५

परमपूज्य वापू

लदन मे लोगो से मिलने मे वडा समय लगता है, क्योकि उनका समय हफ्तो पहले वध जाता है। हेलीफैक्स से मै पाच तारीख को मिलूगा यानी यहा आने मे एक महीने वाद। होर जर्मनी, इटली और चीन की वातो मे इतने व्यस्त है कि उन्होने मुझसे कुछ दिन प्रतीक्षा करने और मुलाकात के लिए उन्हे वार-वार याद दिलाते रहने को कहा है। फिर भी मै जानता हू कि दोनो मेरे कार्य कलाप से जानकारी वनाये रहते है। मै जितने लोगो से मिला हू उन सभी ने मेरे यहा आने के उद्देश्य के प्रति सहानुभूति प्रकट की है और मै जानता हू कि यह सहानुभूति दिखावटी नही है। सवसे अधिक सहायता मुझे सर फिन्डलेटर स्टीवार्ट से मिल रही है और मेरा खयाल है कि लोगो पर उनका काफी प्रभाव है। उनके मन मे आपके प्रति वडा सौहार्द है, आपके गुण गाते-गाते वह कभी नही अघाते है, और जव मैने उन्हे आपका पत्र दिया तव उसे उन्होने वडे स्नेह और भावातिरेक के साथ पढा। उन्होने हर तरह की सहायता देने का वचन दिया है और वह सहायताकर भी रहे है। मैफे[1] ने मुझे वताया कि उनका लोगो पर प्रभाव है और वह कुशाग्र वुद्धि तथा दृढप्रतिज्ञ है। मुझे यह भी वताया गया है कि जहा कही उनके अपने वर्ग का स्वार्थ नही टकराता वहा वह भारतीयो का समर्थन करते है। अव मै इस वात को समझ गया हू कि यहा जो लोग रोजमर्रा के शासन-कार्य की देखभाल करते है और व्यापक नीतियो की रूपरेखा तैयार करने के लिए स्थायी रूप से मौजूद है, हमे मुख्यत उन्ही से वातचीत करना चाहिए। मत्रियो का तो महत्व है ही, पर स्थायी

---

१ अव लार्ड रगवी

अफसरो का महत्व भी कम नही है। लार्ड जेटलेड ने मेरे उद्देश्य के प्रति वडी सहानुभूति दिखाई और कहा कि मै फिन्डलेटर स्टीवार्ट के सम्पर्क मे रहू, इसलिए मै उन्हीसे चिपका हुआ हू और मेरी सभी महत्वपूर्ण मुलाकातो की व्यवस्था उन्हीके द्वारा होती है। मुझसे दो वार मुलाकात करनेके वाद, जो ढाई घटे तक चली, उन्होने मुझसे कहा कि सिद्धान्त रूप मे वह मुझसे सहमत है और अव कुछ-न-कुछ ठोस और लिखित रूप मे अस्तित्व मे आ जाना चाहिए। आगे क्या कदम उठाया जाय, सो अव वही वतायगे।

मै अव अपने काम के वारे मे कुछ विस्तार के साथ वताता हू।

मै इन आदमियो से मिल चुका हू—

सर फिन्डलेटर स्टीवार्ट से दो वार मिला, वातचीत ढाई घटे तक चली। भारत के उपसचिव श्री वटलर से, जो देखने मे वहुत आकर्षक है ओर विलकुल युवक होते हुए भी वडे कुशाग्रवुद्धि है, एक घटा वातचीत हुई। इस सप्ताह मे उनके साथ दोपहर का भोजन करूगा। जेटलेड से ४५ मिनट तक वातचीत हुई। सामन्त सभा मे विल के पास होने के वाद उनसे फिर मिलूगा। इसी तरह लोदियन से भी ४५ मिनट तक वातचीत हुई ओर विल के पास होने के वाद फिर मिलूगा। लार्ड डरवी से फिर मिलने वाला हू आर उनसे तो जितनी वार चाहू मिल लेता हू। सर हैनरी पेज क्रोफ्ट से मै दो वार मिला। मैनचेस्टर वालो के साथ लोकसभा मे भोजन किया। सर हैनरी स्ट्राकोश के साथ भोजन कर चुका हू और उन्होने कहा है कि जव कभी भी मुझे उनकी सहायता की आवश्यकता हो मै उनके साथ भोजन करने चला आऊ। सर टामस कैटो ओर वहुत से प्रमुख नागरिको के साथ भी भोजन कर चुका हू। इन लोगो ने मुझे फिर भोजन के लिए वुलाया है। सर जार्ज शुस्टर के साथ दो वार भोजन कर चुका हू। सर वेसिल व्लैकेट के साथ भोजन कर चुका हू और फिर भोजन करने जाना है। भारत मत्री के प्राइवेट सेक्रेटरी क्रोफ्ट के साथ भोजन किया। 'मैनचेस्टर गार्जियन' के श्री वोन से मिला और उसी पत्रके श्री क्रोजियर मुझसे मैनचेस्टर मे मिलेगे। और अव मै इस सप्ताह मे लार्ड लिनलिथगो, लार्ड हेलीफैक्स और श्री मैक्डानल्ड से मिलूगा। सर सेम्युअल होर के सिवाय और सवसे मिलने का समय निश्चित हो चुका है। श्री वाल्डविन के साथ मेरी भेट की व्यवस्था फिन्टलेटर स्टीवार्ट कर रहे है। शुस्टर ने सलाह दी है कि साइमन के चक्कर मे समय नष्ट मत करो। लोदियन ने कहा है कि लायड जार्ज को फिलहाल छोड दो। डरवी ने कहा है कि मुझे सैलिसवरी और सर आस्टिन चैम्वरलेन से अवश्य मिलना चाहिए। उन्होने कहा कि अनुदार दल के लोगो में लार्ड

मेलिसबरी और सर हैनरी पेजक्रोफ्ट ही सबसे अधिक ईमानदार है। उन्होंने मुझे मैनचेस्टर जाने की सलाह दी, जहा वह मुझे वहा के प्रभावशाली मित्रो के साथ दोपहर के भोजन पर बुलायेंगे। लार्ड रीडिंग बीमार है। नगर के कुछ और प्रमुख निवासियो से भी मिलनेवाला हू। मजदूर दल के अधिकांश वजनी सदस्य इस सप्ताह मेरे साथ लोकसभा मे भोजन करेगे। इसके बाद मै पादरियो तथा दूसरे पत्रकारो से मिलूगा। किन्तु अब मैने यह समझ लिया है कि मेरे काम के लिए हेलीफैक्स, जेटलेड, होर, बटलर, बाल्डविन, लोदियन और सर फिन्डलेटर स्टीवार्ट औरो के मुकाबले मे ज्यादा महत्व रखते है, इसलिए अब मै अपना अधिकतर समय इन्हीके साथ बिताऊगा। सर फिण्डलेटर स्टीवार्ट ने यह बताने का वचन दिया है कि आगे मुझे क्या करना चाहिए। इसलिए अब मै पूरी तरह से उन्हीके हाथो मे हू।

अब लोगो से जो बातचीत हुई, कुछ उसके सम्बन्ध मे कह दू। सबसे पहले मैने उन्हे बताया कि भारतवासियो की यह कोई राजनीतिक चाल नही है, बल्कि सचमुच ही उनकी यह भावना है कि बिल आगे की ओर बढानेवाला नही, बल्कि पीछे की ओर हटाने वाला कदम है, जिससे अग्रेजो की पकड और भी मजबूत हो जाय। मेरी इस बात पर यहा के लोग चकित रह जाते है और उनकी समझ मे नही आता कि भारतवासी ऐसा क्योकर सोच सकते है। दूसरे मैने उन्हे बताया, "मै इस बात को स्वीकार करता हू कि इस बिल को आप लोग सच्चे दिल से एक भारी प्रगति मानते है। यदि इन सुधारो के पीछे सद्भावना हो तो यह बिल सचमुच ही भारी प्रगति सिद्ध हो सकता है। पर भारतवर्ष के ब्रिटिश अधिकारियो के व्यवहार मे हमे इस भावना का अभाव दिखाई देता है। मेरा तो सदा से यह विश्वास रहा है कि असल चीज बिल की भाषा नही, बल्कि उसके पीछे छिपी भावना है। सद्भावना के बिना तो यह बिल एक बहुत ही प्रतिगामी कानून सिद्ध होगा।" मैने कहा कि चूकि हर बात का अन्तिम निर्णय गवर्नर जनरल और गवर्नर करेगे, इसलिए यदि वे अपने अधिकारो से काम लेने लगेगे तो उनका शासन एक परले सिरे का स्वेच्छाचारी शासन बन जायगा। इसके विपरीत यदि वे वैधानिक राज्यसत्ता के आदर्श को सामने रखकर काम करेगे, और ये सब लोग इसी आदर्श की बात कहते है, तो इस बिल के द्वारा बहुत अच्छी शासन व्यवस्था अस्तित्व मे आ सकती है। इसलिए सबकुछ इस बात पर निर्भर है कि बिल को किस भावना के साथ प्रकृत रूप दिया जायगा। मैने यह बात स्वीकार की कि हमारे इग्लैंड वाले मित्रो के मन में सद्भावना और सहानुभूति है, पर ये भावनाए समुद्र को पार नही कर पाई है, क्योकि भारत मे जिन लोगो के हाथ मे शासन की बागडोर है उनका आचरण यहा व्यक्त की गई भावनाओ

के विपरीत है। मैने एक बिलकुल ही हाल की क्वेटा वाली घटना का उदाहरण दिया। इसके बारे मे आपके और लार्ड विलिंगडन के बीच जो पत्र-व्यवहार हुआ था वह मैने उन्हे दे दिया है और यह समझाने की चेष्टा की है कि आपके अनुरोध मे और लार्ड विलिंगडन के उत्तर मे कितना अन्तर है। मैने कहा कि ऐसी परिस्थिति मे यह कैसे विश्वास किया जा सकता है कि आज जब हमे अपने दु खी भाइयो से ही मिलने की अनुमति नही दी जाती तब निकट भविष्य मे ही हमे अधिक अधिकार क्योकर मिल सकेगे ? भारत के इस दमनपूर्ण वातावरण के कारण ही हमे यह विश्वास करना पडता है कि नये सुधार हमे पीछे की ओर ले जायगे। सुधारो के प्रति एक दूसरे ही प्रकार की मनोवृत्ति उत्पन्न करने के लिए, जिससे उन्हे अमल मे लाया जा सके और हमारे यहा के हितैषियो की अभिलाषा की पूर्ति हो सके और मौजूदा कशमकश का हमेशा के लिए अत किया जा सके, यह जरूरी है कि तुरत ही भारत मे अपेक्षाकृत अधिक अच्छी भावना को उद्दीप्त किया जाय। मैने उन्हे यह भी बताया कि मैने दिल्ली मे यह भावना पैदा करने की चेष्टा की, पर असफल रहा। तीसरे, मैने उनसे कहा कि मित्रता की इस भावना के अभाव मे इस बिल के द्वारा, सम्भव है, दोनो देशो में कटुता और भी बढ जाय। मैने कहा कि वर्तमान वातावरण से तो चारो तरफ गैरजिम्मेदारी बढती जा रही है। सिविल सर्विस के लोग गैर जिम्मेदार और अनुशासनविहीन होते जा रहे हैं। उदाहरणस्वरूप मैने खा साहब के मामले की चर्चा की और बताया कि किस प्रकार नीचे के अफसरो के खा साहब के खिलाफ उठ खडे होने के कारण उस मामले मे गृहमत्री कुछ भी नही कर सके। आजकल तो भारत के सिविल सर्विस वालो का खयाल है कि उनका एकमात्र कर्त्तव्य कानून और शाति की रक्षा करना है, इसलिए जनप्रिय लोगो की ओर से जो भी सुझाव आये उनका विरोध होना ही चाहिए, चाहे वे अच्छे ही क्यो न हो। काग्रेसी कार्यकर्त्ताओ मे उत्तरदायित्व की भावना का अभाव होने के कारण वे सरकार के हरेक काम को सदेह की दृष्टि से देखते है। इसका परिणाम यही होगा कि दक्षिण-पथी तो कमजोर पडते जायगे और वामपथी मजबूत होते जायगे। यदि स्थिति का सम्यक् ज्ञान न हुआ तो, सभव है, दक्षिण पथी भी सुधारो को निकम्मा बनाने मे लग जाय। वर्तमान परिस्थिति से मुसलमानो मे अनैतिकता फैल रही है, क्योकि वे समझते है कि वे चाहे बुरे-से-बुरा आचरण करे, उन्हे सरकार का समर्थन मिलता रहेगा। मै यहा इन लोगो से कहता हू कि इन कठिनाइयो के बावजूद गाधीजी ने इस बाढ मे बह चलने से इन्कार कर दिया है। "आप लोग उस आदमी की हत्या किये डाल रहे है जो इस ससार मे आपका सबसे बडा हितैषी है।" मै इन लोगो को बताता हू

कि वर्तमान वातावरण के कारण इतनी अनैतिकता फैल रही है कि भारतवर्ष में कोई रचनात्मक कार्य करना असम्भव-सा हो गया है। जन साधारण की क्रयशक्ति में वृद्धि करने की आवश्यकता पर अंग्रेज अर्थशास्त्री उतना जोर देते हैं, पर वैसा उस समय तक सम्भव नहीं होगा जबतक दोनों के बीच की खाई न पट जाय।

उधर शासक वर्ग का सारा समय कानून और शांति की रक्षा में लगा रहे और इधर जनता का समय उससे मोर्चा लेनेमें बीते—यह बड़े ही परिताप की परिस्थिति है। इसलिए मैं यहां वालों से कहता आ रहा हूं कि इस क्रम को बिल्कुल उलट देना चाहिए। जो पहला कदम उठाया जाय वह हो व्यक्तिगत सम्पर्क की स्थापना। दूसरा काम यह हो कि गवर्नर जनरल और गवर्नरों के पद सम्हालने के लिए अच्छे-से-अच्छे आदमी भेजे जायं जिससे मंत्रियों और गवर्नरों के बीच संघर्ष की सम्भावना ही नष्ट हो जाय। मैं इन लोगों से यह भी कहता आ रहा हूं कि यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि सरकार का संचालन करने या शासन के यंत्र को योग्यतापूर्वक चलाते रहने में कांग्रेस को कोई दिलचस्पी नहीं है। यदि कांग्रेस पद ग्रहण करेगी तो कुछ रचनात्मक कार्य करने के लिए। छटनी, ग्रामोत्थान, स्वास्थ्य-सुधार, सफाई, शिक्षा का विस्तार, करों में इस प्रकार का सन्तुलन कि गरीबों का बोझ कम और अमीरों का बोझ अधिक हो, अधिक भारत-वासियों को नौकरी, उद्योगधंधों में सहायता, महाजनी, जहाजरानी और बीमा-व्यवस्था को प्रोत्साहन, सैन्य विभाग के राष्ट्रीयकरण और पूर्ण स्वराज्य की प्राप्ति की दिशा में अटट प्रगति—बस, केवल ऐसी कार्य-योजना कांग्रेस को सुधार अमल में लाने के लिए आकर्षित कर सकती है।

मेरी बातों के उत्तर में ये लोग कहते हैं, "आप कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओं को जितना भी अधिकार देना चाहते हैं वे सब तो उन्हें बिल के द्वारा प्राप्त हो ही जायंगे। इस बिल को लेकर हमारे विरोधियों की तो कौन कहे, समर्थकों तक में कितनी हलचल मच गई है, इसका आप लोग अंदाजा तक नहीं लगा सकते। विरोधियों ने तो विद्रोह का झंडा खड़ा कर दिया था और बिल को आत्मसमर्पण का कार्य बताया था। उधर समर्थकों ने बिल का समर्थन किया तो केवल पार्टी के प्रति वफादारी की खातिर, फिर भी भीतर-ही-भीतर वे हमें चेतावनी-पर-चेतावनी देते रहे कि बिल से ब्रिटेन के शासन पर बड़ा ही बुरा प्रभाव पड़ेगा।" इन लोगों का कहना है, "बाल्डविन, होर और हेलीफैक्स को इस बिल के पास कराने में बड़े साहस से काम लेना पड़ा है, इसलिए यदि हम लोग उनके और भारत के दूसरे हितैषियों के साहस की सराहना न करें, उनके दल के त्याग और मैत्री के बन्धन को भुला दें और इस बिल को लेकर

उनके स्वास्थ्य पर जो ज़ोर पडा उसकी ओर से आखे मूदे रहे तो यह घोर अन्याय की वात होगी। इससे अधिक निर्दयता की वात और क्या हो सकती है कि यह कहा जाय कि सवकुछ भारत पर ब्रिटेन की पकड को और भी मजबूत करने के लिए किया गया है। इसकी जरूरत ही क्या थी ? क्या पकड ढीली थी ? भारतवासियो के हाथो मे कितना वडा अधिकार सौपा गया है इसकी आप कल्पना तक नही कर सकते है। अग्रेजी सत्ता का अन्त हो रहा है। अधिकार एक वार दे देने के वाद उसे फिर कोई वापस नही ले सकता, और अधिकार दिया जा चुका है। यह ठीक है कि विल से ऐसा लगता है मानो सारे अधिकार गवर्नरो और गवर्नर जनरल के हाथो मे सुरक्षित कर दिये गए हो, किन्तु क्या ऐसी ही स्थिति इग्लैड मे राजा और सामन्त सभा की नही है ? जो सरक्षण रखे गये है वे आपके ही हित मे है। कौन इतना वेवकूफ होगा जो आपके मामले मे दखल देगा ? हम लोग विधान-भीरु जाति है और इग्लैड के किसी भी दल को यह वात सहन नही होगी कि कोई गवर्नर या गवर्नर जनरल किसी मत्री के मामले मे हस्तक्षेप करे। हा, कोई मत्री अराजकता या अशान्ति फैलाना चाहता हो तो वात दूसरी है। अव केवल एक चीज़ रह जाती है, जिसके लिए आप लोगो को लडना पडेगा, वह है सैन्य विभाग पर अधिकार , पर यदि आपने शासन-यत्र पर पूरी तरह से कावू पा लिया और समझदारी के साथ काम लिया तो आपको इस लडाई को लडने और जीतने मे कोई कठिनाई नही पडेगी। निर्देशविधि (इन्स्ट्रूमेंट आफ इन्स्ट्रक्शन्स) मे दिया हुआ है कि सैनिक मामलो मे मत्रियो के साथ मिलकर सलाह की जाय। काग्रेसी कार्यकर्त्ताओ ने कभी शासन-यत्र को चलाने का काम नही किया है, इसलिए वे इस वात को नही समझ रहे है कि सरक्षण तो भवन को सुरक्षित रखने के लिए सिर्फ ताले-कुजी का काम करेगे। जो कोई उसके भीतर जाकर उसमें रहना चाहेगा उसके मार्ग मे कोई वाधा उपस्थित नही होगी। आप तो ग्रामोत्थान और शिक्षा आदि जैसी छोटी-छोटी वातो की चर्चा कर रहे है, पर अव तो समूची सरकार ही आपकी होगी। आपको तो अपनी नीति निर्धारित करके विधान सभा के सदस्यो को अपने साथ रखना है, फिर आप जो भी कार्य-योजना चाहे, अमल मे ला सकते है। (*इन लोगो को यह वताना वेकार है कि सरकारी आय का ८० प्रतिशत भाग तो पहले से ही सैनिक कार्यों और ऋणो के मद्दे लिख दिया गया है। इस समय इस सवाल को आगे वढाना निरर्थक होगा।*) आपकी योजनाओ में कोई भी दखल नहीं देगा।"

भारत के मौजूदा वातावरण के सम्वन्ध मे उनका कहना है, "हम अवस्था को पूरी तरह से समझते है, पर उसके सम्वन्ध मे पहले कुछ करना-

धरना सम्भव नही था। हम यहा से कोई भी ऐसी बात नही कह सकते थे जिससे कट्टर-पथियो के आन्दोलन को उत्तेजना मिलती। श्री बाल्डविन, लार्ड हेलीफैक्स और सर सैम्युअल होर जैसे अनुदार दलवालो के लिए एक अनुदार दलीय पार्लमेंट मे, जहा कट्टरपथी लोग उन्मत्त साडो की तरह लड रहे थे, इस बिल को पास कराना कोई आसान काम नही था। हम चाहते है कि ये सब बाते आप भारतवर्ष मे अपने मित्रो को समझा दे। यह तो ठीक है कि कोई दूसरा वायसराय होता तो शायद वातावरण अपेक्षाकृत अधिक अच्छा होता। जो हो, वायसराय और गाधीजी की एक दूसरे के साथ पटरी नही बैठी। पर अब जब बिल पास हो गया है, लोगो की मनोवृत्ति मे सुधार करने के लिए कुछ-न-कुछ तो करना ही पडेगा। हम यह स्वीकार करते है कि बिल की धाराओ से भी अधिक महत्व की बात है लोगो की मनोवृत्ति। यदि सम्भव हो तो हमें गाधीजी को अपनी ओर करना चाहिए। इस मामले में हम आपसे पूरी तरह से सहमत है, सवाल सिर्फ यही है कि यह कैसे किया जाय?"

इन लोगो की नेकनीयती से भरी बातो से मै बडा प्रभावित हुआ हू। जब जेटलेड, बटलर, लोदियन और फिन्डलेटर स्टीवार्ट जैसे लोग इस ढग की बाते करते है और हमे आश्वासन देते है कि सरक्षण मत्रियो के कार्य-कलाप मे हस्तक्षेप करने के लिए नही रखे गये है, तब यह विश्वास क्योकर न किया जाय कि वे ये बाते सच्चे हृदय से कह रहे है? मै यह नही मान सकता कि ये सारी बाते कोरी भावुकता मात्र है। अपने व्यापारी कामकाज मे मै कभी मीठी-मीठी बातो के धोखे मे नही आया, इसलिए यदि मै इन लोगो के सद्व्यवहार और वक्तृता के प्रवाह मे बह जाऊ तो मेरे लिए बडे आश्चर्य की बात होगी। फिर भी सारी बातो का निर्णय आप स्वय ही करिये, क्योकि यदि मुझे धोखा हुआ हो तो भी मै इन लोगो से इसके सिवाय और कुछ नही कह रहा हू कि इन्हे आपके साथ व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करना चाहिए और सुधारो को अमल मे लाने के लिए कोई समझौता कर लेना चाहिए। इन लोगो से मेरी जो बातचीत हुई, मैने जिन-जिन बातो पर जोर दिया, और उन्होने जो उत्तर दिया, उसका सार मैने आपको बता दिया। आशा है, यह सब व्यर्थ नही जायगा।

नीचे कुछ सवाल और अपने उत्तर दे रहा हू। इनका अपना महत्व है, क्योकि ये उन लोगो की ओर से आये है जिनकी बात यहा चलती है

१ प्रश्न—हम किसके साथ समझौता करे?

उत्तर—मुसलमानो का तो कोई सवाल ही नही उठता, क्योकि वे सुधारो के विरोध मे नही है। हम उन्हे उनके अधिकारो मे वचित नही

करना चाहते । उदार दल वालो के पीछे जनता का बल नही है, इसलिए उनके सबध मे चिन्ता करने की आवश्यकता नही है । कम्यूनिस्टो को बाद दे देना चाहिए, क्योकि वे तो काग्रेस का ही एक अग है । किन्तु यदि उन्हे अलग माना जाय तो उनपर ध्यान देने की आवश्यकता नही है, क्योकि अपने दृष्टिकोण के मामले मे वे समझौता करने के इच्छुक नहा है । इसलिए जो एकमात्र सस्था रह जाती है वह है काग्रेस, और काग्रेस से बातचीत करने का मतलब है गाधीजी से बातचीत करना, क्योकि अकेले वही ऐसे व्यक्ति है जो समझौते को मूर्त रूप दे सकते है ।

२ प्रश्न—क्या गाधीजी समझौते को मूर्त रूप दे सकेगे ?

उत्तर—हा ।

३ प्रश्न—समझौते की शर्त क्या होगी ?

उत्तर—पारस्परिक विश्वास और मित्रता ही उसका आधार होना चाहिए । विधान पर इस तरह अमल करना चाहिए कि उससे भारत की उन्नति हो और हम औपनिवेशिक स्वराज्य की ओर बढ सके । (इसपर वे कहते है कि औपनिवेशिक स्वराज्य अथवा मित्रता कोई ऐसा पदार्थ नही है जिसे कोई कानूनी कागजपत्र जन्म देगा । उसकी प्राप्ति तो कठोर परिश्रम के बाद ही सम्भव है और उसे पाने के लिए ब्रिटेन से भी अधिक भारत को चेष्टा करनी होगी । फिर भी वे इस बात का आश्वासन देते है कि इस दिशा मे वे सदा हमारी सहायता करेगे ।)

४ हमे समझौता या सधि जैसे शब्दो मे अरुचि है ।

ये लोग कहते है कि इस समय इग्लैड मे इन शब्दो के प्रति बडी दुर्भावना है । दोनो पक्षवालो को बद्धमूल धारणाओ को ध्यान मे रखना ही होगा । इसका उत्तर मै यो देता हू "यदि सार वस्तु मिल जाती है तो मै शब्दो को लेकर नही झगडूगा । क्या आप एन्थनी ईडन को फ्रास, इटली और दूसरी जगहो पर इसलिए नही भेज रहे है कि वे दिल खोलकर बातचीत करके आपसी समझौता करे ? क्या आप इस समय भी आयरलैड से समझौता की बातचीत नही चला रहे है ?" इसका वे जवाब देते है "मान लीजिये कि व्यक्तिगत सम्पर्क और समझौते के बाद हमारी ओर से यानी राजा की ओर से, पक्का घोषणा कर दी जाय और काग्रेस उसका उत्तर दे, तो ?" मेरा जवाब यह है, "यदि दोनो पक्ष कर्त्तव्यो के बारे मे एक-दूसरे का दृष्टिकोण समझ ले तो मुझे कोई आपत्ति नही होगी ।" मेरा उनसे कहना है कि समझौता उन्ही के हित मे अच्छा होगा, क्योकि उससे दूसरा पक्ष बध जायगा । फिर भी जबतक अभिप्राय को ठीक समझने की भावना मौजूद है तबतक मुझे कोई आपत्ति नहीं है ।

५ प्रश्न—गांधीजी से मिले कौन ?

उत्तर—यह तो स्पष्ट ही है कि पहल वायसराय को करनी होगी, क्योंकि जबतक वह ऐसा नहीं करेंगे तबतक दूसरे लोग गांधीजी से बातचीत नहीं कर सकेंगे। पर वायसराय की भेंट से ही प्रयोजन उतना सिद्ध नहीं होगा, किसी और को भी गांधीजी को अपने हाथ में लेना होगा। इसके लिए मैं एन्डरसन का नाम सुझाता हूं।

प्रश्न—इमरसन[1] के बारे में आपकी क्या राय है ? क्या वह गांधीजी को पसन्द है ?

उत्तर—कह नहीं सकता। लोग कहते तो हैं कि वह बहुत अच्छे आदमी हैं।

६ प्रश्न—क्या गांधीजी व्यावहारिक हैं ?

उत्तर—हेलीफैक्स, होर, स्मट्स और फिन्डलेटर स्टीवार्ट का हवाला काफी होगा। मैं खुद व्यापारी हूं, इसलिए मैं किसी कोरे भावुक आदमी के पीछे कभी नहीं लगता।

७ प्रश्न—श्री गांधी से मिलने के बाद और हमारी ओर से घोषणा हो जाने पर क्या गांधीजी यह घोषणा कर सकेंगे 'ये सुधार अच्छे नहीं हैं, इनमें वह बात नहीं है जो मैं चाहता हूं, पर रचनात्मक कार्य के लिए मुझे सद्भावना और सहायता का आश्वासन दिया गया है, इसलिए अपने देश की सहायता करने के लिए मैं इन्हें कुछ समय तक कसौटी पर कसकर अवश्य देखूंगा।'

उत्तर—हां, वह ऐसा उत्तर दे सकते हैं। मुझे इसकी बड़ी आशा है, बशर्ते कि आपको उनसे व्यवहार करने का ढंग मालूम हो। अगर आप उनसे ईमानदारी का बर्ताव करें, उनके सामने अपना हृदय खोल कर रख दें और उन्हें अपनी सारी कठिनाइयां बतलावें तो वह अवश्य आपकी सहायता करेंगे।

८ इसपर वे लोग कहते हैं, "श्री गांधी के बारे में सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि यद्यपि भारत की ९० प्रतिशत जनता उन्हें आदर और प्रेम की दृष्टि से देखती है तथापि उनकी कोई वैधानिक स्थिति नहीं है। हम अंग्रेजों को ऐसे आदमियों के साथ व्यवहार करने की आदत पड़ी हुई है जिनकी कोई वैधानिक स्थिति होती है।"

इस पर मैं कहता हूं, "तो क्या आप तबतक प्रतीक्षा करेंगे जबतक गांधीजी मंत्री न बन जाय ? तब तो इसके लिए आपको प्रलय काल तक बाट जोहनी होगी।"

---

[1] सर हरबर्ट इमरसन जो, १९३३ से १९३८ तक पंजाब के गवर्नर थे।

तब मुझसे कहा जाता है, "दुर्भाग्यवश श्री गांधी और वायसराय के मिलन ने दो विरोधी नेताओं के मिलन का रूप ले लिया है।"

इसपर मैं जवाब देता हू, "यह सब आपका ही किया हुआ है। गाधीजी लार्ड चैम्सफोर्ड से मित्र की तरह मिले थे, और बाद मे समझौता होने से पहले लार्ड रीडिंग और लार्ड इर्विन से भी इसी प्रकार मिले थे।"

९ प्रश्न—क्या आप नये वायसराय के जाने तक नही रुक सकते ?

उत्तर—तबतक बहुत देर हो जायगी।

मुझे उम्मीद है कि इन सवालो से आपको इस बात का आभास मिल जायगा कि यहा हवा का रुख किधर है।

अब कुछ लार्ड हेलीफैक्स, बटलर और लार्ड डरबी के बारे मे सुन लीजिये। बटलर ने मुझसे जानबूझकर पूछा कि भारतवर्ष मे लार्ड हेलीफैक्स के बारे मे लोगो के कैसे विचार है ? मैने कहा, "लोग अब भी उनसे प्रेम करते है, पर हमारा खयाल है कि उनकी वह प्रतिष्ठा नही रही है, भारतीय मामलो मे अब उनका कोई प्रभाव नही रह गया है और भारत मे रहने वाले अग्रेजो को तो वह बिल्कुल ही अप्रिय है।" उन्होने कहा, "मै आपका भ्रम दूर करना चाहता हू। यह बात बिल्कुल गलत है कि उनकी प्रतिष्ठा जाती रही है। उनका बडा प्रभाव है और वह भारत को भूले नही है। भारत को तो उन्होने अपने जीवन का एक मिशन बना लिया है।

श्री बटलर का दृष्टिकोण व्यापक है और वह बहुत ही योग्य और बुद्धिमान व्यक्ति है। उनमे जातीय भेदभाव या बडप्पन की भावना लेशमात्र भी नही है। हम लोग अग्रेजो की नेकनीयती पर सदेह करते है, इससे उन्हे बडा दु ख होता है। वह मुझे हर प्रकार की सम्भव सहायता दे रहे है। पर अबतक मै जितने लोगो से मिला हू, उन सबमे लार्ड डरबी का व्यक्तित्व सबसे आकर्षक है। वह तकल्लुफ से दूर रहते है। जब मैने उनसे मिलना चाहा तब मुझे अपने घर बुलाने के बजाय वह स्वय मुझसे मिलने के लिए फौरन मेरे होटल मे चले आये। मै जिनसे भी मिलना चाहूगा उनसे वह मेरी मुलाकात की व्यवस्था करा देगे। उन्होने कहा है कि जब कभी जरूरत हो, टेलीफोन कर दिया कीजिये, मै या तो स्वय आपके पास आ जाया करूगा या आपको बुला भेजूगा। उन्होने मुझसे पितृवत् स्नेह के साथ बातचीत की। मुझे तो वह बहुत ही अच्छे लगे।

मै समझता हू कि अब पत्र लिखने की बारी आपकी है। आपको जो कुछ कहना हो लिखकर मेरे आदमी को दे दीजिये और वह उसे मेरे पास दिल्ली से हवाई डाक से भेज देगा। मुझे आशा है कि यहा मै आपका ठीक-ठीक प्रतिनिधित्व कर रहा हू। यहा के वातावरण मे जो सचमुच की

गलतफहमी फैली हुई है उसे हटाने के लिए मुझे भारी प्रयास करना पड रहा है। जब क्वेटा मे महादेवभाई का पत्र मिला तब मेरा हृदय टूक-टूक हो गया। वहा और यहा के वातावरण में कितना भारी अन्तर है! भारतवर्ष मे रहते हुए मै इस अन्तर को नही समझ पाता था। मै समझता हूँ कि अधिकाश दोष मशीनरी का है और यद्यपि यहा काफी सहृदय और नेक लोग है तथापि मुझे मशीनरी के चलने में शका है। मै तो, बस, इतना ही कह सकता हू कि मशीनरी के कलपुर्जो में भरपूर तेल डाल दिया जायगा। मुझे आपके हरेक काम मे गलतफहमी को दूर करने की चेष्टा दिखाई देती है। इस क्षोभकारी वातावरण में ऐसा करना अकेले आपही के लिए सम्भव है। एक प्रतिष्ठित मित्र का कहना है, "हम लोग वैधानिक कार्य-प्रणाली के अभ्यस्त है। जबतक लायड जार्ज पदासीन रहे तबतक वह बहुत बडे आदमी थे, पर अब जबकि वह अपने पद पर नही है हम उनकी आज्ञा का पालन नही कर सकते और न उनके विचारो पर अमल ही कर सकते है, चाहे हम उनका या किसी भी दूसरे आदमी का कितना ही सम्मान क्यो न करते हो। आपको यह बात भूलनी नही चाहिए कि श्री गाधी किसी पद पर नही है। जब आपकी अपनी सरकार हो जायगी तब बात कुछ और ही होगी। सिविल सर्विस वाले तो आपके दास मात्र होगे। फिलहाल ऐसा मुमकिन नही है। यह परिवर्तन कोई आश्चर्य की बात नही होगी, क्योंकि सिविल सर्विस वालो को तो केवल अपने स्वामी की आज्ञा का पालन करना सिखाया जाता है।" इस समय तो मै इस बात की प्रतीक्षा में हू कि सर फिण्टलेटर स्टीवार्ट मुझसे अगला कौन-सा कदम उठाने को कहते है।

जुलाई के महीने मे मै बहुत ही व्यस्त रहा। प्रारम्भ मन्त्रिमडल के प्रधान श्री रैमसे मैकडानल्ड की भेट से हुआ। उन्होने उन्ही दिनो प्रधान मन्त्रित्व का भार श्री बाल्डविन को सौपा था। उनसे जो बातचीत हुई, उसके कुछ नोट नीचे देता हू

बातचीत ३५ मिनट तक जारी रही। उन्होने पूछा, "भारत कैसा है ?" मैने उत्तर दिया, "बडा दुःखी है।" वह बोले, "सभी दुःखी है।" मैने कहा, पर हमारी बात जुदा है। आपने हमें एक शासन-विधान दिया है, जिसके बारे मे आपकी धारणा है कि वह सचमुच प्रगतिपूर्ण है और हमे हमारे लक्ष्य स्थान तक ले जायगा, जबकि हम समझते है कि यह एक पीछे की ओर ले जाने वाला कदम है जिसमे शिकजा और भी कस जायगा। हमारी यह धारणा भारत-

व्यापी वातावरण के कारण है। हम लोगो के साथ कोढियो जैसा अविश्वास-पूर्ण व्यवहार किया जाता है। आप लोग सहानुभूतिपूर्ण व्याख्यान झाडते है, पर उनसे हमारा कोई भला नही होता। हम लोग चाहते है सहानुभूति-पूर्ण कार्य। मानवीय सम्पर्क का पूर्णतया अभाव है। हम लोग जव कभी किसी अच्छे काम के लिए सहयोग देने की तत्परता प्रकट करते है, इन्कार कर दिया जाता है, और हमे नीचा दिखाया जाता है, और ऐसे वातावरण मे आप लोग चाहते है कि हम सुधारो की सराहना करे। यह स्वाभाविक ही है कि हम इन सुधारो को और आपकी नीयत को सशय की दृष्टि से देखे। आप जमीन को भली प्रकार जोते विना और सिचाई का समुचित प्रवन्ध किये वगैर वीज वखेर रहे है। यह स्वाभाविक ही है कि आपको फसल से वचित होना पडे।"

उन्होने कहा, "आपका कहना विल्कुल ठीक है। मानवीय सम्पर्क अत्यावश्यक है। पर कठिनाइया नही है, ऐसी वात नही है। वायसराय स्वय एक अच्छे आदमी है, और श्री गाधी भी अच्छे आदमी है, पर वे एक-दूसरे के साथ मिल-वैठ नही सकते। दोनो दो प्रकार की सुन्दर गतो के समान है, उन्हे अलग-अलग निकाला जाये तो दोनो कर्ण-प्रिय लगेगी, पर यदि दोनो को एक साथ निकाला जाय तो सामजस्य का नितान्त अभाव सिद्ध होगा। वस, यही मुश्किल है। अव यही देखना है कि अगला वायसराय कोन होगा। कौन होगा?" मै मुस्कराकर वोला, "आप यह सवाल मुझसे कर रहे है?—मुझसे, जिसे गुप्त वातो का कुछ भी पता नही है? मै इस प्रश्न का उत्तर कैसे दे सकता हू? पर अन्य लोग लार्ड लिन-लिथगो, वगाल के गवर्नर, लार्ड लोदियन और लार्ड पर्सी का नाम लेते है। आपका और होर का नाम भी लिया जा रहा है।" अव वह कुछ गम्भीर भाव सेवोले, "देखिये, एक प्रान्तीय गवर्नर तो वायसराय हो ही नही सकता। लोदियन का प्रश्न ही नही उठता है। रहा मै, सो यदि मेरा स्वास्थ्य ठीक रहता तो मै अवश्य जाना चाहता, पर ऐसी वात नही है। आपको पता ही है कि मै भारत से कितना प्रेम करता हू। मैने ही गोलमेज परिपद के सिद्धान्त को जारी रखवाया था। जव सरकार वदली तो मेरी एक शर्त यह भी थी कि इस प्रश्न को यो ही न छोड दिया जाय, वल्कि गोलमेज सिद्धात मे नये प्राणो का सचार किया जाय। हा, यह वात दूसरी है कि परिपद पहले की अपेक्षा कम वडी हो। हमे सहानुभूतिपूर्ण श्रीगणेश करना चाहिए। अनेक व्यक्ति चाहते है कि सरक्षण तुरत अमल मे आवे। यदि काग्रेस के साथ छिड गई तव तो सरक्षणो को महत्व प्राप्त होगा, अन्यथा यहा कोई सरक्षणो से काम लेना नही चाहता है। यदि काग्रेस ने

श्रीगणेश शासनविधान का विध्वंस करने के इरादे से किया तो अनुदार दलवालों के मनोरथ सिद्ध हो जायगे। हा, हमे भी इस बात की चेष्टा करनी चाहिए कि प्रारम्भ सहानुभूतिपूर्ण ढग से हो। सारा व्यापार एक उद्यान जैसा है। आपको सतोषपूर्वक उद्यान का विकास करना है, आपको हमसे भी इस बात का वचन लेना चाहिए कि हम सहानुभूतिपूर्ण ढग से कार्य करेगे। मै आपसे इस मामले मे बिल्कुल सहमत हू कि वैसा वातावरण उत्पन्न करने के लिए कुछ-न-कुछ करना आवश्यक है।"

मैने कहा, "मै जो कुछ कहना चाहता था वह आपने और भी सुन्दर ढग से कह दिया।" उसके बाद वह अपनी विचारधारा अनायास ही शब्दो द्वारा व्यक्त करने लगे। उनकी दृष्टि छत की ओर लगी हुई थी। बोले, "यह सबकुछ कैसे किया जाय, यही एक प्रश्न है। अभी हमने श्रीगणेश भी नही किया है। यह एक उतनी ही बडी समस्या है जितनी अपने नये दफ्तर में कमरो का पता लगाने की। मै रास्तो और कोनो से बिल्कुल अनभिज्ञ हू और इस नई इमारत की शनै-शनै जानकारी हासिल कर रहा हू। पर आपकी समस्या स्थायी तो है नही। हा, काफी बडी अवश्य है। उसका सामना तो करना ही होगा। न करना मूर्खता का काम होगा। पर मै यह नही जानता कि आपकी मदद कैसे करू। सोच रहा हू कि आगामी शरद ऋतु मे भारत जाकर श्री गाधी से मिलू। मै विश्राम के लिए और एक पर्यटक की हैसियत से जा सकता हू। मेरे जाने के मार्ग मे कठिनाइया अवश्य है, पर मेरी इच्छा यही है कि जाऊ। मै मौके की तलाश मे रहूगा। यदि गया तो अपने मित्र श्री गाधी से अवश्य मिलूगा। मुझे इसकी चिन्ता नही है कि लोग क्या सोचेंगे। यदि मै उनसे मिला तो मै जानता हू कि सारा झमेला तय हो जायगा। पर फिलहाल मुझे प्रकाश दिखाई नही दे रहा है। मै अभी-अभी भारी कार्य से अलग हुआ हू और मुझे नीद न आने की अभी तक शिकायत है। अपना नया घर ठीक कर रहा हू। मेरे नये घर में अव्यवस्था और गडबड का राज्य है। न कोट टागने के लिए खूटी है, न पुस्तक रखने के लिए अल्मारी। आप शायद जानते ही होगे कि मै गरीब आदमी हू। घर को ठीक-ठाक करने मे एक सप्ताह लगेगा, इसके बाद इन चीजो की ओर अधिक ध्यान दूगा। पर फिलहाल मुझे खुद दिखाई नही पडता कि मै किस प्रकार सहायता कर सकूगा।" उन्होने बातचीत के दौरान मे तीन बार भारत जाने की इच्छा को दुहराया, और तब मैने कहा कि यदि वह न जा सके तो कोई और आदमी ही गाधीजी से बात करे। बगाल के गवर्नर बात क्यो न करें? उन्हे

बगाल के गवर्नर पर गर्व था, क्योंकि वह भी स्काटलेंड के निवासी थे। मैंने कहा, "पर आपको सहायता तो करनी ही होगी। आप मन्त्रिमण्डल के सदस्य हैं, आप बहुत कुछ कर सकते हैं।" उन्होंने पूछा, "क्या आपने इडिया आफिस से बात की है?" मैंने कहा, "हा, ।" उन्होंने बताया कि लार्ड जेटलेंड भले आदमी हैं। मैंने कहा, "सो तो है, पर मुझे पता नहीं कि उनमे होर जैसा लौह सकल्प है या नहीं।" उन्होंने कहा, " होर को बिल का समर्थन करने के मामले मे न्याय का विश्वास हो गया था। जेटलेंड पहले से ही भारत के साथ सहानुभूति रखते है, इसलिए सभव है उनका समर्थन अपेक्षाकृत अधिक दूरस्थ हो। पर मैं कह नहीं सकता। जो हो, पहला कदम भारत सचिव की ओर से ही उठाया जायगा। हमारे मत्रिमडल की बैठक सप्ताह मे एक बार दो घटे के लिए होती है, इसलिए जेटलेंड से अधिक मिलने का अवसर नहीं मिलता है। पर वह जब किसी चीज को उठायेगे तो वह पूरी होगी ही। वह इस बात से पूरी तौर से सचेत है कि यदि सुधारो को अच्छी तरह समर्थन नहीं मिला तो उनकी ख्याति को बट्टा लगेगा। अतएव सब आपकी बात सुनने को बाध्य हैं।" मैंने कहा, "लार्ड जेटलेंड मेरे साथ सहमत है और फिन्डलेटर स्टीवार्ट मेरी काफी मदद करते हैं। पर अगले कदम की बात कोई नहीं उठाता है।" मैंने उन्हे बताया कि मैं अबतक कितने आदमियो से मिल चुका हू। उन्होंने कहा, "मुझे यह देखकर प्रसन्नता हुई कि आपने अपनी पहुच काफी दूर तक फैला रखी हैं। पर आप यह मत समझिये कि वे लोग अगले कदम की बात सोच नहीं रहे हैं। वे सोच तो रहे हैं, पर वे अभी कुछ कह नहीं सकते। वे आपकी बात तो सुनेंगे ही। आप भारत इस धारणा के साथ न लौटिये कि अगला कदम है ही नहीं। आपको सफलता मिलेगी। मैं भारत जा सकता तो बडी बात होती, पर इस बीच मैं यह सोचूंगा कि आपकी किस प्रकार सहायता करू। आप मुझसे एकबार फिर मिलिये।"

मैंने उन्हे बताया कि अपने नीद न आने के रोग से पीछा छुडाने के लिए मैंने क्या किया था। मैंने उन्हे अपनी खुराक मे परिवर्तन करने की सलाह दी। उन्होंने कहा, "मुझे एक मित्र डाक्टर की दरकार है, पर वैसे मुझे डाक्टरो मे आस्था नहीं है। मैं प्रतिदिन होर्डर के साथ नाश्ता करता हू जिससे मुझे बडी सहायता मिलती है।" उन्होंने पुराने दिनो का जिक्र किया जब उन्होंने भारत जाकर खूब शिकार खेला था। उन्होंने कई पुराने व्यक्तियो की भी चर्चा की जिन्होंने उनके साथ बडी शिष्टता का व्यवहार किया था।

में व्यक्तिगत सम्पर्क के प्रचार-कार्य मे जुटा हुआ था। अगले दिन मेरी मुलाकात लार्ड लिनलिथगो से हुई। मैंने दोपहार का भोजन श्रीमती बटलर के साथ किया, चाय श्री एटली और श्री लैन्सबरी के साथ ली, और रात का खाना लोकसभा के मजदूर दल के सदस्यो के साथ खाया। रात वाले भोजन-समारोह का विवरण नीचे देता हू

मेजर एटली, रेस डेवीस, मेमोर काक्स, टाम स्मिथ, टाम विलियम्स, मार्गन जोन्स जान विल्मोर और चार्ल्स एडवर्ड्स उपस्थित थे। मैंने कुछ खरी-खरी बाते कही, और देखा कि कुछ लोग चिढ गये है। प्राय सभी निर्बुद्धि और नीरस निकले। मैंने कहा, "आप लोग एक ओर हमारी नेकनीयती पर शक करते आ रहे है, दूसरी ओर यह चाहते है कि हम आपकी सहानुभूति पर विश्वास करें, और हर बार आप ही यह तय करते है कि हमारे लिए क्या अच्छा रहेगा। जब हम लोग कष्ट मे होते है तब भी आप ही निश्चय करते है कि इस परिस्थिति मे हमारे लिए क्या अच्छा रहेगा।" एटली ने सरकारी दृष्टिकोण सामने रखा और कहा, "दोष दोनो पक्षो का है। आप लोगो ने १९३० में, जबकि सरकार हमारी थी, मामले का निबटारा न करके भारी भूल की।" मैंने कहा, "आप हमे कोई बिल नही दे सकते थ क्योकि सामन्त सभा आपके रास्ते मे रुकावट डाल देती। आप मजदूर दल के सदस्य तो लम्बी-चौडी स्पीचे देना भर जानते है। आप जो वादे करते है उन्हे पूरा करने का आपका इरादा बिल्कुल नही है" इससे कुछ लोग चिढ गये और मैंने बातचीत का रुख आर्थिक समस्या की ओर फेरा, पर यहा भी भारत का प्रसग आ ही गया। मैंने कहा, "आपलोगो के रहन-सहन का स्तर विदेशी व्यापार और विदेशो मे लगाई पूजी के ऊपर निर्भर है। आप जानते ही है कि विदेशी व्यापार की मात्रा में कमी होती जा रही है, और कभी वह समय भी आयगा जब आपको विदेशो मे लगाई पूजी से हाथ धोना पडेगा। तब क्या आप अपने रहन-सहन का स्तर आतरिक उत्पादन की सहायता से ही कायम रख सकेंगे?" उन्होने कहा, "नही।" मैंने पूछा, "तो फिर आप अपना रहन-सहन सम्बन्धी स्तर और भी ऊँचा करने की आकाक्षा का मेल भारत की आत्मनिर्णय-सम्बन्धी अपनी माग के साथ कैसे बढा सकते है?" उन्हे इस असगति का निर्देश कराया गया, सो उन्हें पसन्द नही आया। मैंने उन्हे कुछ ऐसी किवदन्तिया सुनाई जो मैंने सुनी थी।

मैंने एक प्रमुख मजदूर नेता से पूछा कि उन लोगो न श्री वेन को इडिया आफिस मे क्यो रखा जबकि भारत के सम्वन्ध मे उनका ज्ञान नही के वरावर था। मुझे वताया गया कि एक तीव्र वुद्धि के आदमी की यहा सर्विसो के साथ और वहा भारत सरकार के साथ झडप हो जाती है। श्री मैकडानल्ड ने वडी चतुरता के साथ हरेक आफिस मे एक ऐसा आदमी रख दिया जो काम सुचारु रुप से चलाता रहे और सर्विसो के आगे हमेशा झुकता रहे। मुझे वताया गया कि जव सन् १९२४ मे लार्ड पासफील्ड ने अपने विभाग का चार्ज सभाला तो विभाग के सभी सिविलियनो को इकट्ठा करके कहा, 'सज्जनो, मै जानता हू कि अवतक आप ही मालिक रहे है, ओर भविष्य मे भी आपही रहेगे। इसलिए कामकाज वदस्तूर जारी रखिये। एक अतिथि ने कहा, "वात सच्ची है। हम लोग जो कहते है उसे कर दिखाना सम्भव नही है। हमने गत परिपद मे तरह-तरह के प्रस्ताव पास किये। यदि उनपर अमल किया जाय तो सारे ससार की निधि समाप्त हो जाय।" "श्री एटली को यह वात पसन्द नही आई ओर वह और भी चिढ गये। मैने जो कुछ भी कहा उन्होने उसीका खण्डन किया। उन्होने कहा, "मजदूर दल आपका सवसे वडा मित्र था। गाधी ने परस्पर विरोधी वाते की, वह विचक्षण राजनीतिज्ञ है और उनके दिल मे जो कुछ होता है उसके विपरीत वात कहते है। काग्रेस मे भ्रष्टाचार भरा हुआ है। भारत का कोई भी वडा नेता वयस्क मताधिकार नही चाहता। मैने कहा, "मेजर एटली, ऐसा मालूम होता है कि आप गाधीजी को मुझसे अधिक अच्छी तरह जानते है। मै इग्लैड अग्रेजो का अध्ययन करने आया था, पर यह स्पष्ट है कि आप मुझे मेरे देश के सम्वन्ध मे ही कुछ सिखाना चाहते है। परतु मै आपसे कुछ सीखने को तैयार नही हू।" इसके वाद हम सव लोग शात हो गये। एटली और अन्य सदस्यो ने कहा कि मुझे अनुदार दल के कुछ युवा सदस्यो से भेट करनी चाहिए। इस वात पर सव सहमत हुए कि वातावरण मे सुधार होना चाहिए, पर सभी ने इस मामले मे लाचारी जाहिर की। उन्होने कहा कि उनके पास न शक्ति है, न प्रभाव (वे यह भी जोड सकते थे कि 'और न वुद्धि')। वे अपने आपको नीचा समझने के रोग से पीडित है, वे लार्ड लिनलिथगो का वायसराय वनना भले ही मजूर कर लेगे, पर अपने ही दल के किसी आदमी को मजूर नही करेगे। उनपर अनुदार दलवालो का वडा रौव-दाव है, या लार्ड डर्वी जैसे अत्यन्त धनी आदमियो का

शासन-विधान के सम्वन्ध मे उन्होने कहा, "आप गवर्नर जनरल के लिए रिजर्व रखे गये अधिकारो की वात को जरूरत से ज्यादा तूल दे रहे

है, पर यह बात भूल जाते है कि ससार के सभी शासन-विधानो मे सर्वोच्च अधिकारी के विशिष्ट अधिकारो की व्यवस्था अवश्य रहती है। हमारे यहा भी राजा को वही अधिकार प्राप्त है।"

अन्त म हम लोग मित्रो की भाति विदा हुए। मै तो नही समझता कि यह समय व्यर्थ नष्ट हुआ। लार्ड लिनलिथगो के साथ मेरी जा बातचीत हुई मैने उसे भी सक्षेप मे नोट करलेने की चेष्टा की

लार्ड लिनलिथगो

लम्बा कद, गठीला शरीर, तीव्र बुद्धि तो नही, पर सुयोग्य और ठोस। कल्पना शक्ति का अभाव, काम की बात मे सरोकार, स्पष्टवादी और अच्छे सकल्प रखने वाले।

मैने अपना पुराना तर्क आरम्भ किया। दो प्रकार के वातावरण उपस्थित है,—एक वातावरण इग्लैड मे है जिसमें भविष्य के लिए सदाकाक्षा और सहानभूति की अनुभूति होती है, दूसरा भारत मे है—कठोर और कटु शासन से परिपूर्ण। भारत के लोग शासन-विधान का पारायण वहा के शासन के प्रकाश मे करते है। ऐसी स्थिति का स्वाभाविक परिणाम यह होगा कि शासन-विधान भग हो जायगा और कडुआहट और भी बढेगी। नये शासन-विधान का आरम्भ करने के लिए यह आवश्यक है कि श्रीगणेश अच्छे ढग मे किया जाय।

उन्होने सारी बात बडे ध्यान से सुनी और कहा कि वह पूर्णतया सहमत है, पर क्या मेरे पास कोई ठोस सुझाव है? मैने व्यक्तिगत सम्पर्क और समझौते की चर्चा की। वह व्यक्तिगत सम्पर्क की बात पर तो राजी हुए, पर समझौते के खिलाफ थे। उन्होने सुझाया कि पारस्परिक समझौता ठीक रहेगा। उन्होने बताया कि यहा के अनुदार दल मे ऐसे पुराने दृष्टिकोण वाले लोग है जिन्हे भारत का अनुभव है, पर इग्लैड मे समायोजन का, कहना चाहिये कि नूतन अनुस्थापन का सिलसिला, भी जारी है। ४५ मे इधर की आयुवाले लोग उदार नीति के बरते जाने के पक्ष मे है। भारत मे भी समायोजन अवश्यम्भावी है। यह अवश्य समझ लेना चाहिए कि लदय-स्थान तक शासन-विधान के द्वारा ही पहुचा जा सकता सकता है।

मैने कहा कि यह हो सकता है, पर व्यक्तिगत सम्पर्क के बिना नही। उन्होने कहा कि श्री गाधी को दो रास्तो मे से एक के सम्बन्ध मे निश्चय करना होगा। भारतीय राष्ट्र के पुनर्जन्म के लिए कौनसा मार्ग श्रेयस्कर

है—पारस्परिक सम्पर्क, मैत्री और उनके द्वारा विकास का मार्ग, अथवा अपेक्षाकृत अधिक साहसपूर्ण कदमवाला मार्ग जिसके द्वारा वर्षो तक अशाति और अव्यवस्था का बोलवाला रहे और जिसके द्वारा स्वतत्रता भी सभव है, और उल्टी खराबी भी।

मैंने उत्तर दिया कि गाधीजी ने कभी रक्तपातपूर्ण क्राति मे आस्था नही रखी। मुझे उसमें कोई खराबी दिखाई नही देती है, पर मै जानता हू कि उससे हमे सहायता मिलने वाली नही है, इसलिए मै भी सम्पर्क और मित्रता का इच्छुक हू। गाधीजी का रुख इस सम्बन्ध में बिल्कुल स्पष्ट है। मैंने अगाथा हैरिसन के नाम उनका पत्र दिखाया। उन्होने उसे चाव के साथ पढा और कहा, "हा, यह बडे महत्व का है। मै आपसे सहमत तो हू, पर मेरे दिमाग में कोई योजना नही है। मै इस पर विचार करूगा। यदि कोई बात सम्भव नही होगी तो साफ-साफ कह दूगा। इस बीच आप अन्य लोगो से मिलिये और १० तारीख के आसपास खबर दीजिये। तभी हमारी दुबारा बातचीत होगी। पर जब स्वतत्रता-प्राप्ति के ढग पर आपने अपनी सम्मति दी है तो मुझे भी अपनी सम्मति देने की अनुमति दीजिये। रक्तपातपूर्ण क्राति साहसपूर्ण कदम अवश्य होगा, पर वह गलत कदम होगा। यातायात-सम्बन्धी सुविधाए उपलब्ध होने के फलस्वरूप अब ससार बहुत सकुचित हो गया है, इसलिए उसका सफल होना उतना आसान नही है। इसके विपरीत मित्रतापूर्ण वातावरण मे शासनविधान को अमल मे लाने का परिणाम ठोस होगा।"

मैंने कहा कि मै निष्कर्ष से तो सहमत हू, पर तर्क से नही। आज शासन-विधान प्राणशून्य देहमात्र है। सुन्दर-से-सुन्दर देह भी प्राण-शून्य होने पर केवल दाह के उपयुक्त होती है। मै चाहता हू कि शासन-विधान एक स्पदनयुक्त शरीर हो। केवल पारस्परिक सम्पर्क और पार-स्परिक समझौते के द्वारा ही ऐसे प्राणो का सचार हो सकता है।

वह पुन सहमत हुए और उन्होने इस बात पर खेद प्रकट किया कि भारत की सिविल सर्विस और व्यापार मे जो अग्रेज है, वे इग्लैंड के कोई बहुत अच्छे प्रतिनिधि नही है।

: १८ :

इंग्लैण्ड में बड़ी-बड़ी आशाएं

मै गान्धीजी की ओर से प्रत्येक सभव प्रयास कर लेना चाहता था और इसलिए मैने उन सभी आदमियो से भेट की, जो सहायक हो सकते थे।

मै भूतपूर्व भारत मत्री सर आस्टिन चेम्बरलेन, जिन्होने वायसराय का पद ग्रहण करने का प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया था, केटरबरी के लाट पादरी, श्री बाल्डविन, टाइम्स के सपादक ज्योफरी डासन, सर वाल्टर लेटन, न्यू स्टेट्समैन के श्री किग्सले मार्टिन, मैनचेस्टर गार्जियन के श्री बोर्न तथा अन्य लोगो से मिला। उस समय अनुदार दल के लोग सत्तारूढ थे। भारतीय शासन विधान के निर्माता वही थे, और वे सभी हितैपिता का दम भरते थे। मजदूर दल के और नरम लोगो के सम्बन्ध मे भी यही कहा जा सकता था।

वाल्डविन लार्ड हेलीफैक्स के विशेप रूप से प्रशसक थे। उनके सम्बन्ध मे उनकी बडी ऊची धारणा थी। यह स्पष्ट था कि लॉर्ड हैलीफेक्स के साथ मेरी जो मित्रता थी वह उनके निकट मेरी सबसे बडी सिफारिश थी। उनकी एक अजीव-सी आदत थी कि वह विना किसी खास कारण के हर दो-तीन मिनट के अन्तर पर ठहाका मार कर हँस पडते थे। वह कहते थे कि पाँच वर्ष तक प्रधान मत्री की हैसियत से घोर परिश्रम करने के वाद अव वह थक गये है। हा, बीच-बीच मे कुछ ऐसा समय भी अवश्य गुजरता है जब वह थकावट महसूस नही करते।

स्वर्गीय लार्ड सेलिसबरी के साथ मेरी बातचीत का विवरण इस प्रकार है

वृद्ध और बहरे। न अधिक सामर्थ्य है, न विशेष बुद्धि। पर अपने उत्तरदायित्व की ओर से सचेत हैं। मुझसे पूछने लगे कि क्या मुझे गान्धीजी प्रिय लगते हैं। मैंने कहा, "हां।" उन्होंने कहा कि उन्हें गान्धीजी से मिलने का सुयोग कभी नहीं मिला। मैंने उन्हें बिल के प्रति उनके विरोध की याद दिलाई और कहा कि मैं भी बिल के खिलाफ हो हूं, पर अन्य कारणों से। मैंने कहा, "यह प्रगति अपर्याप्त है, पर क्या हम लोग राजनैतिक मतभेद के बावजूद बिल को सफल बनाने में मित्रों की तरह आचरण नहीं कर सकते?" उन्होंने पूछा "क्या हम इस समय मित्र नहीं हैं?" मैंने कहा, "नहीं। इस समय भारत में गलतफहमी और विरोध की भावना का वातावरण व्याप्त है।" उन्होंने उत्तर दिया "मैं श्री गौड के सपर्क में आ चुका हूं। क्या वह भारत का प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं?" मैंने कहा कि उन्हें व्यवस्थापिका सभा में जाने के लिए एक भी निर्वाचन-क्षेत्र न मिलेगा। वह बोले, "हां, यह मैं जानता हूं।" उन्होंने ठोस सुझाव मांगा। मैंने कहा, "हेलीफैक्स की भावना को पुनः जीवन दीजिये। उन्होंने कहा कि वह हेली-फैक्स से सहमत नहीं हैं, परन्तु हेलीफैक्स ने जो कुछ किया वह केवल हेली-फैक्स के लिए ही सम्भव था। अच्छे आदमी हैं। डर्बी भी अच्छे आदमी हैं।' पर उनके साथ पटरी नहीं बैठती है। मैंने कहा, "और इस पर भी आप मित्र बने रह सके हैं।" वह सहमत हुए और बोले कि राजनैतिक मामलों में सहमत हुए बिना भी वे मित्र बने रह सके।

उन्होंने गांधीजी की साधुता, महान चरित्र और सदाकांक्षाओं की सराहना की, पर साथ ही कहा, "सब से बड़ी भूल की बात यही है कि आप भारतीय लोग सद्गुणों और अनुभव को एक समझ लेते हैं। इंगलैण्ड को १००० वर्ष का अनुभव प्राप्त है। आप लोग इस मामले में बिलकुल कोरे हैं।" मैंने कहा, "हमारी पृष्ठभूमि इंग्लैण्ड की अपेक्षा कहीं पुरानी और गौरव-पूर्ण है।" उन्होंने कहा, "मैं तो घटाकर नहीं कहना चाहता हूं। आपकी सभ्यता और आपके दर्शन-शास्त्र किसी भी देश की सभ्यता और दर्शन-शास्त्रों से पुराने हैं, पर यह प्रजातन्त्र तो नहीं है। आपको अभी सीखना है।" मैंने कहा "क्या आप लोगों ने भूलें नहीं कीं?" उत्तर मिला, "हां।" मैंने कहा, "हम लोगों में कुछ चीजों का अभाव है, इसी कारण हम मैत्री की चर्चा चला रहे हैं।"

आदमी तो अच्छे हैं, किन्तु मैं तो नहीं समझता कि वह विशेष उपयोगी सिद्ध होंगे।

एक वात विचित्र-सी है, पर श्री विन्सटन चर्चिल की भेंट मेरा सवसे सुखद अनुभव था। वह भारत शासन विधान विल के सवसे वडे विरोधी थे और उन्हें सदन मे सरकारी पक्ष की ओर से आक्रमण करने की सुविधा प्राप्त थी। पर मैंने उन्हें आग उगलने वाला नही पाया। उन्होंने मुझे अपने ग्राम्य निवास-स्थान चार्टवेल पर दोपहर के भोजन के लिए बुलाया। उस भेंट का व्यौरा यह है

वहुत ही असाधारण व्यक्ति है। निजी वातचीत मे भी उतने ही ओजस्वी है, जितने सार्वजनिक व्याख्यानो में। उनके साथ जो वाते हुई उन्हे तद्वत् देना असभव है। मै उनके साथ दो घटे रहा।

श्रीमती चर्चिल भी वडी रोचक है, पर जव उनके पति वात करते है तो वह चुपचाप सुनती भर है। वह गत वर्ष केवल छ घटे के लिए भारत मे ठहरी थी।

जिस समय मै वहा पहुचा, श्री चर्चिल अपने उद्यान मे थे। उन्हे उनकी धर्मपत्नी ने वुला भेजा। वह एक मजदूरो का जामा पहने हुए थे, जिसे उन्होंने दोपहर के भोजन के समय भी नही वदला। इसके वाद वह वडा-सा परदार टोप ओढकर फिर उद्यान में चले गये। भोजन के वाद वह उद्यान में मुझे भी अपने साथ लेते गये। उन्होने मुझे चारो ओर घुमाकर उद्यान दिखाया और वे इमारते भी दिखाई जो उन्होंने वनाई थी और वे ईंट दिखाईं जो उन्होने स्वय अपने हाथ से तैयार की थी। उन्होंने वे चित्र भी दिखाये, जो उन्होने वनाये थे।

मकान, उसके आसपास की वस्तुए, उनका तैरने का हौज—सभी कुछ अत्यन्त आकर्षक है। तैरने के हौज के पानी को एक वायलर द्वारा गर्म रखा जाता है। एक पम्प जल को हौज मे से खीचता है, उसे गर्म करता है, छानता है और फिर उसे हौज में वापस भर देता है। श्री चर्चिल ने मुझे वताया कि वह पुस्तकें लिखकर जीविका अर्जन करते हैं। मैंने स्वगत कहा, "तव तो इस विलासिता का काफी मूल्य चुकाना पडता होगा।" पर उन्होंने वताया कि वह इस हौज पर केवल तीन पौंड प्रति सप्ताह खर्च करते हैं। वातचीत में तीन-चौथाई हिस्सा उनका था, वाकी एक-चौथाई में मै और श्रीमती चर्चिल थे। मैं वीच-वीच में उनकी कोई वात ठीक करने के लिए अथवा एकाध प्रश्न करने के लिए वोल उठता था, पर वैसे मुझे उनकी वातचीत वडी अच्छी लगी। वातचीत से कभी ऊव पैदा नही हुई और

कभी-कभी उन्होने काफी भावातिरेक प्रकट किया। पर उन्हें भारत के सम्वन्ध मे विलकुल गलत जानकारी है। उनकी कुछ अपनी धारणाए है। उदाहरण के लिए, उनका विश्वास है कि भारत के गाव शहरो से विलकुल अलग है। मैंने उनकी भूल सुधारी और कहा कि भारत मे कोई भी शहरी सोलह आने शहरी नहीं है, हरएक का गाव से सम्पर्क वना हुआ है। मै जिन पच्चीस हजार आदमियो को अपनी मिलो मे लगाये हुए हू वे वर्ष मे एक से अधिक वार अपने घर जाते है। इस प्रकार वास्तव मे लिस्ट मे ५०,००० व्यक्ति है। उनका यह भी खयाल था कि मोटर गाडिया गाव तक नही पहुची है। मैंने उनकी यह भूल भी सुधारी, अमरीकी मोटर गाडिया सडकों के विना भी यात्रा कर सकती है, इसलिए मोटर गाडिया देश के कोने-कोने मे जा पहुची है।

उनकी धारणा थी कि शिक्षित व्यक्ति—ग्रेजुएट और राजनेता—सव शहरो मे ही है। मैंने उनकी यह भूल भी ठीक की। मैंने कहा, "मै अपने गाव में से ही आधा दर्जन ग्रेजुएट निकाल सकता हू। हा, वे अपने गाव में वीच-वीच मे आ जाते है, वहा स्थायी रूप से ठहरते नही है।"

उन्हे अपने आपको अनुदार वताने का वडा गर्व है। उन्होने कहा, 'पिछले तीन वर्षो मे भारत मे १० करोड प्राणी और वढ गये है। उनके निर्वाह का प्रश्न भी एक समस्या है। उत्पादन में वृद्धि करने के लिए शान्ति आवश्यक है। जवतक हम कानून और व्यवस्था वनाए रखेंगे तवतक सव कुछ ठीक रहेगा, पर भारत मे तो साम्प्रदायिक दगे होते रहते है। लाहौर, कानपुर, कलकत्ता सव जगह। अव इन दगो की सख्या मे वृद्धि होगी और फल भोगना पडेगा जनता को।" मैंने उन्हे वताया कि पजाव मे एक देहाती दल भी है जिसमे जाट और मुसलमान शामिल है। उत्तरदायित्वपूर्ण सरकार के अन्तर्गत शायद आर्थिक ढग के दल वनेगे। इससे अवस्था में सुधार सभव है। साम्प्रदायिक निर्णय से कोई सहायता नही मिली, पर आपसी समझौते के अभाव मे वह अनिवार्य था। मैंने उन्हें यह भी वता दिया कि मेरा दृष्टिकोण इतना निराशापूर्ण नही है। उन्होने कहा, "सभव है आपकी वात ठीक हो।"

उन्होने पूछा, "गाधीजी क्या कर रहे है" मैंने वताया। उन्हें वडी दिलचस्पी हुई। उन्होंने कहा, "जव से गाधीजी ने अस्पृश्यो का पक्ष लेना आरभ किया है वह मेरी दृष्टि से वहुत ऊचे उठ गये है।" उन्होने अस्पृश्यता-निवारण कार्य के सम्वन्ध मे विशेष जानकारी हासिल करने की इच्छा प्रकट की। मैंने वताया। उन्हें यह जानकर प्रसन्नता हुई कि मै अस्पृश्यता निवारक सघ का प्रधान हू। इसके वाद उन्होंने गाधीजी के ग्रामोद्धार-सवधी कार्य के सम्वन्ध में

जानना चाहा। मैंने बताया। उन्होंने पूछा, "भारतीय किसान की कृपि-सम्बन्धी प्रणाली पिछडी हुई क्यो है?" उन्होने कहा कि यह लार्ड लिनलिथगो की राय है। मैंने बताया कि इसका कारण यह है कि बराबर उसकी उपेक्षा होती रही है। "अब तो आपको अवसर मिल ही रहा है। मुझे बिल अच्छा नही लगता है, पर अब वह कानून बन ही गया है। अब मैं उसके सम्बन्ध मे अधिक माथापच्ची नही करूगा, पर आप हम यह कहने का मौका मत दीजिये कि हम तो पहले ही जानते थे कि यह असफल सिद्ध होगा। यदि ऐसा हुआ तो अनुदार दलवालो को हर्ष होगा। आप लोगो के हाथ मे अपार शक्ति आ गई है। सिद्धान्त रूप मे सारी शक्ति गवर्नरो के हाथ मे है, पर वास्तव मे उनके हाथ में कुछ नहीं है। सिद्धान्त-रूप में राजा के हाथ मे सारी शक्ति है, पर व्यवहार मे उसके हाथ मे कुछ भी नही है। जब समाजवादियो ने शासन की बागडोर हाथ मे ली थी तो उनके हाथ मे सारी शक्ति थी, पर उन्होने कोई उन्मूलक कार्य नहीं कर दिखाया। गवर्नर लोग कभी अभिरक्षण काम मे नही लायगे, इसलिए आप विधान को सफल बनाइये।" मैंने पूछा, "आपका सफलता का मापदड क्या है?" उन्होने उत्तर दिया "मेरा मापदड जनसाधारण की नैतिक और मौलिक अवस्था मे सुधार है। मुझे इसकी चिन्ता नही है कि आप ब्रिटेन के प्रति कितने वफादार है, मुझे अधिक शिक्षा-प्रसार की भी चिन्ता नही है। पर जन-साधारण को मक्खन अवश्य दीजिये। मै तो मक्खन का समर्थक हू। जैसा कि फ्रास के राजा ने कहा था—मुर्गी को हाडी में डालो।" जी हा, मैं तो हमेशा मक्खन का हामी रहा हू। गायो की सख्या मे कमी करिये, पर उनकी नस्ल सुधारिये। हरएक खेतिहर अपना जमींदार हो। सबसे बढिया नस्ल को जिबह मत होने दीजिये। हरएक गाव के लिए एक साड की व्यवस्था कीजिए। गाधीजी से कहिये कि जो अधिकार दिये जा रहे है उन्हे काम मे लावे और विधान को सफल बनावे। गाधीजी इगलैंड मे थे उस समय मैं उनसे नही मिला था। अवस्था ही कुछ ऐसी भोडी थी, पर मेरा लडका तो उनसे मिला ही। अब मैं उनसे मिलना चाहूगा। मरने से पहले एक बार भारत जाने की साध है। यदि गया तो कोई छह महीने ठहरूगा।"

उन्होने मुझसे पूछा कि क्या गान्धीजी शासन-विधान का विध्वस करना चाहते है? मैंने कहा, "गाधीजी उदासीन है। उनका विश्वास है कि राजनैतिक स्वतन्त्रता बिलकुल हमारी चेष्टाओ के द्वारा ही प्राप्त होगी और राजनैतिक प्रगति हमारे ऊपर ही निर्भर करती है। अतएव वह जनता के उत्थान में दत्तचित्त है। शासन-विधानो में उन्हे विशेष

रुचि नही है।" वह सहमत हुए। पूछा कि यदि वह भारत गये तो क्या उनकी आवभगत की जायगी। मैने कहा, "आप इस ओर से निश्चित रहिये।" उन्होने बताया कि जबतक लार्ड विलिगडन वहा है तबतक वह वहा नही जाना चाहते है, पर उनके चले आने के बाद वह अवश्य जाना चाहेगे। बोले, "भारत के प्रति मेरी वास्तविक सदाकाक्षा है। भारत के भविष्य के सम्बन्ध में मै सचमुच चिन्तातुर हू। मेरी धारणा है कि भारत हमारे लिए भारस्वरूप है। हमे सेना रखनी पडती है। यदि भारत अपनी देख-भाल स्वय कर सके तो हमे आनन्द होगा। आदमी का जीवन है ही कितना ? मै अधिक स्वार्थपरता से काम नही लूगा। यदि सुधार सफल सिद्ध हुए तो मुझे बेहद खुशी होगी। मेरी हमेशा से धारणा रही है कि पचास भारत है। अब आपको असली पदार्थ मिल ही गया है, आप उसे सफल बनाइये और यदि आपने ऐसा किया तो आप जब और अधिक की माग करेगे, मै आपका समर्थन करूगा।"

मै वहॉ जो कुछ कहता रहा था उसका मैने एक सक्षिप्त विवरण तैयार किया और उसकी प्रतिलिपि लार्ड हैलीफैक्स को भेजी, जिससे मेरे विचारो का स्पष्टीकरण हो जाय। वह विवरण इस प्रकार है

गान्धी-इर्विन समझौता भारत और ब्रिटेन को एकसूत्र मे बाधने की दिशा मे एक बडा कदम था। उसने एक उदाहरण कायम किया। उसने अव्यवस्था फैलाकर राजनैतिक प्रगति करने के तरीके की जडो पर प्रहार किया ओर पारस्परिक चर्चा और विश्वास के तरीके की स्थापना की। किन्तु उसके फलितार्थों को समझौते के रचयिताओ को छोड बहुत कम लोगो ने समझा। समझौते के कागज की स्याही भी मुश्किल से सूख पाई होगी कि दोनो ही देश से बाहर चले गये।[1] अगर वे दोनो भारत मे रहे होते तो समझोता जीवित रहता। काग्रेस के अनुयायी और सरकारी हल्के इन दोनो ने ही समझौते को गलत समझा। काग्रेसी लडना तो जानते थे, किन्तु यह नही जानते थे कि समझौता किस तरह किया जाता है। सरकारी हल्को ने यह कभी नही छिपाया कि उन्हे उत्तेजना फैलानेवालो से अरुचि है। उनसे

---

१ इर्विन का कार्यकाल खत्म होगया और वे इग्लैड चले गये। गाधीजी राउन्ड टेबल कान्फरेंस में शामिल होने को विलायत चले गये थे।

चर्चा करने का अर्थ अपनी प्रतिष्ठा घटाना था। इसलिए समझौते ने अलग-अलग कारणों से दोनों पक्षों में असन्तोष पैदा कर दिया और दोनों ने ही उसे पहला अवसर मिलते ही दफना दिया।

इसके बाद दूसरा संघर्ष शुरू हुआ और आर्डिनेन्स राज चला। कांग्रेस को दबा दिया गया। गान्धीवाद के विरुद्ध प्रतिक्रिया का दौर शुरू हुआ। गांधीवाद अपने विशुद्ध रूप में अहिंसा, सच्चाई और कष्ट-सहन द्वारा अंग्रेजों का हृदय-परिवर्तन करने में विश्वास रखता है। घृणा का उसमें कोई स्थान नहीं, ऐसा माना जाता है, किन्तु वातावरण घृणा से व्याप्त है, कारण सत्याग्रहियों ने गान्धीवाद को उसके विशुद्ध रूप में कभी अंगीकार नहीं किया। उग्र पंथियों ने उससे फायदा उठाया, किन्तु उसमें उनकी आस्था न थी। उनका लक्ष्य राजनैतिक स्वतन्त्रता प्राप्ति है, साधनों की उन्हें चिन्ता नहीं है। इस प्रकार कांग्रेस की हार ने एक नई शक्ति को जन्म दिया, जिसका सिद्धांत ही दूसरा था।

आमरण-अनशन और अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलन के बाद स्थिति ने मूर्त रूप धारण कर लिया। उग्र पंथियों को गान्धीवाद की उपयोगिता में संदेह होने लगा। वे वाम पक्ष की ओर झुक गये, जब कि लोकमत के एक अन्य महत्वपूर्ण अंग को असेम्बली-बहिष्कार के औचित्य में सन्देह होने लगा। इस समय गान्धीजी ने महसूस किया कि संसदीय कार्यशीलता स्थायी बन चुकी है। साथ ही उन्होंने यह भी देखा कि कांग्रेस के अनुयायियों में अहिंसा के वेश में हिंसा घुस आई है। इसलिए वह सविनय अवज्ञा आन्दोलन बन्द कर सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक बुराइयों को दूर करने के काम में जुट गये। उन्होंने हरिजन-सेवा और ग्राम-सुधार का काम प्रारम्भ किया। इस प्रकार वह कांग्रेस की शुद्धि करना चाहते थे। गान्धीजी ने हमेशा यह माना है कि स्वराज्य भीतर से आयगा, बाहर से नहीं। गांधीजी ने अनुभव किया कि अपने विचारों को लोगों पर लादा तो जा सकता है, किन्तु लोगों के लिए उनको पचाना कठिन होगा। इसलिए उन्होंने अपने विचारों पर आग्रह करने की अपेक्षा कांग्रेस की सक्रिय सदस्यता से अलग होना ही अच्छा समझा।

असेम्बली भंग कर दी गई, इससे संसदीय मनोवृत्ति वाले दल को नया बल प्राप्त हुआ। उग्रपंथियों ने इसका विरोध किया, कारण उनकी यह धारणा थी कि उससे आम जनता का ध्यान कार्यक्रम से हट जायगा। किन्तु वे प्रतिरोध नहीं कर सके। चुनाव हुए। गृह मंत्री कांग्रेसी नेता श्री भूलाभाई देसाई की भावना और भाषणों से प्रभावित तो हुए, पर मानवीय संपर्क के दर्शन नहीं हुए। सरकार ने व्यक्तिगत सम्पर्क और पारस्परिक

समझौते के महत्व को न पहचानकर एक अच्छा खासा अवसर हाथ से गंवा दिया। असेम्बली के अधिवेशन के समाप्त होते-न-होते विरोधी पक्ष के भाषण अधिकाधिक उत्तरदायित्व-शून्य होते गये। कांग्रेसी सदस्यों ने वायसराय की अतिथि-पुस्तिका में हस्ताक्षर नहीं किये, जिससे लार्ड विलिंगडन चिढ़ गए। खाई और भी चौड़ी हुई, उग्रवादियों की शक्ति बढ़ी। जब हाल ही में जबलपुर कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक हुई और असेम्बली के काम का पर्यालोचन होने लगा तो इस वर्ग (कांग्रेस समाजवादी पार्टी) ने संसदीय कार्यशीलता में आस्था रखनेवाले सदस्यों के विरुद्ध खुल्लम-खुल्ला विद्रोह कर दिया। अनेक उग्र प्रस्ताव पेश किये गये और नाममात्र की जीत भी हासिल हुई। स्थिति को दक्षिण पक्ष वालों को, खासकर श्री राजगोपालाचार्य की, व्यवहार-कुशलता और बुद्धिमत्ता के द्वारा ही सम्हाला जा सका। इस प्रकार दक्षिण पक्षीय कांग्रेसियों को दो शक्तियों से लड़ना पड़ रहा है, एक ओर तो सरकार से और दूसरी ओर समाजवादियों से। समाजवादी सीधा हमला कर रहे हैं। वे नेताओं को यह कह कर बदनाम करते हैं कि वे कुछ भी हासिल नहीं कर सके। सरकार दक्षिण पक्ष की उपेक्षा करके अप्रत्यक्ष रूप से समाजवादियों की सहायता कर रही है। इस प्रकार दक्षिण पक्ष दो शक्तियों के बीच कुचला जा रहा है। इसका परिणाम या तो यह होगा कि दक्षिण पक्षवाले हट जायंगे और समाजवादियों के लिए मैदान खाली छोड़ देंगे, या यह होगा कि वे लोकमत को अपने साथ रखने के लिए सुधारों के सम्बन्ध में कोई उग्र कार्यक्रम अपनायंगे। वर्तमान वातावरण का कांग्रेस के दक्षिण पक्ष पर यही प्रभाव पड़ा है। मुसलमानों पर यह प्रभाव पड़ा है कि वे यह मानने लगे हैं कि उनके बुरे कामों की ओर से भी आंखें मूंद ली जायंगी। हाल ही में मुलतान की एक सार्वजनिक सभा में प्रस्ताव पास किया गया कि पैगम्बर की आलोचना करने के लिए अमुक हिन्दू को मौत के घाट उतार दिया जाय। पुलिस को इसका पता तुरन्त चल गया, किन्तु उस हिन्दू को नहीं बचाया जा सका और उसकी हत्या हो ही गई। यह स्थिति खतरनाक है और इसके परिणाम गंभीर हो सकते हैं। जब सरकार कोई कड़ी कार्रवाई करती है, जैसा कि कराची में किया गया, तो उसकी गंभीर प्रतिक्रिया होती है।

इस वातावरण से सरकारी अमला भी अछूता नहीं रहा है। चाहे कैसा ही लोकप्रिय आन्दोलन हो, उसे शंका और विरोध की भावना से देखने की मनोवृत्ति एक ऐसी बात है जिसका भविष्य में गंभीर परिणाम हो सकता है। ऐसे वातावरण में रचनात्मक काम असंभव हो जाता है। सरकार कानून और व्यवस्था कायम रखने में जुटी है और लोग सरकार

से मोर्चा लेने मे सलग्न है।

और इधर सरकार ने विश्वस्त भारतीय नेताओ को क्वेटा न जाने देने का जो निश्चय किया है उससे सारे भारत में रोष की लहर फैल गई है। वातावरण में पहले से ही खिचाव मौजूद था, इस निश्चय ने असन्तोष के एक नये कारण को जन्म दिया है।

भारत के नए विधान का सूत्रपात ऐसे ही वातावरण मे किया जायगा जब कि न व्यक्तिगत सपर्क मौजूद है, न पारस्परिक विश्वास।

इगलैंड में भारत के प्रति वास्तविक सहानुभूति और सद्भावना मौजूद है। यहा सबका हृदय से विश्वास है कि विधान के द्वारा वास्तविक प्रगति करने वाला कदम उठाया गया है, कि उससे भारतीयो को सचमुच भारी अधिकार मिलेगे और भारत अपने लक्ष्य स्थान तक पहुँच सकेगा। इस नेकनीयती की अनुभूति इगलैंड मे ही होती है, भारत उससे बिलकुल बेखबर है। भारत में इन प्रस्तावो को प्रतिगामी कदम समझा जाता है। इसका कारण यह है कि पारस्परिक विश्वास, मित्रता और व्यक्तिगत सम्पर्क के बिना कोई साझेदारी सभव हो सकती है ऐसा विश्वास करने को कोई भी भारतवासी तैयार नही है। भारत के लोग शासन विधान को पढते है और उसकी शब्दश व्याख्या करते है, तो उन्हें यही दिखाई देता है कि उसमें वायसराय और गवर्नरों के हाथ मे कितने विशाल अधिकार सुरक्षित रखने की व्यवस्था की गई है। वे इस स्पष्टीकरण को केवल मित्रतापूर्ण वातावरण में ही स्वीकार कर सकते है कि शोधक प्राधिकारी (corr·ctive authority) की व्यवस्था सभी विधानो में है।

यदि नये विधान को दोनो देशो के हित में सफलता-पूर्वक अमल मे लाना है तो यह नितान्त आवश्यक है कि वर्तमान वातावरण को बदलने के लिए तुरन्त कुछ-न-कुछ किया जाय। एक नई भावना को जन्म देना होगा, ऐसी भावना को जो इर्विन-गान्धी समझौते मे व्याप्त थी।

समझदार भारतीय स्त्री-पुरुष अग्रेजो की सहायता की आवश्यकता को समझते है, वे उनकी मित्रता की कामना करते है। इसलिए प्रश्न यही है कि एक ओर सरकार की स्थिति और प्रतिष्ठा को और दूसरी ओर भारतीयो की स्थिति और स्वाभिमान को ध्यान में रखकर इस मित्रता को कैसे प्राप्त किया जाय।

इसी बात को ध्यान में रखकर मै निम्न सुझाव प्रस्तुत करने का साहस करता हूँ

१ पहला कदम जो उठाया जाय वह हो व्यक्तिगत सम्पर्क, जिससे और अधिक सम्पर्क स्थापित हो सके और एक-दूसरे को समझने की दिशा

में प्रगति हो। परेशान करनेवाली और अनावश्यक अटकलबाजी से बचने के लिए भेंट अनौपचारिक तौर पर और किसी गैर राजनैतिक विषय को लेकर हो तो अच्छा रहेगा।

२ यह सम्पर्क बढाया जाय। एक-दूसरे का दृष्टिकोण समझने का प्रयत्न किया जाय। यदि यह समझा जावे कि दिल्ली में सफलता सम्भव नहीं है तो सर जान एडरसन जैसा आदमी इन प्रश्नो को हाथ मे ले।

३ अगर अन्तिम पूर्ति भावी वायसराय के द्वारा करानी हो तो अतरिम काल का उपयोग उसके लिए भूमिका तैयार करने मे किया जाय, जिससे खाई और चौडी न हो सके।

४ इसके लिए सबसे अच्छा वातावरण इगलैण्ड मे ही मिल सकता है, अत क्या यह सभव नही है कि गाधीजी को और किसी काम से इगलैण्ड बुला लिया जाय? मुझे याद पडता है कि उन्हे सन् १९२९ मे या तो चर्च के कुछ लोगो ने या किसी विश्वविद्यालय ने निमत्रण दिया था।

५ क्या भारत मत्री या भावी वायसराय अगली सर्दियो में वहा जाने-वाले किसी कमीशन के अध्यक्ष बन कर भारत जा सकते हैं?

६ साथ ही क्या यह सभव नही है कि किसी तीसरे आदमी की मार्फत विचार-विनिमय किया जाय जिससे दोनो पक्षो की ओर से उपयुक्त घोषणाए की जा सके? वैसी अवस्था में व्यक्तिगत सम्पर्क की बारी इन घोषणाओ के बाद आवेगी।

लार्ड हैलीफैक्स ने अपने उत्तर मे कहा कि वह इस विवरण की एक प्रति भारत के भावी वाइसराय लार्ड लिनलिथगो को भेज रहे हैं।

लार्ड लिनलिथगो से मै कई बार मिला और इगलैण्ड से रवाना होने से पहले उन्हे एक पत्र भी भेजा, जिसमे मैने लिखा

मै दो-एक बाते और भी कह देना चाहता था। नये वायसराय को अनुकूल वातावरण उत्पन्न करने के निमित्त कठोर परिश्रम करना पडेगा, इसलिए उन्हे किसी ऐसे आदमी की सहायता की दरकार हो सकती है जो पक्षपात से मुक्त हो। क्या लार्ड विलिगडन की भाति नये वायसराय के लिए भी अपना प्राइवेट सेक्रेटरी यहा से ले जाना अच्छा नही रहेगा?

जब नये वायसराय व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित कर चुकेगे तो कुछ समस्याए विचारार्थ उपस्थित होगी। मै उन्हें यहा दे रहा हूँ, जिससे आप उनका हल सोच सके

१ अहिंसात्मक राजनैतिक बन्दियो की रिहाई। इनकी सख्या अधिक तो नही है, पर इनमें अब्दुल गफ्फार खाँ और पडित नेहरू जैसे व्यक्ति है। शायद पडित नेहरू को शीघ्र ही रिहा कर दिया जायगा।

२ जब्त की गई भूमि की वापसी। गाधी-इर्विन पैक्ट में यह बात मान ली गई थी, पर पैक्ट का अत होने पर यह बात खटाई में पड गई। जब तक काग्रेसवादियो के सहकर्मी इस प्रकार बीच में लटके रहेंगे, उन्हें पदो पर बने रहना नही भायेगा।

३ आतकवादियो की समस्या को भी हल करना होगा। आतकवाद से पूरी तरह निस्तार पाने के हेतु किसी-न-किसी प्रकार की योजना का पता लगाना ही होगा। इस मामले में काग्रेस और सरकार, दोनो का दृष्टिकोण समान है, पर उनकी कार्य-प्रणाली जुदी-जुदी है। काग्रेस दड के द्वारा नही, मेल के द्वारा आतकवाद का अन्त करना चाहती है। जहा एक ओर काग्रेस को अपनी कार्यप्रणाली में से दड को बाद नही देना चाहिए, वहा मेरी राय में सरकार को भी मेल का मार्ग नही त्यागना चाहिए। मैं एक ऐसी अवस्था की बात सोच रहा हूँ जिसके अन्तर्गत सरकार और विरोधी वर्ग, दोनो ही एक समान दृष्टिकोण अपना सके और इस प्रकार आतकवाद का पूरी तौर से मुकाबला कर सकें। श्री शरतचद्र बोस की रिहाई एक ठीक दिशा में उठाया गया कदम है, और मैं समझता हूँ उनके भाई श्री सुभाष-चन्द्र बोस पर भी काबू पाया जा सकता है। ऐसे किसी फार्मूले को खोज निकालना सर जान एडरसन के बुद्धिकौशल के लिए असम्भव नही है।

मैं ये सारी बाते मात्र आपके विचारार्थ लिख रहा हूँ, क्योकि किसी-न-किसी दिन आपको इन बातो पर गम्भीरता-पूर्वक विचार करना पडेगा और आप शायद पहले से ही सोच रखना अच्छा समझे।

आपके सौजन्य और सद्भावना के लिए धन्यवाद।

भवदीय
जी० डी० बिडला

इस प्रकार मैंने इगलैण्ड से काफी बडी आशाए लेकर विदा ली। लार्ड लोदियन के इस पत्र से कि नये वाइसराय लार्ड लिनलिथगो हमारे राष्ट्रीय नेताओ के साथ व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करने का निश्चित उद्देश्य लेकर भारत पहुचेंगे, मुझे खास तौर से प्रसन्नता हुई।

: १७ :

भारत-वापसी

सितम्बर १९३५ मे मै भारत लौटा और तुरन्त वर्धा गया, ताकि गाधीजी के साथ रहकर उन्हे खुद अपनी जबानी अपने मस्मरण सुना सकू। गाधीजी का यह अनुभव करना स्वाभाविक ही था कि मझे इगलैण्ड मे जिस मित्रता के दर्शन हुए, वह अभी भारत के सरकारी हल्को मे व्याप्त नही हुई है। फिर भी उन्होने मुझसे लिनलिथगो और दूसरो को यह लिखने को कहा कि वह वायसराय के भारत पहुचने के पहले सुधारो के बारे मे कॉग्रेस को कोई भी नया निश्चय न करने की सलाह देगे और इस उद्देश्य की सिद्धि मे अपने प्रभाव का उपयोग करेगे। अपनी प्रसन्नता प्रकट करते हुए लार्ड लोदियन ने जो टिप्पणी की उस यहाँ देना प्रासगिक प्रतीत होता है

सरकार चलाना बडा ही कठिन कार्य है। अरस्तू और यूनानी लोग इसे सबसे बडी कला समझते थे। लोग शासन करना तभी सीख सकते है जब वे उत्तरदायित्व ग्रहण करें और अपने विचारो को अनुभव की कसौटी पर कसे। मेरा विश्वास है कि भारत का समूचा भविष्य इस बात पर निर्भर करता है कि उसका युवा समाज प्रान्तो मे और उसके बाद केन्द्र में शासन भार ग्रहण करने के हेतु निर्वाचनो मे जोर- शोरके साथ भाग लेता है या नही। भारत का शासन-विधान चाहे जो हो, युवा समाज प्रकृत कार्य द्वारा ही राजनैतिक रग-पट्ठे बना सकेगा और भारत के आगे साम्प्रदायिकता, दरिद्रता, अल्पसख्यको का प्रश्न, देशी नरेश, सम्पत्ति का सामर्थ्य आदि जो मौलिक समस्यायें मौजूद है उनका निवटारा करने के लिए आवश्यक चरित्र का निर्माण कर सकेगा। मै आपके पास 'ट्वेन्टियथ सेन्चुरी' नामक मासिक पत्रिका के उस अक की एक प्रति भेजता हू जिसमें

मैने इस विचार को अपने मस्तिष्क में प्रश्रय देने के कारण वताये है कि महात्मा गान्धी जिस मौलिक हृदय परिवर्तन पर हमेशा से जोर देते आय है, वह यहा सचमुच हुआ है, और कि भारतीय सरकार का सचालन करने का भार अव से भारतीय कधो पर ही रहेगा। यदि उन्होने यह नही देखा हो तो आप इसका अवलोकन करने के वाद उनके पास भेज दे तो वडी कृपा हो।

यदि शासन-विधान में अपने रंग पट्ठों को अभ्यस्त करने के वाद तरुण भारत को पता चले कि वास्तविक सुधारो की सिद्धि मे स्वय शासन-विधान ही वाधक है तो उसके लिए उसकी पुनरावृत्ति की माग करना वैध होगा, और यदि वह माग पूरी न की गई तो उसके लिए अधिक प्रत्यक्ष कार्रवाई करना भी औचित्यपूर्ण होगा। इसके अलावा व्यावहारिक सरकार-सचालन कार्य में युवको ने जो दीक्षा और अनुभव प्राप्त किया होगा वह उन्हे सफलता प्राप्त करने और भारत के लिए सुन्दर सरकार उपलब्ध करने में समर्थ वनायगा। पर यदि तरुण भारत अभी से सविनय अवज्ञा और असहयोग का अथवा हिंसापूर्ण क्रान्ति का मार्ग अपना लेगा तो वह उदार और वैधानिक ढग की शासनप्रणाली की शिक्षा से वचित रहेगा और फलत तानाशाही के उन कठोर दाव पेचो में उसकी आस्था दृढ हो जायगी जो वैयक्तिक स्वतन्त्रता का विनाश कर यूरोप का विध्वस कर रहे है, वैयक्तिक विचार का स्थान सामूहिक सगठन को दे रहे है और इस प्रकार विश्व को युद्ध की ओर वापस ले जा रहे है। यदि ऐसा हुआ तो यह निश्चित है कि भारत खड-खड और विनष्ट हो जायगा। मुझे इसमे तनिक भी सदेह नही है कि यदि उपनिवेशो की भाति नवीन भारत भी अपने देश को अच्छी सरकार देने मे समर्थ हुआ तो अन्य स्थानो की भाति उसके हाथो मे भी पूर्ण सत्ता अनायास भाव से और अनिवार्य रूप से आ जायगी। इस समय ब्रिटेन मे इस विचारधारा का प्राधान्य है कि यद्यपि वह भारत के साथ व्यापार करना चाहता है तथापि उस पर अधिकार न वनाये रखा जावे। हा, यह देखना है कि भारत सकट मे पडे वगैर भी स्वराज्य का उपभोग कर सकता है या नही। जहा ब्रिटेन के जनमत ने यह देखा कि भारत के राजनेता भारतीय शासन और सुधार से सम्बन्ध रखनेवाली समस्याओ पर व्यावहारिकता और समझ-दारी के साथ कावू पा रहे है, वस, अभिरक्षण उसी प्रकार गायव हो जायगे जिस प्रकार कनाडा और आस्ट्रेलिया मे हो गये थे। अतएव किसी भी दृष्टिकोण से देखिए, काग्रेस और उसके प्रतिद्वन्द्वियो के लिए यह आवश्यक है कि वे प्रान्तीय सरकार पर अधिकार करें, उसे सफल वनावे और उसके वाद केन्द्र में भी यही करें।

स्वय लार्ड लिनलिथगो ने लिखा

मेरी निजी धारणा यह है कि पिछले दस वर्षो मे भारतीय आकाक्षाओ के प्रति सहानुभूति रखने की दिशा मे यहा के जनमत मे काफी प्रगति हुई है। मेरा विश्वास है कि इस बात को अच्छी तरह ध्यान मे रखना बहुत आवश्यक है कि जनमत की प्रगति एक खास सीमा मे होती है। नई परिस्थितियो और दृष्टिकोणो के अनुरूप रुख अपनाने के मामले मे वयस्क पीढी को युवा समाज की अपेक्षा अधिक कठिनाई होगी और राज-कार्य इसी पीढी के हाथ मे है। वास्तव मे बात तो यह है कि ४५ वर्ष की आयु के बाद साधारणतया लोग नई परिस्थितियो को सहज ही नही अपनाते है। यह बात दोनो ही देशो के निवासियो और सभी नस्लो के लोगो पर लागू होती है। असीम धैर्य की दरकार होगी, और यदि किसी चेष्टा के प्रारम्भिक काल मे तुरन्त ही अनुकूल परिणाम उपलब्ध न हो तो निराशा के आगे सिर न झुकाने के लिए काफी साहस की आवश्यकता होगी।

मुझे नये विधान का यथाशक्ति अच्छे-से-अच्छा उपयोग करना होगा, और जहा तक मुझसे सभव होगा, मेरी यही चेष्टा रहेगी कि उसकी मर्यादा के भीतर रहकर सभी प्रकार के राजनैतिक दलो के स्त्री-पुरुष काम कर सके। शायद आप इस बात से सहमत होगे कि भारत की राजनैतिक अवस्था पर कैसा-क्या प्रभाव पडेगा, इसका इस समय अनुमान करना बुद्धिमान-से-बुद्धिमान आदमी के लिए भी सभव नही होगा। इसलिए मेरी तो यही धारणा है कि इस समय हमारी सम्मति जो भी हो, हमे अन्तिम निर्णय उस समय तक के लिए स्थगित कर देना चाहिए जबतक चित्र और भी अधिक स्पष्ट न हो जाय। जैसा कि मै समझता हू आप स्वय जानते हैं, मैं इस बीच मे पारस्परिक सम्मान और पारस्परिक विश्वास की उस भावना को बल देने और उसके क्षेत्र को अधिक व्यापक करने की चेष्टाओ में, जिसके अभाव में कोई भी मगलदायी कार्य सम्पन्न होना सम्भव नही है, अपना योग देने को सदैव तत्पर मिलूगा। मै व्यक्तिगत मित्रता के उन सबधो को भी दृढ करने में पूरा योग दूगा जिनके द्वारा सार्वजनिक जीवन की कठिनाइयाँ बहुधा कम हो जाती है और उसके भार हल्के हो जाते है। इन मैत्री-पूर्ण सम्बन्धो का अपना निजी महत्व और अपना निजी मूल्य है।

पर अफसोस, आशाओ के इस नीलाकाश पर शीघ्र ही बादल छाने वाले थे। कलकत्ते के कट्टर अग्रेज व्यवसायियो के निहित स्वार्थ विरोध की कितनी भारी दीवार खडी कर देगे यह बात

लॉर्ड लिनलिथगो ने नही सोची थी। विरोध तो बम्बई के अग्रेज व्यवसायियो की ओर से भी हुआ, पर उतना नही। जब वाइसराय पहली बार कलकत्ता गये और वहाँ उन्होने विशुद्ध यूरोपीय बगाल क्लब का भोजन का निमन्त्रण स्वीकार न कर, कलकत्ता क्लब का निमन्त्रण स्वीकार किया, जिसके सदस्य यूरोपीय भी थे और भारतीय भी, तो सारा यूरोपीय समाज उनके खिलाफ उठ खडा हुआ। न उन्होने उन चद उच्च अफसरो के असहायक रवैये की बात भी नही सोची थी, जिनकी सहायता और सहयोग पर अधिकाशत निर्भर करना उनके लिए अनिवार्य था। वैसे ये लोग अपने अमले की परिपाटी के अनुरूप ब्रिटिश सरकार और पार्लमेन्ट के इरादो और विधान निहित भावना को वफादारी के साथ मूर्तरूप देना चाहते थे, पर कई ऐसी बाते थी जिनके कारण उनका झुकाव विपरीत दिशा मे हो गया। प्रथम तो जिन अग्रेज व्यापारियो के साथ घनिष्ठ समाजिक मेलजोल था, उनके विचार काफी कट्टर थे और वे आपस मे अपने विचारो को खुले तौर पर व्यक्त करते थे। कहना तो यह चाहिए कि एक ओर तो कुछ अग्रेज व्यापारी, जिनका निर्कास समाज के निचले स्तर से हुआ था, यह चाहते थे कि उनके पुत्र भारतीय सिविल सर्विस या भारतीय सेना मे भर्ती हो जाय, क्योकि वे जिस स्तर पर पहुचना चाहते थे वे समझते थे कि इस प्रकार वे उसकी एक सीढी और लाघ जायगे। दूसरी ओर अग्रेज अफसर अपने व्यवसायी मित्रो से अनुनय करते थे कि वे उनके पुत्रो को अपनी फर्मो में भरती कर ले, ताकि उनका आर्थिक जीवन एक औसत दर्जे के अफसर की अपेक्षा अधिक समृद्ध हो सके।

सन् १९३१ की गर्मियो के जोरदार आतकवादी आन्दोलन ने, जो कि गाँधी-इर्विन समझौते को भग करके शुरू किया गया था, अग्रेज अफसरो और व्यवसायियो के रुख को और भी कठोर कर दिया था, जैसा कि स्वाभाविक ही था। जब यह आन्दोलन चलाया गया तब गाधीजी भारत से बाहर थे, हालाकि बगाल

मे डा० विधानचन्द्र राय और नलिनी रजन सरकार जैसे काग्रेस के वडे-वडे नेताओ ने सार्वजनिक रूप से इस आन्दोलन से अपनी असहमति प्रकट की थी। दूसरा मुख्य प्रभाव भूतपूर्व वाइसराय का पडा, जिन्होने खुले तौर पर गाधीजी के प्रति अविश्वास प्रकट किया। अफवाह थी कि उन्होने वापू को फालतू आदमी कहा था। यह धारणा सरकारी और व्यापारी, दोनो ही क्षेत्रो मे व्याप्त थी और उनका तर्क यह था कि माना कि उनमे से अधिकाश का वापू के साथ साक्षात्कार नही हुआ है, पर लार्ड विलिगडन तो उनसे मिल चुके है और वह जो कुछ उनके वारे मे कहते है, सोच-समझ कर ही कहते होगे। सर हरवर्ट इमर्सन उल्लेख योग्य अपवाद सिद्ध हुए। गाधी-ईर्विन समझौते के सरकारी पहलू को कार्यान्वित कराने का भार उन्ही पर था। इस सिलसिले मे वापू से उनका अनेक बार साक्षात्कार हुआ, जैसा कि स्वाभाविक ही था। नतीजा यह हुआ कि दोनो एक-दूसरे को अच्छे लगने लगे और दोनो के वीच एक-दूसरे के प्रति विश्वास की वृद्धि हुई, पर कुल मिलाकर सरकारी अफसर गाधीजी की नेकनीयती मे विश्वास नही करते थे, आपसी वातचीत मे नये वाइसराय के उग्र आलोचक थे और उनको इस वात से खास तौर पर नाराज थे कि वह अपना प्राइवेट सेक्रेटरी अपने साथ लाये और इसके लिए उन्होने इण्डिया आफिस के एक अधिकारी को छाटा। वे प्राइवेट सेक्रेटरी के पद को भारतीय सिविल सर्विस वालो का इजारा और गवर्नरी के पद के लिए एक सीढी समझते थे।

एक और दुर्भाग्यपूर्ण वात यह हुई कि इन सारी वातो का स्वय लार्ड लिनलिथगो पर सामूहिक प्रभाव पडा। वह काफी लम्वे समय तक अपने प्रारम्भिक रवैये पर डटे रहे। उन्होने काग्रेस को शासन विधान को कार्यान्वित करने, प्रान्तीय स्वशासन की योजना के अधीन पद ग्रहण करने और सरकारो की रचना करने के लिए राजी किया और खुद गाधीजी के साथ मित्रता

का नाता जोडा। पर धीरे-धीरे उपरोक्त शक्तियो ने उन्हे इतना प्रभावित कर दिया कि सन् १९३९ मे जर्मनी के साथ युद्ध छिडते-छिडते उनका भारतीयो, और खासकर काग्रेस, पर से कुछ ऐसा विश्वास उठ गया था कि वह शुरू से ही राष्ट्रीय सरकार की रचना और सम्मिलित युद्ध-प्रयास-सबधी सुझाव को दृढतापूर्वक ठुकराते रहे। उनका यह रुख इसलिए और भी अधिक असगत और बेहूदा लगा कि वह तो वह, जिस ब्रिटिश सरकार का वह प्रतिनिधित्व कर रहे थे वह स्वय, हिटलर की खुशामद करके उसे मनाने की नीति का अनुसरण कर रही थी, जब कि भारतीय लोकमत शुरू से अन्त तक नाजी विरोधी रहा। हा, वह जर्मन विरोधी नही था। इसके अलावा, भारतीय लोकमत ने चीन का भी जोरो से समर्थन किया और मचूरिया पर जापान के आक्रमणो को धिक्कारा। श्री नेहरू की प्रेरणा पर काग्रेस ने एक डाक्टरी दल का सगठन करके चीनियो की सहायता के लिए भेजा। इसके विपरीत भारत मे रहनेवाले अग्रेजो की दृष्टि केवल उनके व्यापारिक हितो पर केन्द्रित प्रतीत होती थी। उन्होने इस सभावना की ओर से आँखें बन्द कर रखी थी कि कभी भारत पर हमला करने के लिए हिटलर और जापान मे गठबधन हो सकता है। वह तो कलकत्ते से कच्चा लोहा जहाजो मे लादकर जापानी बन्दरगाहो को रवाना करने मे व्यस्त थे। यही लोहा बाद मे भारतीय और अग्रेज सैनिको की छातियो को छेदने वाली गोलियो की शक्ल मे वापस आया।

यहा बापू का एक पत्र देता हू जिससे पता चलता है कि आर्थिक समस्याओ से निबटने मे बापू कितना सीधा-सादा और सहज तरीका बरतते थे

सेगाव, वर्धा
४-७-३६

प्रिय घनश्यामदास

मैंने सग्रहालय के बारे में महादेव को लिखने के लिए नहीं कहा था।

असल में मैंने उसे दूसरी इमारतो के वारे मे लिखने को कहा था। तुमको याद होगा कि मैंने अपनी जरूरते गिनाते समय यह कहा था कि दूसरी इमारतो के लिए १,००,००० की आवश्यकता होगी। वाद मे विद्यालय को इमारतो मे शामिल कर लिया गया, हालाकि जव १,००,०००, की राशि का उल्लेख किया गया था, मैंने विद्यालय के मामले को, इसलिए अलग रखा था कि मैं विद्यालय की इमारत के अलावा १,००,००० रुपये की लागत से अन्य इमारतें बनाने की सोच रहा था। किन्तु कोष मे या सुरक्षित निधि मे इतना रुपया नही है कि विद्यालय के निमित्त हुआ खर्च पूरा किया जा सके। मेरा यह खयाल था कि तुमने १,००,००० रु० की राशि मे से कुछ रुपया वच्छराज एण्ड कम्पनी को भेज दिया है। अव मुझे पता चला है कि इस मद मे कुछ भी जमा नही हुआ है। इसीलिए मैंने त्रिवेन्द्रम तुम्हे पत्र भेजा था। शायद यह पत्र तुम्हे नही मिला। अगर उस १,००,००० की राशि मे से कुछ निकालना सम्भव हो तो करना चाहिए।

मैंने डा० मुजे को एक पत्र लिखा है। उसकी प्रतिलिपि तुम्हे मिली होगी।

पारनेरकर के साथ क्या व्यवस्था तय पाई है ?

बापू के आशीर्वाद

महादेवभाई का अगला पत्र इस समय के वापू के जीवन-क्रम पर रोचक प्रकाश डालता है

मगनवाडी, वर्धा
३०, अगस्त १९३६

प्रिय घनश्यामदासजी

मैं आपको अलग डाक से विश्वभारती ससद की कार्रवाई की नकल भेज रहा हू। आपको यह जान कर खुशी होगी कि ६०,००० रुपये के गुप्तदान[1] द्वारा उन लोगो को अपना पुराना कर्ज उतारने में मदद मिली है और कम-से-कम एक वार तो उनके वजट मे सतुलन आ ही गया प्रतीत होता है। पर ऐसा कवतक होता रहेगा, पता नही। कश्मीर में क्या आपका समय अच्छी तरह नही वीता ?

---

१ कवीन्द्र रवीन्द्र को वह गुप्तदान मैंने ही दिया था। इस दान के पीछे एक मर्म-स्पर्शी इतिहास है, जिसे यहां दुहराने की जरूरत नहीं है।

मैंने जान-बूझकर उस ऐतिहासिक मुलाकात के बारे मे नही लिखा। ऐसी बातो की चर्चा पत्रव्यवहार द्वारा नही की जा सकती। मै अगले महीने आपके यहा आने की बाट देखूगा। गत सप्ताह जवाहरलालजी के आगमन के अवसर पर मौसम जैसा कुछ रहा, शायद आपके आगमन के समय उसकी अपेक्षा अधिक मगलकारी सिद्ध होगा। उन्हे थोडा रास्ता वर्षा और कीचड मे तय करना पडा। बापू अपने ग्राम-सेवा के कार्य मे अधिकाधिक व्यस्त होते जा रहे है और पत्रव्यवहार अथवा लेखन-कार्य के लिए थोडा-सा भी समय निकालने को तैयार नही है। तीन या चार सप्ताह पूर्व उन्होने समाजवाद पर अपना वक्तव्य पूरा किया था, किन्तु उसे फिर से देख जाने के लिए उन्हे अभीतक एक क्षण का भी समय नही मिल सका है। उन्होने अपने घर मे (सारे घर में एक ही तो कमरा है) कुछ मित्रो को इकट्ठा किया और उन सबके रोगो से सम्बन्ध रखनेवाली समस्याओ मे ही उनका अधिकाश समय खपने लगा। पर सारी कहानी यही समाप्त नही हो जाती है। असल बात यह है कि वह काग्रेस और सारी बाहरी कार्यशीलता से अपना दिमाग हटा रहे है और उसे पूर्णत गाव और उसकी समस्याओ पर केन्द्रित कर रहे है। वह इसीको अपनी साधना बताते है और अन्य किसी कार्यक्रम द्वारा उसमे बाधा पडे, यह वह नही चाहते। उनके पास सर पी० टी० (सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास) के आग्रहपूर्ण पत्र आये कि उहे अफ्रीकी प्रतिनिधि मडल के स्वागत के लिए बम्बई जाना चाहिए, परन्तु उन्होने साफ इन्कार कर दिया। नवम्बर के शुरु मे गुजरात साहित्य परिषद की अध्यक्षता करनी है, एक साल पहले उन्होने इसका वादा कर लिया था। पर उनकी इस वादे को भी पूरा करने की इच्छा नही है—मना रहे है कि कोई-न-कोई ऐसी बात हो जाय कि उनका जाना रुक जाय। जब आप यहा आवेगे तो शायद उनकी मोजूदा मनोवृत्ति का सही अन्दाजा लगा सकेगे।

आशा है, आप अच्छी तरह होगे।

आपका
महादेव

: १८ :

लिनलिथगो का शासन-काल

लिनलिथगो भारत के लिए कोई अजनबी न थे। वह पिछले वर्षो मे कृषि-सबधी शाही कमीशन के अध्यक्ष रह चुके थे और इस हैसियत से उन्होने काश्मीर और पेशावर से लगाकर कन्या-कुमारी तक देश के सभी भागो की यात्रा की थी। वह कृषि-सबधी विषयो के विशेषज्ञ प्रसिद्ध थे और जब वह वायसराय बनकर भारत आये तो उनके साथ मेरा प्रथम सम्पर्क मुख्यत साँडो और गायो के विषय को लेकर ही हुआ। मै पिलानी मे शिक्षण-सबधी एक बृहद् प्रयोग मे लगा हुआ था। वहाँ बच्चो के लिए दूध की समुचित व्यवस्था हो, इसके लिए अच्छी नस्ल के पशुओ की दरकार थी और यही मेरी समस्या थी। इगलैण्ड के प्रवास के समय मैने एक होलस्टीन साँड खरीदा, किन्तु मुझे परिणाम से सतोष नही हुआ। मेरी एक सूझ यह थी कि बडे शहरो को जो दुधारू गाये भेजी जाती है, उनकी वापसी यात्रा का रेल-भाडा इस तरह निर्धारित किया जाय कि जब ये गाये दूध देना बन्द कर दे तो उन्हे कसाईखानो मे भेजने के बजाय वापस अपने घरो को लौटाना ज्यादा लाभदायक प्रतीत हो। मेरी प्रेरणा पर वायसराय ने इस मामले की बारीकी से जाँच कराई, पर अपने कार्यकाल के प्रारम्भ मे ही उन्हे ऐसी नौकरशाही से पाला पडा, जिससे वह इस मामले मे पार न पा सके। रेलवे ने इस सुझाव को रद्द कर दिया। इतने पर भी वायसराय की पूरी पराजय नही हुई, रेलवे बोर्ड ने स्वीकार किया कि जो पशु किसी उत्तर-पश्चिम स्टेशन से हावडा भेजे जायगे, उनके लिए

विशेष वापसी दर जारी की जायगी, अर्थात् प्रति चार पहियों की गाड़ी पर भेजे जाने वाले पशुओं के लिए छ आना प्रति मील के हिसाब से किराया वसूल किया जायगा, पर शर्त यह होगी कि वापसी नौ महीने के भीतर हो जानी चाहिए। किन्तु मैंने वायसराय को लिखा कि अधिकतर ग्वाले अशिक्षित है, वे वापसी टिकट नही खरीदेंगे, इसलिए यह ज्यादा अच्छा हो कि कलकत्ता भेजी जानेवाली गायों के लिए एक समान किराया तय कर दिया जाय और नौ महीने के भीतर वापस पशु भेजने वाले के लिए मुफ्त टिकट दे दिया जाय। इसका यह अर्थ होता कि भेजने वाले को वापसी टिकट खरीदना ही पड़ता। इस टिकट को वह गाय के साथ ऐसे किसी भी व्यक्ति के हाथ बेच सकता था जो गाय को देश वापस लाना चाहता।

अपनी लन्दन की मुलाकात के बाद मै नये वायसराय से पहली बार ५ अगस्त १९३६ को मिला और हमारी मुलाकात करीब एक घटे तक रही। इस मुलाकात का जो विवरण मेरे पास है, उससे यह चित्र स्पष्ट होता है कि वायसराय एक सदाशयी और ईमानदार आदमी है, जिन्हे अपने वातावरण के साथ सघर्ष करना पड रहा है। उनकी अवस्था उस तैराक जैसी थी जो नदी की तेज धारा मे प्रवाह के विरुद्ध तैरने की कोशिश कर रहा हो। इस प्रवाह की तेजी का उन्होने पहले कभी अदाजा नही लगाया था। अन्त मे उन्हे उस प्रवाह मे बह जाना पडा।

मै मानता हू कि भेट के समय अधिकतर बात मैने ही की। मैने उन्हे याद दिलाई कि जैटलैण्ड, हेलीफैक्स, लोदियन और होर ने मुझसे कहा था कि गाँधीजी को नये वायसराय से मिलने के पहले कोई नया निर्णय नही करना चाहिए। मैने उन्हे यह भी बताया कि किस प्रकार मैने उनके व्यक्तिगत सदेश और अपने सस्मरण गाँधीजी तक पहुचा दिये थे। स्थिति के बारे मे मेरे आशावादी दृष्टिकोण के साथ सहमत होने मे उन्हे कठिनाई का बोध हुआ था, किन्तु उन्होने वादा किया था कि काँग्रेस

के लखनऊ-अधिवेशन के अवसर पर कोई नया निर्णय न किया जाय, इसकी वह चेष्टा करेंगे। मैंने कहा कि लार्ड विलिगडन ने यह डर फैलाने मे सक्रिय भाग लिया है कि यदि वायसराय गॉधीजी से मिलेंगे तो परिणाम अच्छा न निकलेगा। लिनलिथगो को इस वात का अच्छी तरह पता था, और वह सहमत थे। वह जिस वातावरण से घिरे हुए थे उसकी विरोध भावना की गध उनकी नाक मे पहुच चुकी थी।

मैंने कहा, "गाधीजी ने अपने वचन का पालन किया है। मुझे पता नही कि आप अव भी पारस्परिक सम्पर्क स्थापित करने के इच्छुक है, अथवा आपके विचारो मे परिवर्तन हो गया है। मैंने लन्दन मे अपने विचार-विन्दु पर जोर दिया था, पर अव मै ऐसा नही करुगा। मैंने जव आपसे लन्दन मे वात की थी उस समय आपको वस्तुस्थिति का उतना ज्ञान नही था जितना मुझे था, पर अव यह नही कहा जा सकता है कि आपको स्थिति का अध्ययन करने की उतनी सुविधा प्राप्त नही है जितनी मुझे है। आपको मेरे विचार मालूम ही है। मै उन पर उसी प्रकार डटा हुआ हू। यदि आप समझते है कि आपको सम्वन्ध स्थापित करने के लिए कुछ-न-कुछ करना चाहिए तो आप मेरा पथ-प्रदर्शन करिये। इसके विपरीत यदि आपने अपने विचार वदल दिये है ओर उसी पुरानी नीति को अपनाने का निश्चय कर लिया है तो मै केवल इतना ही कहकर वात खत्म कर दूगा कि ऐसा करना वडी भूल होगी।" वह कुछ क्षण विचार-मग्न हो गये, फिर वोले, "गाधी और जवाहरलालजी का पारस्परिक सम्वन्ध क्या है?" मैंने उत्तर दिया, आपको स्थिति को समझनेके लिए दोनो के स्वभाव को समझना होगा। दोनो के स्वभाव, दृष्टिकोणो और विचारो मे जमीन आसमान का अन्तर है। पर इसके कारण दोनो के पारस्परिक स्नेह-सवध मे कोई अन्तर नही पडता है। जवतक गाधीजी जीवित है, मै काग्रेस मे फूट पडने की कोई सम्भावना नही देखता हू।" उन्होने कहा, "मै भी यही समझता हू।" उन्होने पूछा, "निर्वाचन का खर्च कौन उठावेगा? गाधीजी?" मैंने कहा, "मै तो ऐसा नही समझता हू। यह सव काग्रेस के द्वारा ही किया जायगा, ओर जहानक मै समझता हू, काग्रेसवादी पाच प्रान्तो मे वहुमत से जीतेगे।"

इसके वाद उन्होने कहा, "मै आपसे साफ कह रहा हू। जव मै यहा आया तो सरकारी हल्को मे भारी त्रास फैला हुआ था। मैंने सर हेनरी क्रेक से अच्छी तरह वातचीत की। मुझे भय है कि फिलहाल मेरे लिए कोई कदम

उठाना सम्भव नही होगा। मैं जानता हू कि काग्रेस बडी मजबूत पार्टी है और प्रान्तो मे बहुमत प्राप्त करेगी। मैं यह भी स्वीकार करता हू कि काग्रेस ने जनता मे स्वाभिमान और राष्ट्रीयता की भावना जागृत की है और भारत मे जो वैधानिक परिवर्तन हुए है उनका बहुत-कुछ श्रेय उसीको है। पर अन्य महत्वपूर्ण पार्टिया भी तो है, और यदि मैं काग्रेस के साथ आवश्यकता से अधिक मैत्री करने लगू तो अन्य पार्टियो को असुविधा की स्थिति मे डाल दूगा और इससे निर्वाचनो मे काग्रेस को आवश्यकता से अधिक महत्व मिल जायगा। सम्भव है, मुझे पक्षपात का दोषी ठहराया जाने लगे। अतएव राजा के प्रतिनिधि की हैसियत से मेरे लिए ऐसा कोई काम करना उचित नहीं होगा जिससे पक्षपात की गध आवे। इसके अलावा एक बात और भी है। मैं आज गाधीजी से किस विषय पर बात करूगा? मैं उनके साथ खिलवाड नहीं करना चाहता हू। मैं भारत सरकार विधान का एक अर्ध-विराम तक बदलने में अशक्त हू। मैं बगाल के कैदियो को भी रिहा नहीं कर सकता। फिर बताइये, मैं उनसे किस विषय पर बात करू। हा, यदि कोई अग्रगण्य व्यक्ति मुझसे मिलना चाहे तो मैं हमेशा तैयार हू। प० मदनमोहन मालवीय मुझसे मिल ही चुके है। आप मिले ही है। पर यदि मैं गाधीजी को विशेषरूप से निमन्त्रण दू तो इसका कोई वैध कारण नही दिखाई देता है।" मैंने कहा, "मैं आपकी बात अच्छी तरह समझता हू। इस समय गाधी-जी भेट की याचना नही करेगे। पर इसका यह मतलब नहीं है कि वह थोथे लोकोपचार मे विश्वास रखते है। आपके यह कहने भर की देर है कि आप उनसे मिलना चाहते है, और वह तुरन्त लिखकर भेट की याचना करेगे। पर उन्हे स्वय कुछ नही कहना है। मैं काग्रेसवादी नही हू। अतएव जब मुझे आपकी स्थिति काग्रेस को और काग्रेस की स्थिति आपको समझानी पडती है तो मुझे असुविधा का सामना करना पडता है। आप स्वय गाधीजी जैसे किसी काग्रेसवादी को काग्रेसी राजनीति की चर्चा करते हुए देखने का अवसर क्यो नही ढूढते है? यदि आप ऐसा करे तो आपको उनके रुख के सबध मे वास्तविक ज्ञान प्राप्त होगा और उन्हे भी आपका दृष्टिकोण समझने का अवसर मिलेगा। फिलहाल भारत-सरकार के विधान मे किसी प्रकार का परिवर्तन करना सम्भव है, ऐसा मैंने कभी नही सुझाया है, पर इसके अलावा और बहुत-सी बाते की जा सकती है और करनी चाहिए। क्या आतकवाद के सम्बन्ध मे एक-समान ग्राह्य फार्मूला तैयार करना सम्भव नही है? और भी अनेक ऐसी बाते है जिन्हे करना सम्भव है। मैं तो नही समझता कि इस समय सरकार निष्पक्षता से काम ले रही है। खानसाहब के रिहा होते ही उनके ऊपर पजाब और सीमा-प्रान्त मे प्रवेश की निषेधाज्ञा

लगा दी जाती है। फर्ज करिये, खान साहब मत्री बनने वाले हो। आप ऐसा करके उन्हे निर्वाचन-सबन्धी प्रचार-कार्य की सुविधा से वचित कर रहे है। यह कहा का न्याय है? यह न निष्पक्षता है, न न्याय। इन सारी अनुचित बातो को हटाकर वातावरण मे सुधार किया जा सकता है, पर जैसा कि मैने अभी कहा है, म इस मामले पर अधिक जोर नही दूगा। मैने काफी जोर दिया है। अब आप खुद निर्णय करिये।" साथ ही मैने पूछा, "पर क्या आपका खयाल है कि निर्वाचन के बाद स्थिति मे परिवर्तन होगा?" उन्होने कहा, "निश्चय ही, भारी। निर्वाचन के बाद तो चित्र बिलकुल दूसरे ही ढग का होगा। निर्वाचन के बाद स्वय मेरा हिस्सा ठोस रहेगा, पर मै वचन नही देता हू। हम नही जानते कि निर्वाचन के बाद स्थिति कैसी होगी और हमे क्या कार्रवाई करनी पडेगी।" इसके बाद उन्होने बताया कि उन्हे खबर मिली है कि काग्रेसी लोग पद-ग्रहण करने से बचने की चेष्टा कर रहे है, क्योकि उन्होने कोई रचनात्मक कार्य किया और शिक्षा-प्रसार और अन्य धधो के लिए उन्हे टैक्स लगाना पडे तो वे बदनाम हो जायगे। मैने कहा, "आपकी खबर बिलकुल निराधार है। मुझे इसमे तनिक भी सन्देह नही है कि यदि उचित अवबोध रहा, और वातावरण मे सुधार हुआ, और काग्रेस ने पद-ग्रहण किया तो वे लोग, शिक्षा, सफाई आदि के लिए उन लोगो पर टैक्स लगाने मे, जो टैक्स का भार वहन करने मे समर्थ है, तनिक भी नही हिचकिचायेगे। वास्तव मे इससे काग्रेस की लोकप्रियता बढेगी ही।" उन्होने मेरी बात मानी, पर कहा कि उन्हे यह खबर एक काग्रेसवादी ने ही दी है। पर उन्होने यह भी कहा, "फर्ज करिये मै गान्धीजी से मिलू और कहू कि मै यह कर दूगा और वह कर दूगा और विधान को अत्यन्त उदार ढग से अमल मे लाऊगा और जोखिम भी उठाने को तैयार रहूगा, क्या आप पद-ग्रहण को तत्पर है तो मुझे इसमे तनिक भी सन्देह नही है कि उनका उत्तर होगा, "नही।" मैने उत्तर दिया, "महोदय, आप पहले से ही बहुत कुछ फर्ज किये ले रहे है।" उन्होने पूछा, "क्या आप समझते है कि वह पद-ग्रहण करने को राजी हो जायगे?" मैने कहा, "बेशक, बशर्ते कि उन्हे विश्वास हो जाय कि जनता की सेवा के लिए रचनात्मक कार्य करने योग्य वातावरण मौजूद है। गान्धीजी आरम्भ से ही रचनात्मक कार्य करते आये है, इसलिए काग्रेस के पद ग्रहण करने से वह तनिक भी घबराने वाले नही है। पर शर्त यही है कि वातावरण ठीक ढग का हो।" इसके बाद मैने कहा, "मै आपके विचारो से परिचित हू, मै उन्हे गाधीजी के पास पहुचा दूगा। मुझे इस बात से खुशी हुई कि आपने सारी बात इतनी स्पष्टता और स्वच्छता के साथ रखी। अब मै आपको इस मामले को लेकर और अधिक परेशान नही करूगा।

यदि आपको कभी मेरी सहायता की जरूरत पड़े तो मैं हाजिर हूं, पर फिलहाल आपको स्थिति का अध्ययन करने की सुविधा प्राप्त है, इसलिए मैं अधिक कुछ नहीं कहूंगा। मैं आपके निष्कर्षों से सहमत नहीं हूं, पर कोई बात नहीं है।

इसके बाद हमने पशुपालन के सम्बन्ध में कुछ बातें की। उन्होंने कहा, "यदि मैं किसानों को कुछ लाभ पहुंचा सकूं तो मेरा अन्तःकरण सुखी होगा। यदि मैं ऐसा करने में सफल हुआ तो मुझे इसकी चिन्ता नहीं है कि लोग मेरे सम्बन्ध में क्या सोचेंगे।" इसके बाद बोले, "गान्धीजी से कह दीजिये कि मेरी राय में राष्ट्रीयता अपराध नहीं है और मैं सहज दृष्टि-कोण अपनाने में समर्थ हूं।" फिर वह बोले, "जिस समय मैं भारत पहुंचा तो अधिकारियों में कितना त्रास फैला हुआ था इसका आप अंदाजा नहीं लगा सकते।" मैंने उनसे कहा, "मैं पहले ही जानता था और इस सम्बन्ध में मैंने आपको एक पत्र में चेतावनी भी दी थी।" उन्होंने कहा, "मैं नहीं समझता था कि स्थिति इतनी बुरी निकलेगी।"

कहना अनावश्यक है कि वार्त्तालाप के दौरान में पूरी सहृदयता का दौरदौरा रहा, और मैं अपनी इस सम्मति पर दृढ़ हूं कि वह एक अच्छे ईमानदार आदमी हैं। वह अपने विचारों का त्याग करने को बाध्य हुए हैं, और यद्यपि वह निर्वाचन के बाद कुछ कार्रवाई करेंगे, तथापि वह कोई वचन देने को तैयार नहीं हैं। जब मैंने कहा कि मैं उनसे फिर मिलने की आशा करता हूं तो वह बोले, "मेरे पास अधिक मत आइये, नहीं तो यह समझा जायगा कि आप मुझे बहुत अधिक प्रभावित करने की चेष्टा कर रहे हैं। हां, आप जब चाहें लिख अवश्य सकते हैं, भले ही मैं आपसे सहमत न होऊं।"

इस मुलाकात के बाद लार्ड लोदियन का एक पत्र मिला। मैंने उत्तर में लिखा

मुझे आपकी यह धारणा जानकर आनन्द हुआ कि वायसराय लोकोपचार की परवाह न कर पारस्परिक सम्पर्क स्थापित करने को दृढ़-प्रतिज्ञ हैं। अभी तक तो मुझे उसके कोई लक्षण दिखाई नहीं दिये हैं। मैं वायसराय से परसों मिला था और मैंने देखा कि अभी कुछ होने वाला नहीं है।

भारत वापस आने पर मैंने देखा कि लार्ड विलिंगडन ने इस बात को लेकर कि नया वायसराय भारत में आकर क्या कुछ करने वाला है त्रास फैलाना आरम्भ कर दिया है। "नया वायसराय गांधी से मिलेगा और पुरानी नीति को बदल देगा।" मानो गांधी के वायसराय-भवन में पदार्पण करने

मात्र से आकाश फट पडेगा। 'मार्निंग पोस्ट' मे एक तार छपा है और उस के वाद ही सर तेज ने मित्रो और प्रेसवालो को आपका पत्र दिखाया, जिसमे आपने यह कहा मालूम होता है कि मैंने गाधीजी से वचन ले लिया है कि वह वायसराय से मिलने तक कोई नई कार्रवाई नही करेगे। आशा है, आप मेरी वात को गलत नही समझेगे, क्योकि मै आपको दोप नही दे रहा हू। जो लोग पारस्परिक सम्पर्क स्थापित किये जाने के भविष्य मे दिलचस्पी रखते थे, उन्होने इस सवका पूरा उपयोग किया। स्वय मेरा पत्र 'हिन्दुस्तान टाइम्स' अपने ववई-स्थित सवाददाता द्वारा भेजी गई यह मूर्खतापूर्ण खवर छापने की गलती कर बैठा कि लार्ड हैलीफैक्स गाधीजी के साथ पत्र-व्यवहार कर रहे है।

मुझे हमेशा से आशका रही है कि सरकारी अमला शासन के प्रधान और विरोधी दल के पारस्परिक सम्पर्क के विलकुल खिलाफ है। अमले ने इस त्रास और उसकी भोडी उपलक्षणा (implications) को प्रश्रय दिया ही, और जव लार्ड लिनलिथगो आये तो उन्होने वातावरण को त्रास और भय से लदा हुआ पाया। मुझे यह तो पता नही कि उन्होने क्या किया और क्या सोचा, पर वस्तुस्थिति यह है कि उन्होने फिलहाल पारस्परिक सम्पर्क स्थापित करने का विचार त्याग दिया है। मेरी अपनी धारणा है कि उन्हे यह सव विवश हो कर करना पड रहा है।

शायद उन्हे सलाह दी जा रही है कि यदि उन्होने निर्वाचन के पहले कुछ किया तो वैसा करने से काग्रेस को वल मिलेगा। मुझे आशका है कि उन्हे विल्कुल गलत सलाह दी गई है। पारस्परिक सम्पर्क स्थापित करने का विचार एक साधन-मात्र है। सारा प्रश्न इस वात का है कि क्या हमे भारत की सारी सामर्थ्य को हमेशा के लिए रचनात्मक कार्य करने की दिशा मे लगाना चाहि । यह केवल आपके शब्दो मे 'पुलिस राज्य' का अन्त करके पारस्परिक अव-वोध का वातावरण उत्पन्न करने से ही सम्भव हो सकता है जिससे प्रत्यक्ष कार्रवाई का विचार तक वहुत काफी दिनो तक के लिए खत्म हो जाय।

पारस्परिक वार्तालाप के दौरान मे नेताओ के लिए यह जानना जरूरी है कि ब्रिटेन भारत की प्रगति मे कहातक सहायता करने को तैयार है और सुधारो को अत्यन्त उदारता-पूर्वक किस प्रकार अमल मे लाया जायगा और जरूरत पडने पर जोखिम भी उठाई जायगी या नही। इस सारी वातो पर निर्वाचन के वाद नही, वल्कि अभी वातचीत होनी आवश्यक है। इसके लिए सवसे अच्छा समय एक वर्प पहले था। विहार के भूकप ने मिलजुल कर काम करने और पारस्परिक सम्पर्क करने का अच्छा अवसर दिया था। अव मौका उतना अच्छा नही है, पर निर्वाचन के वाद, जव कि काग्रेस अनेक

प्रान्तो मे बहुमत के साथ जीतेगी, मेरी समझ मे मौका और भी बुरा हो जायगा। यदि काग्रेस की विजय होने के बाद सरकार मैत्री का भाव दिखावेगी तो उसका अधिक प्रभाव नही पडेगा। मुझे तो आशका है कि कही निर्वाचन के दौरान में ही भिडन्त न हो जाय। यदि ऐसा हुआ तो सारा वातावरण ही बिगड जायगा। निर्वाचन के प्रति सभी प्रान्तीय सरकारो ने निष्पक्षता का रवैया नही अपनाया है।

एक बात और है। लार्ड लिनलिथगो ने अपने लिए बडा अच्छा वातावरण तैयार कर लिया है। उनके गाधीजी से मिलने के होए ने उन्हें कुछ लोकप्रिय बना दिया है और देहाती मामलो में दिलचस्पी लेने के कारण उस लोकप्रियता मे वृद्धि हो गई है। निर्वाचन के बाद सम्भव है इस मोहिनी का अन्त हो जाय।

कुछ ऐसी बाते हो रही है जिनके लिए उन्हे दोषी ठहराना ही पडेगा। अब्दुल गफ्फार खॉ के सीमाप्रान्त और पजाब में प्रवेश करने का निषेध है, जब कि नये सुधारो के अन्तर्गत यदि कोई व्यक्ति नई सरकार पर काबू पा सकता है तो अकेले वही, क्योकि जनता उनके वश मे है। एक प्रकार से उन्हें निर्वाचन-सम्बन्धी प्रचार-कार्य करने से वचित कर दिया गया है। हमें यह फर्ज क्यो नही करना चाहिए कि नये सुधारो के अन्तर्गत वह सीमा-प्रान्त के प्रधान मन्त्री बन जायगे? इधर वर्तमान सरकार उनके प्रवेश पर प्रतिबध लगाकर उन वर्तमान मत्रियो के पक्ष में लड रही है जो उनके विरुद्ध मोर्चा ले रहे है। अभी तक वायसराय के खिलाफ एक शब्द तक नही कहा गया है। काग्रेसी समाचार-पत्र या तो खामोश है, या उनके सम्बन्ध मे कुछ-न-कुछ अच्छा ही कह रहे है। पर मुझे आशका है कि यह स्थिति जारी नही रहेगी। हा, ईश्वर से मेरी यह प्रार्थना अवश्य है कि ऐसा हो। पर जहा एक बार वातावरण विषाक्त हुआ कि दोनो पक्षो के लिए मित्रता का आचरण करना कठिन हो जायगा। अतएव मेरी सम्मति में अवस्था ऐसी है कि देर करना ठीक नही होगा।

यह मेरे लिए बडी ही निराशा की बात हुई कि मै इगलैण्ड गया, वहा से ऐसी अच्छी धारणा और गाधीजी के लिए आपके और अन्य मित्रो के व्यक्तिगत सदेश लाया और गाधीजी ने उनका समुचित उत्तर दिया, तब भी अन्त मे मुझे इस प्रकार असफल होना पडा। पर ऐसा प्रतीत होता है कि भगवान की ऐसी इच्छा नही थी। मै लार्ड हेलीफैक्स को अलग से नही लिख रहा हू, क्योकि आप उन्हे यह पत्र दिखाना चाहेंगे। मेरी अब भी यही प्रार्थना है कि वायसराय अविलम्ब अच्छा वातावरण उत्पन्न करने की आवश्यकता को समझेंगे। वह किसी हद तक असहाय भी है, पर वह

जब कभी साहसपूर्ण कदम उठाने का निश्चय करेगे, उन्हे अपने आदमियो के विरोध का सामना करना पडेगा। मै तो समझता हू कि जब लार्ड हेलीफैक्स ने गाधीजी को वातचीत के लिए बुलाया था तो उन्हे भी इसी प्रकार का अनुभव हुआ होगा। यही दु ख कहानी है।

किन्तु अगले मार्च के चुनाव समाप्त हो जाने के बाद वायसराय के साथ मेरी जो बातचीत हुई वह कुछ अधिक आशाप्रद थी। उन्होने कहा

"मुझे खुशी है कि काग्रेस को बहुमत प्राप्त हुआ। मुझे आश्चर्य नही हुआ। मै पहले से ही जानता था, पर मेरे आदमी यह नही जानते थे। मुझे अग्रेजी अनुभव था। मै जानता था कि मैदान मे ओर कोई पार्टी मोजूद नही है, काग्रेस सुगठित मस्था है और जनता को प्रिय लगेगी, इसलिए उसकी विजय होनी चाहिए। मुझे तो आश्चर्य है कि उसे बबई मे बहुमत प्राप्त नही हुआ। उसे वहा १० सीटे ओर मिल सकती थी।" मैने उन्हे बताया कि इसका कारण महाराष्ट्र है, जहा काग्रेस का देहाती जनता के साथ पूरा सम्पर्क नही है। वह सहमत हुए।

इसके बाद मैने कहा, अव क्या होगा? आपने सुना ही होगा कि काग्रेस का दिमाग किस ओर काम कर रहा है। मै वर्धा से आ रहा हू, इसलिए गाधीजी की विचारधारा से परिचित हू। उनकी स्थिति कुछ-कुछ इस प्रकार है। आप लोग अपनी स्पीचो मे हमसे बराबर कहते आ रहे है कि हमे सचमुच के अधिकार दिये जा रहे है। आपने अभिरक्षण अवश्य रखे है, पर आपने बराबर यही बताया है कि वे जोखिम का बीमा मात्र है। अव गाधीजी आप की ही बात स्वीकार करके कहते है कि जबतक हम विधान को तोडने या आपके अस्तित्व के विरुद्ध कुछ करने को न आवे, तबतक आप अभिरक्षणो से काम मत लीजिये। हमे काम करने दीजिये।" उन्होने कहा, मै इस स्थिति को अच्छी तरह समझता हू। वस्तुस्थिति को देखा जाय तो मूल बातो मे गाधी की स्थिति मे और मेरी स्थिति मे कोई भेद नही है। अग्रेज लोग विवेकशील होते है और यदि यह विधान प्रदान करने के बाद वे काग्रेस को उसे अमल मे लाने की स्वतन्त्रता नही देगे तो वह हमे कहा ले जाकर पटकेगा? यदि हम दखल देगे और गतिरोध उत्पन्न करेगे तो आप लोग मतदाताओ के पास दुबारा जायगे और फिर बहुमत प्राप्त करके वापस आ जायगे। इसलिए हम लोग अभिरक्षणो का उपयोग केवल कौतुक के लिए नही करना

चाहते है। पर यदि आप आकर कहेगे, 'हम विधान का नष्ट-भ्रष्ट करना चाहते है' तब तो हमे अभिरक्षण काम मे लाने ही पडेगे। इसलिए आप मुझसे जैसी सार्वजनिक घोषणा कराना चाहे, मै करने को तैयार हू और सहानुभूति और सद्भावना सम्बन्धी जैसा आश्वासन दिलाना चाहे, देने को तैयार हू। मैने इस सम्बन्ध मे अपने गवर्नरो से जो कुछ कहा है आपको वह सब मालूम हो जाय तो आपको आश्चर्य होगा। पर यदि कोई अभिरक्षणो का खात्मा चाहे तो यह असम्भव है। मेरे लिए ऐसा करना सम्भव नही है, क्योकि मुझे विधान को बदलने का अधिकार नही है, और मुझे आशका है कि हमे गलत समझा जायगा, क्योकि यदि कोई आकर कहे, 'अभिरक्षणो का खात्मा करिये" और मै उत्तर दू, 'हम ऐसा नही कर सकते' तो सारे समाचार-पत्र कहने लगेगे कि अभिरक्षणो द्वारा ही शासन-कार्य चलाया जायगा, यद्यपि वास्तव मे ऐसी बात नही है। अतएव मुझे इस स्थिति से कुछ चिन्ता-सी हो गई है।' मैने बताया कि जहा तक मै समझ सका हू, गाधीजी यह नही चाहते कि विधान बदला जाय, पर वह भद्रपुरुषो का समझौता अवश्य चाहते है। मै बोला, 'मै समझता हू, गवर्नर लोग अपने-अपने प्रान्तो के काग्रेसी नेताओ को बुला भेजेगे, पर वे लोग गवर्नरो के सामने केवल काग्रेस द्वारा निश्चित सिद्धान्त ही पेश कर सकेगे, जिनके उत्तर मे वे कहेगे 'न'। और प्रान्तीय नेता द्वितीय श्रेणी के है—हा, मदरास की बात दूसरी है जहा हमारे राजगोपालाचार्य मौजूद है। वह बीच ही मे बोल उठे, "मै जानता था कि आप उन्हे बाद देगे।' मैने कहना जारी रखा, 'इसलिए क्या यह सभव नही है कि बातचीत का क्षेत्र प्रान्तो से हटाकर दिल्ली मे रखा जाय, क्योकि वैसी अवस्था मे बात अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण ढग से हो सकेगी। तब फिर समस्या का हल ढूढ निकालना कठिन न होगा।' मैने उन्हे यह भी बताया कि यदि वह गाधीजी से मिलेगे तो वह अपनी बात अधिक जोरदार भाषा मे तो अवश्य कहेगे, पर साथ ही कोई हल भी ढूढ निकालेगे। पर सवाल यह है कि वैसी स्थिति कैसे उत्पन्न की जाय ?' उन्होने कहा, 'कार्य कठिन अवश्य है। यदि आज मुझसे गाधीजी मिलने के लिए आवे (उन्हे यह खबर लगी थी कि उनसे गाधीजी मिलने के लिए आ रहे है) तो केवल इसी विषय पर बात कर सकते है। अब से छ महीने पहले वह एक दूसरे ही मिशन को लेकर आ सकते थे, पर उस समय मेरे आदमियो ने मुझे पारस्परिक सम्पर्क स्थापित करने की सलाह नही दी। यदि वह एक सप्ताह बाद आवे तब भी सम्भव है, अवस्था भिन्न हो। पर इस समय मैने आपने जो कुछ कहा है उनसे इससे अधिक और क्या कह सकता हू ?' मैने उन्हे बताया कि उन्हे बिल्कुल

गलत खबर मिली है। वह उनसे भेट करने बिल्कुल नही आ रहे है, और दिल्ली भी वह जवाहरलालजी के अनुरोध पर आ रहे है। पर साथ ही मैंने उन्हे यह भी बताया कि क्या कुछ होना सम्भव है। उन्हे स्वय अपने दिमाग से काम लेकर समस्या का हल तलाश करना होगा। उन्होने कहा, 'मैं समझ गया, गान्धीजी का मुझसे मिलने के लिए आज आना सम्भव नहीं है, न मेरी समझ मे यही आ रहा है कि उन्हे कैसे बुलाऊ। उस पर भी मेरी धारणा है कि हम दोनो मे किसी प्रकार का मतभेद नही है। मुझे आशा है कि उन्हे भी मालूम होगा कि हम दोनो के बीच किसी तरह की गलतफहमी नही है।' मैंने उन्हे इसका आश्वासन दिया।

बातचीत का नतीजा कुछ नही निकला, क्योकि यद्यपि उन्होने बडी सहृदयता दिखाई और एक प्रकार से उन्मूलनवादी विचार बडे अच्छे ढग से प्रकट किये, तथापि वह यह स्थिर नही कर सके कि अब उन्हे क्या करना चाहिए। जब मैंने नौकरशाही पर आक्रमण किया और बताया कि किस प्रकार अधिकारियो ने युक्तप्रान्त और सीमाप्रान्त मे काग्रेस के विपक्षियो का खुल्लमखुला साथ दिया, तो उन्होने उन के पक्ष मे कुछ नही कहा। उन्होने काग्रेस की विजय पर बारबार सतोष प्रकट किया। उन्होने आश्वासन दिया कि वे किसी भी गवर्नर को अपने अधिकारो से काम नही लेने देगे, पर सहानुभूति और सद्भावना के आश्वासन से अधिक वह और कुछ नहीं दे सके, न यही बता सके कि अभिरक्षणो का खात्मा किस प्रकार सम्भव है। हा, वह अपने सहानुभूति और सद्भावना के आश्वासन को प्रकाशन तक देने को प्रस्तुत थे। साथ ही उन्होने यह भी देख लिया कि गाधीजी विधान का खात्मा नही चाहते है।

उन्होने जवाहरलालजी के सम्बन्ध मे बातकी और कहा, "क्या मेरा यह कहना ठीक होगा कि गाधी और जवाहरलाल मे बडा गहरा स्नेह है?' मैंने उत्तर दिया, "हा।" उन्होने कहा, "मैं समझा हू देश मे जवाहरलाल की स्थिति भी बनी-बनायी है। यदि किसी समझौते की बात पर जवाहरलाल सहमत न हो तो क्या गाधीजी उनके खिलाफ उठ खडे होगे?" मैंने उत्तर दिया, "जवाहरलालजी चुपचाप अनुकरण करेगे।" उनकी भी यही राय हुई।

इसके बाद हम दोनो ने बिडला कालेज के सम्बन्ध मे बातचीत की।

तीन दिन बाद वायसराय के प्राइवेट सेक्रेटरी श्री लथवेट ने इच्छा प्रकट की कि वह चाय पीने और बात करने के लिए

आना चाहेगे । १७ मार्च को मैने वायसराय के लिए अपना अगला पत्र उनके पास भेजा

प्रिय श्री लैथवेट

आपने देखा ही होगा कि गाधीजी के फार्मूला को कार्यकारिणी ने मजूर कर लिया है और मुझे इसमे सदेह नहीं है कि अखिल भारतीय काग्रेस समिति भी उसे मजूर कर लेगी। अब यह घोषणा करने का भार कि गवर्नर अपने हस्तक्षेप-सम्बन्धी विशेषाधिकारो से काम नहीं लेगे अथवा मत्रियो की सलाह को रद्द नही करेंगे, मुख्य मत्री पर ही रहेगा। मुख्य मत्री को इस सम्बन्ध में अपना सतोष करना होगा और इस प्रकार गवर्नर का काम बहुत सरल हो जायगा। यदि मुख्य मत्री के साथ कोई और काग्रेसी नेता भी हो और उसे साथ लेकर गवर्नर के साथ विचार-विमर्श बुद्धिमत्तापूर्ण ढग से हो सकता हो तो यह भी सम्भव होगा ।

मेरी राय मे "विधान के भीतर" एक बडा महत्वपूर्ण वाक्याश है जिसके द्वारा काग्रेस की ओर से गारटी दी जा रही है कि केवल गतिरोध के खातिर गतिरोध करने की कोई इच्छा नही है। यदि गवर्नर लोग सहानुभूति के साथ पेश आयगे तो मुझे आशा है कि उचित अवबोध के मार्ग में कोई कठिनाई उपस्थित नही होगी। मै समझता हू कि यह काग्रेस के दक्षिणपक्ष की बहुत बडी विजय है, और यदि इसका उचित उत्तर मिला तो इससे काग्रेस के हाथ बहुत मजबूत हो जायगे। आशा है, हिज़ ऐक्सीलेन्सी इस स्थिति को समझते है।

सदाकाक्षाओ के साथ,

भवदीय
जी० डी० बिडला

बापू का दिमाग इस समय बहुत ही महत्व की समस्या मे लगा था, तब भी वह अपने 'गोरे सामाजिक कार्यकर्ताओ' की कितनी हितचिन्ता रखते थे, इसका पता रामेश्वरदास के नाम उनके इस पत्र से चलता है

सेगाव, वर्धा
२५-६-३७

प्रिय रामेश्वरदास

आपका पत्र मिला। बच्छराज एड कपनी से रकम के बारे मे मुझे सूचना मिली है। लगभग एक लाख रुपया ग्रामोद्योग सघ को देना है। आप व्यक्तिगत खर्च के लिए जो दे रहे है वह निश्चय ही अलग है।

ब्रजमोहन द्वारा मुझे कई 'गोरे सामाजिक कार्यकर्ताओ' के लिए इगलैड जाने को जहाज की सीटे मिली थी। अब वह यहा नही है। कलकत्ते मे मुझे किसको लिखना चाहिए या आप ही लिखकर यह पूछे कि क्या एक अग्रेज बहन को जहाज द्वारा भेजना सभव होगा?

बापू के आशीर्वाद

: १६ :

कांग्रेस द्वारा पद-ग्रहण

अगली गर्मियो मे मै फिर भारत और ब्रिटेन के बीच व्यापारिक समझौते की बातचीत करने के लिए लदन गया। मैने इस अवसर से लाभ उठाया और पारस्परिक सदेहो को दूर करने और ऐसे समझौते पर पहुँचने की कोशिश की जिसके द्वारा कॉग्रेस के लिए प्रान्तो मे पद-ग्रहण करना सम्भव हो सके और उस स्वशासन का प्रयोग आरम्भ हो जाय जिसे उस समय प्रान्तीय स्वायत्त शासन का प्रेरणाहीन नाम दिया गया था। पारस्परिक सदेह के कारण दोनो ओर काफी बिगाड हो रहा था। वायसराय गाधीजी से मिलने का विचार लेकर भारत आये थे, पर अभीतक गाधीजी से उनकी मुलाकात नही हुई थी। हमारे अपने पक्ष के सम्बन्ध मे मुझे यह खेद के साथ कहना पडता है कि मेरे लन्दन पहुचने के कुछ ही समय बाद मुझे बापू के विश्वस्त प्राइवेट सेक्रेटरी महादेव देसाई का पत्र मिला, जिसमे उन्होने यहतक लिख डाला कि लार्ड हेलीफेक्स हमारे साथ दुरगी चाल चल रहे है और भारत के मित्र नही है। उन्होने लिखा, "क्या आपका यह पूरा विश्वास है कि ये लोग हमारी सहायता करने को उतने ही उत्सुक है, जितना वे आपको लिखे गए पत्रो मे प्रकट करते है ? मेरी सूचना तो यह है कि यह हेलीफैक्स ही है जो किसी प्रकार का समझौता नही चाहते। दूध का जला छाछ को भी फूक-फूक कर पीता है और यह हेलीफैक्स भारत सचिव और दूसरो को यह सलाह देते प्रतीत होते है कि गॉधीजी के साथ किसी भी हालत मे फिर समझौता न किया जाय।" मैने उन्हे यह उत्तर दिया

१६, जून १९३७

प्रिय महादेवभाई

मै यहा मित्रो से बातचीत कर रहा था और वार्तालाप के दौरान मे
मैने यही पाया कि केवल अविश्वास काम कर रहा है, वस्तुस्थिति
के सम्वन्ध मे कोई मौलिक मतभेद नही हैं। बातचीत के दौरान मे मुझे ऐसा
लगा कि यदि दोनो पक्षो के विचारो को इस प्रकार से सजाया जा सके कि
वह दोनो के लिए ग्राह्य हो तो वडी वात हो। कुछ-कुछ इस प्रकार

"यदि गवर्नर और उसके मत्री मे गहरा मतभेद हो तो चाहे उस मतभेद
का विषय उत्तरदायित्वो मे से ही एक क्यो न हो, मत्रिगण और गवर्नर
पहले समझौता करने की भरसक चेष्टा करेगे, पर यदि वे अपनी चेष्टा मे
असफल रहे और गवर्नर के लिए अपने मत्रियो की सलाह का त्याग करना
आवश्यक हो जाय तो वह उन्हे लिख कर देगा कि इस मामले मे वह उनकी
सलाह मानने मे असमर्थ है, चाहे इसके कारण मत्री को त्यागपत्र ही क्यो
न देना पडे। वैसी अवस्था मे उक्त मत्री गवर्नर की उस सूचना का अर्थ
यह लगायगा कि उससे त्यागपत्र मागा जा रहा है।"

विचार कर रहा हू कि यह सुझाव भारत सचिव के सम्मुख अपना वता
कर रखू। हा, मै यह साफ-साफ कह दूगा कि मुझे यह सुझाव वापू अथवा
और किसी की ओर से रखने का अधिकार नही है। फिर भी मै यह जानना
चाहूगा कि इससे वापू की माग की पूर्ति होती है या नही। मेरी तो धारणा
है कि होती है, इसलिए मैने सोचा था कि इसे लेकर भारत सचिव पर दवाव
डालू। परन्तु यदि वापू इसे सन्तोषजनक न समझे तो इस पत्र के मिलते
ही तार भेजना अच्छा होगा। जहाँ तक मै समझता हू, तथ्य की वात यही
है कि मन्त्रिमण्डल को भग करने का उत्तरदायित्व गवर्नर के कधो पर रहे।
इस मसविदे मे मैने इस विचार की रक्षा की है।

इस वक्तव्य मे लेशमात्र सत्य नही है कि लार्ड हेलीफैक्स व्यक्तिगत
सम्पर्क स्थापित किये जाने के विरुद्ध है। मै यह इसलिए कह रहा हू कि
मुझे इस वात की पूरी जानकारी है।

सम्भवत कार्यकारिणी की वैठक शीघ्र ही होने वाली है। यहा स्थिति
निराशाजनक हो, ऐसी कोई वात नही है। अतएव जवतक मै यह न देखू
कि यहा कुछ होने वाला नही है तवतक, मुझे आशा है, कार्यकारिणी
ऐसा कोई काम नही करेगी जिससे दरवाजा वन्द हो जाय। यहा तो लोग
हृदय से चाहते है कि काग्रेस पद ग्रहण करे। यदि उन्हे वर्खास्तगी के सम्वन्ध
मे वापू की वात से सहमत होने मे थोडा-वहुत सकोच है तो केवल इसी कारण
कि समझौते मे पैदा होने वाली परिस्थितियो के सम्वन्ध मे उन्हे भरोसा

नही है। जहा तक बापू का सम्बन्ध है, मुझे तो अभी तक एक भी ऐसा आदमी नही मिला है जिसे उनके सम्बन्ध मे गलतफहमी हो। इस समय का वातावरण १९३५ के वातावरण से बिल्कुल भिन्न है। ये लोग बापू के अविश्वास को समझते है, परन्तु साथ ही उनका कहना है 'कि वह पद ग्रहण करके स्वय पता क्यो नही लगाते कि हम उनकी किस हद तक सहायता कर सकते है?' मै तो उनके सामने बापू के विचारो को ठीक ढग से पेश कर ही रहा हू, और मै यह देख रहा हू कि उनकी दलीलो का उत्तर देना इन लोगो के लिए कठिन हो रहा है। इसलिए अच्छा यही है कि अपनी ओर से दरवाजा उस समय तक खुला रखा जाये जबतक कि ये लोग स्वय उसे बन्द न कर दे, और मेरा विश्वास है कि ये लोग ऐसा नही करेगे।

तुम्हारा
घनश्यामदास

कुछ सप्ताह बाद मुझे यह खुशखबरी मिली कि कॉग्रेस ने पद-ग्रहण कर लिया है। मैने महादेवभाई को लिखा

प्रिय महादेवभाई

अभी-अभी रायटर ने टेलीफोन पर सूचना भेजी है कि बापू के कहने से कार्यकारिणी ने छह प्रान्तो मे पद-ग्रहण करना स्वीकार कर लिया है। इस समाचार से मुझे बेहद खुशी हुई। मुझे इसमे तनिक भी सन्देह नही है कि बापू ने ठीक ही निश्चय किया है और केवल बापू ही ऐसा निश्चय कर सकते थे। मेरी यह धारणा तो अवश्य है कि हमारी मागे आशिक रूप से पूरी हो गई है, परन्तु किसी साधारण कोटि के राजनेता को ऐसी परिस्थितियो मे आगे कदम बढाने का साहस न होता। अस्तु, हमारी परीक्षा का समय आरम्भ होता है और मुझे इसमे सन्देह नही है कि बापू की देखरेख मे काग्रेसी मत्रिमण्डल सबसे सफल मत्रिमण्डल सिद्ध होगे और हम अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर होगे।

अब मै कल लार्ड हेलीफैक्स और सर फिन्डलेटर स्टीवार्ट से और दो-एक दिन मे फिर लार्ड जेटलैड और लार्ड लोदियन से मिलूगा। इस देश से विदा होने के पहले मै दो-चार अन्य राजनेताओ से भी मिल लू, ऐसा विचार है। मै उनके दिमाग में यह बात बिठा देना चाहता हू कि यदि काग्रेस द्वारा पद-ग्रहण कराने मे इतनी कठिनाई हुई तो उसे पद-ग्रहण किये रहने को राजी करने मे और भी अधिक कठिनाई होगी और यदि उनके साथ विवेक से काम

नही लिया गया तो वह पदत्याग देगी। मै उन्हे यह भी वताऊगा कि नौकर-शाही को सीमा के भीतर रखना कितना आवश्यक है।

वैसे राजाजी के पत्र से मेरी आशाओ पर तुषारपात हो गया था, तो भी मै काग्रेस द्वारा पद ग्रहण किये जाने की सम्भावना की ओर से विल्कुल ही निराश नही हुआ था। पहली वात तो यह हुई कि तुमने जो एकदम खामोशी साध रखी थी उससे भी मुझे आशा वँधी हुई थी। तुम जानते ही हो कि मै जवसे यहाँ आया हू तुमने मुझे एक भी चिट्ठी नही लिखी है। मैने अपने मन मे सोचा कि यह सयोग मात्र नही हो सकता है, ऐसा जानवूझ कर और वापू की ताकीद से किया जा रहा है। इसका एकमात्र अर्थ यही हो सकता था कि तुम इस सम्वन्ध मे कुछ नही कहना चाहते थे कि वापू क्या सोच रहे है। शायद वापू कार्यकारिणी की वर्धावाली बैठक की समाप्ति तक रुकना चाहते थे।

वापू को यह भी वता देना कि मेरा स्वास्थ्य विल्कुल ठीक है। आरम्भ मे काम उतना नही था, इसलिए मैने पटेवाजी का कुछ अभ्यास किया था। काम वढने पर वह छोड देना पडा। पर वैसे मै काफी व्यायाम कर लेता हू। मेरे लिए पटेवाजी नई चीज नही है, क्योकि वचपन मे मै अच्छी खासी लाठी चला और कुश्ती लड लेता था। यहा यह सव मै पुराने अभ्यास को ताजा करने के लिए कर रहा था। पर यह सवकुछ वेकार-सा है। यह सव मै तुम्हे इसलिए लिख रहा हू कि इससे तुम्हारा मनोरजन होगा।

सस्नेह तुम्हारा ही
घनश्यामदास

ग्रासवेनर हाउस, पार्क लेन
८ जुलाई, १९३७

प्रिय महादेवभाई

आज मैने लार्ड हेलीफैक्स से वात की और उन्हे वताया कि गवर्नरो और नौकरशाही के लिए निष्कपट भाव से आचरण करना कितना आवश्यक है। मैने उनसे कहा कि काग्रेस केवल विधान को चलाने के लिए पद ग्रहण नही कर रही है, वल्कि अपने लक्ष्यस्थल की ओर अग्रसर होने के लिए। मैने वताया कि काग्रेसवादी अपने लक्ष्य की ओर वैधानिक मार्ग से भी वढ सकते है और प्रत्यक्ष कार्रवाई के द्वारा भी। फिलहाल उन्होने प्रत्यक्ष कार्रवाई का मार्ग छोडकर वैधानिक मार्ग अपनाया है। यदि गवर्नरो और नौकरशाही ने घपलेवाजी से काम नही लिया तो वैधानिकता का वोल-

वाला होगा, अन्यथा कांग्रेस पुन प्रत्यक्ष कार्रवाई करने को बाध्य होगी। राजनीतिमत्ता का तकाज़ा यही है कि गवर्नरो और नौकरशाही को पार्लमेंट के इस इरादे से अवगत कर दिया जाय कि घपलेबाजी से काम नही चलेगा।

उन्होने मुझे आश्वासन दिया और कहा, "मै आपसे पहले भी कह चुका हूँ और अब फिर कहता हूँ कि आपको इस सम्बन्ध मे किसी प्रकार की आशका को जगह नही देनी चाहिए। अग्रेजो का चरित्र ही कुछ इस प्रकार का है कि उन्हे अपने आपको नई परिस्थितियो के अनुरूप बनाने मे देर नही लगती है। शायद भारतीय अफसरो को इस मामले मे कुछ देर लगे, पर अग्रेजो को देर नही लगेगी।"

तुम्हे शायद मालूम ही होगा कि मुझसे एक बार बापू ने तीथल मे कहा था कि पद-ग्रहण के बाद वह स्वय लार्ड लिनलिथगो से सीमाप्रान्त के आयोजित दौरे के सम्बन्ध मे मुलाकात की दरख्वास्त करेंगे। जब मैने हेलीफैक्स को यह बात बताई तो वह बडे खुश हुए और बोले कि लार्ड लिनलिथगो भी बापू से मिलकर निस्सदेह प्रसन्न होगे, और आशा है कि उनके प्रस्तावित दौरे के सम्बन्ध मे कोई अडचन पैदा नही होगी।

मैने उन्हे चेतावनी दी कि कांग्रेस-राज निर्विघ्न रूप मे चलता रहेगा, ऐसी बात नही है। यदा-कदा कठिनाइयाँ उत्पन्न होती रहेगी और यदि लार्ड लिनलिथगो बापू को समझ लेगे तो उनके परामर्श से सदा लाभान्वित होते रहेंगे। उन्हे स्वय यह बात मालूम थी और उन्होने कहा, "मुझे इसमे तनिक भी सन्देह नही है कि लिनलिथगो बापू के साथ पारस्परिक मैत्री का सम्पर्क स्थापित करने का अवसर नही गवायगे।" मै समझता हू कि बापू को अपनी योजनाए अभी से स्थिर कर लेनी चाहिए।

मुझे लोदियन के नाम बापू का पत्र, जिसमे उन्होने उन्हे भारत-आने का निमन्त्रण दिया है, बडा रोचक लगा। मैने स्वय उनसे इस विषय पर कुछ दिन पहले बात की थी और वह इस बारे में विचार कर रहे है। मैने इसकी चर्चा हेलीफैक्स से की। कहा कि लोदियन के अतिरिक्त और लोगो को भी भारत जाना चाहिए जिससे अधिक सम्पर्क स्थापित किया जा सके। इस सिलसिले मे मैने लेन्सबरी और चर्चिल का नाम लिया। उन्हे सुझाव रुचा और वह बोले कि इससे वैयक्तिक मैत्री की भावना तो बढेगी ही, वे ब्रिटिश हितो को भारत को, और भारतीय हितो को ब्रिटेन को समझाने मे भी समर्थ होगे।

आज तीसरे पहर मै सर फिन्डलेटर स्टीवार्ट से फिर मिला। उनसे भी मैने उन्ही बातो की चर्चा की, जिनकी चर्चा लार्ड हेलीफैक्स से की थी और उनके उत्तर भी प्राय हेलीफैक्स के उत्तरो जैसे ही थे। मै जेटलैन्ड

से भी मिलूगा और जो वाते औरो से कहता आ रहा हूँ उन्हीको लेकर उनपर
भी जोर डालूगा। इधर तुम्हारे पास से कोई नया मसाला मिल गया तो
मित्रो के सामने वह भी रख दूगा।

कल रात मै सर जार्ज और लेडी शुस्टर के साथ भोजन कर रहा था
तो सर जार्ज के साथ भारतीय अर्थव्यवस्था के सम्वन्ध मे वडी मनोरजक
वातचीत हुई। मैने उन्हे वताया कि हमे सामाजिक कार्य को आगे
वढाने मे रुपये-पैसे की दिक्कत होगी और उनसे पूछा कि कोई सुझाव
हो तो वताइये।

उन्होने मुझे स्केन्डिनेवियन देशो की यात्रा करके वहा की अवस्था
का अध्ययन करने की सलाह दी। उन्होने मुझे डेनियल हैमिल्टन का स्थान
भी देखने की सलाह दी और कहा कि वह भारत मे अधिक कुछ न कर सकेगा,
क्योकि भारत मे हरेक काम रुपये को लक्ष्य मानकर किया जाता है। उन्होने
कहा कि वैकिंग जाच कमीशन पर भारत सरकार के २६ लाख रुपये खर्च
हुए। हमे इग्लैण्ड मे भी रुपये को लक्ष्य वनाकर काम करना पडता है,
परन्तु भारत मे, जहा रुपये को लक्ष्य वनाकर काम कराने का क्षेत्र, सम्भव है
उतना विस्तीर्ण न हो, सेवा-भाव के क्षेत्र मे विस्तार की गुजायश है। जव
उसका पूर्ण विकास हो जायगा तो रुपये का खेल खुद ही पिछड जायगा।

उन्होने मुझे चेतावनी भी दी कि यदि मै सैद्धान्तिक रूप से वात करना
आरम्भ करूगा तो उससे भारत का अनुदार वर्ग सशकित हो जायगा।
पर उन्हे इस वात का पूरा विश्वास था कि वापू की प्रेरणा से सेवा-भाव के
क्षेत्र को विस्तीर्ण करना सम्भव है और वजट मे वृद्धि किये विना ही हमारे
लक्ष्य की सिद्धि हो सकती है। दूसरे शब्दो मे वह धन के मापदण्ड को पद-
च्युत करके उसके रिक्त स्थान पर परिश्रम के मापदण्ड को आसीन देखना
चाहते है।

इस पत्र के साथ 'टाइम्स' का जो लेख भेजा जा रहा है उसमे तुम
देखोगे कि सम्पादक ने किस प्रकार मुकावला करने मे और विध्वस करने
मे भेद किया है। आखिर अव इन लोगो की समझ मे भेद आ गया।

उस दिन मै श्री वटलर के साथ दोपहर का भोजन कर रहा था। ऐसा
प्रतीत होता है कि उन्हे गवर्नर वनाकर भारत भेजा जायगा। यहा सव
लोग पूर्ण रूप से सन्तुष्ट दिखाई पडते है और मुझे इसमे तनिक भी सन्देह
नही है कि काग्रेस के प्रति सभी की सहानुभूति रहेगी और सभी सहायता करना
चाहेगे। कुछ दिनो वाद मै चर्चिल से मिल रहा हू। लार्ड डर्वी ने मुझे
दोपहर के भोजन के लिए दावत दी है और ओलीवर स्टेनले, जो एक मत्री
है और व्यापार-मडल मे भी है, मेरे साथ दोपहर का भोजन करने आ रहे

है। बम्बई के गवर्नर सर रोजर लमले भी मेरे यहा भोजन करने आ रहे है।'

इन पारस्परिक सम्पर्कों के दौरान मे इन लोगो के दिमाग मे यही बात बैठाने की चेष्टा कर रहा हूँ कि कांग्रेस केवल शासन-विधान को सफल बनाने के लिए नही आई है, बल्कि आगे बढना चाहती है। उसके मार्ग मे रोडे न अटकाकर उसकी सहायता करनी चाहिए। यदि रोडे अटकाये गये तो कांग्रेस को बाध्य होकर पुन प्रत्यक्ष कार्रवाई करनी पडेगी। परन्तु यहा मैने यही पाया है कि सभी की सहानुभूति कांग्रेस के साथ है और सभी यह आश्वासन देते है कि ब्रिटिश जनता यही चाहेगी कि कांग्रेस अपने लक्ष्य की ओर बढे। लोग कांग्रेस का लक्ष्य औपनिवेशिक स्वराज्य ही मानते है। यदि स्वतन्त्रता का अभिप्राय साम्राज्य से नाता तोडना हो तो ये लोग इसके सर्वथा विरुद्ध है। औपनिवेशिक स्वराज्य मे भी सम्बन्ध-विच्छेद करने का अधिकार मौजूद है, और यही काफी है।

सस्नेह तुम्हारा ही
घनश्यामदास

ग्रासवेनर हाउस, पार्क लेन
लन्दन, १२ जुलाई १९३७

प्रिय महादेवभाई

ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ माडरेट कहाने वाले लोगो ने यहा अभी से इस ढग की बातचीत शुरु करदी है जिससे यहा सकेत मिलता है कि कांग्रेस अधिक दिनो तक पदारूढ नही रहेगी। बहुत सम्भव है कि यह सब कुछ 'इच्छा विचार की जननी' वाली बात हो। ये लोग कुछ कुछ इस ढग से बात करते है कि यदि जवाहरलाल ने राजद्रोह करने की सलाह देना आरम्भ किया तो क्या होगा? क्या उन्हे गिरफ्तार कर लिया जायगा? यदि नही तो गवर्नर दखल देने को बाध्य होगा? इस तरह की दुनियाभर की फजूल बाते यहा के राजनेताओ और राजनीति-विशारदो के पास पहुँचाई जा रही है, परन्तु उनका अधिक प्रभाव नही पडता है।

मैने एक माडरेट को यह बताने की चुनौती दी कि जवाहरलाल द्वारा राजद्रोह फैलाये जाने से उनका क्या अभिप्राय है। उन्होने उत्तर दिया कि सम्भव है, वह स्वतन्त्रता की आवाज बुलन्द करे। मैने करारा उत्तर दिया कि स्वतन्त्रता की आवाज बुलन्द करने मे क्या बुराई है, क्या उपनिवेशो का सम्बध तोडने का अधिकार प्राप्त नही है? दक्षिण अफ्रीका

की यूनियन सरकार के सदस्य तो साम्राज्य से सबध-विच्छेद करने की आवाज बुलन्द कर ही रहे है।

मै यह सब सिर्फ यह बताने के लिए लिख रहा हू कि माडरेटो को इस बात से हार्दिक प्रसन्नता नही हुई है कि काग्रेस ने पद ग्रहण कर लिया है, क्योकि यदि काग्रेस ने शासन की बागडोर हाथ मे ले ली तो नरम दल वालो का इतिहास हमेशा के लिए खत्म हो जायगा। ये लोग अब भी शासन करने का स्वप्न देख रहे है।

सस्नेह तुम्हारा ही
घनश्यामदास

सर रोजर लमले (अब लार्ड स्कारबुरो) व्यक्तिगत सम्पर्क मे विश्वास रखनेवाले प्रतीत होते थे। वह इस समय बम्बई के गवर्नर निर्दिष्ट हो गये थे। उनसे बातचीत करने के बाद मैंने महादेवभाई को लिखा

हमने करीब दो घटे बात की। उन्होने मुझसे हमारे लोगो के बारे मे अधिक जानकारी हासिल करने की कोशिश की। वह खासतौर पर बापू से मिलना चाहते है और बहुत उत्सुक है कि भारत पहुचते ही उन्हे बापू से परिचय प्राप्त करने का अवसर मिले। क्या बता सकते हो कि यह किस प्रकार सभव हो सकेगा? यह ठीक है कि बापू बबई कभी-कभी ही जाते है, पर शायद गवर्नर से मिलने जा सके।

दूसरी महत्वपूर्ण बात वह यह जानना चाहते है कि मत्री लोगो को जब कभी निमत्रित किया जायगा तो वे उनके साथ भोजन करने आयगे या नही। मैंने कहा कि इस सबध मे मै कुछ नही कह सकता। मैंने उनसे कहा कि बापू इस प्रकार के आतिथ्य-सत्कार के विरुद्ध है, पर निमन्त्रण मिलने पर मन्त्रियो को भोजन-समारोहो मे जाने की छुट्टी रहेगी या नही, इस बारे मे मै कुछ नही कह सकता। इस बात के लिए तो बापू ही सबमे अधिक उपयुक्त है।

तुमने जो यह सुझाव दिया है कि मै फ्रान्स मे लोरडेस जाऊ, सो उसके बारे मे यह कहना चाहता हू कि मुझे इस बात के सिवाय और किसी बात मे दिलचस्पी नही है कि मै जल्दी-से-जल्दी भारत पहुच जाऊ। पर मुझे लगता है कि सितम्बर के मध्य तक हमको यही रुकना पड़ेगा।

हा, मै तुम्हारे लिए वढिया औजारो के वक्स और विज्ञान के वक्स लेता आऊगा। और किसी चीज की जरूरत हो तो लिख देना।

मैने श्री चर्चिल के साथ अपनी मुलाकात का यह विवरण बापू को भेजा

२२ जुलाई १९३७

आज मै चर्चिल के साथ उनके घर दोपहर का भोजन कर रहा था। फिर दो घटे तक उनका साथ रहा। वह यथापूर्व वडी सहृदयता से पेश आये। वडे मिलनसार है, परन्तु भारत के विपय मे उनका अज्ञान वैसा ही वना हुआ है।

मुझे देखते ही उन्होने कहा, "तो एक महान प्रयोग का आरम्भ हो ही गया।" और जव मैने उत्तर मे कहा, "हा सो तो है, परन्तु इसे सफल वनाने मे आपकी सारी सहानुभूति सदाकाक्षा की दरकार होगी," तो उन्होने मुझे इसका आश्वासन दिया। साथ ही उन्होने कहा, "यह सवकुछ आप ही लोगो पर निर्भर है। आप जानते ही है कि जवसे सम्राट ने विधान पर हस्ताक्षर किये है, मैने उसके विरुद्ध जवान तक नही खोली है। यदि आप इस प्रयोग को सफल वना सके तो अपने लक्ष्य पर स्वत ही पहुच जायगे। आप देख ही रहे है कि दुनिया भर मे प्रजातन्त्र पर किस तरह हमला किया जा रहा है और यदि आप अपने कार्यो द्वारा यह दिखा सके कि आप प्रजातन्त्र को सफल वना सकेगे तो आपको आगे वढने मे कोई कठिनाई नही होगी। आप खेल के नियमो का पालन करिये, हम भी वैसा ही करेगे।"

मैने पूछा, खेल के नियमो का पालन करने से आपका क्या अभिप्राय है?" उन्होने उत्तर दिया, "प्रान्तो को सन्तुष्ट, शान्तिपूर्ण और समृद्ध वनाइये, हिंसा मत होने दीजिये और अग्रेजो की हत्या मत करिये।" मैने कहा, "आपने जो कुछ कहा उससे तो मै हक्का-वक्का रह गया। क्या आप सचमुच यह विश्वास करते है कि हम अग्रेजो की हत्या करेगे?" वह मेरी आत्मतुष्टि मे चकित तो हुए, परन्तु उन्होने मेरे इस आश्वासन को स्वीकार कर लिया कि भारत हिंसा मे विश्वास नही करता है। मैने यह भी कहा कि "उग्र-से-उग्र काग्रेसवादी भी अग्रेज-विरोधी नही है। वह स्वतन्त्रता तो चाहता है, परन्तु इसके लिए अग्रेज-विरोधी होना जरूरी नही है।" उन्होने मुझसे पूछा कि क्या यही वात जवाहरलाल के सवध मे भी कही जा सकती है? मैने उत्तर दिया, "हा, यद्यपि मै पूजीवादी हू और वह समाजवादी है और सामाजिक

कल्याण के सवन्ध मे हम दोनो के दृष्टिकोण भिन्न है, तथापि उनके साथ न्याय किया जाय तो यह कहना पडेगा कि वह एक महान् व्यक्ति है, वहुत साफ तवीयत के आदमी है और अग्रेज-विरोधी तो जरा भी नही है। सारी वातो का पता लगाने के लिए आपको स्वय भारत जाना चाहिए। इससे हमे भी वडी सहायता मिलेगी।" उन्होने उत्तर दिया "मै जाना तो चाहूगा। लिनलिथगो ने तो मुझे दावत दे ही रखी है, और यदि गान्धीजी की भी यही इच्छा हुई तो मै जाऊगा। अपने नेता से मेरा अभिवादन कहिये और उनसे कहिये कि मै उनकी सफलता की कामना करता हू। समाजवाद से मोर्चा लेने मे कोताही मत करिये। धन-सग्रह अच्छी चीज है, क्योकि इससे सूझ पैदा होती है। हा, पूजीवादियो को स्वामी नही, सेवक होना चाहिए।"

यूरोप की राजनैतिक स्थिति के सम्वन्ध मे उन्हे घोर सशय है। अगले साल भर तक तो उन्हे युद्ध की आशका नही है, परन्तु वह सुदूर भविष्य के सम्वन्ध मे कुछ कहने मे असमर्थ है। उन्होने कहा "तानाशाह लोग पागल होते जा रहे है और अपनी शक्ति को अक्षुण्ण वनाने के लिए कुछ भी कर सकते है। रूस उत्तरोत्तर कम साम्यवादी और जर्मनी अधिक समाजवादी होता जा रहा है। इस प्रकार दोनो मे एक प्रकार का सामजस्य स्थापित हो गया है। इग्लैण्ड ही एक ऐसा देश है जिसने प्रजातत्र को वनाये रखा है। मैने इग्लैड को पुन सशस्त्र करने का आन्दोलन इसलिए आरम्भ किया कि मेरा विश्वास है कि राष्ट्रो का शासन या तो अधिकार के द्वारा होता है या वल के द्वारा। शासन करने का श्रेयस्कर मार्ग अधिकार है, परन्तु जवतक आपके पास वल न हो, आप अधिकार से वचित रहेगे। और अव हमारे पास वल है और उसकी सहायता से हम अपने अधिकार का प्रतिपादन कर सकते है। इटली तो एक साम्राज्य स्थापित करने का स्वप्न देख रहा है।"

वह इसी लहजे मे देर तक वाते करते रहे। इस वार उन्होने स्वय अनुरोध किया कि मै उन्हे भारत की स्थिति के सवध मे सूचित करता रहू। मैने वचन दे दिया है।

इसके साथ कुछ कतरने भेजता हू जिनमे तुम्हारी दिलचस्पी होगी। 'मार्निग पोस्ट' तो यहा की जनता के कानो मे विप उडेलता ही रहता है। परन्तु इससे क्या हुआ। हम ठीक रास्ते पर चलते रहे।

युद्ध के वारे मे श्री चर्चिल का अनुमान कितना ठीक निकला! एक साल तो और शान्ति रही, उसके वाद क्या होना था, यह कोई नही जानता था।

इस आड़े वक्त में लार्ड लोदियन भारत के अच्छे मित्र सिद्ध हुए। मैंने महादेवभाई को (बापू के लिए) लिखा

कल शाम लार्ड लोदियन मिलने आये। उनके साथ भविष्य के सम्बन्ध में बहुत देर तक बातचीत होती रही। मैंने उन्हें बताया कि यद्यपि कांग्रेस ने पद ग्रहण कर लिया है, तथापि ऐसा उसने इसलिए नहीं किया है कि उसका विधान-मात्र से सन्तोष करने का विचार है बल्कि इसलिए कि उसका स्थान किसी तरह ऐसी वस्तु को दिया जाय जो उसे पसन्द है, और अब जब कि उसने आपकी इच्छा के अनुरूप आचरण किया है, यह आप कहां तक संभव समझते हैं कि इस विधान को अमल में ला कर वह उसके स्थान पर अपनी पसन्द की चीज़ स्थापित कर देगी, उन्होंने उत्तर दिया, "आप लोगों को फिलहाल नौकरियों के और साम्प्रदायिक प्रश्न को नहीं छेड़ना चाहिए, परन्तु समाज-सुधार के अन्य पहलुओं पर आपको गवर्नरों के हस्तक्षेप को कदापि सहन नहीं करना चाहिए। ऐसे शनै-शनै एक प्रकार की परिपाटी स्थापित हो जायगी और प्रान्तीय स्वतन्त्रता पूर्ण रूप से स्थापित हो जायगी। रही संघ-शासन-व्यवस्था की बात, सो जब वह अस्तित्व में आयगी तो मुझे आशा है कि कांग्रेस अपना निजी मंत्रिमंडल बना लेगी।"

मैंने उन्हें बताया कि ३७५ सीटों में कांग्रेस को मुश्किल से १०० मिलेंगी और इस प्रकार वह बहुसंख्यक दल के रूप में नहीं आ सकेगी। इसके उत्तर में उन्होंने कहा कि बहुसंख्यक न होते हुए भी वह एक सबसे अधिक संख्या वाले दल की हैसियत से बहुसंख्यक दल का गठन कर सकेगी। मैंने इसका खण्डन नहीं किया। इसके बाद उन्होंने सुझाव दिया कि हमें तुरन्त ही सैनिक बजटों को चुनौती देना आरम्भ कर देना चाहिए। इसके फलस्वरूप गवर्नर जनरल के साथ बातचीत का मौका मिलेगा और फलत सैनिक बजटों के मामले में अधिक कहने का अवसर मिलेगा। मैंने पूछा, "इससे हमें सैनिक अथवा वैदेशिक मामलों पर अधिकार करने का अवसर किस प्रकार मिल जायगा? आपका दावा है कि शासन-विधान में स्वत विकास के अणु विद्यमान हैं। अब आपको यह साबित करना होगा कि इनके द्वारा हमें वह मिल जायगा जिसे हममें से कुछ लोग औपनिवेशिक स्वराज्य कहते हैं।"

उन्हें यह बात स्वीकार करनी पड़ी कि एक नये कानून के बगैर यह सम्भव नहीं होगा। तब मैंने उन्हें बताया कि मैं इस चीज की विभावना किस रूप में करता हूं। मैंने यह बात मानली कि बुद्धि-विवेक और समझाने-बुझाने

के मार्ग द्वारा हम ऐसी परिपाटी को जन्म दे सकेंगे जिसके द्वारा दो-तीन वर्षो के भीतर ही हमें पूर्ण प्रान्तीय स्वतन्त्रता मिल जायगी। हमें यह देखना होगा कि कानून और व्यवस्था की रक्षा होती है और साम्प्रदायिक मामलो मे निष्पक्षता से काम लिया जाता है या नही। नौकरिया वास्तव मे सेवा करने के साधन वन जायगी। यह सवकुछ तो ठीक है, परन्तु जहा तक केन्द्र का सम्वन्ध है मुझे इसमे पूरा सन्देह है कि यह अवस्था हस्तान्तरित विषयो तक के सम्वन्ध मे उत्पन्न की जा सकेगी। इसलिए मैंने यह सुझाव रखा कि शासन-विधान को दो-तीन साल तक अमल मे लाने के वाद हमे अपने सार्वजनिक कार्यकर्ताओ का एक छोटा-सा दल इंग्लैण्ड भेजना चाहिए। यह दल यहा मत्रिमडल के सदस्यो से मिल कर उन्हे वतायगा कि हमने वैधानिक उपायो से आगे वढने की भरसक चेष्टा की है, पर अव प्रगति सम्भव नही है और इसके लिए एक नया कानून विल्कुल आवश्यक होगया है। इस दल को यहा की सरकार को इसके लिए राजी करने की चेष्टा करना चाहिए कि अव हमे अपनी पसन्द की चीज मिल जानी चाहिए। दल को यहा वालो को स्पष्टरूप मे वता देना चाहिए कि भारत अपनी वर्तमान अवस्था से सन्तुष्ट रहने वाला नही है और यदि स्थायी समझौता नही हुआ तो प्रत्यक्ष कार्रवाई की सम्भावना है।

इसके वाद मैंने लार्ड लोदियन से पूछा कि क्या यह कार्य-प्रणाली अपनाने से यहा की सरकार हमारे साथ औचित्यपूर्ण व्यवहार करने और हमारी वात सुनने को राजी हो जायगी। मैंने यह सुझाव भी पेश किया कि आगामी दो-तीन वर्षो मे हमे शासन-विधान को हर प्रकार से सफल वनाने की चेष्टा करनी चाहिए और पारस्परिक सम्पर्क स्थापित करना चाहिए जिससे समय आने पर यहा के मत्रिमडल के सदस्य और यहा की जनता हमारे साथ मैत्री का आचरण कर सके। इग्लैण्ड के प्रमुख व्यक्ति भारत जावे और भारत के प्रमुख व्यक्ति इग्लैंड आए।

उन्होने उत्तर दिया कि सुझाव अच्छा है। उन्होने आशा प्रकट की कि समय आने पर इसका इग्लैंड की जनता पर गहरा प्रभाव पडेगा और इस कार्य-प्रणाली के द्वारा, सभव है, हमे अपनी इच्छित वस्तु प्राप्त हो सके। उन्होने वताया कि उन्होने वापू को चिट्ठी लिखी है और शायद नवम्वर के मध्य तक वह खुद भी भारत के लिए रवाना हो जाय। परन्तु उन्होने कहा कि इस वात को गुप्त रखा जाय। मैंने पूछा कि क्या इस सम्वन्ध मे उन्होने कोई कार्यक्रम निर्धारित किया है? उन्होने कहा, 'न'। खींचे झाडने की मेरी विल्कुल इच्छा नही है। मैंने उत्तर मे कहा कि मै यह तो नही चाहता कि आप खींचे दे, परन्तु मै यह अवश्य जानना चाहता हू कि आप भारत

अंग्रेजों के अतिथि होकर जायंगे या भारत के? उन्होंने कहा, "निश्चय ही भारत का। मैं गांधीजी से मिलूंगा।" परन्तु मैंने कहा, "इतना ही काफी नहीं है। आपको अधिक-से अधिक कांग्रेसवादियों से मिलना चाहिए। आपको गवर्नमेन्ट हाउसों में न ठहर कर भारतीयों के यहां ठहरना चाहिए।

मैंने उनसे पूछा कि क्या वह दिल्ली और कलकत्ते में मेरे पास ठहरना पसन्द करेंगे। उन्होंने उत्तर दिया, "मुझे एक दिन के लिए तो गवर्नमेन्ट हाउस में ठहरना ही होगा, परन्तु वैसे मुझे आपके साथ ठहर कर बडी खुशी होगी।" मैंने उन्हें बताया कि मैंने इसी तरह की बात चर्चिल के साथ की है, परन्तु वह शायद तभी जायंगे जब बापू उन्हें बुलायंगे। उन्होंने इस सम्वाद में बडी रुचि दिखाई। वह मुझसे सहमत थे कि मुझे इसी प्रकार का अनुरोध बाल्डविन से भी करना चाहिए।

मैंने उन्हें बताया कि यदि दो-तीन साल बाद प्रगति नहीं हुई तो भारत प्रत्यक्ष कार्रवाई करने को बाध्य हो जायगा। परन्तु प्रत्यक्ष कार्रवाई का अर्थ लार्ड लोदियन ने रक्तपात-पूर्ण क्रान्ति लगाया है। वह अहिंसात्मक सामूहिक सविनय अवज्ञा की कल्पना तक नहीं कर सकते हैं। उनका खयाल है कि जवाहरलाल बापू के सामने सिर केवल इसलिए झुका रहे हैं कि इसके सिवा और कोई चारा नहीं है। परन्तु ठीक समय पर वह उठ खडे होंगे और चूंकि अहिंसात्मक सविनय अवज्ञा में उनका विश्वास नहीं है, इसलिए वह भारत को क्रान्ति की ओर ले जायंगे। युवा समाज उनके पीछे हो लेगा, इसका फल यह होगा कि पूंजीपति फासिस्ट ढंग पर अपना संगठन करेंगे और किसान लोग साम्यवादी ढंग पर।

मैंने उन्हें बार-बार बताने की कोशिश की कि वह यूरोपियन हैं, इसलिए उन्हें साम्यवाद और फासिज्म के अलावा और किसी चीज का पता नहीं है, जब कि भारत में एक तीसरी दिशा में कदम उठाया गया है, जिसमें कुछ सफलता भी मिली है, और वह है अहिंसात्मक क्रान्ति। मैंने उन्हें बताया कि जबतक कांग्रेस को यह यकीन न हो जायगा कि प्रत्यक्ष कार्रवाई करने पर भी उसकी अहिंसात्मक रूपरेखा वैसी ही बनी रहेगी तबतक वह वैसा नहीं करेगी। परन्तु उन्होंने कहा कि मानवी प्रकृति जैसी कुछ है, रहेगी। वह इस बात पर विश्वास ही न कर सके कि यह सबकुछ सम्भव है।

इसके बाद उन्होंने कहा, "गान्धीजी का आदर इसलिए किया जाता है कि वह संत पुरुष हैं, परन्तु जब संघर्ष की नौबत आयगी तो वे लोग उनकी बात तक नहीं पूछेंगे। जवाहरलाल कभी गांधीवाद के आगे सिर नहीं

झुकायेंगे।" लाख समझाने पर भी मैं उन्हें अपनी बात का विश्वास नहीं दिला सका। उन्होंने केवल इतना ही कहा कि वह मेरे कथन के मर्म को समझने के लिए भारत जायगे।

मुझे इसी डाक से बापू का अपने हाथ से लिखा हुआ पत्र मिला है। तुम्हारा पत्र भी मिला है। मुझे बापू का पत्र इतना पसन्द आया कि मैंने उसकी नकलें लार्ड हेलीफैक्स, लोदियन और चर्चिल को भी भेजी है। मैंने मंत्रियों के वेतन पर बापू के अन्तिम लेख की नकल भी प्रमुख व्यक्तियों के पास भेज दी है।

मुझे सारी बातो की खबर देते रहना। वैसे मैं यूरोप के अन्य देशों के लिए रवाना हो रहा हू, क्योंकि ये लोग अगस्त में काम-काज नहीं करते है, परन्तु हम लोग सितम्बर के पहले सप्ताह मे फिर इकट्ठे होंगे। यह बात बडी खिझाने वाली है कि हमें उस समय तक प्रतीक्षा करनी पडेगी, परन्तु इसके सिवा और चारा भी क्या है।

हमें यदाकदा 'टाइम्स' और 'डेली हेरल्ड' मे भारत के सम्बन्ध मे प्रेस-समाचार पढने को मिलते रहते है। पर वैसे हम लोग एक प्रकार से अलग-थलग से हो गये है। इसलिए मैंने देवदास से 'हिन्दुस्तान टाइम्स' नियमित रूप से भेजने को कह दिया है।

ग्रासवेनर हाउस, पार्क लेन
लन्दन
४ सितम्बर १९३७

प्रिय महादेवभाई

तुम्हारे पत्रो को केवल रोचक कहना काफी नहीं होगा। मैं एक ऐसे आदमी की तरह हू जो सहरा के रेगिस्तान मे हो और प्यास से तडप रहा हो। मैंने देवदास से 'हिन्दुस्तान टाइम्स' भेजने को लिख दिया था, परन्तु उन्होंने अभी तक भेजना शुरू नहीं किया है। इसके परिणाम-स्वरूप भारत से मेरा सम्बन्ध कटा-सा हो गया। मेरा लडका कुछ कटिंग भेजता रहता है और मैं 'हरिजन' से सम्पर्क बनाए हुये हू। परन्तु इन सारी चीजो से मुझे वह सामग्री नहीं मिलती है जो तुम्हारे द्वारा मिल सकती है। इसलिए मुझे जब तुम्हारे पत्र मिलते है तो मैं उनका अच्छी तरह पान करता हू। और जब कभी बापू लिखते है तब तो मैं अपने आपको सशरीर स्वर्ग मे पाता हू। मैं यदा-कदा तुम्हारे पत्रो के उद्धरण लार्ड हेलीफैक्स के पास भेज देता हू, पर इधर कई दिनो से नहीं भेज रहा हू, क्योंकि भारत का प्रश्न मेरे लिए बडे महत्व का हो सकता है, उनके लिए शायद

वह इस समय महत्व का न हो, जब कि शवाई में गोली-वर्षा हो रही है और फ्रेन्को ब्रिटिश जहाजो को टारपिडो मार कर डुबो रहा है।

बापू ने अण्डमान के भूख-हडतालियो की हडताल भग कराने में कमाल का काम किया है। उनके इस कार्य की बडी सराहना हो रही है। मुझे इसमें सन्देह नही है कि जब अधिकारियो ने बापू को उनके छुटकारे के लिए आते देखा होगा तो चैन की सास ली होगी। ऐसा प्रतीत होता है कि वायसराय के साथ बापू की मित्रता घनिष्टतर होती जा रही है, परन्तु सबसे अधिक महत्व की बात यह है कि वह हमे सहयोग का मार्ग दिखा रहे है। वह कई बार कह चुके है कि वह सहयोग करने के लिए बेहद आतुर है और असहयोग भी सहयोग की दिशा मे उठाया गया एक कदम है। अब वह आचरण द्वारा यह सिद्ध कर रहे है। निस्सदेह यदि हम अपने भीतर सामर्थ्य उत्पन्न कर ले तो सहयोग से किसी प्रकार के अनिष्ट की सभावना नही है।

लक्ष्मी निवास भारतीय समाचार-पत्रो की जो कतरने भेजता रहता है उनसे पता चलता है कि उच्छृङ्खलता जोर पकडती जा रही है। बिहार में किसानो ने व्यवस्थापिका सभा पर धावा बोला, भवन मे प्रवेश करके सीटो पर अधिकार कर लिया और मुख्य मत्री के कहने पर भी वही जमे रहे। यह सब मुझे बिलकुल अच्छा नही लगा। इसपर तुर्रा यह कि मुख्य मत्री ने भाषण द्वारा उन्हे मीठी-मीठी बाते तो बताई, पर यह नही बताया कि उन्होने व्यवस्थापिका सभा की सीटो पर अधिकार करके और वहा से जाने से इन्कार करके गलती की। राघवेन्द्रराव के विरुद्ध जो प्रदर्शन किया गया, बापू ने उसकी आलोचना करके ठीक ही किया, परन्तु मुझे आशका है कि यदि कठोरता नही बरती गई तो उच्छृङ्खलता में उत्तरोत्तर वृद्धि होगी। मुझे आशा करनी चाहिए कि कांग्रेस के अधिकारी इस परिस्थिति की ओर से अचेत नही है और इस सम्बन्ध मे सारी आवश्यक कार्रवाई करेगे। आम लोगो मे यह धारणा जड पकडती जा रही दीखती है कि स्वतन्त्रता और उच्छृङ्खलता एक ही चीज है।

अपने दफ्तर के बारे मे तुमने जो कुछ कहा उससे मुझे आश्चर्य हुआ। तुम कहते हो कि मुझे उन सारी चीजो मे फेरफार करने मे एक दिन तुम्हारी सहायता करनी चाहिए। मैने इसके लिए इन्कार कब किया है? क्या तुमने मुझसे इस सम्बन्ध मे कभी कुछ कहा? तुम्हारे दफ्तर के बारे मे मुझे बापू से झगडा करते सात वर्ष हो गये, पर अभीतक कोई नतीजा नही निकला है। बापू को सारे पत्र अपने हाथ से, कभी इस हाथ से कभी

उससे, लिखने पडते है। तुम्हारे टाइपिस्ट लोगो के लिए उपयुक्त स्थान तो अजायब-घर है। मैंने कार्यदक्षता के सम्वन्ध मे वापू से वहस की है। वह मुझसे सिद्धान्तरूप में तो सहमत है, परन्तु जब उन्हे लन्दन मे एक स्टेनोग्राफर की ज़रूरत पडी और मैने एक स्टेनोग्राफर देने की तत्परता दिखाई तो उन्होने पोलक की वहन को काम के लिए बुला लिया। खैर, महादेवभाई, जहातक मेरा सम्वन्ध है, मै तैयार हू।

मैंने एटलस के लिए अभी आर्डर नही दिया है। रही सदर्भ-रेफरेन्स, की पुस्तको की वात, सो स्टेट्समैन इयर वुक के लिए आर्डर दे ही रहा हू। तुम्हे और जिन-जिन पुस्तको की दरकार हो, मुझे लिखो, मै आर्डर दे दूगा। मै तुम्हारे लडके के लिए वढई के औजारो का वक्सा भी भेज रहा हू।

सस्नेह तुम्हारा ही
घनश्यामदास

ग्रासवेनर हाउस, पार्क लेन
लन्दन
८ सितम्वर १९३७

प्रिय महादेवभाई

जहा तक वापू के स्वास्थ्य का सम्वन्ध है, तुम्हारे २६ तारीख के पत्र से चिन्ता हुई। मैंने उनके सम्वन्ध मे तुम्हारे पास तार भेजा और तुम्हारा उत्तर न मिलने से चिन्ता और भी वढ गई है। गनीमत यही है कि उनके स्वास्थ्य के सम्वन्ध मे समाचार-पत्रो मे कुछ नही निकला है। इससे मैंने यही समझा है कि अव वह पहले से अच्छे हैं। फिर भी उनके आराम लेने के प्रश्न पर विचार करना आवश्यक है। तुमने केवल अपने अन्तिम पत्र मे लिखा है कि वापू ने अवस्था को समझ लिया है और अव वह अधिक विश्राम ले रहे हैं। इसलिए समझ मे नही आता कि उनके स्वास्थ्य मे गड-वडी क्यो हुई।

तुमने अपने पत्र मे लिखा था कि मुझे शीघ्र चल पडना चाहिए। मैंने तुम्हे तार दिया है कि वैसे मेरा विचार ७ अक्टूवर को रवाना होने का था, परन्तु यदि मेरी दरकार इससे पहले हो तो मै सवकुछ छोडकर यहा से चल दूगा।

फिलहाल मै तुम्हारे पत्रो और लेखो का कोई उपयोग नही कर रहा हू, क्योकि इस समय इस देश मे भूमध्यसागर और सुदूर पूर्व-सम्वन्धी समस्या को लेकर वडी वेचैनी फैली हुई है। सव कोई कार्य मे वेतरह व्यस्त दिखाई

देते है और मुझे आशंका है कि शनै -शनै अवस्था गंभीर रूप धारण कर लेगी। ब्रिटेन १९३५ में सारे अपमान सहता गया, पर अब वह पहले से अधिक शक्तिशाली है और एक वर्ष बाद उसकी शक्ति मे और भी अधिक वृद्धि हो जायगी। भूमध्यसागर और सुदूरपूर्व मे उसके साथ जिस प्रकार छेड़खानी की जा रही है उसके कारण उसने पहले से अधिक कठोर रुख अख्तियार कर लिया है और एक वर्ष बाद जब वह खूब शक्तिशाली हो जायगा तो शायद यह छेड-छाड बर्दाश्त नही करेगा। उधर जापान भी लडाई पर उतारू दिखाई देता है और हिटलर अपने उपनिवेश वापस चाहता है, और इटली भी अपनी तलवार झनझना रहा है। हो सकता है, यदि इन्हें इस बात का पता लग जाय कि ब्रिटेन एक वर्ष बाद अबसे कही अधिक शक्तिशाली हो जायगा तो शायद ये एक वर्ष प्रतीक्षा करने के बजाय फौरन युद्ध छेड़ना चाहेंगे। उधर इटली और रूस मे निश्चित रूप से सम्बन्ध-विच्छेद हो गया है और पता नही, बात कहा तक बढे। इस प्रकार तुम देखोगे कि इस समय राजनैतिक अवस्था बडी नाजुक है। साथ ही यह भी निश्चित है कि ब्रिटेन लडाई छेड़ने को उत्सुक नही है। यदि लडाई छिड भी गई तो वह जितने दिन तक सम्भव होगा अलग रहना चाहेगा। पर एक ओर फासिस्ट देशो और बोल्शेविक रूस मे और दूसरी ओर जापान और ब्रिटेन में मनमुटाव काफी बढ गया है।

सस्नेह तुम्हारा ही
घनश्यामदास

: २० :

१९३७

मैंने सन् १९३७ मे कुछ समय इग्लैण्ड मे बिताया। पर वहाँ भी दो ज्वलत प्रश्न मुझे बराबर सताते रहे। पहला प्रश्न यह था कि कॉग्रेस को प्रान्तो मे पद ग्रहण करना चाहिए या नही। दूसरा यह कि नजरबन्दो की रिहाई होनी चाहिए या नही। कॉग्रेस ने पद ग्रहण न करने का जो हठ पकड रखा था उससे मुझे बडा मानसिक क्लेश पहुचा। मेरे मनोभाव राजाजी के नाम ३ जुलाई १९३७ के पत्र मे प्रकट हुए।

आपके निर्णय से मुझे जो निराशा हुई है, मेरा विश्वास है कि आप उसे समझेगे। मै आपकी अपेक्षा इग्लैड के प्रतिनिधियो के अधिक निकट सपर्क मे हू और इसलिए जितना अविश्वास आपको है, उतना मुझे नही है। इसलिए मेरी यह धारणा स्वाभाविक ही है कि यदि मेरी तरह आप भी उनके निकट सम्पर्क मे आवे तो आपका अविश्वास काफूर हो जायगा। और सपर्क स्थापित करने का उपाय है पद-ग्रहण। इतने स्पष्टीकरण के बाद कोई भी गवर्नर हस्तक्षेप करने का साहस करेगा ऐसा मै क्षण भर के लिए भी मानने को तैयार नही हू। मेरी सारी दलीले इसी आधार पर अवस्थित है। मै जानता हू कि आप इस तर्क को स्वीकार नही करते, पर मै इसके जवाब मे इसके सिवा और कोई दलील पेश नही कर सकता कि आप खुद आजमायश कर देखिये।

मुझे अबतक याद है कि किस प्रकार, जब बापू लार्ड इर्विन के निवास-स्थान पर गये थे तो उनकी लगभग पक्की धारणा थी कि लार्ड इर्विन सच्चे आदमी नही है और वहा वह यही अविश्वास की भावना लेकर गये थे। किन्तु जब वह लौटे (लौटने पर मै ही उनसे सबसे पहले मिला था, क्योकि वह मुझे लेने के लि ए मेरे निवास-स्थान पर उतर पडे थे) तो मेरा पहला सवाल यही था कि आदमी कैसा जचा ? उन्होने उत्तर दिया था कि आदमी तो

ईमानदार है। इस जवाव से मुझे वडी तसल्ली हुई। मै आपसे आज भी यही कहूगा कि अविश्वास का एकमात्र कारण व्यक्तिगत सम्पर्क का अभाव है और हमे अपने ही हित मे व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करना चाहिए। पर शायद वापू का निर्णय हममे से किसी भी व्यक्ति के निर्णय के मुकावले मे अधिक युक्तिमगत होगा, इसलिए हम सवको उसे ही मानना चाहिए। वैसे मेरे मन की वात तो यह है कि मेरा दिमाग ऐसा करने मे इन्कार करता है।

कभी-कभी हताश हो जाता हू, पर साथ ही मुझे इस विचार से सात्वना मिलती है कि मेरा यही पुरस्कार क्या कम है कि मैने वापू के आगे अग्रेजो का पक्ष लिया और अग्रेजो के आगे वापू का। यह काम भी वडा रोचक है। वैसे इस कार्य से मेरा जी ऊव जाता है, पर मै जितनी ही अधिक वापू की चर्चा अग्रेजो से और अग्रेजो की चर्चा वापू से करता हू, मुझे उतना ही अधिक प्रतीत होता जाता है कि दुनिया की इन दो वडी शक्तियो मे मेल न होना कितने दुर्भाग्य की वात है। मेरा खयाल है कि जव इन दोनो शक्तियो मे मेल हो जायगा तो ससार का वडा उपकार होगा। अपने इस विश्वास से मुझे प्रोत्साहन मिलता है।

मत्रियो के पद ग्रहण करने की देर थी कि राजनैतिक नजरवन्दो की रिहाई की लोकप्रिय माँग सामने आ गई। वगाल के लिए यह स्वभावत ही मुख्य प्रश्न था। मैने १७ सितम्वर को लन्दन से एक पत्र मे श्री नलिनी रजन सरकार को लिखा

आपको एक विशेप प्रश्न के ऊपर लिखना चाहता हू। आप जानते है कि गाधीजी ने नजरवन्दो के वारे मे क्या कुछ किया है। उन्होने सभी को भारी परेशानी से वचा लिया है और मुझे तनिक भी सन्देह नही है कि इसके लिए भारत सरकार और अन्य सव कोई उनके प्रति आभारी है। किन्तु अव नजरवन्दो की रिहाई का सवाल उठता है। आप जानते ही है कि गाधीजी नजरवन्दो को राहत पहुचाने के लिए वचनवद्ध हो चुके है और 'राहत' का मतलव नजरवन्दो की रिहाई के अलावा और क्या हो सकता है ?

मै आपकी कठिनाइयो को समझता हू। सभी नजरवन्दो को तुरन्त रिहा करने मे जो अडचनें सामने आवेगी, मै उनसे वेखवर नही हू। किन्तु एक वार रिहाई का सिलसिला वाकायदा शुरू हो जाने के वाद तमाम नजरवन्दो की रिहाई का प्रश्न केवल समय का ही प्रश्न रह जायगा। मै तो नही

समझता कि कोई बदला लेने की भावना से प्रेरित है। इन लोगों को कानून और व्यवस्था के हित मे नजरबन्द किया गया था, और यदि उनकी रिहाई से कानून और व्यवस्था मे बाधा न पडती हो तो उनकी रिहाई आवश्यक हो जाती है।

गांधीजी का स्वास्थ्य बहुत खराब है और इधर उन्होने नजरबन्दो की रिहाई का बीडा उठा लिया है। जब मैने देखा कि उनके हस्तक्षेप के कारण नजरबन्दो की भूख हडताल का अंत हो गया तो मुझे बडा हर्ष हुआ। पर मुझे उसके फलितार्थो पर चिन्ता-सी होने लगी है। इसलिए आपसे अनुरोध है कि आप कृपा करके इस बारे मे गांधीजी की इच्छाओ को पूरा करने के लिए अपनी शक्ति भर अधिक-से-अधिक प्रयत्न करे।

मुझे मालूम हुआ है कि गांधीजी ने आपके मंत्रिमडल से अपील की थी और उसका उन्हे बहुत ही अभद्रतापूर्ण उत्तर मिला है। इसके विपरीत, वायसराय ने उन्हे बडा ही मित्रता-पूर्ण उत्तर भेजा। सोचिये तो सही, हमारे अपने ही आदमियो ने उन्हे कैसा रूखा उत्तर दिया। एक मंत्री के नाते आपके सिर पर कितनी भारी जिम्मेदारिया है, सो आपको बताना न होगा। आप अन्य मंत्रियो पर कुछ-न-कुछ दबाव अवश्य डाल सकते है।

क्या आप मेरी ओर से गवर्नर महोदय से स्थिति का विश्लेषण करने का अनुरोध करेगे? मेरा मुख्य उद्देश्य यही है कि गांधीजी को शान्ति-पूर्ण वातावरण उत्पन्न करने के सारे अवसर दिये जाय। उन्होने काकोरी के कैदियो के पक्ष मे किये गए प्रदर्शन को किस प्रकार धिक्कारा, सो आप जानते ही है। अहिंसा की भावना को देश मे स्थायी रूप देने के संबंध में वह आये दिन जो कुछ कहते रहते है, सो भी आपसे छिपा नही है। और आप भी जानते है और मै भी जानता हू कि गांधीजी कल्पना के राज्य मे विचरण नही करते है। इस समय जो कुछ किया जायगा, वह हमारे लिए और हमारे हिस्सेदार अंग्रेजो के लिए अत्यन्त लाभकारी सिद्ध होगा सर जान एंडर्सन निस्सन्देह ऐसे व्यक्ति है जो दूर भविष्य की बात सोच सकते है। वायसराय का रुख भी बहुत ही सहायतापूर्ण है। गांधीजी बूढे हो गए है। जब वह हमारे बीच नही रहेगे तो हमे काफी मुसीबतो का सामना करना पडेगा। पर यदि हम उनके जीवन-काल मे सहयोग और शान्ति की परम्पराए स्थापित कर सके तो इससे भारत बहुत सी कठिनाइयो से, और इंग्लैंड काफी परेशानी से बच जायगा। जरूरी हो तो मेरा पत्र गवर्नर महोदय को सुना दीजिए, पर आप शक्ति भर प्रयत्न अवश्य कीजिए। आपको यह न भूलना चाहिए कि आपके पद का जो भी स्वरूप हो, आप

एक मत्री हैं और आपकी जिम्मेदारिया है। विश्वास है, आप स्वय इस तथ्य को समझते होगे।

बगाल मे राजबदियो का जेल मे रखा जाना लोगो मे नाराजगी और अशान्ति का कारण बना हुआ था। इग्लैण्ड मे मै और जितने दिन रहा मेरे समय का काफी भाग ब्रिटिश सरकार को यही सुझाने मे खर्च हुआ। स्वदेश लौटने पर मैने एक योजना तैयार की जिसे गाधीजी और नलिनी सरकार दोनो ने स्वीकार किया, नलिनी सरकार ने बगाल-सरकार की ओर से। प्रस्ताव यह था कि जो लोग अपने घरो और गाँवो मे नजरबन्द है उनमे से ११०० को तत्काल रिहा कर दिया जाय और जो जेलो मे नजरबन्द है, उन्हे जत्थो मे एक निश्चित समय के भीतर, जो चार महीनो से अधिक न हो, रिहा किया जाय। चार महीने के बाद कोई भी जेल मे न रहे, सिवा इस अवस्था के कि किसी खास बदी के बारे मे गाधीजी यह कहे कि उससे उन्हे सन्तोषजनक आश्वासन नही मिला और इसलिए वह उसकी रिहाई की सिफारिश नही कर सकते। किन्तु सरकार को गाधीजी की तमाम सिफारिशो को स्वीकार कर लेना चाहिए। नलिनी सरकार स्वभाव से ही अपनी जिम्मेदारियो को समझने वाले व्यक्ति थे और बगाल के सच्चे सेवक थे।

दुर्भाग्यवश, गाँधीजी उसी समय बहुत बीमार पड गये और उनका स्थान लेनेवाला उतना ही विश्वस्त पच कोई दूसरा उपलब्ध नही था। कुछ गैरकॉग्रेसी नेताओ द्वारा हिंसा के प्रतिपादन ने रिहाई की समस्या को काफी जटिल बना दिया। उस समय दुर्भाग्यवश बगाल की राजनीति ने विभिन्न दलो के बीच झगडो-टटो का रूप धारण कर लिया और बगाल की सरकार को, जो उस समय कई दलो की मिलीजुली सरकार थी, अरुचिकर वातावरण मे काम करना पडा।

: २१ :

कुछ भीतरी इतिहास

कॉग्रेस ने प्रातो मे पदग्रहण किया और हमारे सामने उज्ज्वल भविष्य आ उपस्थित हुआ। दो वर्ष वाद यह उज्ज्वल भविष्य महायुद्ध के थपेडो मे आकर अत्यन्त दु खद रूप से खण्ड-खण्ड होनेवाला था। इस वृत्तान्त को यही छोडने से पहले पदग्रहण के भीतरी इतिहास के कुछ अशो पर दृष्टिपात करना अच्छा रहेगा। वापू ने मुझे स्वय लिखा

सेगाव
१८ जुलाई, १९३७

भाई घनश्यामदास

मै तुम्हारे सारे पत्र ध्यान से पढता हू। तुम्हे लिखने का न समय मिला न इच्छा हुई। और लिखता भी क्या? प्रतिक्षण अवस्था वदल और सुधर रही थी। ऐसी अवस्था मे तुम्हे कुछ लिखना अनुपयुक्त होता। दूसरो को लिखना जरूरी था, क्योकि मै भी उतना ही प्रभावित होना चाहता था, जितना वे लोग मुझे लिखते थे। परन्तु मै इतना अवश्य कह सकता हू कि मै विदेशो से आये हुए पत्रो से उतना प्रभावित नही हुआ जितना कि भारत की घटनाओ से। यह कहो कि मेरी अवस्था उस स्त्री जैसी थी जिसके शीघ्र ही वच्चा होने वाला हो। ऐसी स्त्री के शरीर के भीतर न जाने क्या-कुछ होता है, पर वेचारी उन सारी वातो का वर्णन नही कर सकती है। अव हम सव जानते ही है कि क्या हुआ। पर मै इतना अवश्य कहूगा कि कार्यकारिणी की वैठक मे जवाहर ने जो कुछ किया और कहा वह सचमुच विलक्षण था। वह पहले ही मेरी निगाह मे ऊँचे थे, अव वह वहुत ऊँचे उठ गये है। तिसपर तुर्रा यह कि हम दोनो अव भी सहमत नही है।

अव हमारी कठिनाइयो का श्रीगणेश होता है। यह अच्छा ही है कि हमारा भविष्य हमारे सामर्थ्य, सत्यवादिता, साहस, सकल्प, सतर्कता

और नियंत्रण पर निर्भर करता है। तुम जो काम कर रहे हो ठीक ही है। अधिकारियो की समझ मे यह बात आ जानी चाहिए कि कार्यकारिणी के प्रस्ताव में शब्दाडम्बर का आश्रय नही लिया गया है। प्रत्येक शब्द सार्थक है और जो कुछ कहा गया है उस पर अमल किया जायगा। अन्त में यह भी कहूगा कि जो कुछ किया गया है ईश्वर के नाम पर और ईश्वर पर भरोसा रखकर। तुम साधु बनोगे और साधु ही रहोगे। आशीर्वाद।

बापू

बापू के विश्वस्त निजी मंत्री महादेव देसाई के पत्र से कुछ और भी अधिक भीतरी इतिहास के दर्शन हुए

मगनवाड़ी, वर्धा
१६-७-३७

प्रिय घनश्यामदासजी

मेरी खामोशी पर आपको जो आश्चर्य हुआ उसे मै समझता हू। खामोशी अनिवार्य तो थी ही, वह जानबूझ कर साधी गई थी, क्योंकि लिखने लायक कोई बात थी ही नहीं। मै यह तो देख ही रहा था कि बापू को देश के कोने-कोने से जो चिट्ठिया मिल रही थी उनके कारण वह पद ग्रहण करने के पक्ष में अधिकाधिक होते जा रहे थे, परन्तु साथ ही मै यह भी कहूगा कि इस ओर निश्चयात्मक रूप से उनका झुकाव लार्ड जेटलैण्ड की दूसरी स्पीच के बाद से हुआ। मेरा अभिप्राय उस स्पीच से है जिसमे उन्होने इस आलोचना का खण्डन किया था कि समझौते और मेल का दरवाजा बन्द कर दिया गया है। उस स्पीच का बापू पर बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा। जब जवाहर कार्यकारिणी की बैठक से तीन दिन पहले वर्धा आये तबतक बापू इस सम्बन्ध में निश्चय कर भी चुके थे। मै जवाहर के पक्ष मे यह अवश्य कहूगा कि उन्हे इस मामले मे राजी करने मे कोई कठिनाई नहीं हुई। कार्यकारिणी की बैठक के दौरान मे उनका रुख भद्रतापूर्ण और उनकी साधुतापूर्ण आत्म-प्रेरणा के अनुरूप ही रहा। यही कारण है कि बैठक का काम अबाध रूप से चलता रहा।

खैर, अब तो यह सबकुछ इतिहास की सामग्री बन गया है। अब मै आपको यह बताऊ कि बापू ने इस समस्या के प्रति कैसा रवैया अपनाया है। श्री राजगोपालाचार्य ने पदग्रहण करने के अवसर पर अपने और अपने सहयोगियो के लिए आशीर्वाद का तार भेजने की कामना की। बापू ने तार

तो भेजा, परन्तु यह स्पष्ट कर दिया कि उसे प्रकाशित न किया जाय। उन्होने तार मे कहा, "निजी। बैठक का पथप्रदर्शन करने मे मुझे जिस स्रोत से स्फूर्ति प्राप्त हुई है वह है मनोयोग-पूर्ण प्रार्थना। आप जानते ही है कि मेरा सारा भरोसा आपही पर है। ईश्वर आपका प्रयत्न सफल करे। इसे प्रकाशित मत करिये। सदस्यो को सदेश भेजने का मुझे कोई अधिकार नही है। इसके लिए आपको जवाहरलाल से अनुरोध करना होगा। सस्नेह।"

लार्ड हेलीफैक्स जैसे व्यक्तियो से अपनी बातचीत के दौरान मे आप इस तार का हवाला दे सकते है और तार भी दिखा सकते हैं। परन्तु व्यवस्थापिका सभा मे किस भाव को लेकर जाय इसका निदर्शन आपको बापू के उस लेख से और भी अधिक अच्छी तरह मिलेगा जो उन्होने हाल ही मे 'हरिजन' मे लिखा है और जिसकी एक प्रति इस पत्र के साथ भेजता हू। मै जानना चाहूगा कि अग्रेजो मे इस लेख की क्या प्रतिक्रिया हुई। इसका निश्चय आप उन्हे यह लेख दिखाकर ही कर सकते है, क्योकि वैसे वे लोग शायद इसे न पढ पावे। आप उसकी प्रतिलिपिया तैयार कराके मित्रो मे वितरण कर सकते है। इस पत्र के साथ चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य की वह स्पीच भी भेजता हू जो उन्होने गवर्नर द्वारा आमन्त्रित किये जाने के दो दिन पहले दी थी।

सप्रेम आपका ही
महादेव

इन दिनो बापू ने 'हरिजन' मे जो लेख लिखे, उनकी ओर काफी ध्यान आकर्पित हुआ। उनमे बापू ने सादगी और किफायतशारी पर जोर दिया था (इस हद तक कि हमारे मन्त्रियो को उनकी अपेक्षा को पूरा करना असभव-सा प्रतीत हुआ—मोटर-गाडी भी नही!) एक लेख मे उन्होने एक अग्रेज धनपति के विचारो को विस्तार से उद्धृत किया था जो भारत मे अनेक उच्च पदो पर रह चुके थे। वह सर जार्ज शुस्टर थे और मैने ही उनके विचारो को बापू के पास भेजा था। उन्होने इस बात की आवश्यकता पर जोर दिया था कि रुपये की प्रेरणा के स्थान पर सेवा की प्रेरणा और सहकारिता को प्रतिष्ठित करना चाहिए।

जब बापू और वायसराय पहली बार मिले तो भविष्य सचमुच अधिक उज्ज्वल प्रतीत हुआ।

वायसराय शिविर, भारत
२३ जुलाई १९३७

प्रिय श्री गांधी

मैं शिमला लौट रहा हूं। आप नई दिल्ली में आकर मुझसे मिल सकें तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी। यदि आप इस सुझाव को पसन्द करें तो क्या ४ अगस्त, बुधवार को ११-३० बजे वायसराय भवन में मुलाकात सुविधा-जनक होगी?

सार्वजनिक ढंग का कोई खास काम नहीं है जिसे लेकर आपको कष्ट दूं। पर आपसे मिलकर मुझे हार्दिक प्रसन्नता होगी, और मुझे पूरी आशा है, कि आपके लिए आ सकना संभव होगा।

भवदीय
लिनलिथगो

सेगांव, वर्धा
२४ ७ ३७

प्रिय मित्र

आपके कृपा-पत्र के लिए धन्यवाद।

कुछ समय से मैं यह सोच रहा था कि मैं आपसे मिलने की प्रार्थना करूं। मैं यह चर्चा करना चाहता था कि खान साहब अब्दुल गफ्फार खां के सीमा-प्रान्त-प्रवेश पर जो प्रतिबन्ध है, क्या उसे हटाया जा सकता है और क्या मैं सीमाप्रान्त की यात्रा कर सकता हूं? मेरे सीमाप्रान्त में जाने पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है, पर अधिकारियों की स्वीकृति प्राप्त किये बिना वहां जाने का मेरा कोई इरादा नहीं है।

इसलिए आपका पत्र दुहरे स्वागत के योग्य है। मैं यह समझे लेता हूं कि अपनी मुलाकात के समय इन दोनों विषयों को उठाने पर कोई आपत्ति नहीं होगी। मुझे आगामी ४ अगस्त को ११-३० बजे वायसराय भवन, नई दिल्ली, आने में प्रसन्नता होगी।

आपका
मो० क० गांधी

इन पत्रो की प्रतिलिपियाँ मुझे लन्दन मे महादेवभाई के एक लम्बे पत्र के साथ मिली। मद्रास मे राजाजी को और अन्य प्रातो मे दूसरो को जो सफलता प्राप्त हुई उसका उल्लेख करने के वाद महादेवभाई ने लिखा।

•

आपने लिखा है कि सर रोजर लमले वापू से मिलने को उत्सुक है और आपने पूछा है कि यह किस प्रकार सभव होगा। शायद उन्हे परिस्थितियो का आपसे ज्यादा अच्छा ज्ञान था, क्योकि सम्पर्क का मार्ग वन गया है। यह पत्र आपके हाथो मे पहुचने के पहले ही समाचारपत्रो मे मोटे अक्षरो मे छप चुकेगा कि वापू वायसराय से मिले है। चार दिन पहले सेगाव मे इस स्थान के मजिस्ट्रेट को देखकर हर्षमिश्रित आश्चर्य हुआ। वह एक महत्व-पूर्ण सरकारी कागज वापू के हाथ मे सौपने खास तौर से आये थे। वह कागज लार्ड लिनलियगो का व्यक्तिगत पत्र था, जिसमे उन्होने वापू को वुलाया था। मै आपको वापू की तात्कालिक प्रतिक्रिया वताता हूँ, क्योकि इस छोटी-सी वात से पता चलता है कि वापू के रोम-रोम मे किस प्रकार अहिसा समाई हुई है। वापू ने कहा, "मुझे लगता है कि किसी ने वायसराय से यह जरूर कहा होगा कि वुलाये वगैर मै उनसे मिलने नही जाऊगा और ज्योही दुनिया को यह पता चलेगा कि मैने मुलाकात की दरख्वास्त नही की है, वल्कि उन्होने ही मुझे निमन्त्रण भेजा है, त्योही वेचारे को गलत रोशनी मे देखा जाने लगेगा।" वापू की प्रकृति मे जो अहिसा है उसने स्वभावतया ही वायसराय की प्रतिष्ठा की सम्भावित हानि के विरुद्ध विद्रोह किया। तव उन्होने अपने ही हाथ से उसका उत्तर लिखा। दोनो पत्रो की प्रतिलिपियाँ इसके साथ भेजता हू। वापू अपने उत्तर मे अपने भाव किसी-न-किसी रूप मे व्यक्त कर ही देते, पर उन्होने ऐसा नहीं किया। मुझसे वोले, "क्या वह (वायसराय) अपना काम नही जानते ? मै उन्हे सलाह देने की जिम्मेदारी क्यो लू ?" वायसराय इस समय आसाम और विहार का दौरा कर रहे है और मै नही जानता कि वापू का पत्र उन्हे दिल्ली पहुचने के पहले मिल भी पावेगा या नहीं। वापू ने सीमा-प्रान्त का सवाल उठाया है, पर हमारा विश्वास है कि उसके कारण कोई अड़चन उत्पन्न नहीं होगी। इस मुलाकात का उद्देश्य यदि पगडडी तैयार करना भर है तो वायसराय इससे अधिक और कहते भी क्या ? पर यह जाहिर है कि यह सवकुछ गाधीजी से मिलकर प्रसन्न होने के लिए नही किया गया होगा। दोनो केवल एक-दूसरे की कुशल-मगल पूछ कर ही एक-दूसरे से विदा नही ले लेंगे। वैसे मुलाकात के

एक घंटे से अधिक चलने की संभावना नहीं है। पर मुझे पहले से ही अटकल नहीं लगानी चाहिए। हां, तो आप सर रोजर लमले से कह सकते हैं कि उनके बापू को बुलावा-मात्र देने की देर है और बापू खुशी के साथ उपस्थित हो जायगे।

आपने मंत्रियों द्वारा भोजों और पार्टियों के निमन्त्रण स्वीकार किये जाने के संबंध में सर रोजर से जो कुछ कहा, उससे पता चलता है कि आप बापू को कितने सहज भाव से समझते हैं। गत सप्ताह वल्लभभाई इस संबंध में तथा अन्य प्रश्नों के संबंध में चर्चा करने यहां आये थे। आपको यह जान कर खेद होगा कि सबने भोज आदि से बिल्कुल अलग रहने का फैसला किया है। गवर्नर के निमन्त्रण को स्वीकार करने का यह अर्थ होता है कि मंत्रियों को भी वैसे ही शिष्टाचार का परिचय देने के लिए तैयार होना चाहिये। हमारे गरीब मंत्रियों के लिए ऐसी सामाजिक कार्यशीलता क्योंकर संभव है? किन्तु प्रश्न केवल गरीबी का नहीं है। बापू का विश्वास है कि देश के सर्वोत्तम हितों को ध्यान में रखते हुए कुछ वर्षों तक तो नपा-तुला औपचारिक संबंध रखना ही समझदारी का काम होगा।

आपने चर्चिल के बारे में जो कुछ लिखा, मजेदार रहा। जब उन्होंने हिंसा और हिन्दुस्तानियों द्वारा अंग्रेजों की हत्या किये जाने वाली बात कही तो आपने उन्हें उनके उस लेख की याद क्यों नहीं दिलाई जिसमें उन्होंने हमको धमकी दी थी कि यदि हमने पद ग्रहण करने से इन्कार किया तो हमारे हक में बहुत ही बुरा होगा? बापू के वक्तव्य के बारे में उन्होंने जिन निर्दयता-पूर्ण शब्दों का प्रयोग किया था उनकी याद अब भी कांटे की तरह कसकती है। क्या आप जानते हैं वे शब्द क्या थे? उन्होंने बापू के उन उद्गारों को 'कांटेदार तार की बाड़ से घिरी हुई फुसलाने वाली बातों' का नाम दिया था। पर यह सबकुछ चर्चिल के अनुरूप ही था। जब उन्होंने आयरिश नेता माइकल कॉलिन्स को अपने निवास-स्थान पर दावत दी तो मजाक में कहा कि ब्रिटिश सरकार ने तो उनके (अर्थात् कॉलिन्स के) सिर का मूल्य केवल १०००पौण्ड आंका था, जब कि बोअर लोगोंने उनके (अर्थात् चर्चिल के) शीश को १० पौंड के लायक समझा। मुझे पूरा यकीन है कि चर्चिल ने बापू का जो अभिनन्दन किया है, वह हार्दिक है। आप इसके लिए उन्हें बापू का धन्यवाद पहुंचा दें। सन् १९३१ में उन्होंने बापू से मिलने से इन्कार कर दिया था, पर यदि अब वह बापू के अनुरोध पर भारत आये तो मैं समझता हूं कि वह खुद ही बापू से मिलने की प्रार्थना करेंगे।

शीघ्र ही वायसराय के साथ बापू की पहली मुलाकात का वृत्तान्त आ गया।

वायसराय लौज
४ अगस्त ३७

प्रिय घनश्यामदासजी

विचित्र जगह से पत्र लिख रहा हू। क्यो, है न यही बात ? और आप देखेगे कि मै इस स्थान से परिचित तक नही हू, क्योकि दिल्ली वाला प्रासाद वायसराय हाउस कहलाता है, वायसराय लौज शिमला वाले भवन का नाम है। अस्तु, उधर बापू वायसराय के साथ मुलाकात कर रहे है, इधर मै अपने आपको उपयोगी बना रहा हू, और बापू ने मार्ग मे जो कई पत्र लिखने को कहा था उन्हे लिख रहा हू। आपका प्यारा-सा पुराना मोटर ड्राइवर, मेरा मतलब उस सुन्दर युवक ड्राइवर से है जो मुझसे भी अधिक उज्ज्वल वस्त्र पहनता है, हमे यहा लाया और बापू हिज ऐक्सीलेसी के साथ ११-३० से बन्द है। जैसा कि मैने आपको लिखा था, मुलाकात का हेतु आपसी मनमुटाव को दूर करना है। किसी विशेष उद्देश्य की सिद्धि के लिए यह मुलाकात नही की गई है। बापू भी यह सकल्प करके भीतर गये है कि उत्तर-पश्चिम सीमा की समस्या को छोडकर और किसी बात की चर्चा नही उठायेगे। और उत्तर-पश्चिम सीमा की चर्चा उन्होने वायसराय के नाम अपने उत्तर मे ही कर दी थी। परन्तु मैने अपने सारे पत्र लिख डाले है, इधर एक बजने वाला है, जिसका अर्थ यह है कि महत्वपूर्ण विषयो की चर्चा हो रही है।

ऐसा प्रतीत होता है कि आपका एक पत्र वर्धा मे मेरा इन्तजार कर रहा है, क्योकि देवदास को कल उसकी नकल मिली थी। उसका मूल भी वर्धा मे उसी समय पहुच गया होगा। मै समझता हू, जिस समय लार्ड लो० आपसे बात कर रहे थे उस समय उन्हे मालूम था कि यह मुलाकात होने वाली है।

सप्रेम, आपका ही
महादेव

पुनश्च —यह मुलाकात के बाद लिख रहा हू। बातचीत सहृदयतापूर्ण, स्पष्ट और मिलनसारी से भरी हुई थी और कोई डेढ घटे तक जारी रही। जहा तक गाधीजी का सम्बन्ध है, सीमा-प्रान्त का द्वार उनके

लिए खुला है, परन्तु जहां तक खान साहब का सम्बन्ध है, उन्हें इसके लिए गवर्नर से लिखा-पढ़ी करनी चाहिए। बापू ने हिज ऐक्सीलेंसी को बताया कि खान साहब कौन हैं और किस प्रकार उनके लिए लिखा पढ़ी करना असम्भव है। परन्तु उन्हें आशा है कि रास्ता निकल आवेगा। अब सीमा-प्रान्त के मंत्रिमण्डल ने इस्तीफा दे ही दिया है, इसलिए हमें आशा करनी चाहिए कि सबकुछ ठीक हो जायगा।

हिज एक्सीलेंसी ने सीमा-सम्बन्धी समस्या की चर्चा करने के सम्बन्ध में कोई आपत्ति नहीं की और बापू के वहां जाने के सम्बन्ध में भी उन्होंने कोई कठिनाई खड़ी नहीं की।

जिन अन्य विषयों पर बातें हुईं वे हैं ग्रामसुधार, गायें, हाथ का बना कागज, सरकंडे की कलम, इत्यादि।

महादेव

वर्धा
६ अगस्त, ३७

प्रिय घनश्यामदासजी

इस पत्र के साथ मुलाकात का संक्षिप्त विवरण भेज रहा हूं। यह सिर्फ आपही के लिए है और आपके २७ और २८ तारीख के पत्रों के उत्तर में भेजा जा रहा है। यद्यपि पारस्परिक सम्पर्क पुनः स्थापित हो गया है, तथापि बापू इसे उतना ही महत्व देते हैं जितना वह मैत्री-पूर्ण विचार-विनिमय को देते। पुराना साम्राज्यवाद अटूट बना हुआ है और उसे आत्मसमर्पण करने में अभी बहुत दिन लगेंगे। बापू इन पारस्परिक सम्पर्कों को विशेष महत्व देने के खिलाफ आपको चेतावनी देते हैं, और उन्होंने जो निमन्त्रण लार्ड लोदियन को दिया है वह चर्चिल या लार्ड बाल्डविन या अन्य मित्रों को देने को बिल्कुल तैयार नहीं है। यदि वे अपनी खुशी से आवें तो अवश्य आ सकते हैं, पर बापू उनसे आने का अनुरोध नहीं करेंगे। इसके अलावा वह उन्हें निमन्त्रण देने के मामले में कांग्रेस के नेता का पद ग्रहण नहीं करना चाहते हैं। लार्ड लोदियन की बात दूसरी है। उन्होंने दोनों पक्षों के बीच पुनः बांधने के मामले में महत्वपूर्ण काम किया है और इसके अलावा वह सीधे बापू को कई बार लिख भी चुके हैं। इसलिए उन्हें जो सुझाव कहिये या निमन्त्रण कहिये, दिया गया था सो स्वतः ही स्वाभाविक घटनाक्रम के दौरान में आत्मप्रेरणा द्वारा दिया गया था। चर्चिल प्रभृति आये और उन्होंने यहां आकर साम्राज्यवादी अनर्गल प्रलाप किया तो उन्हें बुलाना

इस प्रकार की बाते करने का अनुमति-पत्र देने के समान होगा। न, वापू इस पारस्परिक सम्पर्क वाले व्यापार से कोई सरोकार नही रखेगे।

सीमाप्रान्त के सम्वन्ध मे वायसराय ने वचन दिया है कि गवर्नर से पत्रव्यवहार के वाद वह वापू को लिखेगे। सभव है, प्रतिवध उठा लिया जाय।

आशा है, आपका स्वास्थ्य अच्छा होगा। आपको मेरे सारे पत्र मिल गये न? यह स्थान ही ऐसा निकम्मा है कि वहुधा ठीक समय पर डाले गये पत्र भी हवाई डाक के समय तक नही पहुँच पाते। मैने एक भी हवाई डाक को हाथ से नही गवाया है। सी० एफ० एन्ड्रयूज कल आ रहे है, किस सिलसिले मे, सो अनुमान मै अभीतक नही लगा सका हू।

सप्रेम, आपका ही
महादेव

२५ जनवरी ३८

प्रिय घनश्यामदासजी

मुझे ५० हजार रुपया ग्राम-शिक्षा के लिए और उतने ही ग्रामोद्योग के लिए जरूरत है। फिर हरिजन सेवक सघ का भी वोझा है। इस सवध मे और अधिक वातचीत करने की जरूरत है। आशा है, वृजमोहन वहुत अच्छे होगे और किशन भी।

वापू के आशीर्वाद

: २२ :

नये मंत्रियों की कठिनाइयां

ज्यूरिच
१६ अगस्त १९३७

प्रिय महादेवभाई

तुम्हारे दो पत्र बगैर जवाब दिये पडे है। रिप वान विन्कल होना तो एक ओर, तुम मुझे पूरी जानकारी करा रहे हो और इसके लिए मै तुम्हारा बडा उपकृत हू। मुझे 'हिन्दुस्तान टाइम्स' की प्रतिया नही मिल रही है और लन्दन छोडने के बाद से 'हरिजन' से भी सम्बन्ध टूट-सा गया है। इस प्रकार मुझे भारत के विषय मे जो कुछ समाचार मिलते है वे या तो निजी पत्रो के द्वारा या फिर ब्रिटिश समाचार-पत्रो के द्वारा। अब-तक 'टाइम्स' ने हमारे प्रति बडी दयालुता का परिचय दिया है और श्री इगलिस हमेशा प्रशसात्मक समाचार ही भेजते है। 'मार्निग पोस्ट' शत्रुता-पूर्ण ढग से लिखा करता था, परन्तु जबसे मैने इस बात की चर्चा चर्चिल और लार्ड हेलीफैक्स के साथ की है, उसके रुख मे परिवर्तन हुआ है। सम्भव है, यह सयोग मात्र हो।

मुझे इस समय जो समाचार मिल रहे है उनमे मुझे आश्चर्य नही हुआ है। किसी दिन मै समाचार पढता हू कि यदि शिक्षा मत्री अमुक काम नही करेगे तो विद्यार्थी हडताल कर देगे। दूसरे दिन पढने मे आता है कि यदि उद्योग मत्री दियासलाई के कारखाने मे काम करने वालो की मागो का निपटारा सन्तोपजनक रीति से नही करेगे तो वे हडताल कर देगे। कानपुर की बडी हडताल का अन्त मे निपटारा तो हो गया, परन्तु मैने पढा है कि एक बार तो हडतालियो ने पतजी के निर्णय को मानने से इन्कार कर दिया था। उधर अण्डमान की भूख हडताल से लोगो के दिमाग परेशान है ही।

ऐसा प्रतीत होता है कि काग्रेस शासन मे हर कोई मनमानी करना चाहता है। मुझे इसमे सन्देह नही है कि नियत्रण-सम्बन्धी जनमत तैयार करने के मामले मे बापू कुछ उठा नहीं रखेगे, पर किसी दिन मुझे यह खबर सुनकर आश्चर्य नही होगा कि प्रदर्शनकारी दल बनाकर झडो के साथ

जयघोष करते हुए मन्त्रियो के घरो मे जा घुसे। अवतक जनता के उद्गारों को जिस प्रकार दवाया गया है उसकी प्रतिक्रिया अब दिखाई दे रही है। और यह अच्छा ही है कि दवी हुई गैस निकल जाय, परन्तु जनता के लिए यह जानना विल्कुल जरूरी है कि स्वराज्य मे भी उन्हे कानून मानकर अनुशासन और बुद्धिविवेक के साथ चलना होगा। यह मानी हुई वात है कि जनता धीरे-धीरे यह सवकुछ जान जायगी, परन्तु क्या तुम्हारी यह राय नही है कि जनता को इस ढग की शिक्षा देने का काम अविलम्ब आरम्भ कर दिया जाय।

मेरी समझ मे यह वात अच्छी तरह नही आई कि मेरे तुम्हे यह वताने पर कि वापू की कीमत वहुत ऊँची चली गई है, उन्हे अविश्वासपूर्ण ढग से हँसी क्यो आई। मै यह स्वीकार करता हू कि रुपये के वाजार मे भाव ऊँचे भी जाते है और नीचे भी गिरते है, पर मै एक व्यापारी की हैसियत से तुम्हे यह तो वता ही दू कि भाव उतनी तेजी से नही घटते जितना तुम समझते हो। यदि आकडे ठीक-ठीक ढग मे रखे गये तो एकरूपता काफी दिनो तक जारी रहती है। इसलिए मेरा यह कहना ठीक ही था कि हमारा शासन-प्रवन्ध काफी दिनो तक चल सकता है। हा, यदि हम भग करना चाहे तो वह काफी दिनो तक नही चलेगा। परन्तु चूकि हमारी ऐसी इच्छा नही है, इसलिए मै तो नही समझता कि किसी प्रकार की अडचन उपस्थित होगी। यदि हमारे मत्री लोग स्थायी रूप से चलते रहे तो न तो अग्रेजो को ही देवता वनने की जरूरत पडेगी और न हमारे मन्त्रियो को ही उनके आगे मस्तक नवाना पडेगा। सम्भवत यही होगा कि दोनो पक्ष अपने रुखो मे फेरफार कर लेगे ओर यह वात समझ लेगे कि दोनो ओर अच्छाई प्रचुर मात्रा मे मौजूद है, कसर इतनी ही थी कि उसे अभीतक समझा नही गया। अग्रेज लोग वडे चतुर होते है और दूर तक की सोचते है। मुझे तुमसे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि सभी प्रान्तो मे गवर्नरो और मन्त्रियो ने श्रीगणेश अच्छे ढग से किया।

गवर्नरो के सामाजिक निमन्त्रण मत्री लोग स्वीकार करे या न करे, इस सम्वन्ध मे वापू का निर्णय मेरी धारणा के अनुकूल ही निकला। मैने सर रोजर के सामने उनका दृष्टिकोण ठीक ढग से ही रखा। पर यदि मुख्य मत्री सामाजिक सम्पर्क रख पाते तो अच्छा ही होता, क्योकि इससे कोई गलतफहमी नही होती। अव वैसा होने की सम्भावना है। मुख्य मन्त्रियो के सम्वन्ध मे इस प्रकार की कडाई न वरती जाती तो अच्छा रहता।

चर्चिल के सम्वन्ध मे तुमने जो कहा सो जाना। परन्तु तुमने मेरे इस प्रश्न का उत्तर नही दिया कि वापू चर्चिल का भारत आना पसन्द

करेंगे या नहीं। चर्चिल जो कहते हैं उसकी ओर कान मत दीजिए। वह तो सोलहआने राजनीतिज्ञ हैं और उनकी एक नीति सार्वजनिक होती है, दूसरी निजी। पर मैं इतना तो कह ही दू कि आदमी की हैसियत से उनमें सहृदयता भरी पड़ी है। वह मिथ्या गर्व से मुक्त हैं और उनमें बच्चों जैसी सरलता है। उन्होंने मेरे सामने यह स्वीकार करने की ईमानदारी दिखाई कि जब उन्होंने राज्यच्युत राजा (एडवर्ड) के पक्ष का समर्थन किया तो उन्हें यह पता नहीं था कि जनमत उसके इतना विरुद्ध है। मैंने उनसे इग्लैंड मे राजतंत्र की अवस्था की भी चर्चा की और इस सम्बन्ध मे भी बातचीत की कि वह ब्रिटिश सरकार के मंत्रिमण्डल मे क्यों नहीं है। मैंने अनुभव किया कि वह इग्लैंड पर शासन करने वाले आधा दर्जन आदमियों मे से एक है। उन्होंने मुझे साफ-साफ बता दिया कि वह भारत के पक्ष मे लेख लिखेंगे। राजनीति क्या पदार्थ है सो मुझे उन्हींके द्वारा याद आया।

तुम्हारे दिल्ली वाले पत्र से मुझे कोई खास समाचार नहीं मिला। शायद तुम विवेकपूर्ण चुप्पी साधना चाहते थे। तुमने देवदास के पास अपने नाम भेजे पत्र की नकल का जिक्र किया है। मैं हमेशा एक प्रति देवदास को, एक राजाजी को और एक अपने भाई रामेश्वरजी को भेजता हू जिससे वह सरदार को दिखा सके।

मुझे तुम्हारे पत्र से पहली बार मालूम हुआ कि सीमाप्रान्त के मंत्रि-मण्डल ने इस्तीफा दे दिया है। तो अब आप लोगों के सात मंत्रिमडल होंगे।

मैंने तुम्हारे पास बापू के स्वास्थ्य के सम्बन्ध मे जो तार भेजा उसका कारण यह था कि तुम्हारे पत्र के अलावा मैंने समाचार-पत्रों मे भी पढ़ा था कि जब बापू दिल्ली मे उतरे तो बड़े थके दिखाई पड़ते थे। आशा है, अब उनकी थकावट पूरी तरह दूर हो गई होगी। मैं इस सम्बन्ध मे बापू को कुछ नहीं लिख रहा हू क्योंकि मैं जानता हू कि उनके स्वास्थ्य की देख-भाल स्वय उनसे अधिक अच्छी तरह कोई नहीं कर सकता है। कसर की बात इतनी ही है कि वह कभी-कभी सामर्थ्य से अधिक काम करने लगते हैं। मैं वापसी पर इस सम्बन्ध मे उनसे बात करूंगा।

मैं इस मामले मे तुमसे पूरी तौर से सहमत हू कि सरदार और राजेन्द्र-बाबू ने अलग रहकर भारी भूल की। शायद एक वर्ष के अनवरत कार्य के बाद यह गलती दूर कर ली जाय।

मैं मधुमक्खी-पालन और केबिनेट सरकार पर पुस्तके लेता आऊंगा। तुमने अपने पत्र के साथ जिस सूची के नत्थी करने की चर्चा की है वह मुझे

नही मिली है। परन्तु मै इस विषय पर कुछ अच्छी पुस्तके लेता आऊगा।

तुम्हारा ही सस्नेह
घनश्यामदास

इसके बाद ही गाँधीजी को सीमाप्रान्त के गवर्नर सर जार्ज कनिघम का यह पत्र प्राप्त हुआ—

गवर्नर का शिविर
उत्तर पश्चिम सीमा प्रान्त
एबटाबाद
१७ अगस्त, १९३७

प्रिय श्री गाधी

मुझे अभी-अभी वायसराय महोदय का एक पत्र मिला है जिसमे उन्होने आपके साथ अपनी गत ४ अगस्त की बातचीत का साराश दिया है। मै समझता हू कि हिज ऐक्सीलेसी ने आपको बताया है कि यदि आप उत्तर-पश्चिम सीमाप्रान्त मे आना चाहे तो उन्हे कोई आपत्ति नही है। मैने इस विषय की चर्चा अपने मत्रियो से की है और उनकी सहमति सहित आपको सूचित करता हू कि आपके इस प्रान्त मे आने पर कोई आपत्ति नही है। मुझे मालूम हुआ है कि हिज ऐक्सीलेसी ने आपसे कह दिया था कि यह जरूरी है कि आप अपने दौरे मे कबीलो के मामले से सम्बन्ध रखनेवाली बातो से बिल्कुल अलग रहे। मै समझता हू कि आपने इस सम्बन्ध मे हिज ऐक्सीलेसी के निश्चय को स्वीकार कर लिया था और मै जानता हू कि आप इस आश्वासन का अक्षरश पालन करेगे।

यदि हमारी भेंट का कोई अवसर उपस्थित हुआ तो मुझे उस पुरानी जान-पहचान को, जिसका जन्म उस समय हुआ था जब मै लार्ड हेलीफैक्स के साथ था, ताजा करके प्रसन्नता होगी।

आपने हिज़ ऐक्सीलेसी से खान अब्दुल गफ्फार खॉ वाले मामले का भी जिक्र किया था। यह मामला अभी मत्रिमडल में विचाराधीन है। आशा है, दो-एक दिन मे फैसला हो जायगा।

भवदीय
जी० कनिघम

मन्त्रियो को जिन कठिनाइयो का सामना करना पडा उनके जन्मदाता गवर्नर लोग नही थे, खुद हमी लोग थे। गवर्नरो ने तो अपने आपको नई परिस्थितियो के साँचे मे ढालने मे काफी तत्परता का परिचय दिया। हिसा के दर्शन हुए। साथ ही पद-लोलुपो की भीड इकट्ठी होने लगी। महादेवभाई के लम्बे पत्र के ये कुछ उद्धरण है, जिनसे कठिनाई के प्रारम्भ का पता चलता है

मत्रिमडल ठीक ही चल रहे है। अफसरो की ओर से सहयोग का अभाव नही है। मुझे तो शक-सा होता है कि उन्हे ठीक-ठीक आचरण करने का लदन से आदेश मिला है। अहमदाबाद के कमिश्नर गैरेट मत्री मुरारजी को लेने स्टेशन जाता है और उनके साथ काफी दूर तक तीसरे दर्जे मे सफर करता है। है न अनहोनी-सी बात ? आपको बारडोली और खेडा की नीलाम की हुई जमीनो के झगडे की तो याद होगी ही। ऐसा प्रतीत होता है कि अब गैरेट जमीने उनके मालिको को दिलाने मे कोई अडचन नही डालेगा। जिस पुलिस दरोगा के खिलाफ अधिकार का घोर दुरुपयोग करने का आरोप था उसने मत्री मुरारजी के बारडोली पहुचते ही गोली मार कर आत्म-हत्या कर ली। पर इसका तो मैने योही जिक्र कर दिया। राजाजी को सिविलियनो का पूर्ण सहयोग प्राप्त हो रहा है। बेचारे उडीसा मे शायद कुछ अडचन पैदा हो तो हो, पर वह भी कुछ दिनो के लिए ही होगी।

मुझे भय है कि हमारी कठिनाइया स्वय हमारे ही द्वारा उत्पन्न की जायगी। अभी हममे सगठन की बडी कमी है। हमारे मित्र लोग इस नवीन परिस्थिति से लाभ उठाकर चारो ओर हडताल कराना चाहेगे और स्थिति पर काबू पाने मे असमर्थ रहने के लिए मत्रिमण्डलो की बदनामी देख कर खुश होगे। राजाजी ने अपने प्रान्त के सभी राजनैतिक बदियो को, जिनमे हिसावादी और अहिसावादी दोनो शामिल है, रिहा कर दिया है। अन्तिम मोपला बन्दी को अभी उसी दिन रिहा किया गया है। परन्तु इसका परिणाम क्या हुआ ? मेहरअली को राजाजी के पदग्रहण करने से पहले छ मास का कारावास हुआ था। राजाजी ने उसे, उसकी अपील खारिज होते ही, रिहा कर दिया, यद्यपि उसकी रिहाई के मामले मे उन्हे कुछ अडचनो का सामना करना पडा था जैसा कि मै अपने एक पत्र मे कह ही चुका हू। परन्तु रिहा होने के दो दिन के भीतर ही इस आदमी ने

एक स्पीच मे अग उगली और लोगो को हिंसा के लिए उभारा। बेचारे राजाजी क्या करे। बम्बई मे इस ढग के आधा दर्जन कैदी अभी जेल मे है ही। मत्रियो ने उनकी रिहाई का हठ पकडा, पर वे अपनी चेष्टा मे सफल नही हुये। पर क्या हम इस प्रश्न को लेकर सम्बन्ध-विच्छेद कर सकते है। यदि अहिंसा के प्रश्न पर हम लोग एकमत होते तो यह प्रश्न उतना कठिन नही होता, पर अभी तो अहिंसा के अर्थ को लेकर ही जवाहरलाल और बापू मे गहरी खाई मौजूद है। इस समस्या के कारण कार्यकारिणी की हाल की बैठक खास तौर से कठिन प्रमाणित हुई, पर अन्त मे सबकुछ सकुशल समाप्त हो गया।

अन्य जटिल समस्याओ को लेकर भी अधिक कठिनाई नही रहेगी। सबकुछ कह चुकने के बाद स्थिति यही दिखाई पडती है कि जवाहरलाल के सम्बन्ध मे जो कठिनाई है वह ऐसी नही है कि उसपर काबू पाया ही न जा सके। वह भडकते है और गुस्से मे लाल-पीले हो जाते है, परन्तु अन्त मे एक खिलाडी की भाति पुन पहले जैसे हो जाते है, तुरन्त ही खेद प्रकट करते है और जबतक उन्हे यह निश्चय नही हो जाता कि कोई खिचाव बाकी नही रह गया है, दम नही लेते।

यह पत्र लम्बा होता जा रहा है, इसपर भी काम की बात अभी बाकी रही जाती है। आपको याद होगा कि गत फरवरी मास मे आपने दो महिलाओ के लिए, जो यहा भारत के लिए काम कर रही है, अपने जहाजो मे से एक मे नि शुल्क समुद्र-यात्रा का प्रबन्ध किया था। अब ये लन्दन मे आपके एजेन्टो के साथ बातचीत कर रही है कि भारत आने वाले आपके एक जहाज मे नि शुल्क समुद्र-यात्रा का प्रबन्ध हो सकता है या नही। इसके अलावा एक तीसरी महिला है जो हमारे साथ कार्य करनेवाले एक जर्मन मित्र, की भावी पत्नी है। इन्हे जर्मनी से उनके शान्तिवाद के लिए निकाल दिया गया है। हसा लाइन के जहाज मे इस महिला की उपस्थिति ठीक नही रहेगी। क्या हसा लाइन के अलावा कोई कार्गो बोट है जिसमे ये तीनो महिलाए किसी अग्रेजी बन्दरगाह से या किसी इटालियन बन्दरगाह से नि शुल्क यात्रा कर सकें?

आपने अपने स्वास्थ्य के सम्बन्ध मे कुछ नही कहा। आपने आपरेशन करा लिया या अवकाश के दिन ज्यूरिच मे यो ही बिता रहे है? बापू जानने को बहुत उत्सुक है। मैने इस सम्बन्ध मे रामेश्वरदासजी को भी लिखा है, क्योकि सम्भव है, आपने उन्हे विस्तृत रूप मे लिखा हो। आशा है, आपको बापू के सम्बन्ध मे मेरा तार मिल गया होगा। उनके रक्तचाप में तो वृद्धि नही हुई थी, पर कार्याधिक्य के कारण वह थकान महसूस कर रहे

थे। उन्होंने देखा कि यदि अभी सतर्कता से काम नहीं लिया गया तो आगे खतरा है। उन्होंने अपनी दिनचर्या में तुरन्त ही काट-छांट की और आराम लेना शुरू कर दिया। वह प्रतिदिन प्रार्थना के बाद स्वत ही मौन धारण कर लेते है। इससे दूसरे दिन सुबह चार बजे तक उन्हें पूरा विश्राम मिल जाता है। घबराने की कोई बात नहीं है, खातिर-जमा रखिये।

आपका
महादेव

२६ अगस्त को महादेवभाई ने इसी विषय पर फिर लिखा

जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हू, त्रुटि अपने ही लोगो की है। आपको 'काकोरी डकैती काण्ड' के कैदियों की तो याद होगी ही। उन्हें कुछ वर्ष पहले घोर हिंसात्मक और अक्षम्य अपराधो के लिए दण्ड दिया गया था। पतजी ने उन सबको रिहा कर दिया है। यह उनके लिए श्रेय की बात तो हुई ही, हेग के लिए भी कुछ कम श्रेय की बात नही हुई, क्योकि वह यदि चाहते तो उनकी रिहाई के विरुद्ध आपत्ति खडी कर सकते थे। परन्तु उनके रिहा होते ही हमारी मूढ काग्रेस कमेटी ने घोषणा की कि उनका जलूस निकाला जायगा। बेचारे पतजी असमजस मे थे। उनसे दृढता दिखाने को कहा गया और उन्होने यह स्पष्ट कर दिया कि यदि इस मामले मे हठ किया गया तो भविष्य मे वह ऐसा करने मे असमर्थ रहेगे। जवाहरलाल ने भी इन जोश-खरोश वाले काग्रेसियो को किसी प्रकार का बढावा नही दिया। इस प्रकार बात वही-की-वही रह गई।

मदरास मे राजाजी ने परिस्थिति पर अत्यन्त दक्षता-पूर्वक काबू कर रखा है। परन्तु उन्हे भी चिन्ता से मुक्त नहीं कहा जा सकता है। उन्हे अथक परिश्रम करना पडता है। एक मोपला एम० एल० ए० को बडी अभिलाषा थी कि मत्रिमण्डल मे उसे भी स्थान मिले। उसे नही लिया जा सका। अब उसने राजाजी के पास इस आशय के पत्रो का ढेर लगा दिया है कि मोपला विद्रोह अनिवार्य है। उन प्रदेशो मे एक प्रकार की धारणा बद्धमूल है कि हर बीस साल बाद विस्फोट अवश्यम्भावी है। ईश्वर का आदेश यही है। आखिरी बार विस्फोट १९२१ मे हुआ। अब नये विस्फोट के लिए उपयुक्त समय आ पहुचा है, या आने ही वाला है। राजाजी ने तो जोरदार शब्दो मे कह दिया है "मैं इन लोगो की खामोशी नही खरीदूगा।" सम्भव है, ये सब बन्दरघुडकियां मात्र हो, पर इनका सिलसिला जारी है।

पतजी को कानपुर मे जैसी कुछ विकट परिस्थिति का सामना करना पडा, आपको मालूम हो है। अन्य प्रदेशो मे भी स्थिति चिन्ता से मुक्त नही है। खेर ने गुलजारीलाल को अपना सेक्रेटरी नियुक्त करके अक्लमन्दी का काम किया है। वह यत्र, तत्र, सर्वत्र घूमते रहते है और अवतक तो हडतालो का वडे सन्तोपजनक ढग से अन्त करने मे सफल हुए है, परन्तु उनके सामर्थ्य की भी सीमा तो है ही।

सप्रेम, आपका ही
महादेव

इन दिनो लार्ड लिनलिथगो के साथ मेरी जो बातचीत हुई उसके दौरान मे उन्होने यह प्रकट किया कि वह व्यक्तिगत रूप से सघ मे विश्वास नही करते। भारतीय शासन-विधान मोटे तौर पर दो भागो मे विभक्त था। एक भाग के द्वारा तुरन्त प्रान्तीय स्वायत्त शासन प्रदान किया गया था और मत्रियो द्वारा शासन की व्यवस्था की गई थी। दूसरे भाग मे सारे भारत के लिए एक सघ की कल्पना की गई थी, पर उसका अस्तित्व मे आना तभी सभव था जब राजा लोग, जो मुख्यरूप से बाधक सिद्ध हो रहे थे, उससे सहमत हो जाते। दुर्भाग्यवश सघ के प्रति लार्ड लिनलिथगो की व्यक्तिगत नापसदगी ने, जिसका सभवत उनकी कार्यकारिणी परिषद् के कुछ सदस्य भी स्वागत करते थे, उन्हे ऐसा कोई कदम उठाने से विरत रखा, जिससे राजाओ को सघ का विचार स्वीकार करने मे प्रोत्साहन मिलता। यदि उन्होने ऐसा कदम उठाया होता तो उनके पास उसके पक्ष मे जबर्दस्त दलील थी, क्योकि उस समय क्षितिज पर युद्ध के बादल उमड रहे थे। पर उस समय ब्रिटेन के प्रधान मत्री नेविल चेम्बरलेन थे और लार्ड लिनलिथगो और भारत के अधिकाँश अग्रेज व्यवसायी आँख मूँदकर चेम्बरलेन के पद-चिन्हो का अनुसरण कर रहे थे। चेम्बरलेन की भविष्यवाणी थी कि युद्ध नही होगा। इस कारण सघ के पक्ष मे जो सबसे वजनदार दलील थी, उसकी उपेक्षा कर दी गई।

केवल आखिरी क्षणो मे वायसराय को अपने इस कर्तव्य का ध्यान आया कि उन्हे राजाओ से सघ के पक्ष मे जोरदार ढग से कहना चाहिए, पर इतने पर भी उन्होने अपने कर्तव्य को अधूरे दिल से ही पूरा किया। उन्होने रियासतो का दौरा करने के लिए एक ऐसा प्रतिनिधि नियुक्त किया, जिसे सघ के लिए खुद लार्ड लिनलिथगो की अपेक्षा अधिक उत्साह नही था। शायद सर आर्थर लोदियन को अपना यह सही चित्रण स्वीकार होगा। जब युद्ध शुरू हुआ तो वायसराय ने सघ की योजना को आगे बढाने के बजाय सारी योजना को ही झटपट खत्म कर दिया। यदि उन्होने ऐसा नही किया होता तो भारत का सारा इतिहास ही दूसरा होता और हमे देश का विभाजन न देखना पडता।

वायसराय के साथ मेरी जो मुलाकात हुई उसका मैंने एक विवरण तैयार किया था ओर उसे बापू के लिए महादेवभाई के पास भेजा था। यह वह विवरण है

४ दिसम्बर १९३७

प्रिय महादेवभाई

इसके बाद हमने सघ-व्यवस्था के सम्बन्ध मे बात की। वाम और दक्षिण पथियो, दोनो ही ने व्यवस्था के विरुद्ध आपत्तिया खडी की है। यदि स्थिति पर सतर्कता और सहानुभूति के साथ विचार नही किया गया तो दुबारा वार्ता भग होने की सम्भावना है। उन्होने कहा कि वह स्वय सघ-व्यवस्था मे सन्तुष्ट नही है। वह आलोचको की आपत्तियो को समझते है। पर उनकी इच्छा रहते हुए भी कानून नही बदला जा सकता। हमारे आलोचना-कार्य के सम्बन्ध मे उन्हे एक बात पसन्द नही आई। उनके सामने कोई रचनात्मक सुझाव नही रखा गया। मैंने उन्हे बताया कि ऐसा सुझाव बापू की ओर से आयगा, परन्तु स्वय उन्हे (वायसराय को) अभी से यह सोचने मे लग जाना चाहिए कि वह समस्या का क्या हल पेश कर सकते है। स्वय मेरे दृष्टिकोण मे भी दो बाते आपत्तिजनक है। नरेशो के प्रतिनिधि बिना किसी चुनाव के आ धमकेगे। इसके अलावा स्वय विधान के रचयिताओ को यह प्रमाणित करना है कि विधान मे स्वत विकास के अणु

विद्यमान है, जैसा कि अग्रेज लोग आये दिन दावा करते रहते है। यदि लोकप्रिय मन्त्रियो के हाथ मे सेना और विदेश विभाग नही दिये जायगे तो हम औपनिवेशिक स्वराज्य के लक्ष्य तक कैसे पहुचेगे ? यह काम तो वायसराय का है कि वह किसी-न-किसी तरह भारत की जनता को इस बात का विश्वास दिलाये कि विधान मे जो कुछ कहा गया है वह कोरा जबानी जमा-खर्च नही है। वायसराय ने उत्तर मे कहा कि विधान के सम्बन्ध मे जो दावा किया गया है वह जबानी जमाखर्च मात्र नही है। वह अपने मन्त्रिमडल को सेना और विदेश विभाग के मामले मे उत्तरदायित्व-रहित मानने को तैयार नही है। यह माना कि कानूनी तौर से उनके मन्त्रिमडल का इन विषयो पर कोई अधिकार नही है, पर परिपाटी के द्वारा उनके हाथो मे यह अधिकार सौपा जा सकता है। परन्तु यह उनकी अपनी सम्मति थी। उन्होने मुझसे अनुरोध किया कि इस मामले को फिलहाल यही छोड दिया जाय, जिससे वह ठीक समय पर इस विषय मे अपना दिमाग काम मे ला सके। मैने बताया कि सघ की स्थापना के पहले उनका गाधीजी से बात करना कितना जरूरी है और साथ ही यह भी कहा कि यदि वह जवाहरलालजी के साथ जान-पहचान कर सके तो इससे गाधीजी के कधो का भार बहुत-कुछ हल्का हो जायगा। उन्होने मुझसे पूछा कि जवाहरलालजी कलकत्ता कब आ रहे है और जब मैने बताया कि सम्भवत वह ८ तारीख को पहुच जायगे तो उन्होने कहा, "ओह, इतनी जल्दी।" तुम्हे शायद पता ही होगा कि वायसराय १३ या १४ को कलकत्ता पहुच रहे है।

इस पत्र के द्वारा मन्त्रियो की प्रारभिक कठिनाइयो पर प्रकाश पडता है

३१ दिसम्बर १९३७

प्रिय महादेवभाई,

कल मुझसे लेथवेट मिलने आये। उनसे दो घण्टे तक लम्बी-चौडी बातचीत होती रही। नजरबन्द और दण्डित कैदियो और सघ की चर्चा खास तौर से हुई। वह सारी बात वायसराय को बतायेगे। इसके बाद यदि जरूरत समझी गई तो मुझसे वायसराय से मिलने को कहा जायगा। नजरबन्दो और दण्डित बन्दियो के सम्बन्ध मे मैने उन्हे वही बाते बताई जो एन्ड्रयूज ने और मैने गवर्नर से कही थी। बापू के दृष्टिकोण के सम्बन्ध मे मुझे तुम्हारा पत्र मिल ही गया था। मैने वह पत्र लेथवेट को पढकर सुनाया और कहा कि बापू यहा आवे, इससे पहले ही कैदियो की रिहाई

आरम्भ हो जानी चाहिए और जारी रहनी चाहिए। यदि इस नीति का अवलम्बन नहीं किया गया तो जनता और कैदियों में बेचैनी फैल जायगी और यदि कैदियों ने दुबारा भूख हड़ताल की तो इससे सभी को परेशानी होगी और इसका बापू के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ेगा सो अलग, क्योंकि उनका स्वास्थ्य भी राजनैतिक महत्व रखता है। उन्होंने मेरी बात मानते हुए कहा कि बापू का स्वास्थ्य निश्चय ही राजनैतिक महत्व रखता है। उन्होंने पूछा कि क्या मैं यह चाहता हूं कि कैदियों को थोड़ी-थोड़ी संख्या में छोड़ना अभी से आरम्भ कर दिया जाय जिससे जनता को भी आश्वासन हो कि समस्या की अवहेलना नहीं की जा रही है? मैंने कहा, हां। इसपर वह बोले कि जहां तक अंडमान के कैदियों का सम्बन्ध है, उन्हें भारत वापस लाया जा रहा है। उन्होंने वायसराय के नाम बापू के उस तार का जिक्र किया जो उन्हें उस समय मिला जब कैदियों के भूख हड़ताल करने की खबर मिली थी। उन्होंने बताया कि बापू को कैदियों के भारत ले जाने की खबर कर दी गई थी। उन्होंने कहा कि यह कार्य ४ या ६ सप्ताह के भीतर समाप्त हो जायगा, फिर उनकी रिहाई के प्रश्न पर विचार किया जायगा। मैंने कहा कि नजरबन्दों को तुरन्त ही रिहा किया जा सकता है। उन्होंने इस सम्बन्ध में वायसराय से बात करने का वचन दिया। मुझे आशा है कि वायसराय सहायता करेंगे। वायसराय से बात करने के बाद मैं गवर्नर से दुबारा मिलूंगा।

संघ व्यवस्था के सम्बन्ध में मैंने उनसे कहा कि यह नितान्त आवश्यक है कि बापू के स्वास्थ्य लाभ करने के तुरन्त बाद वायसराय उनसे बातचीत आरम्भ कर दें। यदि संघ व्यवस्था को मतगणना के अभाव में लादा गया तो उसका बड़ा बुरा परिणाम होगा। मैंने कहा कि मेरी तो समझ में विलम्ब करना ठीक नहीं होगा। इसके विपरीत मुझे आशा है कि बापू समस्या का हल सोच निकालेंगे। वायसराय तक यह बात भी पहुंचा दी जायगी।

इसके बाद हम लोगों ने युक्तप्रान्त के सम्बन्ध में बातचीत की। मैंने बताया कि जब कांग्रेस कानून और व्यवस्था कायम रखने की भरपूर चेष्टा कर रही है तो गवर्नर का हस्तक्षेप उचित नहीं हुआ। लेथवेट का कहना था कि गवर्नरों ने और कहीं हस्तक्षेप नहीं किया, केवल इसी मामलेमें हस्तक्षेप हुआ, क्योंकि परमानन्द हिंसा का प्रचार कर रहे और देहरादून में सैनिकों पर उसका बड़ा बुरा प्रभाव पड़ रहा था। पंतजी से इसके लिए बारम्बार आग्रह किया गया, पर किसी-न-किसी कारण से पंतजी इस ओर से उदासीन रहे। क्या मंत्रियों को इस हद तक छूट देना अच्छा होगा कि अन्त में स्थिति इतनी शोचनीय हो जाय कि मिलिटरी की सहायता लेने के सिवा

और कोई चारा ही न रहे ? उन्हे किदवई की वह स्पीच भी अच्छी नही लगी, जिसमे उन्होने कहा था कि यदि जनता अहिंसात्मक वातावरण नहीं बनाये रखेगी तो उन लोगो को इस्तीफा देना पडेगा। यदि मत्रियो का रुख यही है तब तो गवर्नरो को मत्रियो के अहिंसा बनाये रखने की क्षमता मे सदैव सन्देह रहेगा। क्या यह गवर्नर के साथ न्याय होगा कि मत्री लोग स्थिति को बिगाड कर इस्तीफा दे ? क्या वैसी अवस्था मे गवर्नरो का यह कर्तव्य नही होगा कि वे सदैव इस ओर से सतर्क रहे कि अवस्था अधिक न बिगडे ? मैने किदवई की स्पीच का अपेक्षाकृत अधिक उत्तम अर्थ लगाया। मैने कहा कि मत्रियो को अधिकार उनके निर्वाचको से प्राप्त हुए है और यदि समूची जनता विद्रोह पर उतारू हो जाय तो मत्रियो के पास निर्वाचको से यह कहने के अलावा ओर कोई चारा नही रह जाता है कि चूकि अब हम लोगो पर आपका विश्वास नही रहा है इसलिए हम इस्तीफा दे रहे है, कुछ इस कारण नही कि हमे गवर्नरो के खिलाफ कोई शिकायत है, बल्कि स्वय आप लोगो की उच्छृङ्खलता के कारण। मेरी समझ मे किदवई की स्पीच उनकी अवस्था को सही-सही बताने वाली थी। उसका गलत अर्थ नही लगाना चाहिए था। उन्होने मेरी बात को समझ तो लिया, पर साथ ही उन्होने यह दलील पेश की कि यदि मत्री लोग निर्वाचको के भय से कानून और व्यवस्था कायम रखने के लिए आवश्यक कार्रवाई नही करेगे तो किसी-न-किसी समय गवर्नर को हस्तक्षेप करना ही पडेगा। लेथवेट मेरी इस बात से तो सहमत नही हुए कि युक्तप्रान्त के गवर्नर सीमा से बाहर चले गये है, पर तो भी उन्होने यह तो स्वीकार किया ही कि मत्रियो को गलतिया करने के मामले मे भी पूरी स्वतत्रता होनी चाहिए। वह यह जानने को उत्सुक थे कि सारे प्रान्तो मे से युक्तप्रान्त मे ही हिंसाप्रिय वर्ग के साथ ढिलाई क्यो दिखाई गई। अन्य काग्रेसी प्रान्तो की उन्होने भूरि-भूरि प्रशसा की।

सस्नेह, तुम्हारा ही
घनश्यामदास

भविष्य का चित्र काफी अच्छा प्रतीत हो रहा था। पर लार्ड लिनलिथगो ने विधान मडल से परामर्श किये बिना ही भारत को युद्ध मे घसीटने की भारी भूल कर डाली। मत्रियो के लिए इस कडवी खुराक को निगलना मुश्किल हो गया। उन्होने समस्या का हल निकालने की कोशिश की भी, पर निष्फल रहे और युद्ध

आरम्भ होने के कुछ ही सप्ताह बाद पद त्याग कर दिया। यदि वायसराय ने भारत से परामर्श करने की दूरदर्शिता दिखाई होती तो मुझे सन्देह नही कि भारत ब्रिटेन का ही समर्थन करता।

१९४१ के दिसम्बर मास मे बापू ने मुझे हिटलर के नाम एक खुले पत्र की प्रति भेजी। कहने की आवश्यकता नही कि सरकारी सेसर ने हस्तक्षेप किया और उसे प्रकाशित नही होने दिया। शायद यह पत्र हिटलर तक भी कभी नही पहुचा। नीचे उस पत्र की नकल दी जाती है

वर्धा, २४ दिसम्बर १९४१

प्रिय मित्र

मै आपको एक मित्र के नाते लिख रहा हूँ, सो कोरा शिष्टाचार मात्र नही है। मै किसी को अपना शत्रु नही मानता। पिछले ३३ वर्षो के बीच मेरा यह जीवनकार्य रहा है कि जाति, रग और धर्म का भेद किये बिना समूची मानव जाति के साथ मित्रता का नाता जोडू।

आशा है, आपके पास यह जानने के लिए समय होगा और इच्छा भी होगी कि मानव-जाति का एक बडा-सा भाग, जो विश्वव्यापी मैत्री के सिद्धान्त मे विश्वास करता है, आपके कार्यो को किस दृष्टि से देखता है। आपकी वीरता और पितृभूमि के प्रति आपकी निष्ठा के सम्बन्ध मे हमे सदेह नही है और आपके विरोधियो ने आपको जो दानव बताया है सो भी हम लोग मानने को तैयार नही है। पर आपकी और आपके मित्रो और प्रशसको की रचनाओ और घोषणाओ से इस विषय मे सन्देह नही रह जाता है कि आपके बहुत सारे काम दानवतापूर्ण है और मानवी प्रतिष्ठा की कसौटी पर ठीक नही उतरते, विशेष रूप मे मेरे जैसे विश्वव्यापी मित्रता के पुजारियो की दृष्टि मे। चेकोस्लोवाकिया को लाछित किया गया, पोलैण्ड के साथ बलात्कार किया गया, डेन्मार्क को हडप लिया गया—ये सब कार्य इसी कोटि मे आते है। आपका जीवन सम्बन्धी जैसा कुछ दृष्टिकोण है, उसके अनुसार ऐसे दस्युतापूर्ण कार्यो की गणना अच्छाइयो मे है, सो मै जानता हूँ। पर हम लोगो को तो बचपन से ही ऐसे कृत्यो को मानवता को गिराने वाला बताया गया है। अतएव हमारे लिए आपकी सशस्त्र विजय की कामना करना सम्भव नही है।

किन्तु हमारी स्थिति अपने ढग की निराली है। हम ब्रिटिश साम्रा-

ज्यवाद का नाजीवाद से कुछ कम प्रतिरोध नही करते हं। यदि अन्तर है तो केवल परिमाण का। मानव-जाति के इस पचमाश को अग्रेजो ने अपने शिकजे मे जकडने के लिए जिन साधनोका अवलम्बन किया वे औचित्यपूर्ण कदापि नही थे। पर हम अग्रेजी प्रभुत्व का प्रतिरोध करते है, इसका अर्थ यह नही है कि हम अग्रेज जाति का अमगल चाहते है। हम उनको युद्धभूमि मे हराना नही चाहते, उनका हृदय-परिवर्तन करना चाहते है। ब्रिटिश शासन के विरुद्ध हमारा विद्रोह शस्त्रविहीन विद्रोह है। हम उनका हृदय परिवर्तन कर सके या न कर सके, हमने उनके शासन को अहिंसात्मक असहयोग द्वारा असभव वनाने का सकल्प अवश्य कर लिया है। यह कुछ ऐसा तरीका है कि इसमे पराजय के लिए कोई स्थान है ही नही। उसका आधार यह ज्ञान है कि विजेता को अपने शिकार के स्वेच्छा-पूर्वक या जवरदस्ती दिये गए सहयोग के विना लक्ष्य सिद्धि नही हो सकती। हमारे शासक हमारी भूमि ओर हमारे शरीर पर अधिकार कर सकते है, हमारी आत्मा पर कदापि नही। भारतवासी मात्र—पुरुपो, स्त्रियो ओर वच्चो—का विनाश कर के ही वे हमारी जमीन और हमारे शरीर पर कब्जा कर सकते है।

यह ठीक है कि ऐसी वीरता का परिचय देना सवके लिए शायद सभव न हो, ओर सभव है, भय की अधिक मात्रा से विद्रोह की कमर टूट जाय। पर यह तर्क यहा असगत है, क्योकि यदि भारत मे ऐसे स्त्री-पुरुप काफी सख्या मे मिल सके जो अपहर्ताओ के प्रति विना किसी प्रकार की दुर्भावना रखे उनके आगे घुटने टेकने के वजाय अपने जीवन का वलिदान करने को तैयार हो तो वे हिंसा की वर्वरता से मुक्ति का मार्ग दिखाने मे अवश्य समर्थ होगे। मेरा अनुरोध है कि आप इस वात पर विश्वास करिये कि आपको इस देश मे ऐसे स्त्री-पुरुप आशा से अधिक सख्या मे मिल जायगे। पिछले वीस वर्षो से उन्हे इसीकी दीक्षा दी जाती रही है।

हम पिछली आधी शताब्दी से ब्रिटिश शासन को उखाड फेकने की कोशिश कर रहे है। स्वतन्त्रता का आदोलन आज जितना प्रवल है उतना पहले कभी नही था। देश की सव से अधिक शक्तिशाली राजनैतिक सस्था, अर्थात् काग्रेस, इस लक्ष्य की प्राप्ति मे प्रयत्नशील है। हमने अहिंसात्मक उपायो द्वारा पर्याप्त सफलता प्राप्त की है। हमे दुनिया की सव से अधिक सगठित हिंसा का, जिसका ब्रिटिश सत्ता प्रतिनिधित्व करती है, मुकावला करने के लिए उपयुक्त साधन की तलाश थी। आपने उस सत्ता को चुनौती दी है। अव यही देखना है कि ब्रिटिश सत्ता और जर्मन सत्ता मे कौन अधिक सगठित है। हमारे और दुनिया की अन्य गैर यूरोपीय जातियो के लिए

ब्रिटिश प्रभुत्व का क्या अर्थ होता है सो हम जानते हैं, किन्तु हम ब्रिटिश शासन का अंत जर्मनी की सहायता से कभी नहीं करना चाहेंगे। हमें अहिंसा के रूप में जो शक्ति प्राप्त हुई है यदि उसे संगठित रूप दिया जाय तो वह दुनिया की हिंसक-से-हिंसक शक्तियों के संयुक्त बल से मोर्चा ले सकती है। जैसा कि मैं कह चुका हूँ, अहिंसा-प्रणाली में पराजय के लिए कोई स्थान नहीं है। उसका मंत्र तो 'करो या मरो' है, और वह दूसरों को मारने या चोट पहुंचाने में विश्वास नहीं रखती है। उसके उपयोग में न धन की दरकार है, न उस विनाशकारी विज्ञान की जिसके विकास को आपने इतनी चरम सीमा तक पहुंचा दिया है। मुझे तो यही आश्चर्य है कि आप यह क्यों नहीं समझते कि आपकी प्रणाली पर किसी का इजारा नहीं है। यदि अंग्रेज न सही तो निश्चय ही कोई और शक्ति आपकी प्रणाली में सुधार करके आपके ही हथियार से आपको पराजित कर देगी। आप अपनी जाति के लिए कोई ऐसी विरासत नहीं छोड़ रहे हैं, जिसपर वह गर्व कर सके। निर्दयतापूर्ण कृत्यों का पाठ करने में उसे गर्व का बोध कदापि नहीं होगा, उनकी रचना में चाहे कितना ही बुद्धि-कौशल क्यों न खर्च किया गया हो। इसलिए मैं मानवता के नाम पर आपसे युद्ध बन्द कर देने की अपील करता हूं। आप उन समस्त विवादग्रस्त विषयों को, जो आपके और ब्रिटेन के बीच में हों, दोनों पक्षों की पसन्द के किसी अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय को सौंप देंगे तो आपकी कोई क्षति नहीं होगी। यदि आपको युद्ध में सफलता मिल गई तो इससे यह सिद्ध नहीं होगा कि न्याय आपके पक्ष में था। इससे तो केवल यही सिद्ध होगा कि आपकी विनाशकारी शक्ति अपेक्षाकृत अधिक प्रबल थी। इसके विपरीत, अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय का फैसला, जहां तक मनुष्य के लिए संभव हो सकता है, यह प्रकट करेगा कि न्याय किस ओर था।

आप जानते ही हैं कि मैंने कुछ ही समय पहले अंग्रेज-जाति मात्र से अहिंसात्मक प्रतिरोध की प्रणाली अपनाने की अपील की थी। मैंने यह अपील इसलिए की थी कि अंग्रेज जानते हैं कि मैं विद्रोही होते हुए भी उनका हितैषी हूं। आप और आपकी जाति के लोग मुझसे परिचित नहीं हैं। मैंने अंग्रेजों से जो अपील की थी, वही अपील आपसे करने का तो साहस मुझे नहीं होता है, पर वर्तमान सुझाव तो अधिक सरल है, क्योंकि वह अधिक व्यावहारिक भी है और सबका जाना-बूझा भी है।

इस घड़ी यूरोप के लोगों के हृदय शान्ति के लिए छटपटा रहे हैं और हमने अपना शान्तिमय संघर्ष भी स्थगित कर दिया है। क्या मेरा आपसे इस

घडी गान्ति सवन्धी प्रयास करने की अपील करना अनधिकार चेप्टा समझा जायगा ? इस घडी का मूल्य स्वय आपके निकट चाहे कुछ न हो, पर लाखो करोडो यूरोपवासियो के लिए वह बहुत मूल्यवान सिद्ध हो सकती है, जिनका गान्ति का चीत्कार मेरे उन कानो मे आ रहा है जिन्हे जन-साधारण की मूक वेदना को सुनने का अभ्यास है। मैने आपके और सिन्योर मुसोलिनी के नाम, जिनसे इगलैण्ड की गोलमेज परिषद मे भाग लेकर वापस लौटते समय रोम मे मिलने का मुझे सुअवसर मिला था, एक सयुक्त अपील भेजने का इरादा किया था। मै आगा करता हूँ कि वह इस अपील को आवश्यक परिवर्तन के वाद अपने को भी सबोधित मान लेगे।

मै हू आपका सच्चा हितैषी
मो० क० गाधी

मन्त्रियो की कठिनाइयो से सम्बन्ध रखने वाला अध्याय समाप्त करने के पहले, मै यह भी लिख दू कि सन् १९३७ के प्रारम्भ मे मैने श्री चर्चिल को एक पत्र लिखने का दुस्साहस किया था। मैने लिखा था कि भारत की राजनैतिक स्थिति के बारे मे समाचारपत्रो मे उनके उद्गारो को देख कर मुझे निराशा हुई। मैने उन्हे अपने इस कथन की याद दिलाई कि काग्रेस और पुरानी सरकार के प्रतिनिधियो के बीच व्यक्तिगत सम्पर्क का अभाव है और पारस्परिक अविश्वास की भावना फैली हुई है। साथ ही मैने उन्हे यह भी बताया कि कुछ प्रान्तो मे चुनावो मे ऊचे से ऊचे अफसरो ने खुले तौर पर काग्रेस-विरोधी पक्ष लिया, यह भी कहा कि काग्रेस ने ऐसे ही वातावरण मे नये विधान का श्रीगणेश किया है। मैने आगे लिखा

यकीन मानिये, गाधीजी और उनके जैसे विचार रखनेवाले दूसरे लोग विधान को जनता के कल्याण के लिए ईमानदारी के साथ अमल मे लाना चाहते है।

मैने आपके वे उद्गार गाधीजी तक पहुचा दिये थे 'अपने देशवासियो को अधिक रोटी और अधिक मक्खन दीजिये, बस मै बिल्कुल सतुष्ट हो जाऊगा। मै ब्रिटेन के प्रति अधिक वफादारी नही, जनसाधारण के लिए अधिक रोटी-मक्खन चाहता हू।' काग्रेस ने जो निर्वाचन-सम्बन्धी घोषणा-

पत्र तैयार किया था, सो जनता को अधिक रोटी-मक्खन देने के उद्देश्य से ही किया था। जब कांग्रेस ने आश्वासनों की मांग की तो, गलत या सही, उसका यही खयाल था कि गवर्नर लोग उसके कार्यक्रम को कार्यान्वित करने मे हस्तक्षेप करेंगे। आप इस सन्देह की आलोचना कर सकते है, अथवा जैसा कि लार्ड लोदियन ने कहा, इसका कारण लोकतंत्रीय अनुभव का अभाव हो सकता है, फिर भी वह मौजूद तो है ही। साथ ही मेरा यह विश्वास है कि राजनीतिज्ञता और व्यक्तिगत सम्पर्क मे इस गलतफहमी को दूर किया जा सकता है।

क्या आपका यह खयाल नहीं है कि आप जैसा असाधारण राजनेता इस समस्या को हल करने मे बहुत अधिक सहायक सिद्ध हो सकता है?

मैंने यह उद्धरण अपनी स्मरणशक्ति के आधार पर दिया था, और हो सकता है कि उस समय मैंने श्री चर्चिल की बात को गलत समझा हो और उन्होंने 'ब्रिटेन के प्रति अधिक वफादारी नहीं' के स्थान पर 'ब्रिटेन के प्रति अधिक वफादारी भी' या 'साथ ही ब्रिटेन के प्रति अधिक वफादारी भी' कहा हो। जो हो, उन्होंने यह मानने से इन्कार कर दिया कि उन्होंने कहा था, कि उन्हे भारत से ब्रिटेन के प्रति अधिक वफादारी की आशा नही है। यह है उनका उत्तर जो उस समय 'व्यक्तिगत' शब्द से चिन्हित किन्तु जिसे अब उन्होंने प्रकाशित करने की अनुमति दे दी है।

व्यक्तिगत

११ मोरपथ मेन्शन,
वेस्टमिन्स्टर
३०, अप्रैल १९३७

प्रिय श्री बिडला

आपके पत्र के लिए अनेक धन्यवाद। आपके वृत्तों मे मेरी रुचि बराबर बनी रहेगी। पर आपने जिस वाक्य का उल्लेख किया है, उसमे आपने मेरे कथन को ठीक-ठीक उद्धृत नही किया है। मैंने उन शब्दों का प्रयोग हर्गिज़ नही किया था।

आपको दुनिया की वर्तमान अवस्था पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिए। यदि ब्रिटेन को किसी कारण से, चाहे वह कारण भारतीय हो या यूरोपीय, स्वेच्छापूर्वक या जबरदस्ती भारत परसे अपना संरक्षण हटा

लेना पडा तो भारत फासिस्ट तानाशाही राष्ट्रो—इटली, जर्मनी अथवा जापान—का बराबर शिकार बनता रहेगा,।और तब आधुनिक सुविधाओ को देखते हुए, शासन-व्यवस्था मे ऐसी कठोरता आ जायगी कि उसकी मिसाल गुजरे हुए जमाने मे भी मुश्किल से मिल सकेगी। भारतीय मतदाताओ ओर काग्रेस का तो यही कर्तव्य है कि वे उस महान दायित्व को सम्हाले जो उनके सामने पेश किया गया है, और यह दिखा दे कि वे भारत को एक सुखी देश बना सकते है । साथ ही उन्हे ब्रिटेन की साख प्राप्त करने की भरसक कोशिश करनी चाहिए और उसके प्रति आभारी और वफादार होना चाहिए, क्योकि वही ससदीय शासन-व्यवस्था और भारतीय शान्ति का सरक्षक है।

आपका
विन्सटन चर्चिल

: २३ :

युद्ध-कालीन घटनाएं

लार्ड लिनलिथगो ने विधान-मडल अथवा भारतीय लोकमत से परामर्श की रस्म पूरी किये बिना ही भारत को युद्धरत राष्ट्र घोषित करने की जो गम्भीर भूल की, उसका परिमार्जन असभव हो गया। काग्रेसी मन्त्रियो ने युद्ध के पहले पतझड मे ही पद त्याग कर दिया। यही नही, जहा एक ओर वीर भारतीय सेना, जिसपर आज हम ठीक ही इतना गर्व करते है, अपनी विशिष्टता स्थापित कर रही थी और ब्रिटिश सेना से भी अधिक तेजी के साथ विक्टोरिया क्रास और दूसरे सम्मान प्राप्त कर रही थी, वहा दूसरी ओर जनता को इन चीजो मे किसी प्रकार के आनन्द का बोध नही हो रहा था, और यदि वह खुले रूप से विरोधी न थी तो उदासीन अवश्य थी। बहुतो के दिलो मे तो नात्सियो के प्रति एक प्रकार की सहानुभूति तक पैदा हो गई थी। जापान के प्रति तो प्राय सभी हल्को मे सहानुभूति थी। इसपर विचित्र बात यह थी कि उसकी विजय की कामना किसी को नही थी।

पर वायसराय ने फिलहाल गाधीजी के साथ सम्पर्क बनाये रखा और दोनो के बीच काफी पत्र-व्यवहार हुआ। दोनो मे उस समय कैसे विचित्र ढग का सम्बन्ध था सो मेरे नाम महादेवभाई के इस पत्र से प्रकट होगा।

सेवाग्राम
२५ ६ ४२

प्रिय घनश्यामदासजी,

गनीमत है कि स्वामीजी आपके पास आ रहे है। अब मै आपको

सचमुच का पत्र लिख सकूगा। आप स्वय सोच सकते है कि आजकल डाक से कोई चीज भेजना कितना असम्भव है।

फिशर की पुस्तक 'मेन एन्ड पोलिटिक्स' आप पढ ही रहे है। वह यहा चार-पाच दिन के लिए आया था। यहा से रवाना होने से पहले फिशर ने मुझे अपनी डायरी का वह अश देखने दिया जिसमे वापू के सम्वन्ध मे उसके और वायसराय के वार्तालाप का निचोड दर्ज था। वार्तालाप रोचक भी था और विचित्र भी। वायसराय ने फिशर से कहा था, "गाधी का रुख इन कई वर्षो के दीर्घकाल मे मेरे प्रति वडा अच्छा रहा है और यह कहना मामूली वात नही है, क्योकि यदि वह यहा दक्षिण अफ्रीका की भाति सत वने रहते तो मानवता का वडा कल्याण होता, पर दुर्भाग्यवश वह यहा राजनैतिक पचडे मे पड गये जिससे उनमे मिथ्या गर्व और आत्मश्लाघा उत्पन्न हो गई, परन्तु आप कहते है कि कुछ सिविलियनो ने आपको वताया है कि उनका प्रभाव समाप्त हो गया है और उनकी चिन्ता करना अनावश्यक है सो यह वाहियात-सी वात है। उनका प्रभाव वेहद है और जनता से मनमानी कराने के मामले मे वह अपना सानी नही रखते है। जवाहरलाल की वारी भी उनके वाद ही आती है। काग्रेस मे वाकी जो लोग है उन्हे अपने-अपने काम का शुल्क मिलता है। काग्रेस व्यापारियो की सस्था है, वे लोग उसका खर्च चलाते है और उसे चालू रखते है। गाधी इस समय ऐसी चाल चल रहे है जो रहस्य से भरी हुई है। वह खतरनाक भी सिद्ध हो सकती है। मै पूरे तौर से चौकन्ना हू। वह युक्तप्रान्त और वगाल के लोगो को भडकाने की योजना वना रहे है। वह किसानो से कहेगे कि अपने घरो को छोडकर मत जाओ। मै जल्दवाजी से काम नही लूगा, पर यदि उनके कार्य-कलाप ने युद्ध-चेष्टा मे अडचन डाली तो मुझे उन्हे नियन्त्रण मे रखना ही होगा।" 'मेरी स्मरण-शक्ति के अनुरूप यह वस्तुस्थिति की अच्छी खासी रिपोर्ट है।

वापू ने जवाहर और मौलाना से विस्तृत रूप से वातचीत की। जवाहर का दिमाग चीन और अमरीका मे भरा हुआ है। वापू ने फिशर वाली मुलाकात के दौरान मे अपने पुराने रवैये में जो परिवर्तन किया था सो निस्सन्देह जवाहर को ध्यान मे रखकर ही किया था। और उन्होने जो कुछ कहा था वह जवाहर की अभिलषा के सर्वथा अनुरूप था। जवाहर ने सुझाया कि वापू चाग काई शेक को एक पत्र लिख कर उसे अपनी स्थिति समझावे, उसे स्वतन्त्र भारत के साहाय्य का आश्वासन दे और कहे कि विदेशी सेनाओ के भारत से हटाये जाने का सुझाव एकमात्र चीन की सहायता करने की इच्छा से प्रेरित होकर ही किया गया था। पता नहीं, चाग ने पत्र के 'हरिजन' मे प्रकाशित न किये जाने का तार क्यो भेजा, पर वह पत्र

चीन और अमरीका, दोनों को एक साथ ही तार द्वारा भेजा गया, और एक प्रकार से यह अच्छा ही हुआ कि चर्चिल की भेंट के समय तक वह रूजवेल्ट के हाथों में पहुंच गया।

राजाजी दो दिन के लिए यहां आये थे, पर उनके साथ दो दिनों तक अत्यन्त मित्रतापूर्वक बात करने के बाद बापू ने कहा, "देखता हूं, उनके और मेरे बीच जो मतभेद है कि वह उतना साधारण नहीं है जितना कि मैं समझता था। उन्होंने राजाजी को जिन्ना से मिलने का बढ़ावा दिया, यद्यपि उन्हें ऐसे बढ़ावे की कोई खास जरूरत न थी। अब वह उनसे मिलेंगे। परन्तु जबकि वह आदमी 'टाइम्स आफ इण्डिया' को वह गर्हित ढंग की मुलाकात दे चुका है, तो अब वह बापू का डटकर विरोध करने को बाध्य होगा ही और मैं नहीं समझता कि राजाजी उनके साथ बातचीत में विशेष सफल होंगे। जो हो, वह उनसे मिलेंगे अवश्य। इसके बाद वह वर्धा वापस आकर बतायंगे कि मुलाकात का क्या नतीजा निकला। पर मुझे कुछ आशंका-सी है कि उनके और जिन्ना के बीच जो कुछ बातचीत होगी, बापू को वह सब-की-सब नहीं बतायंगे। इसका अर्थ यह नहीं है कि वह जानबूझ कर कोई बात छिपा लेंगे। असली बात यह है कि वह हर-एक पदार्थ को अपनी प्रिय योजना की ऐनक से देखते हैं, इसलिए वह ऐसी कोई बात नहीं बतायंगे जिसके द्वारा उनका हवाई किला गिरने की सम्भावना हो। अस्तु, यह अच्छा ही है कि वह जिन्ना से मिल रहे हैं।

मुझे विश्वास है कि मैंने बताने लायक सारी बातें बता दीं। बापू बुरी तरह थक गये हैं और दिन बीतने पर तो बिल्कुल ही बेदम हो जाते हैं। हम लोग उनके कार्य की मात्रा में भरसक कमी करने की चेष्टा करते हैं, पर नई कार्य-योजना सम्बन्धी माथापच्ची उन्हें बिल्कुल थका डालती है। उनका वजन कम हो गया है, भोजन की मात्रा कम हो गई है, कम टहलते हैं और काम-काज से थक जाते हैं। यह बड़े परिताप की बात है, पर हम उनकी ठोस सहायता करने में असमर्थ हैं। मैं तो केवल इतना ही कर सकता हूं कि 'हरिजन' के लिए वह केवल दो कालम भर मैटर दे दें और अवशिष्ट स्थान मैं भर दिया करूं। ऐसा मैं आसानी से कर भी सकता हूं, क्योंकि मैं उनके विचारों को सहज ही पेश कर सकता हूं। पर सोचना और कार्यविधि निर्धारित करना अकेले उन्हींका काम है। इस काम में केवल भगवान ही उनकी सहायता कर सकते हैं।

होरेस एलेक्जेंडर और सायमन्ड्स् यहां आ गये हैं। अन्य सभी क्वेकरों की भांति वे भी भले आदमी हैं। होरेस लंदन से रवाना होने से पहले एमरी से मिले थे। एमरी ने होरेस से गांधी और अन्य लोगों से मिलने को कहा

था, पर इससे कुछ होने-जाने वाला नही है, क्योकि वह क्रिप्स की हिमायत लेकर आये है। फिर भी दोनों है अच्छे आदमी। मै उनसे आपके पास ठहरने को कह रहा हू। आशा है, आपको कोई आपत्ति नही होगी। आप होरेस को कुछ दीक्षा भी दे सकते है, क्योकि वह बहुत अनभिज्ञ व्यक्ति है। आपको भी उनसे कुछ-न-कुछ मिलेगा ही। वह वहा किसी को नही जानते, इसलिए मैने सोचा कि दोनो के लिए यही ठीक रहेगा कि वे आपके पास ठहरे। इससे आपकी योजनाओ मे कुछ व्याघात तो अवश्य पडेगा, पर मुझे आशा है कि आप उस ओर ध्यान नही देगे।

सप्रेम, आपका ही
महादेव

इगलैण्ड मे क्वेकरो ने और समझौता समिति के कार्लहीथ जैसे अन्य सदाशाली व्यक्तियो ने कोई रस्ता ढूंढ निकालने का व्यर्थ प्रयास किया। उन्होने परिस्थिति का अध्ययन करने के लिए एक प्रतिनिधि-मडल भेजा। महादेवभाई ने वर्धा से बापू की ओर से मुझे सबको ठहराने की व्यवस्था करने को लिखा। मैने प्रसन्नता-पूर्वक सारी व्यवस्था कर दी।

२७ जून १९४२

प्रिय महादेवभाई

तुम्हारी चिट्ठी ज्ञातव्य बातो से परिपूर्ण थी। मुझे यह दिमागी भोजन भेजा, इसके लिए धन्यवाद।

श्री होरेस और सायमन्डस यहा आ पहुचे है। मैने दोनो को एक ही कमरे मे टिका दिया है। अच्छा होता कि दोनो को दो कमरे दे सकता, पर यह सम्भव नही था। फिर भी दोनो बडे खुश है। मै उनके आराम का खयाल रखूगा। उनके दिल्ली-प्रवास के सम्बन्ध मे कोई चिन्ता करने की जरूरत नही है।

बहुत-सी बाते करनी है, पर मै भेट होने तक रुकूगा। मै शायद अगस्त के आरम्भ तक वहा आ पहुचूगा।

शायद तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा नही है। स्वय तुमने 'हरिजन' मे यह बात स्वीकार की है। तो फिर दिल्ली क्यो नही आ जाते? अगर आ जाओ तो मै वादा करता हू कि तुम्हारा साथ देने के लिए मै अपना प्रोग्राम

वदल डालूगा। या मै तुम्हे पिलानी ले जाऊगा, जहा तुम्हारी शान्ति मे विघ्न डालने वाली कोई वात नही होगी। कामकाज की खातिर भी तुम्हे मूर्च्छित होते रहने के वजाय पूरी तौर से आराम करना चाहिए। तुम्हे यह अवश्य ही वुरा लगा होगा कि वापू भयकर गर्मी में पैदल चले और तुम ऐसा करने मे असमर्थ रहे। मै तो समझता हू कि तुम्हें विश्राम की निश्चित रूप से आवश्यकता है। इसलिए तुम्हें विश्राम ही करना चाहिए। देवदास मुझसे सहमत हैं।

सस्नेह, तुम्हारा ही
घनश्यामदास

युद्ध ने गाधीजी के लिए और वास्तव मे सभी भारतीयो के लिए कठिनाइया और उलझने पैदा कर दी। पाकिस्तान के लिए जिन्ना की माग अधिकाधिक तीखी होती जा रही थी, जिसके परिणामस्वरूप अतिरिक्त कठिनाइया उत्पन्न हो रही थी। सवके ऊपर आया वगाल का भयकर दुर्भिक्ष। चीन ने जापान के विरुद्ध जो रुख अपनाया उसे लेकर चीन के प्रति श्री नेहरू की सहानुभूति जाग्रत हो उठी। इससे वह महान सेनानी चाग काई शेक और उनकी उतनी ही प्रसिद्ध धर्मपत्नी के सम्पर्क मे आये। उन्होने भी भारतीय स्वाधीनता के लिए जवाहरलालजी की आकुलता के प्रति सहानुभूति दिखलाई। वह लार्ड लिनलिथगो से भारत की स्वतत्रता की वकालत करने भारत भी आये और उन्हीके अतिथि हुए। वापू चाग-दम्पति से कलकत्ते मे मेरे मकान पर मिले और सवकी एक साथ तसवीर ली गई। पर महादेव ने मेरे पास जो चिट्ठी भेजी उसके द्वारा एक-दूसरे ही ढग की तसवीर देखने को मिली

सेवाग्राम
१६ ७ ४२

प्रिय घनश्यामदासजी

मै आपके पास एक पत्र मीरा वहन के हाथो भेजना चाहता था, पर वहुत थक गया था और सुवह के वक्त सन्तोपजनक पत्र लिखने

का समय नही था। इस बार की कार्यकारिणी की बैठक से आँखे खुल गई। खान साहब को छोडकर किसी मुसलमान का दिल काग्रेस के या, यो कहिये कि बापू के प्रोग्राम मे नही है। रहे जवाहरलाल, सो वह चीन और अमरीका के मामले मे इतने पैठ चुके है कि उनके लिए कोई काम तुरन्त ही हाथ मे ले लेना सभव नही है। मुझे आशका है कि अवस्था इससे भी ज्यादा खराब है। रामेश्वरभाई मुझे 'लाइफ' नियमित रूप से भेजते रहते है। इस सप्ताह के अक से वस्तुस्थिति के भयकर रूप मे दर्शन होते है। बापू महासेनानी चाग काइ शेक से कलकत्ते मे आपके घर मिले थे। इस सप्ताह के अक मे उस अवसर पर लिये गए सभी चित्र निकले है। चित्रो के नीचे जो विवरण दिया गया है वह या तो स्वय मेडम चाग ने दिया है या उनके अमले के ही किसी आदमी ने, क्योकि इस अवसर पर मेरे या उन लोगो के अलावा और कोई मौजूद नही था जो ऐसा विवरण देता। और बापू सम्बन्धी विवरण कितना शरारत से भरा हुआ है! कितना अपमानजनक और कितना कृतघ्नतापूर्ण! मै तो समझे बैठा था कि कृतज्ञता चीनियो का एक सबसे बडा गुण है, पर यह दम्पति इस गुण से भी सर्वथा शून्य है। यदि वे पूजीपतियो से कोई सरोकार न रखने पर इतने उतारू थे तो उन्होने बेचारे लक्ष्मीनिवास का आतिथ्य क्यो ग्रहण किया? इस सारे व्यापार से जी मिचलाने-सा लगा है। इन लोगो को यहा नही आना चाहिए था। पर यह अच्छा ही हुआ कि उस रहस्यपूर्ण आदमी के साथ (जैसा कि बापू उसे हमेशा से कहते आये है) बापू का साक्षात्कार हो गया। महासेनानी चाग ने बापू के नाम अपने ताजा सदेश मे उन्हे उतावली मे कुछ न कर डालने की सलाह दी है, क्योकि हेलीफैक्स ने ब्रिटेन के लिए रवाना होने से पहले उसके प्रतिनिधि को न्यूयार्क मे बताया है कि वह इग-लैण्ड-स्थित अधिकारियो पर भारत के साथ समझोता करने पर जोर डालेगे। बापू ने उसे उत्तर मे लिखा है कि वह उतावली मे तो कोई काम नही करेगे, पर साथ ही यह भी समझ लेना चाहिए कि अगला कदम उठाने मे अधिक विलम्ब नही किया जायगा, क्योकि विलम्ब करने से वह कदम उठाने का उद्देश्य ही नष्ट हो जायगा। मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि इस सदेश में कोई सार नही है। या तो हेलीफैक्स चाग को बुद्धू बना रहा है या चाग और हेलीफैक्स दोनो मिलकर हमे बुद्धू बना रहे है।

मूल्य नियत्रण सम्बन्धी आपके पत्र के बारे मे बापू का कहना है कि इस दिशा मे आपही लोगो को, अर्थात् व्यापारियो को, कदम उठाना चाहिए। यदि नलिनी कोई कदम उठावे और उसमे आपको भी साथ मे ले तो इससे अच्छी बात क्या हो सकती है। एक बार मीराबहन से भी बात करिये।

उनमे स्फूर्ति कूट-कूट कर भरी है। काश, उनकी जानकारी के विषय मे भी यह बात कही जा सकती! पर यदि वह तीन बडो मे बात करेगी तो कोई हानि नही होगी, बशर्ते कि उन्हे मुलाकात करने का अवसर मिले। इस पत्र की प्राप्ति के बाद मुझसे एक बार बात कर लीजियेगा।

आपका ही
महादेव

मैने बापू और जिन्ना के बीच की खाई को पाटने की चेष्टा मे स्व० लियाकतअली खा से कुछ बातचीत की थी। मैने इस बातचीत से बापू को पूरी तरह से अभिज्ञ रखा था और उनकी ओर से किसी तरह का कोल करार नही किया था। इस बातचीत का कोई नतीजा नही निकला और जिस प्रकार दूध बिखर जाने पर रोना-धोना बेकार होता है उसी प्रकार उस बातचीत की ऊहापोह करना व्यर्थ है।

लार्ड लिनलिथगो ने जिस स्थिति की कल्पना की थी और जिसके बारे मे मुझे फिशर के हवाले से महादेवभाई ने लिखा था, वह सामने आ गई। गाधीजी ने व्यक्तिगत सत्याग्रह आन्दोलन का श्रीगणेश किया। उसके बाद सन् ४२ का 'भारत छोडो' आदोलन आया। वह स्वय पूना के आगाखा महल मे नजरबन्द कर दिए गये और एक के बाद एक काग्रेस के नेता गिरफ्तार होते और जेल जाते रहे।

युद्ध मथर गति से जारी रहा। हम भारतीयो को, जो स्वतत्रता की आशा लगाये बैठे थे, कभी-कभी ही कोई समाचार मिल पाता था। गाधीजी ने २१ दिन का उपवास किया। इस समय उनको रिहा करने के लिए जो भी अनुरोध किये गए उन सबको सरकार ने ठुकरा दिया। गाधीजी ने अपना अनशन सफलता पूर्वक पूरा किया, पर उससे सारा देश हिल उठा।

: २४ :

भारत और युद्ध

बापू ७ अगस्त १९४२ को गिरफ्तार हुए थे। उनकी गिरफ्तारी के वाद हिसा का विस्फोट हुआ, जिसके फलस्वरूप युद्ध-चेष्टा को धक्का लगा और लार्ड वेवेल को युद्ध का मोर्चा जापान द्वारा अधिकृत वर्मा तक फैलाने के प्रयास मे लज्जा-जनक ढग से विफल मनोरथ होना पडा। बापू की गिरफ्तारी और तज्जनित हिसा के विस्फोट के जो कारण वताये गए है उनके सम्बन्ध मे कुछ ऐसी ज्ञातव्य बाते हे जिन्हे भावी इतिहास-कार को अच्छी तरह ध्यान मे रखना होगा।

यह तो निश्चित ही है कि युद्धकाल मे लार्ड लिनलिथगो ने अपने सैनिक सलाहकारो से परामर्श किये विना और प्रकटत अपनी ही जिम्मेदारी पर इतना गम्भीर निर्णय कर डाला कि उसका युद्ध की गति पर प्रभाव पडना अनिवार्य था। प्रधान सेनापति लार्ड वेवेल उस समय भारत मे नही थे। वाद मे उन्होने कहा कि वह इस बारे मे कुछ नही जानते। ८ अगस्त रविवार को बडे सवेरे गिरफ्तारिया हुई। उसी दिन बम्बई मे दगे भडक उठे। उसी दिन सध्या को राची पूर्वी कमाण्ड के सेनापति ने 'स्टेट्समैन' के सम्पादक के साथ कलकत्ते मे भोजन किया। उन्हे गिरफ्तारियो और दगो का कुछ पता न था। कलकत्ते मे प्रेसीडेसी डिवीजन की कमान के जनरल भी इस अवसर पर मौजूद थे। उन्हे भी इन सारी घटनाओ का पता नही था। उनका परिस्थिति से गहरा सम्बन्ध था। सम्पादक आर्थर मूर ने सार्वजनिक रूप से इस बात का उल्लेख

किया है कि जब इन सैनिक अधिकारियो को उनसे इन घटनाओ का पता चला तो उन्हे बडा आश्चर्य हुआ।

दूसरा निर्विवाद तथ्य यह है कि गाधीजी की गिरफ्तारी को यह आरोप लगाकर औचित्यपूर्ण सिद्ध नही किया जा सकता कि वह अथवा काग्रेस हिसा का आश्रय लेने की योजना बना रहे थे । गाधीजी की नजरबन्दी के दिनो मे उनसे जो प्रश्न किये गए उनके उत्तर इस प्रकार दर्ज हे

प्रश्न—अहिसा मे आपकी जो श्रद्धा है, उसका मेल आप उन आरोपो के साथ कैसे बैठाते है जो आपके और काग्रेस के विरुद्ध लगाये जाते है कि ८ अगस्त के बाद जो भी तोड-फोड और हिसा के काम हुए वे सब इसलिए हुए कि आपने या काग्रेस ने कुछ गुप्त हिदायते जारी की थी ?

उत्तर—इन आरोपो में तनिक भी सचाई नही है। मैने तोड-फोड के लिए या किसी भी प्रकार की हिसा के लिए कोई गुप्त या अप्रत्यक्ष हिदायत कभी नही दी। अगर काग्रेस ने ऐसी कोई हिदायत द होती तो मुझे उसका पता होता। न तो मैने ही और न काग्रेस ने ही ऐसी हिदायते जारी की।

प्रश्न—तो फिर आप तोड-फोड और हिसा के इन कामो को नापसन्द करते है ?

उत्तर—बिल्कुल नापसन्द करता हू। मेरे अनशन-काल मे मुझसे जो भी मित्र मिले है, उन सबसे मैने यही बात कही है। जो लोग हिसा में विश्वास करते है, मै उनका निर्णायक नही बनना चाहता। पर मै उनसे यह जरूर कहूगा कि वे स्पष्ट रूप से इस बात की घोषणा कर दें कि वे इन हिसात्मक कार्यो को अपनी ही ओर से कर रहे है और इसलिए कर रहे है कि उनका हिसा मे विश्वास है। काग्रेस के प्रति न्याय करने के लिए इन हिसा और तोड-फोड करनेवालो को यह बात बिल्कुल स्पष्ट कर देनी चाहिए। वे मेरी सुनें तो मै तो उन्हे सलाह दूगा कि उन्हे अपने को पुलिस के हवाले कर देना चाहिए। केवल इसी प्रकार वे लोग देश के हित-साधन मे सहायक हो सकते है। पर यदि कोई व्यक्ति काग्रेस के ध्येय और मेरे तरीके मे विश्वास नही रखता है तो उसे सभी सम्बद्ध लोगो के निकट यह बात स्पष्ट कर देना चाहिए।

प्रश्न—यह कहा गया है कि आपने यह आन्दोलन इस खयाल से शुरू किया कि मित्र-राष्ट्र हारनेवाले है और आपने इस आन्दोलन के लिए ऐसा

समय चुना जब मित्र-राष्ट्र कठिनाई मे पडे हुए थे और आप उनकी स्थिति से अनुचित लाभ उठाना चाहते थे।

उत्तर—इसमे सत्य का लेश भी नही है। आप 'हरिजन' मे मेरे लेख पढ सकते हैं और मैंने यह जरूरत से ज्यादा स्पष्ट कर दिया है कि मेरा ऐसा इरादा कभी नही था।

प्रश्न—हा, मैने आपके लेख 'हरिजन' मे पढे है। मैने तो यही पाया कि आप जर्मनी या जापान के पक्षपाती तो क्या, उल्टे नात्सी-विरोधी और फासिस्ट-विरोधी है। यही बात हे न ?

उत्तर—कतई। नात्सीवाद और फासिस्टवाद के खिलाफ मुझसे अधिक कठोर शब्दो का व्यवहार और किसीने नही किया है। मैने तो नात्सियो और फासिस्टो को इस दुनिया की गन्दगी कहा है। जब मई १९४२ मे मीरा-बहन उडीसा मे थी तो मैने उन्हे एक पत्र लिखा था। मै उस पत्र की प्रतिलिपि तो आपको नही दे सकता, क्योकि मै जेल मे हू, पर मुझे मालूम हुआ है कि मीराबहन ने उस पत्र की नकल भारत सरकार को भेजी है। आप सरकार से उसकी प्रतिलिपि माग सकते है और अपनी तसल्ली कर सकते है। मैने उस पत्र मे विस्तृतरूप से हिदायते दी है कि जापानी भारत पर आक्रमण करे तो उनका प्रतिरोध किस प्रकार किया जाय। उस पत्र को पढ लेने के बाद कोई भी व्यक्ति मुझ पर नात्सीवाद या फासिस्टवाद या जापान से सहानुभूति रखने का आरोप नही लगा सकता।

प्रश्न—क्या स्थिति यह नही है कि अगर भारत स्वतत्र हो जाय और राष्ट्रीय सरकार की स्थापना हो जाय तो काग्रेस मित्रराष्ट्रो के ध्येय की पूर्ति मे सैनिक सहायता देने के लिए वचनबद्ध है ?

उत्तर—आपने जो निष्कर्ष निकाला है, वह बिल्कुल ठीक है। इसमे कोई शक नही कि यदि भारत को स्वतन्त्र कर दिया गया तो राष्ट्रीय सरकार अपने समस्त सैनिक साधनो के साथ मित्र-राष्ट्रो के पक्ष मे लडेगी और हर सभव तरीके से मित्र-राष्ट्रो को सहयोग देगी।

प्रश्न—हा, काग्रेस की नीति यही है। परन्तु आप तो शान्तिवादी है। क्या आप मित्र-राष्ट्रो को सैनिक सहायता देने की कागेसी योजना मे बाधा नही डालेगे ?

उत्तर—कदापि नही। म शान्तिवादी हू। किन्तु यदि राष्ट्रीय सरकार बनी ओर उसने मित्र-राष्ट्रो को सैनिक सहायता देने के आधार पर सत्ता की बागडोर सभाली, तो जाहिर है कि मै बाधा नही डाल सकता, जोर न डालूगा ही। मेरे लिए हिसा के किसी काम मे प्रत्यक्ष भाग लेना सभव नही होगा। पर काग्रेस मेरी ही तरह शान्तिवादिनी नहीं है और

में स्वभावतया ही कांग्रेस के इरादों की पूर्ति में बाधा डालने वाला कोई काम नहीं करूंगा।

बापू जब आगाखां महल, पूना में नजरबन्द थे तो उनके इस निश्चय से, कि यदि वायसराय और सरकार उन्हें और कांग्रेस को उनकी गिरफ्तारी के बाद के विद्रोह और तोड़-फोड़ के कामों की जिम्मेदारी से मुक्त नहीं करेगी तो वह २१ दिन का अनशन करेंगे, उनके मित्र घबरा गये। अब वह काफी वृद्ध हो गए थे, इसलिए इस सम्भावना ने कि सरकार उन्हें रिहा नहीं करेगी और अनशन करने देगी, हम सबको भयभीत कर दिया। श्री कन्हैयालाल माणेकलाल मुनशी ने, जो इस समय उत्तर प्रदेश के गवर्नर हैं, और मैंने तुरन्त एक प्रतिनिधि सम्मेलन, जो यथासम्भव अधिक-से-अधिक प्रतिनिधित्वपूर्ण हो, बुलाने का निश्चय किया, जिससे सरकार को बापू को रिहा करने के लिए प्रेरित किया जा सके। तदनुसार हमने श्री राजगोपालाचार्य और सर तेजबहादुर सप्रू को संयुक्त तार भेजकर इनमें सम्मेलन में उपस्थित होने और उसे आगे बढ़ाने का अनु ध किया। वे राजी हो गये। मेरा दिल्लीवाला मकान इतने बड़े सम्मेलन के लिए नाकाफी होता, इसलिए हम लोगों ने उसका अधिवेशन भारतीय व्यापारी संघ के अहाते में एक शामियाने में किया। हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख—सभी जातियों के प्रतिनिधि काफी संख्या में मौजूद थे। हम सबने वैधानिक और राजनैतिक सवालों को छुआ तक नहीं और जो प्रस्ताव अपनाये उनमें अपील का आधार शुद्ध मानवता को ही बनाया। पर सरकार का दिल नहीं पसीजा। सिंहावलोकन करने पर आश्चर्य होता है कि सरकार ने अपने सिर पर कितनी बड़ी जोखिम ले ली थी। गांधीजी की मृत्यु हो गई होती तो सारे देश में आग लग जाती और सरकार युद्ध-चेष्टा में सहायक होने के बजाय स्वयं ही अपने आपको तोड़फोड़ की कार्रवाई का दोषी सिद्ध करती। सरकार के भाग्य अच्छे थे कि गांधीजी जीवित रहे और उनका

अनशन निर्विघ्न पूरा हो गया। सरकार की स्थिति सचमुच कठिन थी। उससे यह आशा नही की जा सकती थी कि वह कांग्रेस को निर्दोष घोषित कर देती, जब कि वह वास्तव मे उसे जिम्मेदार समझती थी। पर वह 'साप मरा न लाठी टूटी' की नीति तो अपना सकती थी। वह यह कह देती कि अन्य किसी प्रश्न के सही या गलत होने पर विचार न करते हुए उसने केवल मानवता के आधार पर गाधीजी को रिहा करने का फैसला किया है। हमारी अपील का आधार भी यही था। वह अच्छी तरह जानती थी कि बापू का अपने अनुयायियो का कायापलट करने का दावा भले ही अतिरजित हो, स्वय बापू को हिसा से घोर अरुचि है। ऐसी दशा में सरकार बापू के सिर पर थोडी-सी अप्रत्यक्ष जिम्मेदारी थोप सकती थी, और बस। वह खुले तौर पर पहले ही स्वीकार कर चुकी थी कि गाधीजी ने शान्तिमय वातावरण बनाये रखने मे भारी सेवा की है।

बापू के विश्वस्त निजी मत्री महादेवभाई का नजरबन्दी काल मे ही देहावसान हुआ। प्यारेलाल और उनकी बहन डा० सुशीला का गाधीजी के साथ दीर्घकाल से सबध था। अब महादेवभाई का स्थान प्यारेलाल ने लिया।

जब बापू रिहा हुए और मेरे लिए उनके साथ पुन. पत्र-व्यवहार करना सभव हुआ तो मैंने प्यारेलाल के साथ पत्र-व्यवहार करना शुरू किया। इसका कारण यह था कि मै बापू का समय नही लेना चाहता था, हालाकि मै उनके स्वास्थ्य के बारे मे चिन्तित था और उनका पथ-प्रदर्शन प्राप्त करने को उत्सुक था।

दिलकुशा, पचगनी
३१-७-४४

प्रिय घनश्यामदासजी,

बापू ने कुछ विदेशी पत्र-पत्रिकाए नियमित रूप से मगवाने का प्रबन्ध करने को कह दिया है। मैंने श्री शान्तिकुमार के पास निम्नलिखित सूची भेजी थी

१ न्यू स्टेट्समैन एण्ड नेशन ४ साप्ताहिक मैन्चेस्टर गार्जियन
२ टाइम (अमेरिकन) ५ साप्ताहिक टाइम्स
३ रीडर्स डाइजेस्ट ६ यूनिटी, और ७ एशिया।

उन्होने लिखा है कि उन्होने चेष्टा की, पर असफल रहे। क्या आप इन्हें मगवाने का भार लेंगे ?

आपका
प्यारेलाल

७ ८ ४४

प्रिय प्यारेलाल

तुम्हारा ३१ तारीख का पत्र मिला। तुमने जिन पत्र-पत्रिकाओ के लिए लिखा है उन्हें मगाने में कोई कठिनाई नही होगी। तुम्हे वे सब सीधे ही मिल जाया करेंगे। मै आज ही अपने लदन और न्यूयार्क के दफ्तरो को आवश्यक कार्रवाई करने के लिए तार भेज रहा हू। जब मिलने लगें तो मुझे सूचित कर देना।

यदि कोई लिखने योग्य बात हो तो मुझे सूचित करते रहा करो, जैसा कि महादेवभाई किया करते थे। जरूरत पडने पर अपनी निजी विचार-धारा दे सकते हो।

मै अभी बम्बई नही जा रहा हू, पर मेहरबानी करके बापू मे कह देना कि उन्हे मेरी जब कभी जहा कही, सेवाग्राम में या और किसी जगह, दरकार हो मै आ जाऊगा। मै उन्हे इसलिए नही लिख रहा हू कि उनके पास वैसे ही बहुत कुछ करने को है। इसलिए मै उनकी डाक का बोझ अनावश्यक रूप से नही बढाना चाहता। आशा है, केचुए अब बिल्कुल नही रहे होगे।

तुम्हारा
घनश्यामदास बिडला

आगा खा महल से रिहा होने के बाद बापू तनिक भी प्रसन्न न थे। उनके सहकर्मी और साथी अभी जेल मे ही थे, तिस पर पहले तो महादेव और बाद मे बा आगा खा महल मे ही उनसे बिछुड गये थे। बापू अनुभव करते थे कि या तो उनके साथियो की रिहाई होनी चाहिए या फिर उन्हे ही वापस जेल चले जाना चाहिए। इसी अवसर पर कुछ मित्रो ने, जिन्होने

मेरे परिवार के साथ बापू के सम्पर्क को सदैव अपनी ईर्ष्या का विषय बनाया था, यह आपत्ति उठाने की कृपा की कि जब कभी बापू दिल्ली या बम्बई जाते हैं तो बिड़ला-भवन मे ही क्यो ठहरते है। जब यह बात बापू के कानो मे आई तो उन्होने बिडला-भवन का परित्याग करने से साफ इन्कार कर दिया। वह अनेक वर्षो से जब-तब वही ठहरते आ रहे थे। तब इन मित्र कहाने वाले सज्जनो ने यही दलील देकर बापू को बिड़ला-भवन में ठहरने से विरत करना चाहा कि आप शायद फिर गिरफ्तार हो जाय, इसलिए आपके लिए बिडला-परिवार के साथ अधिक घनिष्ठ सम्पर्क रखना उचित नही होगा। आप पहले भी बिडला-भवन मे ही गिरफ्तार हुए थे, इसलिए बिडला-परिवार की सुरक्षा खतरे मे पड सकती है।

जब बापू ने इस विषय की पूना मे मुझसे चर्चा की तो मै आश्चर्य-चकित रह गया। मैने बापू से साफ-साफ कह दिया कि खतरा चाहे जैसा हो, आपके साथ सम्पर्क बनाए रखने मे कोई जोखिम उठाने का प्रश्न हो तो मै उससे बचने के लिए अपनी जिम्मेदारी का परित्याग करने की एक क्षण के लिए भी कल्पना नही कर सकता। पर बापू ने आग्रह करके मेरे भाई रामेश्वरदास को बम्बई मे निम्नलिखित पत्र भेजा। रामेश्वरदास ने भी अपने उत्तर मे वही बात कही जो मैने कही थी

सेवाग्राम, वर्धा
१२ ८ ४४

भाई रामेश्वरदास

बहुत दिनो से लिखने की इच्छा हो रही थी, लेकिन लिखने का समय ही नही मिला। अब तो लिखना ही चाहिये। जिन्ना साहेब का खत किसी भी वख्त आ सकता है। मैंने तो लिखा है कि ३।४ दिन की मुद्दत मिलनी चाहिये। मुझ पर बहुत दबाव डाला जाता है कि मै बिरला हाउस मे तो हरगिज न रहू। मैंने साफ साफ कह दिया है कि मै बिना कारण बिरला हाउस का त्याग नहीं कर सकता हू। प्रश्न तो इसी कारण खडा होता है

कि कोई भी सजोगवशात् मेरा वहा रहना अनुचित माना जाय तो बगैर सकोच के मुझे कह देना। यह प्रश्न पूना मे ही उठा था और उस वक्त तय हुआ था कि तुम्हारे तरफ से सकोच की कोई बात हो नहीं सकती। मुझे याद नहीं उस वक्त तुम थे या नही। बात घनश्यामदास से हुई थी। लेकिन सावधानी के कारण आज तुमको हर प्रकार से सुरक्षित रखने के कारण जब मुझे मुम्बई जाने का समय नजदीक आ रहा है तो पूछ लेना धर्म हो गया है।

दूसरी बात अधिक अगत्य की है, लेकिन समय की दृष्टि से इतनी अगत्य की नहीं जितनी मुम्बई निवास की है। अगर मेरी गिरफ्तारी होने वाली ही है तो उसके पहले जो कार्य मुझे करने चाहिये उसे मैं कर सकू तो एक प्रकार का सतोष मिलेगा। तालीमी सघ का कार्य बहुत अच्छा है, ऐसा मेरा विश्वास है। उसके लिये १।२ (आधा) लाख रुपये का प्रबन्ध कर लेना चाहता हू।

मीरा बहन के लिये रुपये दान मे मिले थे वह वापस देना चाहता हू। वह उसे वापस देने का धर्म हो गया है। इसका बोझ यो तो सत्याग्रह आश्रम कोष पर पडना चाहिये। थोडे पैसे है भी सही। लेकिन नारायणदास ने रचनात्मक कार्य मे रोक लिये है। उसमे से निकल तो सकते है लेकिन उस कार्य को हानि पहुचा करके ही निकाल सकता हू। हो सके तो उस कार्य मे हानि पहुचाना नहीं चाहता हू। इसमे शायद आधा लाख तक पहुच जाता हू। ठीक रकम कितनी देनी है वह मुझे पता नहीं चला है। वर्षो से जो रकम आती रही वह दानो मे लिखी है, उसे निकालने मे कुछ देर लगती ही है। आश्रम की सब किताबे इधर उधर पडी है। अच्छी तरह रखे हुए चोपडे मे से भी ऐसी रकमो को चुन लेना घास मे गिरी हुई सुई को ढूढ लेना सा हो जाता है। तब भी मैने लिख दिया है कि वह सारा हिसाब निकाला जाय।

कुछ फुटकर खर्च पडा है। इसका कुछ करना आवश्यक है। इसमे कुछ १।२ (आधा) लाख चला जायगा। मैने ठीक ठीक हिसाब निकाला नही है।

क्या इतनी रकमे आराम से दे सकते है? इसका उत्तर नकार मे भी बगैर सकोच दिया जा सकता है। मेरे सब कार्य ईश्वराधीन रहते है। ईश्वर अगर वह कार्य रोकना नहीं चाहता है तो किसी-न किसी को अपना निमित्त बनाकर मुझको हुडी भेज देता है। तो न मिलने से मै न ईश्वर से रूठूगा न तुम से। जिस वृक्ष के नीचे मै बैठता हू उसी वृक्ष का छेदन आज तक नहीं किया, ईश्वर की कृपा होगी तो भविष्य मे नहीं होगा।

तुम सबका स्वास्थ्य अच्छा होगा। यह पत्र चि० जगदीश के मारफत भेजता हू। वह यहा भाई मुनशी का खत लेकर आया है। डाक से क्या भेजा जाय, क्या न भेजा जाय इसका निर्णय करना मुश्किल हो जाता है।

बापू के आशीर्वाद

जिन्ना अपनी जिद पर अडे हुए थे। उसके साथ बापू की निष्फल मुलाकात के कुछ ही पहले मुझे एक पत्र मिला। जिन्ना के साथ होने वाली मुलाकात के विरोध मे जिस उग्रता के दर्शन हो रहे थे और स्वय बापू के प्रति विरोध की जो भावना दिखाई दे रही थी,सो सब उनकी उस मृत्यु का पूर्वाभास-मात्र था, जिसका उन्हे अन्त मे धर्मोन्मत्त हिन्दुओ के हाथो शिकार होना पडा था।

बम्बई
९ सितम्बर १९४४

प्रिय घनश्यामदासजी

मुझे आपका ३ सितम्बर का वह पत्र मिला जिसमे आपने 'स्पेक्टेटर' के कटिंग भेजे है। तदर्थ धन्यवाद। बापू ने तीनो कटिंग देख लिये है। मेरे पास होरेस एलेक्जेंडर की पुस्तक भी थी। मै आवश्यक कार्रवाई करूगा।

आपने समाचार-पत्रो मे सेवाग्राम में धरना देने वालो के कारनामे पढे ही होगे। वैसे उनके नेता ने पहले ही दिन साफ-साफ कह दिया था कि यह तो पहला कदम है और आगे जरूरत पडी तो बापू को कायदे आजम से मिलने जाने से रोकने के लिए बल का भी प्रयोग किया जायगा। पर जहा तक हमारा सम्बन्ध है हम इस सारे व्यापार को कौतुक मात्र समझते आ रहे थे। कल उन्होने सूचना दी कि वे गाधीजी को अपनी कुटिया छोडने से बलात् रोकेगे। साथ ही उन्होने कुटिया के तीनो द्वारो पर धरना बैठा दिया।

आज प्रात काल मुझे पुलिस के डिप्टी सुपरिन्टेन्डेट का टेलीफोन मिला कि धरना देनेवाले उत्पात पर उतारू है, इसलिए पुलिस को कार्रवाई करने को बाध्य होना पडेगा। बापू का विचार था कि वह वर्धा की ओर पैदल चल पडेगे और जबतक धरना देनेवाले ही उनसे गाडी मे बैठने के लिए न कहेगे, इसी प्रकार चलते रहेगे। यात्रा का समय दोपहर के १२ बजे का था। इस समय के कुछ ही देर पहले डिप्टी सुपरिन्टेन्डेट ने आकर

बताया कि पुलिस ने धरना देने वालो को चेतावनी देने के बाद, यह देखकर कि समझाने-बुझाने से कोई लाभ नहीं होगा, उन्हें गिरफ्तार कर लिया। आपको शायद यह तो पता होगा ही कि आजकल वर्धा जिले में किसी प्रकार के जुलूस निकालने या प्रदर्शन करने का निषेध है।

धरना देने वालो का अगुआ उत्तेजित हो जाने वाला धर्मान्ध व्यक्ति दिखाई पडा और उससे कुछ चिन्ता उत्पन्न हो गई। जब गिरफ्तार करने के बाद तलाशी ली गई तो उसके पास से एक लम्बा-सा छुरा मिला।

जिस पुलिस अफसर ने गिरफ्तार किया था उसने व्यंग्यात्मक लहजे में कहा कि कम-से-कम तुम्हें तो शहीद बनने का सन्तोष रहेगा। फौरन उत्तर मिला कि न, यह तो तभी होगा जब कोई गान्धीजी की हत्या करेगा। उक्त पुलिस अफसर ने प्रफुल्लता-पूर्वक कहा कि यह मामला नेताओ के हाथो में क्यो नही छोड देते, वे ही आपस में निपट लेगे। उदाहरण के लिए सावरकर यहा आकर बातचीत कर लें। उत्तर मिला कि गान्धीजी इतने बडे सम्मान के योग्य नही है। इस काम के लिए तो एक जमादार काफी होगा।

बापू आश्रमवासियो के साथ गंभीर विचार विनिमय कर रहे है। उन्होंने सलाह दी है कि यदि आश्रमवासी परीक्षा के अवसर पर आजमायश मे पूरे उतरने लायक सगठन करने में असमर्थ हो तो आश्रम का अन्त कर देना चाहिए। बापू की राय है कि आश्रम की वर्तमान असफलता का कारण आश्रम में उनकी उपस्थिति है। इसलिए यदि आश्रम का पुनर्गठन करने के पक्ष में निश्चय किया गया तो वह या तो सेवाग्राम वाले बिडला हाउस में चले जायेंगे या वर्धा। उन्होने अखिल भारतीय चर्खा सघ में आमूल परिवर्तन करने के सम्बन्ध में जो सुझाव दिया है सो आपने देखा ही होगा। मैंने उसे छपने भेज दिया है। उसे ध्यानपूर्वक पढिये। उसके बाद कुछ नई बातें हो गई है, इसलिए पहले से यह कहना कठिन है कि ऊट किस करवट बैठेगा।

भवदीय
प्यारेलाल

इस पत्र से मै इतना चिन्तित हुआ कि मैने उत्तर मे एक्सप्रेस तार भेजा

मेरी सलाह है कि सेवाग्राम के पिकेटिग करनेवालो के सबध मे समा-

चारपत्रो को सही-सही खबर दी जाय। यह आवश्यक है कि जनता को जानकारी हो।

घनश्यामदास
१३। ६। ४४

किन्तु बापू ने ऐसा करने की इजाजत नही दी।

बिटला हाउस
माउण्ट प्लेजेण्ट रोड
बम्बई
१६ सितम्बर १९४४

प्रिय घनश्यामदासजी

आपका तार मिल गया था। बापू का कहना है कि इस काण्ड से गहरा सम्बन्ध रखने वाली बाते अभी प्रकाशित नही की जा सकती है, क्योकि अभी मामला कायदे-कानून की दृष्टि से विचाराधीन है।

मै कायदे-कानून की बात जानबूझ कर कह रहा हू, क्योकि पुलिस के डिप्टी सुपरिंटेण्डेट का, जो मुझसे मिला था, विचार है कि धरना देने-वालो को बापू की सेवाग्राम वापसी तक रोक रखा जाय जिससे उनकी वापसी पर उपद्रव को नये सिरे से शान्त न करना पडे।

बातचीत सहजरूप से चल रही है। शुरु-शुरु मे दिन मे दो बार मुलाकात होती थी, अब केवल एक बार सन्ध्या को होती है, क्योकि प्रात काल का समय डा० दिनशा के लिए निकाल दिया गया है जो कायदे आजम का उपचार करते हैं।

आपके दोनो तार मिल गये। मैने रामेश्वरजी को सारी बाते समझा दी हैं। वह फोन पर बात कर लेगे।

भवदीय
प्यारेलाल

पुनश्च —बापू ने भी आपके दोनो तार देख लिये है। उनका उत्तर तार द्वारा आपके पास भेजा जा रहा है जो इस प्रकार है

'मेरी एकान्त इच्छा है कि तुम मसूरी जाओ। मुझे तुम्हारी दरकार होगी तो वहा प्रवास की अवधि कम कर देना।'

प्यारेलाल ने ६ दिसम्बर १९४४ को भविष्यवक्ता के से लहजे मे लिखा

बापू इस महीने के अन्त मे यथापूर्व कामकाज शुरू कर देने की आशा करते है। हमको भी ऐसी ही आशा रखनी चाहिए, पर मेरी राय है कि भविष्य मे उनके काम के क्षेत्र और स्वरूप मे कातिकारी परिवर्तन होना चाहिए। उन्हे अब इजन-चालक के बजाय केवल झडी दिखानेवाले का ही काम करना चाहिए। वह विचार दे और नैतिक एव आध्यात्मिक प्रभाव से मार्ग आलोकित करें। मेरा यह दृढ विश्वास है कि उनके पथ-प्रदर्शन की किसी भावी अवसर पर इतनी अधिक दरकार होगी कि हम आज उसकी कल्पना तक नही कर सकते। उनके हाथो अभी और भी महान कार्य होने वाले है। अपनी और दुनिया की खातिर उन्हे अपनी शक्ति को अच्छे-से-अच्छे ढग से सचित करके रखना चाहिए।

राजाजी आज जा रहे है। मै चाहता हू कि उनके जसा कोई आदमी बापू के पास रह सके। बापू अपनी तमाम अनासक्ति के बावजूद अत्यधिक मानव है ओर पुराने नेताओ मे से किसी एक की निकट उपस्थिति का महत्व कम नही आका जा सकता। बापू को जिस प्रकार के आध्यात्मिक एकान्त मे रहना पड रहा है, वह भयकारक है। यह ठीक है कि उनके इस एकान्त को उनकी विशालता से अलग नहीं किया जा सकता। पर उसकी कठोरता को कम करने के लिए तो कुछ-न-कुछ किया ही जा सकता है।

: २५ :

भारत के मित्र

यह पुस्तक भारत के आधुनिक इतिहास निर्माण-कार्य मे एक तुच्छ-सा योगदान मात्र है। इसके रचना-कार्य के दौरान उन कतिपय विदेशियो का उल्लेख करना, जो भारत की स्वतत्रता के लिए सचेष्ट रहे और उसमे योगदान करते रहे, उचित ही हो होगा। वैसे अमरीका मे और अन्य देशो मे भी सहानुभूति रखनेवालो की कमी नही थी, पर उनकी चेष्टाये उतनी फल-दायिनी सिद्ध नही हुई। ब्रिटेन अधिक ठोस काम कर सका जो कि स्वाभाविक ही था। यदि विश्वलोकमत विशाल रूप धारण कर सके तो उसकी प्रभावोत्पादकता असदिग्ध है। किन्तु हस्तक्षेप के प्रयत्नो से ब्रिटिश प्रतिरोध की मात्रा मे वृद्धि ही हुई। इसका एक उदाहरण हमारे पक्ष मे अमरीकी राजदूत फिलिप्स का सदाशयतापूर्ण हस्तक्षेप है। प्रेसिडेन्ट रूजवेल्ट और श्री चर्चिल के बीच घनिष्ठता थी, पर इस हस्तक्षेप का एक मात्र परिणाम यही हुआ कि श्री चर्चिल का रुख और भी कड़ा होता दिखाई दिया।

हमारे अग्रेज मित्र दो श्रेणियो मे बटे हुए थे, एक श्रेणी ब्रिटेन मे थी और दूसरी भारत मे। ब्रिटेन-स्थित मित्रो की भी श्रेणिया थी। कुछ लोग मुख्यत कर्त्तव्य की सम्मानास्पद भावना से प्रेरित थे और समझते थे कि उन्हे समय के साथ चलना चाहिए। कट्टर विचार वाले व्यक्तियो की बात दूसरी है, पर इसमे कोई सदेह नही कि मैकाले के जमाने से ही ब्रिटिश पार्लमेंट की यह घोषित नीति रही है, और कुल मिलाकर ब्रिटिश जनता का भी यही एकमात्र राष्ट्रीय कार्यक्रम बना रहा है कि भारतीयो

को उत्तरोत्तर अपना शासन-कार्य स्वय चलाने की कला सीखनी चाहिए, और सो भी जल्दी-से-जल्दी। लार्ड हेलीफैक्स ने एक बार कहा था कि ब्रिटिश जनता का लक्ष्य इसके अलावा और कोई हो ही नही सकता। सर सेमुअल होर और उनके अधिकाश अनुदार दलीय साथी इन्ही उद्देश्यो से प्रेरित थे। उन्होने श्री एटली और विपक्षी दल की मदद से और अपने ही दल के अनेक सदस्यो की इच्छा के विरुद्ध, भारतीय शासन-विधान पार्लमेंट मे पास कराया।

किन्तु शासकवर्ग मे ऐसे भी व्यक्ति थे जो केवल अपने सम्मान और कर्त्तव्य की भावना से ही नही, वल्कि धार्मिक विश्वासो और मानवजाति के प्रति प्रेम की भावना से भी प्रेरित थे। उनकी इन भावनाओ ने उनके मन मे भारत के प्रति गहरी सहानुभूति जागृत कर दी थी और वे हर्षपूर्वक हमारी भावी स्वतत्रता की बाट जोह रहे थे। इनमे लार्ड हेलीफेक्स का प्रमुख स्थान था। वह अनुदार-दलीय वायसराय थे और बाद को ब्रिटेन के मत्री रह चुके थे। दूसरे लार्ड लोदियन थे, जो नरम दल के सदस्य थे और मिलीजुली सरकारो मे भारत के उप-सचिव और ब्रिटेन के मत्री रह चुके थे। बापू और इन दोनो के बीच सच्ची मित्रता हो गई थी। वैसे बापू व्यक्तिगत सम्पर्क के लिए उत्सुक रहते थे, पर जब मैने उन्हे चर्चिल के साथ अपनी मुलाकात का हाल लिख कर भेजा, जिसमे मेरी प्रेरणा पर चर्चिल की भारत-यात्रा सम्बन्धी तत्परता की चर्चा थी, तो बापू को विशेष उत्साह नही हुआ। बापू ने मुझे साफ बता दिया कि जहा तक उनका सबध है, वह श्री चर्चिल को कोई निमन्त्रण या प्रोत्साहन नही देगे। उन्होने कहा कि लार्ड लोदियन की बात दूसरी है, वह उनके भारत-आगमन की उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा करेगे। लार्ड लोदियन का भारत-आगमन बहुत सफल रहा और उससे हम सबको बड़ी खुशी हुई। वह दिल्ली मे और अन्यत्र मेरे अतिथि रहे। जब वह वर्धा गये तो उन्होने बापू के अतिथि

के रूप मे सेवाग्राम आश्रम के सादे जीवन को अगीकार किया ।

कुछ अन्य मित्र थे, खास तौर पर क्वेकर लोग, जो अपनी धार्मिक भावनाओ के कारण बापू के अहिंसा-व्रत के प्रति सहानुभूति रखते थे। भारत मे उनकी श्रेणी मे मिशनरियो को रखा जा सकता था। इन मिशनरियो मे से अधिकाश ने, चाहे वे अग्रेज रहे हो चाहे अमरीकी, हमारे साथ सहानुभूति दिखाई। केथलिक मिशनरियो को शायद अपवाद-स्वरूप माना होगा। वे लोग अधिकतर लैटिन देशो के थे। उनके निजी विचार चाहे जो रहे हो, उन्होने अपना कोई राजनैतिक मत प्रदर्शित नही किया। मजदूर-दल के प्राय सभी ससदीय सदस्यो ने, और सभी श्रमजीवी सस्थाओ ने, सहानुभूति प्रदर्शित की। जब युद्ध समाप्त हो गया तो बहु-आलोचित साइमन-कमीशन के भूतपूर्व सदस्य श्री एटली को ब्रिटेन के वादो को पूरा करने का गौरव प्राप्त हुआ। सर्व-साधारण लोगो मे पादरी सोरेनसेन और श्री फेनर ब्राकवे के नाम उल्लेख योग्य है। उन्होने कभी-कभी जानकारी के अभाव का परिचय अवश्य दिया, पर उसकी पूर्ति उन्होने अपनी लगन से की। विरोध उन्ही लोगो की ओर से होता था, जिनका अग्रेजी प्रभुत्व मे निहित स्वार्थ था। यह स्वाभाविक भी था। इगलैण्ड मे बडी-बडी व्यापारिक सस्थाए थी, जिन्होने औपनिवेशिक व्यापार के द्वारा खूब धन कमाया था। भारत सुई से लगा कर जहाजो तक हर किस्म के तैयार माल के लिए एक विस्तृत बाजार बना हुआ था और कभी-कभी तो इन पदार्थो के लिए कच्चा माल मुख्यत भारत से ही जाता था। उदाहरण के लिए, रुई ब्रिटिश जहाजो मे लद कर लकाशायर जाती थी और उसका ही कपडा बन कर भारत आता था, जिसकी खपत का यहा कोई अत न था। फिर, ब्रिटेन के उच्च और मध्यम वर्ग के ऐसे असख्य परिवार थे, जिनके मुखियो ने भारत मे सेना, सिविल सर्विस या और किसी हैसियत मे नौकरी की थी। उन्होने मौज की जिन्दगी गुजारी थी, कुछ रुपया भी

बचाया था और अच्छी पेंशन ले कर चेल्टनहम, केम्बरले और बेडफोर्ड में जाकर डेरा जमाया था। ये लोग भारत को अपनी सन्तान के लिए एक मोरूसी जायदाद समझने लगे थे।

भारत में भी उनकी प्रतिमूर्त्तिया मौजूद थी। वैसे भारतीय सिविल सर्विस इगलैण्ड से आये हुए आदेशो का वफादारी के साथ पालन करती थी और भारत मे ससदीय सस्थाओ के विकास का प्रयत्न ईमानदारी के साथ करती थी। पर उसमे ऐसे लोगो का अभाव नही था जो उन आदेशो के प्रति अपनी खालिस नापसदगी को छिपाते नही थे। वे अपने को हमारे लिए आवश्यक फौलादी साचा मानते थे और उन्हे हमारी शासन करने की योग्यता पर विश्वास न था। इसका कारण यह था कि उन्हे हम पर हुकूमत करना अच्छा लगता था। भारतीय सेना और जल-सेना को इसका सम्मानास्पद अपवाद कहा जा सकता है। ये अपने को राजनीति से अलग रखे हुए थी। इन सेनाओ मे अफसरो और सैनिको के बीच सच्चा भाईचारा था, क्योकि युद्ध मे दोनो को समान रूप से जीवन की बाजी लगानी पडती थी और वे सभी एक-दूसरे पर निर्भर करते थे।

व्यापारी हल्को मे निहित स्वार्थ भी उसी प्रणाली का अनुसरण करते थे। बैंक, बीमा और जहाजरानी के व्यवसायो पर अग्रेजो का अधिकार समझा जाता था। स्काटलेण्ड के कुछ खास परिवारो ने पटसन के व्यापार पर एकान्त अधिकार कर रखा था। बगाल के खेतो और हुगली मिल से लगा कर डडी पहुचने तक सारे व्यापार और धधे पर उन्हीका इजारा था। उन्होने बेशुमार धन कमाया था और वे यह आशा करते थे कि उनके बच्चे भी उन्हीके पद-चिन्हो का अनुसरण करेगे। बडे शहरो मे बडी-बडी मैनेजिंग एजेन्सी फर्मो का विकास हुआ और उनका जाल सारे भारत पर छा गया। इस वर्ग के प्राय सभी लोग शक्तिशाली विरोधी थे। वे ब्रिटिश प्रभुत्व के पक्के हिमायती प्रतीत होते थे। हा, इतना अवश्य है कि जब ब्रिटिश सरकार ने लार्ड माउन्ट-

वेटन को अपना अन्तिम वायसराय बना कर भारत भेजा और अपने भावी इरादों को साफ तौर से जाहिर कर दिया तो उन्होंने अपने विरोध का अंत यथासम्भव मृदुलता के साथ कर दिया। उन्होंने जल्दी ही दिखा दिया कि वे अपने को नये साचे मे ढाल लेने की क्षमता रखते है।

पर इन सविधा-भोगी क्षेत्रो मे भी सदा उल्लेखनीय अपवाद मौजूद रहे है। उदाहरण के लिए, इगलेण्ड मे लार्ड डरवी को मैंने न्यायप्रिय, पक्षपातशून्य और विल्कुल दम्भरहित व्यक्ति पाया, हालाकि प्रादेशिक आधार पर लकाशायर उनसे अधिक पक्षपात की आशा कर सकता था। हम भारतवासियो को याद है कि कांग्रेस की स्थापना अग्रेजो ने की थी, जिनमे कलकत्ते के स्काट व्यापारी एण्ड्र्यू यूल का स्थान प्रमुख था। भारतीय सिविल सर्विस के सर हेनरी काटन उन पुराने दिनो के मित्रो मे से थे। पत्रकार जगत मे रावर्ट नाइट का नाम आता है, जिन्होने १९ वी शताब्दी मे 'टाइम्स आव इडिया' की और बाद मे 'स्टेट्समैन' की स्थापना की। ये भी भारत के पक्के हिमायती थे। इसमे सन्देह नही कि और भी अनेक ज्ञात और अज्ञात सहानुभूति रखने वाले व्यक्ति मौजूद थे। जब बापू ने हमे उठा कर खडा किया, हमारे स्वाभिमान मे वृद्धि की और हमे अपने पावो पर खडे होना सिखाया तो इन मित्रो की सख्या मे खूब वृद्धि हुई। लायड जार्ज ने 'नरम हिन्दू' के विशेषण को जन्म दिया और इस नरमी ने कहावत का रूप धारण कर लिया। किन्तु जब अग्रेजो ने देखा कि नरमी की भी एक सीमा होती है तो वे लोग हमारा अपेक्षाकृत अधिक सम्मान करने लगे।

: २६ :

गतिरोध

गतिरोध का प्रारम्भ युद्ध के पहले हेमन्त मे काग्रेसी मन्त्रियो के त्यागपत्र से हुआ। पर इससे वायसराय और राष्ट्र-नेता के सबध तुरन्त ही नही टूट गये। दोनो मे सद्भावनापूर्ण पत्र-व्यवहार का सिलसिला जारी रहा, दोनो हृदय से ही कोई-न-कोई समझौता ढूंढ निकालने के लिए सचेष्ट रहे और बीच-बीच मे मिलते भी रहे। पर दोनो ओर सदेह की जड मजबूत होती गई। सन्देह से सन्देह पैदा होता है और किस पक्ष ने सदेह का प्रारम्भ किया, इसका निर्णय करना आसान काम नही है। उस सदेह का जन्म ब्रिटिश पार्लमेंट मे अथवा भारत के बाहर के अग्रेजो मे नही, स्वय भारत मे ही रहनेवाले अग्रेजो मे हुआ और इसका इतिहास पुराना है। वे लोग अपनी सुविधा-भोगी स्थिति की रक्षा करने के लिए हमेशा चौकन्ने रहते थे। वे व्यापारी होने के नाते राजनीति से अपने को अलग रखने का दिखावा करते थे और व्यवस्थापिका सभाओ तक मे महत्वपूर्ण विवादग्रस्त विषयो पर कोई खास पक्ष लेने से बचते थे, पर हमारी सख्या का भूत उन्हे बराबर सताता रहता था। उनकी कल्पना थी कि वे मुट्ठी भर होते हुए भी जो इस अभागे जन-समुदाय के बीच चैन की बसी बजा रहे है सो किसी मोहनी-मत्र के चमत्कार से ही। पर निर्धन जनता की जनसख्या जिस तेजी से बढ रही थी उससे यह साफ जाहिर था कि इन लाखो-करोडो का समूह अन्त मे अरबो का समूह बन जायेगा। इसमे सदेह नही कि इस जन-समुदाय के जीवन-स्तर को ऊचा उठाने की समस्या को अग्रेजो ने जन्म नही दिया था। अलबत्ता उन्होने

जाति को अवश्य जन्म दिया, और न यह समस्या अंग्रेजों के चले जाने से ही हल हो जाती। अवस्था विषम थी। जो गैर-सरकारी अंग्रेज आबादी साधारणतया इतनी मस्त दिखाई देती थी (भारतवासी इस मस्ती में हद दर्जे के छिछोरेपन के दर्शन करते थे, क्योंकि अभी भारतीय सामाजिक क्षेत्र में स्त्रियों ने पदार्पण नहीं किया था) उसीमें १८५७ के बाद से अचानक त्रास की लहर दौड़ जाती थी। जहां कोई अफवाह उड़ी कि बड़े दिन पर अथवा अमुक दिन गदर होनेवाला है कि सबके रोंगटे खड़े हुए और उन्होंने इस काल्पनिक भय से सशंकित होना शुरू किया कि सबको सोते-सोते मौत के घाट उतार दिया जायगा। वे अपने आपसे प्रश्न करते कि मोहनी का चमत्कार कबतक बना रहेगा?

दूसरी ओर हमें भारतवासी, जिनमें बापू भी शामिल थे, आवश्यकता से अधिक शंकाशील हो गये थे। अधिकांश भारतवासी अंग्रेजों को उन्हीं लोगों द्वारा जानते थे, जिनके सम्पर्क में आने का या जिनके साथ व्यवहार करने का उन्हें भारत में अवसर मिलता था। ये लोग अपने देशवासियों के अच्छे खासे और औसत दर्जे के नमूने होते थे और कुछ तो औसत से भी काफी ऊँची कोटि के होते थे, पर होते थे आवश्यकता से अधिक सुविधा-भोगी। फलतः उन्हें अपने बचाव की ही चिन्ता रहती थी। दुर्भाग्यवश अंग्रेजों के आने के पहले हमारे देश में पारस्परिक संदेहों और षड्यन्त्रों का अभाव था, और देश निरकुश राजाओं द्वारा शासित अनेक टुकड़ियों में बंटा हुआ था। ऐसी अवस्था में हममें से अधिकांश के लिए यह स्वाभाविक ही था कि वे अपने नये अंग्रेज प्रभुओं को संदेह की दृष्टि से देखते और उनके इरादों को बुरा समझते। आम जनता उन्हें निरकुश समझती थी। उसने लोकतंत्रीय संस्थाओं का नाम तक नहीं सुना था।

बापू स्वयं मूलतः इस नियम के आश्चर्यजनक अपवाद थे।

बचपन से ही, और युवावस्था मे भी, उन्हे शक्कीपन छू तक नही गया था। वस्तुत वह जन्मजात सत्यवादी थे। बचपन के उस लुकाव-छिपाव की जड मे भी, जिसका उन्होने अपने आत्म-चरित में इतनी सच्चाई के साथ उल्लेख किया है, उनका यह सरल विश्वास काम कर रहा था, कि जो साथी धूम्रपान और मद्यपान करने या नियम तोडने की सलाह देते है, सच ही कहते होगे कि इसमे कोई हानि नही है। इन प्रभावो से उनकी रक्षा स्वय उन्ही की स्नेहशील प्रकृति ने की। वह मातृ-भक्त थे और उन्होने महसूस किया कि वह बुरे ससर्ग मे रहेगे तो उनकी मा का दिल टूट जायगा।

यह युवक कानून का अध्ययन करने इग्लैण्ड गया, भारत वकालत करने लौटा और वकील की हैसियत से ही दक्षिण अफ्रीका गया, पर बराबर असाधारणतया स्पष्टवादी, निर्दोष और शकारहित बना रहा। वास्तव मे गाधीजी उस समय अग्रेज-भक्त थे। उन्होने अग्रेजो को उन्हीके देश मे अच्छी निगाह से देखना सीखा था और उनका विश्वास था कि उनके सम्पर्क से अन्त मे भारत मे भी वैसी ही लोकतन्त्रीय सस्थाओ का विस्तार हो सकेगा। इसलिए जब वह बोअर युद्ध के समय दक्षिण अफ्रीका मे थे तो उनकी सहानुभूति किस पक्ष के साथ है, इस बारे मे कभी कोई शक पैदा नही हुआ और हम यह मान कर चल सकते है कि उस दूरवर्तीकाल मे भी उनकी अन्तरात्मा ने उन्हे बता दिया होगा कि दक्षिण अफ्रीका मे उनके मुख्य विरोधी अग्रेज नही, बल्कि 'अफ्रीकान्डर' कहलाने वाले डच प्रवासी सिद्ध होगे, ठीक जिस प्रकार बाद मे ब्रिटेन मे उनका सब से कडा विरोध उपनिवेश प्रवासी अग्रेजो ने किया। किन्तु समय पर आशा पूरी न होने से दिल टूट जाता है। प्रत्येक अवसर पर अग्रेज-प्रवासियो ने (कुछ सम्मानास्पद अपवाद तो हमेशा ही रहे) स्वशासन की दिशा मे भारत की प्रगति का विरोध किया और वे सुधार की गति को मद बनाने मे इतने सफल हुए कि अत मे बापू को पूरा

सन्देह होने लगा। उन्होने प्रथम विश्व-युद्ध मे ब्रिटेन का समर्थन करना जारी रखा, पर फिर एक ऐसा मोड आया कि उसके बाद से सशयशीलता ने एक टेव का रूप धारण कर लिया। इस काया-पलट का श्रेय रोलेट कानून को है। यह काया-पलट जिस चीज को लेकर हुआ उसे ध्यान मे रखा जाय तो ऐसा प्रतीत होगा मानो बापू ने भारतीय राष्ट्रीयता की दीर्घकालीन वकालत के दौरान मे अग्रेजो की उन विशेषताओ को भुला दिया था, जिनसे वह काफी परिचित हो चुके थे। सरकार ने रौलट कानून के द्वारा सभावित सकटकालीन अवस्था का सामना करने के लिए ही विशेषाधिकार अपने हाथ मे लिये थे। उनका एक बार भी उपयोग नही किया गया और आज स्वतन्त्र भारत की सरकार उन सब अधिकारो को अपने हाथो मे रखना आवश्यक समझती है और उसे साम्यवादियो के खिलाफ उनका उपयोग भी करना पडा है।

इस समय वायसराय के साथ अपनी बातचीत के दौरान मे बापू ने औपनिवेशिक स्वराज्य शब्द पर घोर आपत्ति की। आगे के वर्णन मे उनके विचारो पर प्रकाश पडेगा। १२ जनवरी १९४० को मैंने महादेवभाई को लिखा

मैं नही जानता कि हम औपनिवेशिक दर्जे (डोमिनियन स्टेटस) और स्वतन्त्रता मे अनावश्यक भेद क्यो पैदा करना चाहते है। हम ब्रिटेन से सम्बन्ध तोडना भी चाहेगे तो वेस्टमिन्स्टर विधान के नमूने का औपनिवेशिक दर्जा प्राप्त करने के बाद भी ऐसा कर सकते है। हम ब्रिटेन से क्यो कहे कि वह हमसे नाता तोड दे? हम नाता तोडना चाहेगे तो, जब हमे ऐसा करने की आजादी मिल जायगी उस समय, उसकी जिम्मेदारी हम खुद अपने ऊपर ले सकते है। यदि हम वैसी अवस्था मे सबध तोडेगे तो मत-दाताओ की पूर्ण सहमति के साथ ही ऐसा करेगे। राष्ट्रमडल से हमे अलग करने के लिए ब्रिटेन से कहने का यह अर्थ होता है कि हम ब्रिटेन से कुछ ऐसा काम करने को कहते है जिसे करने का अधिकार हमारे मतदाताओ को होना चाहिए। वास्तव मे ब्रिटेन ठीक ही यह कह सकता है, "हम जिम्मेदारी क्यो ले? जब आपको औपनिवेशिक दर्जा मिल जाय तो आप

चाहे तो सबंध तोड सकते है।" और मेरी समझ मे उनका ऐसा करना बिलकुल तर्कसगत होगा।

और १४ ता० को बापू ने वायसराय को लिखा

मैने आपका बम्बई का भाषण एक से अधिक बार पढा। पर यह पत्र मै आपके सामने अपनी कठिनाइया रखने के लिए लिख रहा हू। वेस्ट-मिन्स्टर विधान के अर्थ मे औपनिवेशिक दर्जे और स्वतन्त्रता को पर्यायवाची माना जाता है। यदि यही बात है तो आप ऐसे वाक्य का प्रयोग क्यो न करे जो भारत की स्थिति के अनुरूप हो?

१५ ता० को महादेवभाई ने मुझे लिखा

आपने इगलैंड के लिए भारत की स्वतत्रता की घोषणा करना सम्भव न होने की जो बात कही है एव और जो कुछ कहा है उसे मै तो समझ गया, पर बापू का विचार भिन्न है। परन्तु यदि सबकुछ ठीक-ठीक रहे और केवल इसी बात पर मामला अटकता हो तो बापू पुनर्विचार करेगे, हालाकि उनका यह दृढ विश्वास है कि वायसराय उनके दृष्टिकोण को और किसी भी व्यक्ति की अपेक्षा ज्यादा अच्छी तरह समझते हैं। वास्तव में बापू का कहना तो यह है कि यदि वह (अर्थात् बापू) इगलैंड मे हो तो वह इगलैंड को औप-निवेशिक दर्जे के बजाय स्वतत्रता शब्द का प्रयोग करने को आसानी से राजी कर सकेगे।

कभी-कभी बापू के बदलते हुए मानस से महादेवभाई के धीरज की कडी परीक्षा हो जाती थी। यदाकदा वह अपना धैर्य खो बैठते थे जैसा कि उनकी इस उक्ति से पता चलता है कि सेवाग्राम तो एक 'पागलखाना' बन गया है।

सेगाव, मध्य प्रदेश
२७ १ ४०

प्रिय घनश्यामदासजी

बापू भी विचित्र हैं। उनका विश्वास है कि दिल्ली उन्हे एक या दो दिन से ज्यादा नही ठहरना पडेगा—यह हुआ निराशावाद। परन्तु साथ ही वह यह भी कहते है कि यदि औरो को भी बुलाया गया तो ज्यादा

दिन भी ठहरना हो सकता है, और यह जागावार है। फिर वह कहते हैं कि यदि १० ता० तक ठहरना पड़ा तो १० ता० को हरिजन सेवक संघ की बैठक बुलाई जा सकती है। ज्यादा अच्छा होता कि बैठक के लिए ७ या ८ ता० की घोषणा कर दी जाती। बापू का मन तो यहां अस्पताल में रमा हुआ है। गुजराती 'हरिजनबन्धु' में बापू का एक लेख छपा है 'गुजरातियों से'। उसे अवश्य पढ़िएगा। सेगांव का नाम बदल कर सेवा-ग्राम रखा जा रहा है। सरकारी कागजों में यह नाम दर्ज कराने के लिए अर्जी दे दी गई है। नाम तो बदल ही जायगा, पर अच्छा होता कि उसका नाम 'पागलखाना' रख दिया जाता।

आपका
महादेव

बापू ने उसी दिन मुझे एक तार भेजा, जिससे उनकी अस्थिरता प्रकट होती थी। मैं भी आश्चर्य करता रह गया कि मुझे यहां रहना है, वहां जाना है, या क्या करना है।

पूर्व घोषणा के अनुसार हरिजन सेवक संघ की बैठक यहां होगी या ६ तारीख से वहां होगी। विशिष्ट कार्य पूरा होने के बाद मेरे वहां ठहरने की आशा मत करना। या फिर मलिकन्दा के बाद वर्धा के लिए कोई तारीख निश्चित कर लेना।

उन दिनों शांति करानेवालों का मार्ग कांटों से ढका हुआ था। महादेवभाई के एक और पत्र से पता चलता है कि बापू को अपने कुछ मित्रों का लिहाज न होता तो वह समझौते की दिशा में ज्यादा आगे बढ़ पाते।

आपको यह जानकर दिलचस्पी होगी कि जिस समय आपने फोन पर मुझे जफरुल्ला के साथ हुई अपनी बातचीत का हाल सुनाया था, उसी समय मैंने जिन्ना पर एक लेख पूरा करके बापू के सामने रखा था। मैंने इस लेख का आपसे जिक्र नहीं किया, क्योंकि मुझे यह भरोसा नहीं था कि बापू उसे छापने की स्वीकृति दे देंगे। पर बापू की स्वीकृति मिल गई और वह इस सप्ताह के 'हरिजन' में छपने भी चला गया। एक और लेख है जिसे आप पसन्द करेंगे। हां, उसका सर्वोत्कृष्ट भाग बापू ने काट दिया कि कहीं

जवाहर को बुरा न लगे। मैंने लेख में आयर्लैंड के इतिहास का एक पन्ना दिया था, और वैधानिक प्रश्न सम्बन्धी तथ्यों का सार देने के बाद ग्रिफिथ का यह उद्धरण दिया था

"हमने आयरिश प्रजातन्त्र की स्थापना की शपथ ली है, पर जैसा कि प्रेसिडेन्ट डि वेलेरा ने कहा है, इस शपथ का मतलब यह है कि हमने आयर्लैंड का यथाशक्ति अधिक-से-अधिक हित करने का बन्धन स्वीकार किया है। हम भी उस शपथ से यही समझते हैं। हमने आयर्लैंड का अपनी शक्ति भर अधिक-से-अधिक हित किया है। यदि आयर्लैंड के लोग कहें कि हमें और तो सबकुछ मिल गया, केवल प्रजातन्त्र का नाम नहीं मिला और हम उसके लिए लड़ेंगे, तो मैं उनसे कहूंगा कि तुम मूर्ख हो।"

मैंने इस वाक्य को इस टीका के साथ उद्धृत किया था

"ये शब्द हमारे कुछ अतिउत्साही व्यक्तियों के लिए भी थोड़ी चेतावनी देने वाले हैं।" बापू ने इसको काट दिया। मैंने बापू से पूछा "क्या आप ग्रिफिथ से सहमत नहीं हैं?" उन्होंने कहा, "हां, किन्तु यह कहना उचित नहीं होगा।"

इस दफा वायसराय के साथ बापू की बातचीत का कोई नतीजा नहीं निकला। सर जगदीश प्रसाद ने मुझे बताया कि लार्ड लिनलिथगो ने बापू को अनुकूल नहीं पाया।

८ फरवरी, १९४०

प्रिय महादेवभाई

बापू के रवाना होने के बाद मुझे एक विश्वस्त सूत्र से ज्ञात हुआ कि बापू वायसराय के मन पर मित्रतापूर्ण असर नहीं छोड़ गये। धारणा थी कि बापू बहुत कड़े, समझौते के लिए अनिच्छुक और प्रतिकूल रहे। यह आशा की गई थी कि बापू एक-एक करके ठोस बातों को लेकर समझौते की कोशिश करेंगे। वायसराय ने सेना और नरेशों की चर्चा चलाने की कोशिश की। वह चाहते थे कि बापू इन लोगों से मिलें और वायसराय की मदद से समस्याओं को हल करें। वायसराय ने अनुकूल प्रतिक्रिया की आशा की थी, और उन्हें यह देख कर निराशा हुई कि बापू ने, जो खाई नजर आती है उसे पाटने की कोशिश नहीं की।

इससे यही स्वाभाविक निष्कर्ष निकाला गया कि बापू वामपंथियों से प्रभावित हैं और 'लड़ाई' के लिए उतारू हैं। वायसराय ने यह भी आशा की थी कि यदि बापू ने अनुरोध किया जायगा तो वह और अधिक मुलाकातों

के लिए ठहर जायंगे और बातचीत को खत्म करने के मामले में जल्दबाजी से काम नहीं लेंगे। चूंकि उन्होंने बेहद जल्दी की, इसलिए सरकारी पक्ष की धारणा है कि बापू शिकायत लेकर लौटे हैं और इसका नतीजा सविनय अवज्ञा आन्दोलन ही होगा।

बापू की यह धारणा ठीक नहीं थी कि वायसराय उनकी स्थिति को समझते हैं और दोनों के बीच कोई गलतफहमी नहीं है। वायसराय को बापू के रवैये से सचमुच निराशा हुई है। देवदास और मैं, दोनों वायसराय की भावना से सहमत हैं, क्योंकि हमारी भी यही धारणा है कि बापू का रुख अनुकूल और सहायतापूर्ण नहीं था।

परन्तु जब मैंने सर जगदीश से यह बात सुनी तो उनसे कहा कि वह वायसराय और लेथवेट के दिल से यह खयाल दूर करने की कोशिश करें कि बापू कोई शिकायत या निराशा लेकर लौटे हैं और सविनय अवज्ञा आन्दोलन शुरू होने वाला है। सर जगदीश ने लेथवेट को सूचित किया और लेथवेट ने मुझसे मिलने की इच्छा प्रकट की। मैं लेथवेट से आज सुबह मिला और अब स्थिति स्पष्ट हो गई है।

मैंने लेथवेट को आमतौर पर बताया कि बापू के साथ मेरी क्या बात हुई है और कहा कि बापू का लक्ष्य कोई राजनैतिक समझौते का नहीं है। वह तो नैतिक परिवर्तन चाहते हैं। कोरे राजनैतिक समझौते की वही दुर्गति हो सकती है जो राजकोट-निर्णय की हुई।

मेरी बातचीत के बाद लेथवेट की प्रसन्नता लौट आई और उन्होंने कहा कि जो पृष्ठभूमि मैंने उन्हें बताई उससे वह सारी स्थिति को समझ गये हैं और उनके दिल में निराशा का भाव बाकी नहीं रह गया है। उन्होंने मुझसे पूछा कि क्या मेरे पास कोई रचनात्मक सुझाव है। मुझे स्वीकार करना पड़ा कि नहीं है। शायद तुम मुझे बता सको कि क्या कोई सुझाव दिया जा सकता है। सामान्य विचार तो ठीक हैं, पर तुम्हें उन्हें व्यावहारिक रूप देना है, और मेरी राय में समय आ गया है, या रामगढ़ कांग्रेस के बाद आ जायगा, जब हमें अपने विचारों को ठोस रूप देने की चेष्टा करनी होगी। यदि हम सचमुच निकट भविष्य में समझौता चाहते हैं तो हमें प्रश्न के दोनों पहलुओं पर विचार करना होगा। नैतिक परिवर्तन भी तभी संभव होगा, जब हम विपक्षी की कठिनाइयों को समझेंगे और उसका हाथ बटाने की चेष्टा करेंगे।

सस्नेह,

तुम्हारा ही
घनश्यामदास

पर बापू की कलम से लिखे गए एक लेख ने मेरी शकाओ का समाधान कर दिया और मैने जो कुछ लिखा था, उसे अगले दिन वापस ले लिया

प्रिय महादेवभाई

मुझे 'हरिजन सेवक' का वह लेख पहले ही मिल गया, जो तुमने मुझे सीधे भेजा था। बापू एक नाजुक स्थिति को जिस खूबी के साथ सम्हाल लेते है देखकर चकित रह जाना पडता है। लेख सचमुच अद्भुत है। मैने अपने कल के पत्र में बापू की आलोचना करके गलती की कि उन्होने विपक्षी की कठिनाई को ध्यान में नही रखा। लेख से जाहिर है कि उन्होने विपक्षी की कठिनाई का लिहाज किया है। लोग कभी-कभी यह भूल जाते है कि बापू किस नैतिक स्तर पर रहते हुए काम करते है। स्वतन्त्रता की लगन और अपनी कमजोरियो के ज्ञान ने हमारी दृष्टि को साधनो की अपेक्षा साध्य पर अधिक केन्द्रित कर रखा है, पर बापू के लिए साधन और साध्य दोनो एक समान है। मै यह बात हृदयगम करने की चेष्टा करूगा कि यदि हम साधनो की चिन्ता रखेगे तो साध्य अपने आप सिद्ध हो जायगा। मुझे तो व्यावहारिक दृष्टि से भी इस बात में सशय की गुजायश नही दिखाई देती है कि ब्रिटेन का वास्तविक हृदय परिवर्तन हुए बिना औपनिवेशिक दर्जे वाला नुस्खा ग्वायर-निर्णय जैसा ही सिद्ध हो सकता है। मेरा खयाल है कि परिवर्तन के लिए हृदय प्रस्तुत हो चुका है। परमात्मा करे, भारत और इगलैड सहृदयता और मित्रता के निर्माण-कार्य में एक-दूसरे से होड लेने लगे। इसलिए धीरज से काम लेने और प्रतीक्षा करने में ही भलाई है।

सस्नेह,

तुम्हारा ही
घनश्यामदास

७ मार्च को मैने कलकत्ते से एक पत्र लिखा, जिसमे अपने मन की बात कह डाली

प्रिय महादेवभाई

तुमने बापू के लेख की जो अग्रिम प्रति बजरग को भेजी थी, उसे मैने पढ लिया है। बापू ने इस लेख मे अपने विचारो को आवश्यकता

से भी अधिक स्पष्टता के साथ खोलकर रख दिया है, अत उनके मन की गतिविधि को कोई भी बडे आकार मे देख सकता है। मैं इस लेख को इसलिए भी पसन्द करता हू कि वह सविनय अवज्ञा की सभावना को सर्वथा समाप्त कर देता है। तुम जानते ही हो कि मुझे सविनय अवज्ञा से अरुचि है। उसने अहिंसा के नाम पर हिंसा को प्रोत्साहन दिया है और निर्माण के नाम पर अनेक पदार्थ नष्ट कर डाले है। हा, उसके द्वारा देश में आश्चर्यजनक जागृति अवश्य हुई है। पर यदि यह मनोवृत्ति बनी रही तो किसी भी सरकार का, हमारी अपनी सरकार का भी, चलना असभव हो जायगा। सत्याग्रही रगरूटो की कमी नही है। वे हमारी ही सरकार के खिलाफ उठ खडे होगे और आतकवाद और भ्रष्टाचार के द्वारा सुव्यवस्थित शासनकार्य असम्भव बना देंगे। मैं मानता हू कि अवज्ञा आन्दोलन का डक उसी समय टूट जाता है जब अहिंसा को उसका आधार मान लिया जाता है। पर क्या वास्तव मे वह अहिंसात्मक रह पाता है? बापू मन, वचन और कर्म मे अहिंसा पर जोर देते है। पर मुझे खेद के साथ लिखना पडता है कि बापू के निकटतम साथी भी इस भावना को नही अपना सके है, और कार्य विचार का प्रतिबिम्ब मात्र है ही। इसीलिए सविनय अवज्ञा की चर्चा चलते ही मेरा माथा ठनकने लगता है। अशत इन्ही विचारो के कारण मैंने इस लेख को पसन्द किया। साथ ही, मुझे बापू के लेख का अन्तिम पैरा भाया। मैं मानता हू कि काग्रेस के साथ बापू की पटरी नही बैठ सकती। उनका अनुचित लाभ उठाया जा रहा है, क्योकि लोग जानते है कि वही देशव्यापी सविनय अवज्ञा आन्दोलन का सफल नेतृत्व कर सकते है। पर एक ओर लोग बापू की मदद चाहते है और दूसरी ओर उनके कार्यक्रम को कभी पूरा नहीं करते। उनमे ऐसा करने की इच्छा तक का अभाव प्रतीत होता है। शायद सच्ची बात तो यह है कि अहिंसा मे किसी की आस्था नही है। राजनैतिक हलको मे हर कोई अहिंसात्मक सघर्ष नही, उथल-पुथल चाहता है। मै अपने बारे मे कह सकता हू कि अहिंसा में मेरी बौद्धिक आस्था है। पर इससे तो कुछ अधिक सहायता नही मिली। बापू एक मध्यस्थ की हैसियत से अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकते है। अपने आपको काग्रेस के साथ मिलाकर उन्होने अपने और वामपक्षियो के बीच का अन्तर मिटा दिया है। अहिंसा और हिंसा एक प्रकार से पर्यायवाची बन गये है। मेरे खयाल से यह अत्यन्त विषम स्थिति है और कभी-कभी तो मुझे इस पर बडी ऊब पैदा होती है।

चाहो तो मेरा यह पत्र बापूको दिखा सकते हो। यदि बापू अकेले ही रहे तो उनकी अहिंसा की सफलता की सभावना अधिक रहेगी। कैसे

मजे की बात है कि कांग्रेस अधिकारी न होते हुए भी अहिंसा व्रत का प्रतिनिधित्व करने की चेष्टा करती है।

सस्नेह,

तुम्हारा ही
घनश्यामदास

उत्तर मे महादेवभाई ने लिखा

सेगाव, वर्धा
मध्य प्रदेश
११ ३ ४०

प्रिय घनश्यामदासजी

आपका लम्बा पत्र मिला। आपने जो कुछ लिखा है, उसको मै समझता हूँ। मैने आपका पत्र बापू के सामने रखा था। उन्होने पढा, पर मै उनकी प्रतिक्रिया नही जान सका, क्योकि उनका मौन था। आप सविनय अवज्ञा आन्दोलन के बारे मे जो कुछ कहते है, उसे यदि सच मान लिया जाय और इस बारे मे आपके विचार आर्थर मूर के विचारो से बहुत-कुछ मिलते है—तो क्या आप यह कहना चाहते है कि सविनय अवज्ञा मे, चाहे वह कितनी ही अपर्याप्त क्यो न हो, हिंसा ज्यादा अच्छी रहेगी? मेरा विचार भिन्न है। मानव प्रकृति की सारी कमजोरियो के बावजूद, उसके पास कोई ऐसा माध्यम तो होना ही चाहिए जिसके द्वारा वह अपना विरोध प्रकट कर सके, और यदि आप पददलित मानवता को सविनय अवज्ञा के अस्त्र से भी वचित कर देते है तो आप उसका सर्वस्व छीन लेते है और उसे खालिस कायरता की शरण मे भेज देते है। मै काफी कठोर भाषा का व्यवहार कर रहा हू, पर यही मेरा आन्तरिक विश्वास है। मेरा तो विश्वास है कि हम नेकनीयती के साथ की गई भूल से सत्य की ओर, एव सत्य से सत्य की ओर अग्रसर होगे। मैने 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के कांग्रेस अक के लिए कल एक लम्बा लेख लिखा है। देवदास या आप उसे पसन्द करेंगे या नही, सो तो मै नही जानता, पर यदि देवदास उसे प्रकाशित करें तो मै चाहता हू कि आप उसे पढे अवश्य।

बापू आपके पत्र के सम्बन्ध में कुछ कहेगे तो मै आपको लिख दूगा। क्या आप बजरगलालजी को यह बताने की कृपा करेंगे कि एन्ड्रयूज के बारे मे उन्होने जो विस्तृत पत्र भेजा है, उसके लिए मै उनका बडा आभारी

है? मैंने वह पत्र बापू को दिखाया था और इस बारे में बापू के विचार आपको कल लिखूंगा।

सप्रेम,

आपका ही
महादेव

कलकत्ता, १५ मार्च १९४०

प्रिय महादेवभाई

तुमने मेरे पत्र का यह अर्थ क्यों लगाया कि उसमें सविनय अवज्ञा से, चाहे वह कितनी ही अपर्याप्त क्यों न हो, हिंसा को अच्छा बताया गया है? मैं तुमसे इस बारे में सहमत हूं कि मानव प्रकृति के पास अपना विरोध प्रकट करने के लिए कोई माध्यम होना चाहिए और इसके लिए सविनय अवज्ञा, चाहे वह थोड़ी अविनयपूर्ण ही हो, तो भी अहिंसा से अच्छी है। अपने विशुद्धरूप में सत्याग्रह निस्सन्देह ही सम्मानपूर्ण समझौते के मार्गों को पूरी तरह खोज किये बिना हमारे विरोध की इच्छा को व्यक्त करता है। कभी-कभी मैं अनुभव करता हूं कि हम लोग अपने कार्यक्रम के संघर्ष वाले अंग पर जरूरत से ज्यादा जोर देते हैं और समझा-बुझा कर समझौते पर पहुंचने के मार्ग की उपेक्षा करते हैं। हमने अपनी मांगों को इतना बढ़ा-चढ़ा लिया है कि अंग्रेजों के लिए किसी सम्मानपूर्ण समझौते पर पहुंच सकना असंभव हो गया है। बस, मेरी शिकायत यही है। कांग्रेस कार्य-समिति में भी ऐसे लोग हैं जो मेरी ही तरह अनुभव करते हैं, पर बापू की उपस्थिति में मैं, और शायद और भी कई लोग, एक प्रकार के आशावादी आत्मविश्वास की अनुभूति करते हैं। लेकिन मैं अपने सम्बन्ध में कह सकता हूं कि जब मैं उनके सामने नहीं होता हूं और स्थिति पर ठंडे दिल से विचार करने लगता हूं तो मेरा वह आत्मविश्वास गायब हो जाता है। मैं सोचता हूं कि यह तो हृदय के वशीभूत होना और मस्तिष्क की उपेक्षा करना हुआ, पर यह ईश्वर ही जानता होगा कि दोनों में से कौन अधिक मूर्ख है हृदय या मस्तिष्क। पर हमारी वर्तमान नीति के औचित्य के बारे में शंकायें मेरा पीछा नहीं छोड़ती। हम एक नाजुक समय में से गुजर रहे हैं, इसीलिए मैंने सोचा कि मुझे अपनी शंकाएं बापू के सामने रख देनी चाहिए। अत-एव मैंने अपने विचारों को लिख डाला और एक प्रति तुम्हारे पास भेज दी—अब उसका जो भी मूल्य हो। जब मैं अपने हृदय से परामर्श करता हूं तो अनुभूति होती है कि अन्त में बापू की ही जीत होगी, क्योंकि बापू गलतियां करेंगे तो भी उतनी नहीं, जितनी और लोग। भगवान उनका पथ-प्रदर्शन

करे। पर यह तो हुई श्रद्धा की बात। जब मैं अपने मस्तिष्क से परामर्श करता हूं और थोड़ा 'बुद्धि-संगत' विचार करता हूं तो मैं इसके अलावा और किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुंचता कि हमने ताश के पत्ते ठीक तरह से नहीं चले।

किन्तु तुम मुझे लेकर अपना समय व्यर्थ क्यों खोते हो। और यदि ऐसा करना ही हो तो केवल मुझे शिक्षा देने के लिए करो। पर मैं अच्छा-बुरा जो भी लिखूं उसे कम-से-कम बापू को अवश्य दिखा दिया करो। बापू ने मुझसे अनेक बार कहा है, "अपना प्रभाव डालते रहा करो, प्रकट में सफलता मिलती दिखाई न दे तो भी सम्भव है, अचेतनरूप में प्रभाव पड़ जाय।" इसीलिए मैं अपने विचारों को तुम्हारे पास भेजता रहता हूं। इसमें मुझे कुछ मानसिक शान्ति मिलती है।

सस्नेह,

तुम्हारा ही
घनश्यामदास

प्रिय घनश्यामदास

मैंने तुम्हारा पत्र और नोट दोनों पढ़ लिये है। मैं भी तुम्हारी वेदना का भागीदार हूं। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि यही वह समय है जब हम तिल-मात्र से भी कम पर सन्तुष्ट नहीं हो सकते। मुझे तो अपनी योजना में कोई दोष दिखाई नहीं देता है। इसके विपरीत इसमें उनका भी भला है। वे हमारी मांग को स्वीकार नहीं करते, इससे यही जाहिर होता है कि वे हिन्दुस्तान की स्वतंत्रता नहीं चाहते। राजाओं का रुख तो एकदम असहनीय रहा है। तुमसे किसने कहा कि मैं उनसे नहीं मिलना चाहता? उनके संकेत भर की देर है, मैं उनसे अवश्य मिलूंगा। असली बात तो यह है कि वे खुद ही मुझसे मिलना नहीं चाहते।

बापू के आशीर्वाद

पुनश्च —तुम चाहो तो मैं सेवा सदन के लिए कलकत्ता आने को तैयार हूं।

सेगांव, वर्धा
१७-३-४०

प्रिय घनश्यामदासजी

मैंने आपके सारे पत्र बापू को पढ़वा दिये। मैंने यह कभी नहीं समझा कि आप केवल विचार-विनिमय की खातिर ही लम्बे पत्र लिखते हैं। मैंने तो हमेशा यही माना है कि मुझे पत्र लिखकर आप अप्रत्यक्ष रूप से

कुछ बातें बापू तक पहुंचा सकते हैं। यही कारण है कि मैं आपके सब पत्र बापू के सामने रख देता हूं।

मैंने यह कभी नहीं समझा कि आप अधूरे असहयोग से हिंसा को अच्छा समझते हैं। मैंने तो यह लिखा था कि आपकी स्थिति सूर के दृष्टिकोण से बहुत कुछ मेल खाती है और जहां तक सूर का संबंध है, वह हिंसा को पसन्द करते हैं। असल में पीडित मानवता को एक आदर्श माध्यम की आवश्यकता है। बापू ने इस माध्यम को पसन्द किया है, और वह उसे सहज अवस्थाओं के द्वारा पूर्ण बनाने की चेष्टा कर रहे हैं। या तो वह इस प्रयास में समाप्त हो जायंगे या यह माध्यम पूर्ण बन कर ही रहेगा।

बापू ने अपने जीवन में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कदम उठाने का निश्चय किया है। यह पत्र मिलने के पहले ही शायद आपको उसका पता चल जायगा। आप बापू को कलकत्ता नहीं बुला रहे हों तो मैं आपको विस्तृत विवरण देने एक दिन के लिए कलकत्ता आ सकता हूं।

आपका
महादेव

: २७ :

राजकोट-प्रकरण

राजकोट वाला प्रकरण भारत के लिए इतना सुपरिचित है कि उसका वर्णन करने की चेष्टा करना अनावश्यक होगा। बापू का इतिहास-प्रसिद्ध अनशन, लार्ड लिनलिथिगो का सहानुभूति पूर्ण रुख, उनके द्वारा इस मामले का निर्णय भारत के प्रधान न्यायाधीश सर मारिस ग्वायर के सिपुर्द किया जाना, और प्रधान न्यायाधीश के द्वारा बापू के पक्ष मे निर्णय किया जाना—ये सब बाते भूली नही है। न ऐसी कहानी सुनाने मे आनन्द ही आयगा, जिसमे सरदार पटेल, बापू, वास्तव मे हम सभी राजकोट के ठाकुर-साहब जैसे कमजोर और अज्ञानी नरेश और उनके वीरावाला जेसे कौशल्यप्रिय, षडयत्री दीवान का पक्ष लेने और ठाकुर की मत्रणा परिषद के प्रधान सर पैट्रिक जैसे निर्दोष व्यक्ति को तथा वहा के पोलिटिकल एजेन्ट श्री गिब्सन को शरारत के पुतले समझने के चकमे मे आ गये थे। यह भूल साधारण नही थी। इसका पता सरदार पटेल को तब लगा जब वीरावाला को दुरगी चाल चलते पकडा गया। बापू ने इसकी चर्चा 'हरिजन' मे भी की थी। इस भूल का बापू के परिवार के इतिहास के साथ बिल्कुल सम्बन्ध ही न हो, शायद ऐसी बात न थी। उनके पुरखे पीढियो से काठियावाड (अब सौराष्ट्र) की रियासतो के दीवान होते आये थे और उनके प्रति उन्हे ममता-सी थी। वास्तव मे बापू तो साधारणतया वहा के नरेशो के प्रति बडा आदर-भाव दिखाते थे।

किन्तु एक आनन्ददायक पहलू भी था और मै उसी का जिक्र करना चाहता हू। जब बापू और गिब्सन के बीच सपर्क

स्थापित हुआ तो बापू को यह देखकर शायद आश्चर्य हुआ होगा कि पोलिटिकल एजेन्ट कोई सीग, खुर और पूछवाला जीव न होकर एक मौजी भावना वाला साधारण मनुष्य है।

एक समय वातावरण मे कितनी उष्णता आ गई थी, यह मेरे मकान पर वायसराय के सेक्रेटरी श्री लेथवेट के साथ हुई मुलाकात के महादेवभाई द्वारा प्रस्तुत विवरण से प्रकट होगा

५, फरवरी १९३९

श्री लेथवेट ५ बजे शाम चाय पर आये। करीब दो घंटे ठहरे। चर्चा चाय, फूलो, गायो और पशु-प्रदर्शनियो से आरम्भ हुई (बीच मे हमारे वायसराय भवन जाने का भी जिक्र आया और श्री लेथवेट ने बापू के खिल-खिलाकर हसने का खास तौर से जिक्र किया) और बा की गिरफ्तारी के प्रसग पर आ गई।

"वे सब तो बडे आराम मे होगी?" श्री लेथवेट ने कहा। "हा", मैने कहा, "पर उन्हे यह सोचकर वडी परेशानी हो रही होगी कि उन दूसरो की क्या अवस्था होगी जिनके साथ दूसरे ढग का व्यवहार किया जा रहा है?" और मैने एक परेशान करने वाली खबर सुनाई जो मुझे आज सुबह ही मिली थी। आठ स्वयसेवको को राज्य के भीतरी भाग मे ले जाया गया, मारा-पीटा गया और उनसे माफीनामे पर हस्ताक्षर करने को कहा गया। जब उन्होने ऐसा करने से इन्कार किया तो उन पर और मार पडी और उनमे से एक को कमरे मे वद कर दिया गया जहा उसे थोडी-थोडी देर के बाद बिजली छुआकर कई घटों तक सताया गया। मैने कहा, "मै मानता हू कि सारी बात पर विश्वास करना कठिन है, इसमे कुछ अतिरजन भी हो सकता है, पर सारा-का-सारा किस्सा ही कैसे गढा जा सकता है?" मैने बात नापतोलकर कही, सो श्री लेथवेट ने सराहा। उन्होने मारपीट के सबध मे अपनी अनभिज्ञता प्रकट की। मैने यह भी कहा कि पिछला आन्दोलन तीन महीने चला, पर उसके दौरान मे ऐसी बाते सुनने मे नही आई। इस पर तारीफ की बात यह है कि जहा एक ओर ये सब काण्ड हो रहे है, वहा दूसरी ओर जनता पूर्ण अहिसा का आचरण कर रही है, उसकी ओर से अगुली तक नही उठाई गई है।

इस पर श्री लेथवेट ने विस्तार के साथ बताया कि किस प्रकार अलग-अलग रियासतो की परिस्थितिया अलग-अलग है, किस प्रकार उनमे युगो से व्यक्तिगत शासन की परम्पराए चली आरही है ओर किस प्रकार

वहा लोकतत्रीय शासन-प्रणाली का विकास होने में देर लगना अनिवार्य है। मैंने बटलर कमेटी की रिपोर्ट का उल्लेख किया, जिसमें कहा गया था कि जहा उत्तरदायी शासन की माग व्यापक हो, वहा सार्वभौम सत्ता को उस माग को सतुष्ट करने के लिए सुझाव पेश करने मे मदद देनी होगी, बशर्ते कि उस माग मे राजा को हटाने की बात का समावेश न हो। "यह तो दस वर्ष पुरानी बात है", श्री लेथवेट ने कहा, "और मुझे यकीन है कि यदि वह रिपोर्ट आज लिखी जाती तो कमेटी को अपनी भाषा बदलनी पडती और उसे उत्तरदायी शासन की भी व्याख्या करनी पडती।" "यह परिवर्तन तो हमारे ही हित में होता।" मैंने कहा और हम सब हँस पडे।

इस अवसर पर घनश्यामदासजी ने राजकोट का प्रश्न छेडा और कहा कि क्या इस दु खद काण्ड का तुरन्त अन्त नही किया जा सकता है? श्री लेथवेट ने राजकोट पर 'हरिजन' के लेख और बापू की अति उग्र भाषा का जिक्र किया। मैं बोला, "इस बारे मे दो-तीन बातो को ध्यान में रखना होगा। आपको यह याद रखना चाहिए कि उनके पास नित्य ही राजकोट की घटनाओ के समाचार पहुचते रहते है। ये समाचार कैसे होते हैं, इसका एक उदाहरण मै दे ही चुका हू। बापू इन समाचारो को कुछ घटा कर ही ग्रहण करते हैं, पर वह यह नहीं मान सकते कि जो कुछ कहा जा रहा है, उसका कोई आधार ही नही है। और यदि इन कहानियो में सच्चाई का पुट काफी हो तो मै नही जानता कि और कैसी भाषा का व्यवहार किया जा सकता था। फिर, यह भी नही भुलाया जाना चाहिए कि इन लेखो में भी, चाहे उनकी भाषा कितनी ही कडी क्यो न रही हो, अन्त में वायसराय के नाम अपील ही रहती है। गाधीजी दो वर्ष पहले ऐसा करने के अभ्यस्त नही थे।"

घनश्यामदासजी ने लेख के उस वाक्य का खासतौर मे हवाला दिया जिसमें काग्रेस को ब्रिटिश सरकार का मित्र बताया गया था और जिसके द्वारा बापू की ब्रिटिश सरकार का सहयोग प्राप्त करने की उत्सुकता प्रकट होती थी। "किन्तु बापू को इसका उलटा ही मिल रहा है और इससे उनका खीझना स्वाभाविक ही है।"

मैंने एक तीसरी बात बताई। मैंने कहा, "वह लेख एक सप्ताह पहले लिखा गया था। इस बीच आपकी ओर से यह विज्ञप्ति प्रकाशित हुई, जिसमें सरकार और ठाकुरसाहब की स्थिति का स्पष्टीकरण करने की चेष्टा की गई है। उसके उत्तर मे गाधीजी ऐसा वक्तव्य देते है जिसे मैं शान्ति का सकेत कह सकता हू। उसमें उन्होंने यह निश्चित रूप से कहा है कि यदि प्रश्न केवल व्यक्तियो का हो तो वह सरदार को ठाकुरसाहब के साथ मिल-बैठने को राजी कर सकते है।

पर श्री लेथवेट ने कहा, "जनता के सामने तो घटनाओं का यह टाइम टेवल है नहीं। जनता शनिवार को गांधीजी का वक्तव्य पढती है और रविवार को उनका लेख। स्टेट्समैन का लेख देखिये न। उसके कथन में बहुत-कुछ तथ्य है और वायसराय को इस पर सचमुच आश्चर्य होता है कि एक ओर तो गांधीजी के पत्रों की भाषा अत्यन्त मैत्रीपूर्ण होती है और दूसरी ओर उनके लेख ऐसी भाषा में लिखे गये होते हैं जिसका लहजा सर्वथा विपरीत होता है।"

मैंने कहा, "इसका कारण यह है कि पत्र वायसराय के नाम लिखे जाते हैं और लेख जनता को सम्बोधित करके लिखे जाते हैं। यदि वायसराय ही कोई आन्दोलन चलाते होते तो उनके निजी पत्र-व्यवहार की भाषा उनके लेखों की भाषा से सर्वथा भिन्न होती।"

श्री लेथवेट बोले "पर आपको यह तो मानना ही होगा, और मैं जानता ही हूँ कि श्री बिड़ला भी मानते हैं, कि इसमें वायसराय की स्थिति बड़ी कठिन हो जाती है। ये लेख भारत तक ही सीमित नहीं रहते हैं, रायटर द्वारा इंगलैंड को तार से भेज दिये जाते हैं। और आपको जातीय विद्वेष के बारे में 'स्टेट्समैन' की टीका याद ही होगी। आप सोच सकते हैं कि ब्रिटिश जनता पर इसका क्या असर पड़ेगा। मैं तो कहूंगा कि गांधीजी वायसराय को भले ही इच्छानुसार कड़ा-से-कड़ा पत्र लिखते, समाचार-पत्रों के लिए लिखते समय उन्हें शक्ति भर नरम-से-नरम भाषा का उपयोग करना चाहिए था।" मैं बोला, "यह स्टेट्समैन" वाली बात वाहियात-सी है। इसका जातीय प्रश्न के साथ क्या सम्बन्ध है? और 'स्टेट्समैन' को गांधीजी के लेख में जातीय विद्वेष कहां दिखाई दिया?"

"ब्रिटिश रेजिडेन्ट को जिस प्रकार आयेदिन शरारत का पुतला कहा जाता है और गुंडेपन के कामों के लिए जिम्मेदार ठहराया जाता है सो आप देख ही रहे हैं। आप एक बार श्री गिब्सन से मिलकर देखें। तब आपको पता चलेगा कि यह सबकुछ उनके द्वारा सम्भव नहीं है। वह इतने नरम आदमी हैं कि उनके बारे में कोई यह खयाल तक नहीं कर सकता कि नृशंसता के ऐसे काम उनके द्वारा सभव हैं।"

"गुंडेपन के इन कामों के लिए श्री गिब्सन व्यक्तिगत रूप से जिम्मेदार हैं, ऐसा आरोप न गांधीजी ने लगाया है, न किसी और ने ही। कम-से-कम गांधीजी ने नहीं लगाया। वह यह नहीं कह सकते कि गिब्सन इन मारपीटों को खुद देखते हैं। पर साथ ही यह भी नहीं भूलना चाहिए कि इस एजेन्सी पुलिस और इन मातहतों का यह विश्वास है कि वे जो कुछ कर रहे हैं ठीक ही कर रहे हैं।"

श्री लेथवेट ने पूछा, "क्या आपको पता है कि राजकोट में एजेंसी पुलिस

की सख्या कितनी है ?" मैने कहा, "सो तो मै नही जानता, पर राजकोट रियासत की पुलिस की सख्या अधिक नही होगी, अधिकाश मे एजेन्सी पुलिस होनी चाहिए। पर मै निश्चित रूप से नही कह सकता। हा, पता लगा सकता हू। क्या श्री गिब्सन के साथ आपका व्यक्तिगत सपर्क है ?"

"नही, इस समय नही। मै आखिरी बार उनसे नवम्बर मे मिला था। पर मै इतना तो कह ही दू कि गाधीजी के लेखो का हम तीनो पर, और वायसराय पर भी, जो प्रभाव पडा, साधारण पाठक पर उससे भिन्न प्रभाव पडा होगा। औसत दर्जे का पाठक यह सोचे बिना नही रह सकता कि यदि ये बाते सच्ची है तो उनके लिए श्री गिब्सन को व्यक्तिगत रूप से जिम्मेदार ठहराया जा रहा है। और यदि जातीय विद्वेष अभीष्ट नही है तो क्या गाधीजी को यह स्पष्ट नही कर देना चाहिए ?"

मैने कहा, "निश्चय ही। गाधीजी ऐसा सबसे पहले करेगे, क्योकि उनके दिमाग में इस चीज का लेश तक नही है। ऐसा उनके स्वभाव में ही नही है। उग्र सविनय अवज्ञा आन्दोलन के जमाने में भी यह अभियोग गभीरतापूर्वक नही लगाया गया। गाधीजी यह भी कह देगे कि श्री गिब्सन इस नृशसता के लिए व्यक्तिगत रूप मे जिम्मेदार नही है। पर वह श्री गिब्सन को इस आरोप मे मुक्त नही करेगे कि उन्होने ही यह वचन भग कराया है, क्योकि उनके पास आरोप की पुष्टि मे वजनदार प्रमाण मौजूद है। आप उन प्रमाणो का मूल्य कम भले ही आके, पर जो कागजात उन्हे विश्वस्त सूत्रो से मिले है, उनकी प्रामाणिकता मे वह सन्देह नही कर सकते।"

बातचीत ने गर्मी जाने लगी थी। घनश्यामदासजी बीच ही मे बोल उठे, "सार की बात यही है कि सधि-चर्चा फिर शुरू करने के लिए उचित वातावरण की आवश्यकता है। है न यही बात ?"

"हा, वातावरण बहुत खराब है। गाधीजी का लेख प्रकाशित होने के बाद से वह काफी बिगड गया है। वायसराय के नाम आप जो पत्र लाये, उसे पाकर उन्हे खुशी हुई। पर आज उन्होने 'हरिजन' का लेख देखा तो कहने लगे, "इस मित्रतापूर्ण पत्र का क्या उपयोग है ?"

मैने कहा, यदि "आपका अभिप्राय उन दो आरोपो मे है जो 'स्टेट्समैन' ने लगाये है तो गाधीजी मे वातावरण की सफाई कराने मे बिल्कुल कठिनाई नही होगी।"

"पर, जब श्री गिब्सन को अनैतिक वचन भग के लिए जिम्मेदार ठहराया जा रहा है और उनकी खिल्ली उडाई जा रही है तो उनसे आप कोई काम कैसे करा सकते है ?"

मैने कहा, "मेरे पास कुछ कागजात है और मै यह दिखा सकता हू कि हम लोग उन्हे दोषी कैसे मानते है। मर पैट्रिक कैडेल यहा होते तो वडी बात होती।"

"आप यह कहना चाहते है कि उन्हे इस समझौते की सारी बातो का पता है? आप यह भी कहना चाहते है कि उन्होने श्री गिब्सन को बता दिया था?"

"मर पैट्रिक ने समझौते को खुद देखा, इसकी शपथ लेने को मै तैयार नही हू। पर जब ठाकुरसाहब ने यह पत्र लिखा था तो वह महल मे मौजूद थे। मुझे नही मालूम कि सर पैट्रिक ने श्री गिब्सन से उसके बारे मे कहा या नही, पर बात जो भी हो, दुनिया मे कौन विश्वास करेगा कि सरदार एक ऐसे समझौते को स्वीकार करने को तैयार हो गये, जिसकी व्याख्या ठाकुरसाहब इस ढग मे कर रहे है, जैसा कि आपने बताया? उस दशा में समझौते पर ठाकुरसाहब को नही, सरदार को हस्ताक्षर करने चाहिए थे।"

"मैने यह अनोखा तर्क 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के लेख मे पढा है। पर उस पत्र को प्रकाशित क्यो नही किया गया और उसे समझौते का अग क्यो नही बनाया गया?"

"आप समझे नही। सरदार को ठाकुरसाहब का लिहाज था। पर मै आपको बता दू कि यदि सरदार उसी समय नाम देने को तैयार हो जाते तो उस पत्र मे नामो का भी समावेश हो गया होता। बात यह थी कि सरदार को अपने सहकर्मियो से परामर्श करना था।"

"पर क्या आपका यह खयाल नही है कि श्री माणेकलाल के नाम सरदार पटेल के पत्र से यह जाहिर होता है कि व्यक्तियो की नामावली आपस मे तय होनी थी और सरदार को केवल नामो का प्रस्ताव मात्र करना था।"

"नही, आपने बात को समझा नही। ठाकुरसाहब की सहमति केवल इस बात तक सीमित थी कि जिन व्यक्तियो के नाम सुझाये गए है, वे बाहर के नही, बल्कि रियासत के ही रहनेवाले है। मै आपके आगे यह साबित कर सकता हू कि सधि-चर्चा मे विवाद का विषय केवल यही था कि सदस्य रियासत के प्रजाजन हो या रियासत के बाहर के भी हो सकते है।' यहा मैने श्री लेथवेट को वह मसविदा दिखाया जिसे लेकर श्री पट्टनी सर पैट्रिक से मिले थे। उसमे की जिन चार बातो के बारे मे सर पैट्रिक ने स्पष्टीकरण चाहा था उनमे से एक यह थी कि सदस्य राज्य के प्रजाजन ही होगे। मैने उनका ध्यान मसविदे की उन पक्तियो की ओर दिलाया जिनमे कहा गया था कि सरदार सात नाम पसन्द करेगे और नियुक्ति ठाकुरसाहब द्वारा होगी। सर पैट्रिक ने मसविदे की भाषा पर कोई आपत्ति नही की थी।

मैंने कहा, "पर सर पैट्रिक अपने वचन से फिर गये, क्योकि एक दिन पहले वह श्री गिब्सन से मिल चुके थे और श्री गिब्सन ने उस सारे व्यापार को ही नापसन्द किया था।"

घनश्यामदासजी ने कहा, "मैं गलती नही करता हू तो सर पैट्रिक ने खुद सरदार या पट्टनी से कहा था कि श्री गिब्सन ने उसे नापसन्द किया है।"

मैंने कहा, "और आप वचन-भग के अन्य गम्भीर अश को क्यो भूलते है? समझौता टूटने के वाद की विज्ञप्ति उस विज्ञप्ति से, विल्कुल भिन्न है जो समझौते की घोषणा करते समय प्रकाशित की गई थी।

"हा, श्री विडला ने इसकी चर्चा की है, पर मैं जानना चाहता हू कि अन्तर कहाँ है।"

मैंने वह अश पढकर सुनाया, जिसमे 'व्यापकतम अधिकारो' की वात कही गई थी, और नई विज्ञप्ति का वह अश भी सुनाया, जिसमें 'शासन-कार्य मे जनता के हाथ वटाने' का जिक्र था। मैंने इस वात का भी जिक्र किया कि किस प्रकार आपसी वातचीत के दौरान में श्री गिब्सन ने व्यापकतम अधिकारो की वात पर आपत्ति की थी और किस प्रकार वह उसे निकलवाने में सफल हुए थे। मैंने यह भी कहा कि ठाकुरसाहव ने अपनी विज्ञप्ति में ऐसे शब्दो का व्यवहार किया है, जिनका उन्होने समझौते के समय कभी उपयोग नही किया होता। वे शब्द ये थे कि उन लोगो को वाहर वालो के उकसाने पर ऐसी वस्तु प्राप्त करने की कल्पना नही करनी चाहिए जिसे वे पचा न सके। इस सवमे श्री गिब्सन का हाथ है, यह सोचे विना हम नही रह सकते।"

घनश्यामदासजी ने पुन समझौते की चर्चा शुरू करने का सवाल उठाया और श्री लेयवेट ने वातचीत के लिए अनुकूल वातावरण तैयार करने का राग अलापा। घनश्यामदासजी ने पूछा, "आपका वातावरण सुवारने की वात से ठीक-ठीक अभिप्राय क्या है? कृपया मुझे निश्चित रूप से वता दीजिए कि वातावरण को सुवारने के लि' आप गाधीजी से से क्या कराना चाहते है?"

लेयवेट ने उत्तर दिया, "वात यह है कि व्यक्तिगत आक्रमण किये गए है, जिनसे जातीय विद्वेष की गव आती है। मेरी राय में यह सवकुछ विल्कुल वन्द हो जाना चाहिए। आप लोग वायसराय की कठिनाइयो को नही समझते है। वह कितनी ही सहानुभूति क्यो न रखते हो, जवतक वातावरण नही सुवरता है, तवतक वह मदद नहीं कर सकते।"

"मैं स्वीकार करता हू कि व्यक्तिगत कटुता नहीं रहनी चाहिए, क्योकि मेरा अपना विश्वास है कि यदि समझौते की वात शुरू हुई तो श्री

गिब्सन से बेहद सहायता मिल सकती है। इसलिए, उन्हें व्यर्थ ही खिझाना ठीक नहीं है।"

"इन आक्रमणों के बाद गिब्सन कहांतक सहायक सिद्ध होंगे, यही देखना है। मेरा विश्वास है कि वह इन आक्रमणों के पात्र नहीं थे।"

"मैं तो नहीं समझता कि गिब्सन के रुख के बारे में निराश होना ठीक रहेगा। मुझे अच्छी तरह याद है कि जब लार्ड इर्विन ने बापू से इमरसन का परिचय कराया तो उसके बाद से उनका (इमरसन का) रुख खास तौर से सहायतापूर्ण हो गया था। फिर तो जो कुछ हुआ सबमें उनकी सहायता मिली। किसी मंजिल पर पहुंच कर सरदार और गिब्सन में समझौते के लिए बातचीत फिर शुरू न हो, इसका मैं तो कोई कारण नहीं देखता। गिब्सन ठाकुरसाहब पर कोई दबाव डालें, सो मैं नहीं चाहता। पर वह मित्रतापूर्ण सलाह तो दे ही सकते हैं, और सार्वभौम सत्ता के प्रतिनिधि की मित्रतापूर्ण सलाह का क्या महत्व है, सो मैं जानता हूं। मैं तो इतना ही चाहता हूं कि यदि वातावरण में सुधार हो जाय और बातचीत फिर शुरू हो जाय तो वायसराय निजी तौर पर गिब्सन को निर्देश दे सकते हैं कि उन्हें पूर्व समझौते का पुनरुद्धार करने के लिए सभी तरह की मित्रता-पूर्ण सहायता देनी चाहिए।"

"हां, मैं सहमत हूं। मैं यह नहीं कहना चाहता कि वायसराय क्या करेंगे, पर मैं यह निश्चय-पूर्वक कह सकता हूं कि यदि वातावरण में सुधार हुआ तो उसमें सन्तोषजनक हल ढूंढने में अवश्य सहायता मिलेगी।"

यहां मैंने सुझाया कि घनश्यामदासजी वर्धा जा सकते हैं। लेथवेट ने कोई टिप्पणी नहीं की, चुपचाप सुनते रहे।

मैंने कहा "वातावरण को स्वच्छ किया जा सकता है, पर श्री लेथवेट को यह समझ लेना चाहिए कि मेरे खयाल से नृशंसतापूर्ण कार्यों के लिए व्यक्तिगतरूप से जिम्मेदार होने के आरोप की अपेक्षा वचन-भंग की जिम्मेदारी का आरोप अधिक गंभीर है। एक आरोप वापस लिया जा सकता है, क्योंकि वास्तव में वह कभी लगाया ही नहीं गया था, पर दूसरा आरोप मौजूद है और रहेगा। किंतु बापू को इस आरोप की सफाई पर बार-बार जोर देने की जरूरत नहीं है। उसे सब जानते हैं। अब दूसरे आरोप की सफाई हो जाय।" घनश्यामदासजी ने कहा, "तुम बापू के पास जाओ और यह करा डालो। मुझे यकीन है कि सरदार बापू के इस वक्तव्य को दोहरा कर बातचीत शुरू कर सकते हैं कि इस सवाल पर कि कौन-कौन से व्यक्ति लिये जायं। वह ठाकुरसाहब का लिहाज करने को तैयार है अर्थात् एक मुसलमान और एक भायात को भी शामिल किया जा

सकता है, बशर्ते कि उन्हें दो नाम अपनी ओर से और जोड़ने की स्वतन्त्रता रहे।"

"क्या समझौते में यह बात भी शामिल थी कि कमेटी में सरदार का पाच का बहुमत रहना चाहिए?"

मैं बोला "संख्या ७ और ३ के उल्लेख का तो यही अर्थ निकलता है। किन्तु हम यहा सधि की चर्चा करने नहीं बैठे हैं। इसका निर्णय तो सरदार और ठाकुरसाहब ही करे, पर समझौते की मूल शर्तो को तो पुनर्जीवन देना ही होगा।"

श्री लेथवेट ने कहा, "आपके बताए ढग का वक्तव्य सरदार दे देगे तो उससे सहायता मिलेगी।"

महादेवभाई का विवरण सरदार के पास गया और अपने उत्तर मे सरदार ने श्री गिब्सन के बारे मे बहुत ही निराशाजनक विचार प्रकट किया

८ फरवरी १९३९

प्रिय महादेव

मुझे तुम्हारा पत्र और उसके साथ श्री लेथवेट के साथ हुई तुम्हारी बातचीत का विवरण मिला। मुझे भय है कि उनके रवैये के बारे मे तुम्हारे अन्दाजे से मैं सहमत नहीं हो सकता। वह रवैया कूटनीतिक है, पर मुझे डर है कि वह ईमानदारी से भरा हुआ नहीं है। 'स्टेट्समैन' ने पिछला लेख ज्यादा सफाई के साथ लिखा है, पर यदि हम किसी गिब्सन या बीचमय के बारे मे लिखते हैं तो वे हमारी नीयत पर सदेह करने लगते हैं। इसमें कोई जातीय प्रश्न शामिल नहीं है। यह तो उनके सुरक्षित किले पर रक्षात्मक आक्रमण है और इस पर वे क्रुद्ध हो उठे हैं। अपने अपराध का पूरा पता होने पर भी वे अपनी अनभिज्ञता जाहिर करते हैं। जो हो, मुझे तो आगे कड़ा सघर्ष नजर आता है। मुझे तनिक भी सन्देह नहीं है कि श्री गिब्सन ने तमाम काठियावाड की रियासतो मे गुडेपन की शक्तियो को सगठित किया है। लीमड़ी मे उनकी नीति पहली बार खुल कर खेली। कैसे, सो जानकर तुम्हें अफसोस होगा। तीन बड़े डाके पड़े हैं, जिनमें गावो के अनेक आदमियो को लूटा और घायल किया गया है। सशस्त्र ठाकुरो को देहातो की निर्दोष जनता पर आक्रमण करने के लिए पूरी छूट दे दी गई है, ताकि जो लोग रियासत के अत्याचार का विरोध कर रहे हैं, उन्हें भयभीत किया जा सके। गत दो-तीन दिनो से लोग महल के इर्द-गिर्द बैठे हैं और जाच की

मांग कर रहे हैं, पर रियासत कोई सुनवाई नहीं कर रही है। बा (कस्तूर बा) भी परेशान हैं। यह सब केवल गिब्सन की मिली भगत से ही नहीं हो रहा है, बल्कि इसमें प्रेरणा भी उन्हीं से मिली होगी।

तुम्हारा
वल्लभभाई

इसके बाद ठाकुरसाहब के प्रति गांधीजी की निराशा, उनका उपवास, वायसराय का सहानुभूतिपूर्ण रुख और मारिस ग्वायर का गांधीजी के हक मे फैसला, सारी घटनाएं एक के बाद घटित हुईं। तनाव अप्रैल के मध्य तक कम नही हुआ था। महादेव ने मुझे लिखा

सुशीला राजकोट से आज ही पहुची। वह गुजरात के कुजा नामक स्थान को जा रही है, जहा उनके भाई का विवाह है। उसने बताया कि एक दिन बापू और वल्लभभाई मे झड़प हो गई। बापू ने तीन पत्र लिखे थे, जिनमे उन्होंने मुसलमानों और भायातों को सबकुछ समर्पण कर दिया था। वल्लभभाई बिगड गये। बापू ने कहा, "मै जानता हू, मेरी मूर्खताओं का फल तुम्हे भोगना पडता है।" इस पर वल्लभभाई ने कहा, "अभी तक तो मूर्खता का कोई काम नही हुआ है, पर ये तीन पत्र जिन्हे आप भेजने का विचार कर रहे हैं, मूर्खतापूर्ण अवश्य हैं।" बापू हँस पडे, पर बाद को गम्भीरता-पूर्वक बोले, "इसलिए मुझे क्रियात्मक नेतृत्व से हट कर भगवान के भजन में दिन बिताने चाहिये।" पता नही इसके बाद बातचीत का क्या रुख रहा, पर परिणाम यह हुआ कि पत्र फाड डाले गये। सुशीला ने यह भी बताया कि बापू ने देख लिया है कि मनुष्य की कुत्सित प्रवृत्तियों का वल्लभभाई को उनकी अपेक्षा अधिक ज्ञान है—ज्ञान क्या आत्मप्रेरणा-सी है। बापू ने एक बार कहा भी, "यह कदम आत्महत्या के समान है।" उनका मतलब यदि मुसलमान अपने वचन का पालन नही करे तो अनशन करने के विचार से था। इस प्रकार उस दिन प्रातःकाल के समय हमारा लम्बा तार भेजना बिल्कुल ठीक सिद्ध हुआ।

पर इस सारे व्यापार ने मुझे विचार-निमग्न कर दिया। आपको याद ही होगा, उस दिन हमने अहिंसा की भावनाओं और गूढ तत्वों के सम्बन्ध में बहुत देर तक बातचीत की थी, और मुझे सुशीला से जो कुछ मालूम हुआ उससे मैं इसी विचार मे पड गया कि अहिंसा इहलौकिक अधिकारों

के प्रतिपादन के लिए उपयुक्त अस्त्र है या नहीं। श्री आर्थर मूर ने भी इस प्रसिद्ध वादविवाद के दौरान में इसी तरह की बात कही थी। अब जब हम बापू से मिलें और उन्हे कुछ फुर्सत पावें तो अहिंसा के इस पहलू पर खूब अच्छी तरह बातें करें। इस समय तो मैं नहीं कह सकता कि भविष्य मे हमारे भाग्य में क्या बदा है। हम एक रहस्यमय और वर्णनातीत होनी की ओर बलात् खिचे चले जा रहे हैं।

मैं महादेवभाई की शकाओ के साथ अपनी सहमति प्रकट किये बिना नही रह सका

सच्ची बात तो यह है कि मैं तुम्हारे इस कथन से तो सहमत हूं ही कि इहलौकिक लक्ष्यो की सिद्धि मे अहिंसा के उपयोग का औचित्य सदिग्ध है, साथ ही मुझे इसमें भी सन्देह है कि राजकोट में आरम्भ मे अबतक जो कुछ हुआ है उसे अहिंसा कहा जा सकता है या नहीं। मैंने तो तुमसे उस दिन कहा भी था कि मैं अभी तक इस बात में विश्वास नहीं करता हू कि अनशन दूसरे की इच्छा के विरुद्ध कार्य कराने का एक ढग मात्र नहीं है। मेरी तो समझ मे नही आता कि अपने विपक्षी का हृदय चुनौतियो से कैसे बदला जा सकता है। सरदार की स्थिति को समझा जा सकता है, क्योंकि उन्होंने कभी कोई गूढ दार्शनिक तत्व का निदर्शन करने का दावा नही किया। राजकोट में उनका सघर्ष एक प्रकार का नि शस्त्र विद्रोह था और वह पूर्णतया अहिंसात्मक ही रहा हो, ऐसी बात भी नही थी। इसलिए यदि वीरावाला और ठाकुर ने हमारे ही ढग से उसका मुकाबला किया तो इसमे शिकायत का मौका ही क्या है? गिब्सन भी हमारी मदद क्यो करता, क्योंकि हमने भी गिब्सन को कभी नही बख्शा। वायसराय का उत्तरदायित्व तो है ही, पर उनकी भी अपनी कठिनाइया होगी। उतावली से काम नही चलेगा। यदि वस्तुस्थिति को बापू के दार्शनिक दृष्टिकोण की कसौटी पर कसा जाय तो कहा जा सकता है कि हम बिल्कुल दूध के धोये हो, ऐसी बात नही है। मेरी तो दृढ धारणा है कि अब उपवास का प्रसग समाप्त कर देना चाहिए। जब हम कलकत्ते में बापू से मिलेंगे, तो आशा है, बापू हमारी बात मान लेंगे। यदि निर्विघ्न वार्तालाप किया जाय तो उसमें बापू के, तुम्हारे, और मेरे सिवा और कोई न रहे। सरदार मौजूद रहेंगे तो मुझे बात करने का साहस नही होगा।

बापू और सरदार की बातचीत के सम्बन्ध मे तुमने जो कुछ लिखा उसे पढने में बडा आनन्द आया। सरदार बहुत कम बोलते है और जब बोलते

है तो ऐसा लगता है मानो उन्होंने धैर्य खो दिया हो, पर उनकी आत्म-प्रेरणा गलत नहीं होती। पर इतने पर भी वह वीरावाला से पार नहीं पा सके।

किन्तु अबकी बार चित्र एकदम बदल रहा था। महादेवभाई और गिब्सन की मुलाकात हुई। १९ मई को महादेवभाई ने लिखा

पता नहीं, आप बापू के ताजा वक्तव्य के सम्बन्ध में क्या कहेंगे। हमारे दुर्भाग्य से पहले तो बापू अपनी कार्रवाई पर हमारी प्रतिक्रिया से रुष्ट होते हैं, पर बाद को वह भी उसी निष्कर्ष पर पहुंचते हैं जिस पर हम पहुंचे थे, और उसे इतनी ओजस्विता से प्रकट करते हैं कि हम सकोच में पड़ जाते हैं। बहुधा हम उनकी उतावली का उनसे जिक्र करते हैं तो वह कहते हैं कि यह उतावली नहीं है, और यदि है, तो भी क्या हुआ। अब वह कहते हैं कि उनकी उतावली हिंसा का लक्षण थी, और उन्होंने सर्वोपरि सत्ता से जो अपील की, ठाकुर को निकम्मा और वीरावाला को चालबाज और रियासत के लिए अभिशाप बताया, सो उतावली का कार्य था, इसलिए वह हिंसा थी। वक्तव्य के ऊपर उनसे मेरी काफी बहस रही। मैंने कहा "क्या आपका यह विचार नहीं है कि आपका ठाकुरसाहब तक सीमित रहने के बजाय सर्वोपरि सत्ता से अपील करना, और उसके प्रधान न्यायाधीश द्वारा निर्णय किये जाने के सुझाव को स्वीकार करना, नैतिक और व्यावहारिक दृष्टि से अच्छा नहीं रहा। क्योंकि एक दास के विरुद्ध सत्याग्रह करना (और रियासती नरेश दास ही हैं) न्यायोचित नहीं है।" इसके उत्तर में उन्होंने कहा, "तुम केवल परिणाम देख कर ही यह बात कह रहे हो, और तुम्हारा यह कहना कि ठाकुर सर्वोपरि सत्ता का दास मात्र है, केवल अर्द्ध-सत्य है। और यदि वह दास हो तो भी यदि मेरा सत्याग्रह परमोत्कृष्ट प्रकार का हुआ तो वह उसे अपनी दासता का अन्त करने में सहायता देगा। जो हो, मैंने जो निर्णय को त्यागने का निश्चय किया है सो आत्म-निरीक्षण का फल है। मैं हरदम इसी व्यथा से व्यथित रहता था और मुझे एकमात्र यही चिन्ता थी कि इस यन्त्रणा से कैसे त्राण पाया जाय।"

गिब्सन से कोई डेढ़ घंटे तक बातें होती रहीं। वह बड़ी शिष्टता, सरलता और आदर-भाव से पेश आया। वह पुरानी चोटें भूला नहीं है। उसे गुण्डेपन का दोषी ठहराया गया था और वार्तालाप का उसकी

ममझ से असत्य विवरण छापा गया था, आदि। पर मै इतना अवश्य कहूगा कि वह मुझे अच्छा लगा, और मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि मै उससे मिला।

मै इन लोगो से जितना मिलता हू उतना ही विश्वास होता जाता है कि हमारा सारा आन्दोलन उतावली का व्यक्तरूप मात्र था। थोडे धैर्य से बहुत कुछ काम बन जाता। खैर, शिक्षा देर से मिली, मिली तो। देर आयद दुरुस्त आयद।

मैने अपने उत्तर मे श्री गिब्सन के बारे मे महादेवभाई के विचारो की पुष्टि की :

मेरी ग्वालियर-मिल के मैनेजर और सैक्रेटरी ने श्री गिब्सन की मानव की हैसियत से सदा तारीफ की है। कहा जाता है कि वह सबके साथ, विशेषकर बच्चो के साथ, बहुत खुला और उत्तम व्यवहार करते थे। वह मिल में आ जाते थे और बच्चो के साथ खेला करते। आपसी व्यवहार में कुशल, बहुत भले, और राजनैतिक व्यवहार में बहुत बुरे, वह एक साथ ही दोनो नही हो सकते थे, और बापू की ओर से उन्हे काफी खरी-खोटी सुननी पडी है। क्या बापू को उनके बारे मे अपनी राय नही बदलनी चाहिए? मै अलबत्ता यह मानता तो हू कि श्री गिब्सन वचन भग के लिए अशत जिम्मेदार है। पर वह जितने के पात्र थे उन्हे उससे अधिक सुननी पडी। मेरे आदमी यह स्वीकार करने को तैयार नही है कि श्री गिब्सन के लिए गुडो जैसा आचरण करना सम्भव है।

लोदियन ने इस प्रकार लिखा

ऐसा प्रतीत होता है, मानो महात्माजी धीरे-धीरे कांग्रेस को वही नीति अपनाने को प्रेरित कर रहे है जिसका उन्होने मेरे सामने रेखाचित्र खीचा था। तब मै सेगाव मे उनके पास ठहरा हुआ था। पर मेरा खयाल है कि रियासतो में पूर्ण उत्तरदायी शासन के विकास की रफ्तार को सीमित करना होगा। लोगो को अभी प्रतिनिधि सस्थाओ का अनुभव नही है, और यदि कांग्रेस उन्हें बहुत दूर धकेलेगी तो वह मुसलमानो को तो, सम्भव है, हिन्दुस्तान से बिल्कुल ही बाहर धकेल दे। मेरा यह विश्वास पहले से भी दृढ हो गया है कि सघ के बुनियादी सिद्धान्तो पर ही हिन्दुस्तान आगे बढ सकता है और सकट से भी बच सकता है। आप

महात्माजी से मिले तो कृपया उन्हे मेरा हार्दिक अभिनन्दन पहुचा दीजिए।

क्या आप मेरा यह पत्र बापू के सामने रखने का कष्ट करेंगे ?

-

बापू ने अब मेल की दिशा मे पहल की और गिब्सन ने उन्हे यह पत्र लिखा

रजीडेन्सी, राजकोट
वालाचडी
२७ ५ ३६

प्रिय श्री गाधी

आपने जो लिखा सो लिखकर बडा सुन्दर काम किया। अनेक धन्यवाद। आप जिन दिनो की बात कहते हैं उन दिनो बडा काम था, पर यदि करने योग्य काम हो तो मुझे कार्यभार की कोई चिन्ता नही रहती। आज कल जो काम करना पडता है उसका काफी बडा हिस्सा वैसा काम नहीं है। उस समय जिन लोगो को सचमुच अत्यधिक काम करना पडा वे थे तार और टेलीफोन आपरेटर।

मैं राजकोट ३१ मई की रात को पहुचने की आशा करता हू। मैंने महादेव देसाई को लिखा है और बातचीत के लिए दूसरे दिन सुबह का समय सुझाया है और आपके विदा होने से पहले मैं आपसे भी एक बार फिर बातचीत करना चाहूगा, पर उस दिन सुबह को शायद आप बडे व्यस्त होगे, इसलिए मैं प्रस्ताव नही कर रहा हू। पर यदि आप कुछ समय निकाल सके तो जो समय सुविधाजनक हो उसी समय आ जाइए।

आपका
ई० सी० गिब्सन

महादेवभाई के एक और पत्र का अश

श्री गिब्सन कल आ रहे हैं। बापू और मैं दोनो उनसे मिलेगे। आपको शायद मालूम नही है कि जब मैं उनसे एक सप्ताह पहले मिला था तो मुलाकात का श्रीगणेश किस प्रकार हुआ था। मैंने उन्हे बताया

था कि मुझे उनके सम्बन्ध मे जो कुछ जानकारी हासिल हुई है ग्वालियर मिल के मैनेजर द्वारा, जिसने मुझे बताया कि श्री गिब्सन बालकों को कितना प्यार करते थे, और किस प्रकार उनके साथ खेलने के लिए आने को तैयार रहते थे। बस, इतना कहना था कि उनका दिल पसीज गया। इसके बाद, जैसा कि मैं लिख ही चुका हू, ९० मिनट तक दिल खोल कर बातचीत होती रही।

मै यह लिखना भूल गया कि गिब्सन की प्रवृत्ति आनन्ददायी, पर शुष्क-विनोद की है। इस पत्र के साथ मै उनका बापू के उस पत्र का उत्तर भेजता हू जिसमे उन्होंने उपवास के दिनो मे उसे इतना परेशान करने के लिए दु ख प्रकट किया था, यद्यपि वह उपवास अकारथ गया।

: २८ :

कुछ पहेलियां और उनके हल

उन दिनो बापू के विचारो और वक्तव्यो मे जो विरोधाभास दिखाई देता था उससे हम सब उलझन मे पड जाते थे। उस समय का सिहावलोकन करने पर प्रतीत होता है कि उन्होने हमारे राष्ट्रनायक के रूप मे जो कुछ किया, उसमे वह मूलत सही रास्ते पर थे। हम यह भी देख सकते है कि उनके बिना हम शायद अभीतक स्वतत्र न हुए होते। पर यह स्पप्ट है कि उन दिनो भी उन्हे इसमे शक होने लगा था कि आम जनता मे उनके अहिसा के सिद्धान्त को पचाने या अहिसा-व्रत का पालन करते रहने की सामर्थ्य भी है या नही। विभाजन के दु खात नाटक का और तत्सम्बन्धी और बाद की दुर्घटनाओ का उन्हे पूर्वाभास-सा होने लगा था। उन्होने यह बात बडे दु ख के साथ स्वीकार की कि जिस चीज को वह खालिस अहिसा समझे बैठे थे, वह निष्क्रिय प्रतिरोध के रूप मे उसकी घटिया नकल-मात्र निकली। पर हम सब तो साधारण कोटि के मनुष्य है। हमारे लिए तो इतना समझना ही काफी है कि यदि कोई जाति या राष्ट्र निष्क्रिय प्रतिरोध का आश्रय ले तो वह बडा ही प्रभावोत्पादक सिद्ध हो सकता है और जिनके पास बन्दूके या सगीने न हो वे कभी-कभी उनके बगैर ही सफल मनोरथ हो सकते है।

२ अप्रैल १९४० को लार्ड लिनलिथगो के साथ मेरी मुलाकात हुई थी। उसका जो विवरण मैने बापू के लिए तैयार किया, उसमे मैने लिखा

उन्होने (वायसराय ने) इस बात की शिकायत की कि जब कभी गाधीजी उनके साथ बात करते है तो हमेशा यह कह देते है कि वह काग्रेस

के विचारो का प्रतिनिधित्व नही करते। इसमे उन्हे (वायसराय को)
वडी असुविधा की स्थिति मे पड जाना पडता है। वह गाधीजी के पीछे
चलने की कोशिश करते है तो उन्हे पता चलता है कि उन्हे त्रिशकु की भाति
वीच मे ही छोड दिया गया है। अगली वार जव वायसराय गाधीजी मे
मिलेंगे तो उनसे काग्रेस के प्रतिनिधि की हैसियत से मिलेगे। मुझे लगा
कि वायसराय वहुत थक गये है और वहुत निराश है। उन्हे गाधीजी के
विरुद्ध यह वास्तविक शिकायत है कि उन्होने सहायक सिद्ध होने की अपनी
ओर से शक्ति भर कोशिश की, पर दूसरी ओर से उन्हे अनुकूल प्रत्युत्तर
नही मिला। उनकी यह माग नही है कि मुसलमानो के साथ पूरा समझौता
हो जाय। वह तो सिर्फ यही चाहते है कि गाधीजी को सतोष हो जाय कि
जो भी योजना रखी जायगी, उसपर अमल किया जा सकेगा।

इसी समय के आसपास, ४ अप्रैल को, वापू ने वायसराय को इस प्रकार लिखा

अगर मैने आपके दिमाग पर यह असर छोडा हो कि काग्रेस वेस्ट-
मिन्स्टर के ढग का औपनिवेशिक दरजा स्वीकार कर लेगी तो मुझे यह जान
कर सचमुच ही वडा अफसोस होगा। जव मै आपको यह पत्र लिख ही रहा
हू तो अपने मन की एक वात और वता दू। मै आपको वता ही चुका हू
कि मेरा पुत्र देवदास आपका जोशीला समर्थक है। वह मुझे लम्बी-लम्बी
चिट्ठिया लिखकर यह समझाने की कोशिश कर रहा है कि मैने आपके साथ
अपनी पिछली वातचीत को हठात् खत्म करके आपके प्रति वडा अन्याय
किया है। वह मेरे इस आश्वासन को नही मानता है कि वातचीत इसलिए
समाप्त हुई कि आप और मै दोनो इस निष्कर्ष पर पहुचे कि हमारे वीच
की खाई इतनी चौडी है कि उसे अभी वातचीत को जारी रखकर ही
नही पाटा जा सकता। वास्तव मे यह तो आप ही का उद्गार था कि हम
लोगो के लिए यह ज्यादा मर्दानगी का काम होगा कि हम अपनी वातचीत
को शुरू के दिन ही समाप्त कर दे और जनता को वस्तुस्थिति मे अवगत
कर दे। आपके कथन की यथार्थता को मैने तुरन्त स्वीकार कर लिया।
देवदास का कहना है कि आपके कथन के पीछे ब्रिटिश अभिमान नही, शिष्टा-
चार-मात्र था। वह कहता है कि वास्तव मे आप वार्तालाप जारी रखना
चाहते थे। इसलिए देवदास वहुत दुखी है और उसका खयाल है कि मैने
आपके रुख को गलत समझा। अव आप ही इस कौटुम्बिक विवाद का
निपटारा करने में मेरी सहायता कर सकते है।

महादेव भी दुखी थे। १७ तारीख को उन्होंने मुझे लिखा

बापू के साथ देवदास का मतभेद बना हुआ है। देवदास का कहना है "यदि आपने वायसराय से कहा होता, 'खुद हमें किसी तरह का औपनिवेशिक दर्जा नहीं चाहिए, पर यह तो आपही बतायेंगे कि आप हमें किस ढग का दर्जा देना चाहते हैं' तो वायसराय ने जवाब दिया होता, 'अच्छा हो कि हम इस प्रश्न की चर्चा किसी अगली तारीख के लिए स्थगित कर दे, उसके बारे मे अभी बातचीत करने से कोई लाभ नही होगा।' देवदास की तर्कधारा काफी ठोस है, किन्तु हम कर ही क्या सकते है? कभी-कभी बापू ऐसी गलतफहमिया पैदा कर देते है कि वह स्वय उनका निराकरण नही कर पाते। ऐसा वह जानबूझ कर नही करते, पर उनके मन मे इतनी बाते रहती है कि विरोधी पक्ष एक बात समझता है, और बापू के मन मे दूसरी ही बात होती है।

जब मैने बापू को आपके प्रश्न की याद दिलाई तो उन्होंने कहा, "उसके बारे मे वायसराय से क्या पूछना है? पीछे देखा जायगा।" यही कारण है कि उन्होने अपने उत्तर मे उसका कोई उल्लेख नही किया है।

एक और पहेली ने मुझे १७ ता० को महादेवभाई को यह पत्र लिखने को बाध्य किया

तुमने बापू का ध्यान लियाकतअली खा के प्रत्युत्तर की ओर दिलाया होगा। मुझे भय है कि लियाकतअली की आलोचना मे कुछ तथ्य है। बापू के लेखो को शब्दश लिया जाय तो उनमे विरोधाभास की झलक मिलती है। हमे मालूम है कि बापू को उनकी ठीक व्याख्या करने मे कोई कठिनाई नही होगी, पर वस्तुस्थिति यह है कि बहुत बार बापू के विरोधी उन्हे गलत समझ लेते है और कभी-कभी तो उनके निकट के आदमियो के लिए भी उनके मन की बात का ठीक ठीक अनुमान लगाना कठिन हो जाता है।

जब मै वर्धा मे था तो राजाजी विभाजन का प्रतिपादन कर रहे थे और बापू उनके तर्क के विरोध मे बोल रहे थे। अब बापू कहते है कि वह विभाजन का मुकाबला करने मे अपनी पूरी शक्ति लगा देगे। हा, प्रतिरोध अहिसापूर्ण होगा। इस प्रकार की गलतफहमी केवल वायसराय और लियाकतअली को ही नही, बल्कि और कइयो को भी हुई है। मैने परसो मूर के मकान पर दोपहर का खाना खाया था। वह भी हैरान थे। उनका कहना है कि 'हरिजन' मे वह इतनी परस्पर-विरोधी सामग्री पढते है कि चक्कर मे पड जाते है। कभी-कभी उनकी इच्छा होती है कि बापू का समर्थन

करे, पर उनको खुद पता नही चलता कि बापू निश्चित रूप से किस दिशा मे जा रहे है। उनका खयाल है कि बापू के दिमाग मे उलझन है। हम सब जानते है कि उनका यह खयाल ठीक नही है कि बापू के लेखो मे उलझन होती है, पर साथ ही हमे इस बात की भी खबर रखनी चाहिए कि बापू के लेखो के बारे मे लोग क्या अनुभव करते है और क्या सोचते है।

हिटलर ने यूरोप पर जो दबदबा बैठा रखा था उसका बापू पर कोई असर नही पडा। १६ मई को महादेव ने मुझे लिखा

देवदास का टेलीफोन आया था। हॉलैण्ड ने आत्म-समर्पण कर दिया है। बेल्जियम का भी यही हाल होना है। अब बापू को ब्रिटिश मत्रिमडल के साथ सीधा सम्पर्क स्थापित करना चाहिए और वायसराय की मार्फत मत्रिमडल को एक लम्बा तार भेजना चाहिए। उसका कुछ नतीजा निकल सकता है। बापू ने कहा कि खबरो मे कुछ नही रखा है। बापू की निगाह मे हिटलर ऊचा चढता जा रहा है। मैने कहा "जबतक आप सार्वजनिक रूप मे इस बारे मे कुछ नही कहते, तभी तक खैर है।"

२१ ता० को बापू ने मुझे स्वय लिखा

यूरोप इस समय ऐसे लोगो का सगम-स्थल बना हुआ है जो यादवो की भाति एक दूसरे का विनाश करने पर तुले हुए है। जो हो, मेरा दिल कठोर हो गया है।

बापू के आशीर्वाद

दुर्भाग्यवश बापू यह मान बैठे थे कि युद्ध मे ब्रिटेन की हार हुई है और उन्होने लार्ड लिनलिथगो को एक पत्र मे अपना यह विचार लिख भी डाला। महादेवभाई को शायद यह बात पसन्द नही आई और उन्होने मुझे ६ जून को लिखा

उस पत्र का उत्तर आ गया है। बापू ने अपने पत्र मे लिखा था "यह नर-सहार बन्द होना चाहिए। आप हार रहे है। आप युद्ध जारी रखेगे तो उसका एकमात्र परिणाम और अधिक रक्तपात होगा। हिटलर बुरा आदमी नही है। आप आज लडाई बन्द कर दे तो वह भी ऐसा ही करेगा। आप मुझे जर्मनी या और कही भेजना चाहे तो मै हाजिर हू।

आप इसकी सूचना ब्रिटिश मन्त्रिमडल को भी दे सकते है।" मेरा यह दृढ विचार था कि वे लोग इसे धृष्टता समझेंगे। जो उत्तर आया है, वह बढिया है 'हम संघर्ष मे जुटे हुए है, जबतक हम अपना लक्ष्य हासिल नही कर लेगे, अपनी जगह से नही हटेंगे। मै जानता हू कि आप हमारे लिए चिन्तित है, पर सबकुछ ठीक ही होगा। आपने हमारे दो पुत्रो के लिए जो चिन्ता व्यक्त की है, उसका हमारे दिलो पर बडा असर पडा है।' बस, इतना ही।

इस बीच बापू उपवास की धमकी दे रहे थे, किसी बडे राष्ट्रीय प्रश्न को लेकर नही, बल्कि इसलिए कि आश्रम मे कोई मामूली-सी चोरी हो गई थी। इसपर सेवाग्राम मे बडी खलबली मची हुई थी। महादेवभाई ने ३ जून को लिखा.

यहा तो हमेशा इस या उस तरह की कोई-न-कोई उत्तेजना बनी ही रहती है। एक लडकी ने बापू को एक पत्र लिखा था। पत्र के पास ही एक कलम पडी थी। किसी ने दोनो को चुरा लिया। बाद मे कलम वहा मिल गई जहा उसे किसी ने फेंक दिया था। पत्र के फटे हुए टुकडे भी मिले। इससे बापू को इतना आघात पहुचा कि उन्होने घोषणा कर दी "यह काम नौकरो का नही हो सकता। अपराधी हमारे भीतर छिपा है। यदि शुक्रवार तक अपना अपराध स्वीकार करने के लिए कोई आगे नही आता है तो शनिवार से मै उपवास शुरू कर दूगा।" हम अपनी शक्ति भर अपराधी का पता लगाने की कोशिश कर रहे है और हरेक को समझा-बुझा रहे है, किन्तु अभीतक कोई सफलता नही मिली है। इस प्रकार के मनोवैज्ञानिक कार्यो मे हमारा बहुत-सा समय चला जाता है।

६ ता० को महादेवभाई ने पुन लिखा

चोरी के प्रकरण ने भद्दा रूप धारण कर लिया है। कल बापू ने अकस्मात् 'अ' से कहा, "मेरा सन्देह तुम्हारे ऊपर है। अपराध स्वीकार क्यो नही कर लेती हो?" मै भी स्तभित रह गया। 'अ' ने जवाब दिया, "मैने नही लिया। मै बेकसूर हू। अल्लाह मेरा गवाह है।" उसने आज से अनशन शुरू कर दिया है। मैने बापू से कहा, 'आपने उसपर इस तरह आरोप लगाकर उतनी ही जल्दबाजी से काम लिया है जितनी आपने उपवास की घोषणा करने में दिखाई थी।" बापू को जब यह महसूस होगा कि उन्होने लडकी के प्रति अन्याय किया है तो वह उसके प्रति सौ बार न्याय करके इसका

परिमार्जन करने की चेष्टा करेंगे और यह भी एक अन्याय का काम होगा। और भी कई मामलों में बापू ने ऐसा ही किया है। मैंने बापू से यह सब कहा, पर उनपर कोई असर नहीं हुआ। अभी तक तो उनका उपवास करने का निश्चय कायम है। आप कल फोन करेंगे तो अधिक जानकारी हो सकेगी।

कहने की आवश्यकता नहीं कि मैंने महादेवभाई के सुझाव के अनुसार फोन किया और बापू से उपवास न करने का अनुरोध भी किया। महादेवभाई ने उत्तर में लिखा

प्रिय घनश्यामदासजी

टेलीफोन पर आपका संदेश मिला। मैं बापू के साथ काफी दलील कर चुका हूं। मैंने कहा, "आपको यह पता हो कि किसने अपराध किया है तब तो आपका प्रायश्चित्त स्वरूप उपवास करना समझ में आ भी सकता है, पर अपराधी का पता लगाने के लिए उपवास करना कुछ ठीक नहीं रहेगा। यदि हम सबकुछ जानने का दावा करें या जानने की कोशिश करें तो यह ईश्वर के गुणों को धारण करने जैसा होगा और हमारे अभिमान का परिचायक होगा। इसलिए आप उपवास करने का विचार छोड दीजिए। इसमें अनेक अनिश्चित तथ्य हैं।"

बापू ने लिखा

"तुम्हारा दृष्टिकोण मेरे सामने है ही।"

इससे मुझे आशा होती है कि अन्त में शायद बापू उपवास शुरू न भी करें। मैं यह मानने को तैयार नहीं हूं कि यहां के किसी आदमी ने पत्र या कलम चुराया है। हम सब अति लघु हो सकते हैं, पर मैं इस बात की तो कल्पना भी नहीं कर सकता कि एक साधारण चोरी का अपराध स्वीकार करने के पूर्व हम बापू के उपवास करने की नौबत आने देंगे।

१० ता० को महादेवभाई ने अच्छी खबर सुनाई

बापू ने उपवास का विचार स्थगित कर दिया और इसका मुख्य श्रेय मेरी बड़ी कोशिशों और मेरे कड़े विरोध को है। मैंने इससे पहले बापू के किसी भी काम का इससे अधिक कड़ा विरोध नहीं किया। बापू ने उपवास शुरू कर दिया, उसके बाद भी मैंने बापू को एक लम्बा पत्र लिखा जिसमें मैंने कहा, "आपका यह उपवास धार्मिक उपवास नहीं है और जबतक

उसका अन्त नही कर दिया जायगा मै बराबर विरोध करता रहूगा।" दो घटे बाद बापू ने उपवास त्यागने का निश्चय कर लिया।

पर इधर राजाजी, मै और अन्य लोग, ब्रिटेन के साथ किसी-न-किसी प्रकार के समझौते के लिए प्रयत्नशील थे। कॉग्रेस ने अपेक्षाकृत बडे प्रश्नो की उपेक्षा नही की। कॉग्रेस ने ऐसी राष्ट्रीय सरकार की स्थापना करने के लिए एक तर्क-सगत प्रस्ताव किया, जो युद्ध को उसके सफल अन्त तक चलाने मे मदद देती रहती। किन्तु तबतक उन अग्रेजो का अविश्वास बहुत गहरा हो गया था जो किसी समय हिटलर को सतुष्ट करने और प्रोत्साहन देने मे सबसे आगे थे। कॉग्रेस के प्रस्तावो को ठुकरा दिया गया। यहॉ यह कहना उचित होगा कि कॉग्रेस को ब्रिटेन के कतिपय अग्रेजो का और भारत मे रहने वाले कुछ अग्रेजो का समर्थन अवश्य मिला।

४८, बजलुल्ला रोड
त्यागरायनगर, मद्रास
१६ अगस्त १९४०

प्रिय घनश्यामदासजी

स्थानीय समाचार-पत्रो ने श्री आर्थर मूर के लेख का मुख्य अग प्रकाशित किया है, जिसमे उन्होने श्री एमरी के वक्तव्य की आलोचना की है और अस्थायी राष्ट्रीय सरकार कायम करने की काग्रेस की माग का समर्थन किया है। कृपया मेरा यह विचार उसतक पहुचा दीजिए कि उन्होने मामले को जिस लाजवाब तरीके से पेश किया है मै उसकी सराहना करता हू। मै आशा करता हू कि उनका यह लेख पूरा-का-पूरा इग्लैड गया है।

आपका
चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य

: २९ :

एक व्यक्तिगत स्पष्टीकरण

यह अध्याय 'व्यक्तिगत स्पष्टीकरण के लिए है,' जैसा कि पुरानी व्यवस्थापिका के सदस्य कहा करते थे।

१९४० के अन्त मे लार्ड लिनलिथगो के साथ मेरा खासा झगडा हो गया। मै इस प्रसग का केवल इसीलिए जिक्र कर रहा हू कि उस समय के मेरे अपने कार्यकलाप के बारे मे प्रचलित धारणा से उसका घनिष्ट सबध है। सीधी-सादी भाषा मे लोगो की धारणा थी कि मै अपने-आपको कॉग्रेसवादी तो नही कहता हू, पर उसे गुप्तरूप से खूब पैसे दे देता हू और इस प्रकार दो किश्तियो पर सवार हू।

कह नही सकता कि कुछ लोग मुझे शका का लाभ देते थे या नही और यह मानते थे या नही कि मै कॉग्रेस का समर्थन देशभक्ति की भावना से प्रेरित होकर ही करता हू। जब मै सर गिलबर्ट लेथवेट के साथ अपनी अन्तिम मुलाकात का अपना विवरण फिर से पढता हू तो यह सोचने को मन कहता है कि वह और वायसराय दोनो ही मेरे इस कार्य को देशभक्ति से प्रेरित मानते थे और उनमे कोई बुराई नही देखते थे। उनका केवल यही कहना था कि कॉग्रेस इस समय युद्ध-चेष्टा मे सहायता नही दे रही है, बल्कि बाधा डाल रही है और चूकि उनका विश्वास था कि मै कॉग्रेस की आर्थिक सहायता कर रहा हू, इसलिए वायसराय सार्वजनिक रूप से मेरे साथ घनिष्ठ सबध रखने मे कठिनाई का अनुभव करते थे, क्योकि उधर वह कॉग्रेस-वादियो को जेल भेज रहे थे। इसका यह लाजमी मतलब नही कि उन्हे मेरा या उन लोगो का, जिन्हे वह जेल भेजने को बाध्य होते थे और

जिनके साथ सघर्ष समाप्त हो जाने के बाद सामान्य मधुर सबध कायम करने को वह तैयार हो जाते, कम लिहाज था। पर मै भडक उठा और मुझे बडा ही क्रोध आया, क्योकि मुझे लगा कि कम-से-कम उन्हे यह तो पता होना चाहिए था कि मै कॉंग्रेस के सविनय अवज्ञा-आदोलन को आर्थिक सहायता नही दे रहा हू। मेरी भक्ति बापू के प्रति थी और मै उन्हे किसी भी चीज के लिए इकार नही कर सकता था। वह अपनी सभी योजनाओ मे मुझसे सहायता मॉंगा करते थे। पर बापू यह अच्छी तरह जानते थे कि मै कॉंग्रेसवादी नही हू, और उन्होने मुझे सविनय अवज्ञा-आन्दोलन के लिए रुपया देने को कभी कहा भी नही। उन्हे मुझसे जो रुपया मिला उसे उन्होने किसी ऐसे काम मे लगाया भी नही। उन्होने खुद कॉंग्रेस के लिए रुपया नही जुटाया और न वह साधारणतया कॉंग्रेस के लिए रुपए की अपील ही किया करते थे। जनता पर उनका इतना भारी प्रभाव था कि वह बहुत बडे धन-सग्राहक बन गये थे, पर उनकी अपीले हरिजनो, गृह-उद्योगो, बुनियादी तालीम और विविध रचनात्मक कामो के लिए ही होती थी।

मैने महादेवभाई को जो पत्र लिखा था, वह यह है

२६ दिसम्बर १६४०

मैने यहा आने के तुरन्त बाद लेथवेट को लिखा कि मेरी वायसराय के साथ मुलाकात तय करा दे और यह भी लिखा कि वायसराय से मिल लेने के बाद मै उनसे भी मिलना चाहूगा। लेथवेट का जवाब मिला कि उन्हे भय है कि वायसराय से तो मिलना नही हो सकेगा, पर वह स्वय मुझसे मिलकर प्रसन्न होगे। मुझे शक हुआ कि पुरानी नीति मे परिवर्तन हुआ है, पर लेथवेट से मिलने के पहले मैने कोई खयाल बनाने से इन्कार कर दिया।

अगले दिन एस० सी मित्रा वायसराय से मिलने जा रहे थे। वायसराय ने एक सप्ताह पहले ही उनसे कहा था कि वह मेरे द्वारा गाधीजी के साथ सपर्क बनाये हुए है। उन्होने मेरे लिए 'मेरे मित्र श्री बिडला' शब्दो का प्रयोग किया था। स्वभावतया ही मित्रा ने यह जानना चाहा कि क्या

वह वायसराय के सामने कोई प्रस्ताव रख सकते हैं। मैंने उन्हें बताया कि तुमने लेथवेट को जो सुझाव दिया है, मित्रा को वायसराय से मिलते समय उसीपर जोर देना चाहिए। मित्रा वायसराय से मिलते समय उस प्रस्ताव के बारे में कुछ भी याद नहीं रख पाये। किन्तु जब मित्रा ने वायसराय से कहा कि सम्भव है, मेरे साथ उस सुझाव के बारे में फिर चर्चा हो, तो वायसराय ने कहा, "श्री बिड़ला मेरे मित्र हैं, पर इन दिनों वह आन्दोलन को पैसा दे रहे हैं। उन्हें ऐसा करने का पूरा अधिकार है, क्योंकि उनका पैसा है। पर चूंकि वह आन्दोलन को आर्थिक सहायता दे रहे हैं, इसलिए अभी मैं उनसे मिलने में रुकावट महसूस करता हूं।" जब मैंने यह सुना तो मेरे सन्देह की पुष्टि हो गई। नीति में परिवर्तन हो गया था। फिर भी मैं लेथवेट से मिलने गया।

लेथवेट से मिलने पर मैंने उनसे कहा वैसे तो मैं वर्तमान गतिरोध के बारे में कुछ रचनात्मक चर्चा करने आया हूं, पर मैं समझता हूं कि पहले यह बता देना अच्छा रहेगा कि वायसराय ने मेरे बारे में मित्रा से जो कुछ कहा, उसे सुन कर मुझे बड़ा धक्का लगा है। "लेथवेट ने जवाब दिया, "पर क्या यही बात सबकी जबान पर नहीं है?" मैंने कहा,"सबकी ज़बान पर क्या बात है, इससे तो मुझे कोई सरोकार नहीं है। प्रश्न तो यह है कि क्या आपका भी यही विश्वास है?"

उन्होंने कहा, "नहीं।"

मैंने कहा, "नहीं, है।" और मैंने यह भी कहा कि चूंकि मुझे यह पता चल गया है कि वायसराय को मुझपर भरोसा नहीं है, इसलिए मैं इस बात को आगे नहीं बढ़ाना चाहता। लेथवेट ने कहा,"पर क्या आप कांग्रेसवादी नहीं हैं?" मैंने उत्तर दिया,"मैं कांग्रेसवादी नहीं हूं। हां, गांधीवादी अवश्य हूं। गांधीजी मेरे लिए पिता के समान हैं। मैं उनके सारे लोकोपकारी और रचनात्मक कार्यों में गहरी दिलचस्पी रखता हूं। गांधीजी ने मुझसे राजनैतिक लड़ाई में भाग लेने को कभी नहीं कहा। वायसराय को अबतक यह जान लेना चाहिए था कि समूचे भारत में उनकी सहायता करने की जितनी चेष्टा मैंने की और उनका साथ देने के मामले में जितनी वफादारी मैंने दिखाई उतनी और किसीने नहीं दिखाई होगी, और वायसराय ने मुझे यह पुरस्कार दिया है! यदि वायसराय की धारणा यह है कि एक ओर तो मैं उनके पास एक मित्र की हैसियत से आता हूं और दूसरी ओर गुप्तरूप से उनके खिलाफ काम कर रहा हूं, तो फिर उनका समय और अधिक बर्बाद करने की मेरी इच्छा नहीं है। वायसराय ने मेरी ईमानदारी पर शक करके मेरे प्रति अन्याय किया है, और मैं और अधिक लाछित होना नहीं चाहता।'

लेथवेट कुछ हट से गये। "पर अपनी पसन्द के राजनैतिक सपर्क रखने में क्या बुराई है ?" मैंने कहा, "कोई बुराई नही है। पर बुराई इसमे है कि आदमी हो कुछ और बने कुछ। मैंने वायसराय को और आपको (अर्थात् लेथवेट को) अपने बारे में जानकारी कराने की पूरी-पूरी कोशिश की है। पर पाच साल के बाद भी मेरे साथ मानवी सम्बन्ध कायम नही हो सका। अब मेरी ईमानदारी पर ही शक किया जा रहा है। इसलिए इस ढग का नाता बनाए रखने की मेरी इच्छा नही है।"

लेथवेट ने मुझे शान्त करने की चेष्टा की और जानना चाहा कि वह रचनात्मक सुझाव क्या है, जो मैं उन्हे देना चाहता था। पर मैंने कहा, "किसी रचनात्मक प्रस्ताव पर चर्चा करने योग्य आत्मविश्वास अब मुझमे नही रहा है।" उन्होने कहा, "इससे क्या फर्क पडता है कि आप एक मित्र की हैसियत से आते है या विपक्षी की हैसियत से ?" मैंने कहा, "फर्क जरूर पडता है। मैं विपक्षी की हैसियत से आऊगा तो मेरी बात का आप पर अधिक प्रभाव नही पडेगा। मैं मित्र की हैसियत से ही तो कुछ असर डाल सकता हू। और अब चूकि मुझे मित्र नही समझा जा रहा है, इसलिए आगे बात चलाने की मेरी इच्छा नही है।" जब उन्होने ज्यादा दबाव डाला तो मैंने उन्हें अन्यमनस्क भाव से बताया कि मैं उनसे किस विषय पर बात करना चाहता था। उन्होने मुझे फिर ठडा करने की कोशिश की।

वह मुझे विदा करने के लिए अपने दफ्तर के बाहरी अहाते तक आये। हर तरह का शिष्टाचार दिखाया, पर मैं शान्त होने की वृत्ति में न था। बस, मामला यही खत्म हो गया। उन्होने कहा, 'हम चाहे जब मिल सकते हैं और बातचीत कर सकते है।" पर मैंने कह दिया कि वायसराय की ओर से यह प्रसाद पाने के बाद वायसराय भवन मे फिर पाव रखने की मेरी इच्छा नही है और उनके साथ मेरी बातचीत का यह बिल्कुल अन्तिम अध्याय है।

मैंने बापू के आगे वायसराय की कितनी कुछ वकालत की है और ऐसा व्यवहार किया है मानो मैं वायसराय का ही प्रतिनिधि होऊ, सो तुम्हें बताना न होगा। और इस सबका वायसराय ने यह बदला दिया है। यह बौडमपन नही तो और क्या है ? पर बापू को वायसराय को गलत नही समझना चाहिए। कौन जाने, वह स्वय परिस्थितियों के शिकार न बन गए हो।

जो हो, इसके साथ वायसराय के साथ मेरे सम्बधो का अन्त होता है। कितने जड मानसवाले है ये लोग !

: ३० :

बापू पत्र-लेखक के रूप में

पाठको ने देखा होगा कि मैने वापू के पत्रो की अपेक्षा उनके निजी मत्रियो के पत्रो से अधिक खुलकर उद्धरण दिये है। मै उनके मत्रियो को अधिक लिखा करता था, इसका कारण यह था कि मै वापू पर उत्तर देने का बोझ नही डालना चाहता था। वापू स्वभाव से इतने मृदुल थे कि वह मेरे पत्रो का उत्तर निश्चय ही देते। मै यह तो जानता ही था कि मै वापू के मत्रियो को जो पत्र लिखता हू वे वापू के सामने रख दिये जाते है। दुर्भाग्यवश वापू के सैकडो सदाशयी प्रशसक, जिनमे से अधिकाँश उनसे व्यक्तिगत रूप से परिचित नही होते थे, वरावर सीधे वापू को ही लिखा करते थे और उन्हे वापू खुद ही जवाव देते थे। इससे उनके समय और स्वास्थ्य दोनो पर बोझ पडता था, और चूकि वापू के पत्र-लेखक वापू के पत्रो पर गर्व का अनुभव करते थे और उन्हे प्राय वहुमुल्य वस्तुओ के रूप मे अपने पास रखते थे, इसलिए वहुत कम ऐसे सार्वजनिक व्यक्ति हुए है जो इतना पत्र-व्यवहार अपने पीछे छोड गये हो, जितना वापू छोड गये है।

तो भी वापू समय-समय पर मुझे पत्र लिखते रहते थे। मजे की वात यह है कि जहाँ एक ओर मुझे उनके स्वास्थ्य के वारे मे गहरी दिलचस्पी रहती थी और जव वह दिल्ली मे नही होते थे तो मै वरावर यह जानने के लिए आश्रम तार भेजता रहता था कि उनका रक्तचाप वढा तो नही या वजन कम तो नही हो गया, वहाँ दूसरी ओर वापू भी अपने पत्रो मे वहुधा विल्कुल अनावश्यक रूप से मुख्यत मेरे स्वास्थ्य के वारे मे ही

लिखा करते थे। मैं यह पहले ही लिख चुका हूं कि कई वर्षों पहले जब मैं युवक था और पहली बार इंगलैण्ड गया था तो बापू ने किस प्रकार मुझे बड़ी सावधानी के साथ हिदायतें लिख भेजी थीं। उनकी यह रुचि बराबर बनी रही और उनके कुछ पत्र विस्तार के कारण और कुछ डाक्टरी सलाह लिये हुए होने के कारण प्रकाशन योग्य शायद ही सिद्ध हों। फिर भी उदाहरण के तौर पर कुछ ऐसे पत्र दे रहा हूं जो उन्होंने मुझे अपने जीवन-काल के अन्तिम चरण में लिखे थे।

सेगांव
२० ३ ४५

चि० घनश्यामदास

तुमको तार एक्सप्रेस भेजा है। नकल साथ भी है। क्या, कितना कब खाते हैं? भाजी में क्या? कच्ची कि उबाली हुई? पानी फेंका तो नहीं जाता? टोस्ट से बहतर खाकरा नहीं होगा? आटा के साथ चोकर है? दूध लेते हैं तो कितना? कुछ भी हो आधा आउन्स मक्खन टोस्ट खाकरा पर लगाकर सेलाड के साथ लेना। बदहजमी हो तो दूसरा खाना कम करो लेकिन मक्खन रखो। गहरा श्वास अत्यावश्यक है। एक नाक बन्द करके दूसरे नाक में स्वास खींचो। आस्ते आस्ते बढाकर आध घंटे तक जा सकते हैं। प्रत्येक स्वास के साथ राम नाम मिलाओ। स्वास लेने के समय चोमेर में हवा होनी चाहिये। खुले में हो तो अच्छा ही है। प्रातःकाल में लेना ही है, बाकी खाना हजम होने के बाद। कम से कम चार बार लेना। स्वास लेना है, निकालना है। यह क्रिया आराम से करनी चाहिये। पाखाना बराबर आता है? नींद आती है? यह सब समझपूर्वक होगा तो खांसी शीघ्र ही चली जायगी।

बापू के आशीर्वाद

६ ४ ४५

चि० घनश्यामदास

मेरे अक्षर पढ सकते हैं क्या? मुश्किल लगे तो मैं लिखवाकर भविष्य में पहुँचा भेजूं।

दिन तो चले जाते हैं। समय पेटभर बातें करने का रहता नहीं इसलिये मुझे कहना है सो तो लिखूं क्योंकि मेरी बात तो मैं लिखकर खतम कर सकूंगा।

उत्तर तो दो-चार शब्दो मे दे सकते हैं। इसका मतलब यह नही कि मैने कहा है सो खीच लेता हू। मैं तुमको वक्त न दू तबतक यहा से नही हटूगा। मेरी वान के लिये ठहरना नही चाहता।

१ मेरा काम वढ गया है। अब तो कोशिश कर रहा हू कि मेरे पास पैसे की कोई आशा न करे और मैने वनाई है वे सब सस्था स्वाश्रयी बन जाय। ऐसा होने मे कुछ समय तो जायगा और दरम्यान मुझे पैसा निकालना होगा। सस्थाये तो (१) चर्खा सघ (२) ग्राम उद्योग सघ (३) नई तालिम (४) हिन्दुस्तानी प्रचार और (५) आश्रम है। २,३,४,५ की हाजत आज है। पाचवी सस्था आश्रम तो कभी स्वाश्रयी नही वनेगी। कोशिश तो करता हू। आश्रम मे अस्पताल आता है। अस्पताल का खर्च अलग रहता है। उसके पैसे इधर उधर से आया करे ऐसी चेष्टा चल रही है तो भी आश्रम का खर्च प्रतिवर्ष एक लाख के नजदीक जाता है। मै स्मरण से लिख रहा हू। आश्रम को आज हाजत नही। रामेश्वरदास पैसे भेजते है। रहे २,३,४, उनके लिये पैसे चाहिये। रामेश्वरदास ने कुछ भेज दिये है ऐसा ख्याल है। हिं० प्रचार और नयी तालिम के लिये चाहिये। शायद मुझको दो लाख की आवश्यकता रहे। यह खर्च उठाओगे क्या? सफरर्स फड का रामेश्वरदास के खत मे है ही। मेरा खयाल भी मैने बताया है।

२ अब रही वात साथियो के साथ के सबन्ध की और मेरे प्रयोग की। प्रयोग तो अब साथियो के खातिर वन्द है। मुझको उसमे कुछ अनुचित नही लगता है। मै वही ब्रह्मचारी हू जो १९०६ की साल मे प्रतिज्ञा मे रहा और १९०१ से ब्रह्मचारी की स्थिति मे रहा। आज मै १९०१ मे वहतर ब्रह्मचारी था इससे ज्यादा पक्का हू। मेरे प्रयोग ने अगर कुछ किया है तो यह कि मै था और यदि ईश्वरेच्छा हुआ। प्रयोग पूर्ण ब्रह्मचारी बनने के लिये होगी तो सपूर्ण बनने के कारण होगा। अब इस बारे मे तुम बाते करना और प्रश्न पूछना चाहते थे। दोनो चीज कर सकते है। सकोच की कोई बात है नही। जिसके साथ इतना घनिष्ट सवध है और जिसके बन का मै इतना उपयोग करता हू उसके मन में कुछ सकोच रहे सो मेरे असह्य होगा। अच्छा है कि दोनो भाई मौजूद है। यह पत्र दोनो के लिये तो है ही, लेकिन सब भाइयो के लिये और परिवार के लिये ऐसा समझो।

पत्र छोटा लिखना था लेकिन कुछ लम्बा तो हुआ ही। वात तो तीन है।

वापू के आशीर्वाद

एक बात रह गई। आश्रम की जमीन वि० गोशाला को दी गई उसके तुमने ५०,०००) दिये है। जब बात ऐसी है कि जब चिमनलाल ने

फेरिन्ता भेजी तो उसमे आश्रम का खेत और जिसमे कुआ है उसका कुछ जिकर है। अगर है तो सब मकान भी गये। ऐसे ता हो नहीं सकता। यह तो कुछ चूक ही थी। लेकिन रात तो जानकी देवी आदि ने लिखे। कुछ निकाल नही आया। अब प्रश्न यह है कि अगर तुमने ऐसा माना है कि सब जमीन और कुआ गोशाला को दे दिया था तो तुम्हारे ५०,०००) मे से कुछ काटना होगा। तुम्हारे जैसा करना है ऐसा किया जाय।

—बापू

किन्तु इसके बाद के दिनो मे बापू मुझे और जल्दी-जल्दी पत्र लिखने लगे थे।

यह बात उल्लेखयोग्य है कि जो काल राजनैतिक उत्तेजना से परिपूर्ण था और जिस समय बापू के सिर पर भारी जिम्मेदारियाँ थी, उसमे भी वह अपने को धूम-घडाके मे अलग कर लेते थे और अपनी लोकहितकारी योजनाओ की सूक्ष्म-से-सूक्ष्म बातो के बारे मे लिख सकते थे। उन्होने १६ अक्टूबर को मुझे एक लम्बा-सा पत्र लिखा, जिसका पहला भाग नासिक की स्कूल की इमारतो और सेनेटोरियम के बारे मे था। उन्होने आगे लिखा था

सरदार का अभिप्राय मै लिख दू। वे मानते है कि इस काम मे मुझे यहा तक रस नही लेना चाहिये। आर्थिक मदद देना है तो वह दिलवाकर शात रहना चाहिये। सरदार मनुष्य स्वभाव को जाननेवाले है और मेरे प्रति उनका अतिशय भाव रहा है इसलिये उनकी वृत्ति को भी तुम्हारे सामने रखना मुझे अच्छा लगता है जिससे तुम तटस्थ भाव से इस चीज़ का निर्णय कर सको।

इसके बाद नासिक और प्राकृतिक चिकित्सा के सबध मे कुछ और बाते है। फिर निम्नलिखित रोचक पैरा आता है

इस काम मे मेरा बहुत रस होते हुये भी तटस्थ रूप से ही कार्य देख रहा हू और कर रहा हू ऐसा समझो। अगर मुझे १२५ वर्ष तक जिन्दा रहना है तो उसकी यह भी शर्त है कि मेरी तटस्थता यानी अनासक्ति की मात्रा दिन प्रतिदिन बढनी चाहिये और मनुष्य के लिये शक्य है वहा तक सपूर्णता को पहुचनी चाहिये। यह कैसे हो सकता है, होगा या नही यह नही जानता हू। जानने की इच्छा भी क्यो करू ? उस आदर्श को दृष्टि मे रखते हुए मै जिसे कर्तव्य समझू वही करना है। मै इतना समझता हू कि इस

आदर्श को पहुँचना कठिन है, लेकिन कठिन कार्य करते हुये ही जीवन गुजरा है।

बापू के आशीर्वाद

बापू अपने विविध लोकोपकारी कार्यों की खातिर एक बहुत ही कुशल व्यापारी भी थे, इसका पता इस पत्र से चलता है

पूना
ता० १२-७-४६

भाई घनश्यामदास

यह तो आपको पता है कि आप लोगों की मन्जूरी से कस्तूर बा ट्रस्ट का करीब १०, १२ लाख रुपया सेन्ट्रल और यूनाइटेड कमर्शियल बैंकों मे फिक्स डिपाजिट के रूप मे लगा हुआ है। सेन्ट्रल बैंक १२ महीने की मियाद पर १।।। सैकडा व्याज देता है और यूनाइडेट कमर्शियल बैंक २। सैकडा। ट्रस्ट चूकि परमार्थिक कार्य के लिये है इसलिये मेरी तो यह इच्छा है कि बैंको को जो कुछ व्याज सरकारी लोन मे या अन्य साधनो से मिलता है वह ट्रस्ट को दे। इसका अर्थ यह है कि ट्रस्ट को ३ सैकडा टका व्याज तो मिलना ही चाहिये। मै सेन्ट्रल बैंक से व्याज के सम्बन्ध में सर होमी मोदी को लिख रहा हू और यूनाइटेड कमर्शियल बैंक के सम्बन्ध में आप को लिख रहा हू। आप उसके अध्यक्ष की हैसियत से ३ तीन सैकडा व्याज दें तो अच्छा होगा।

मै कल पचगनी जा रहा हू। उत्तर वहीं भेजना।

बापू के आशीर्वाद

बापू ने मुझे पचगनी बुलाया और मैं वहाँ गया। उनके पास प्राकृतिक चिकित्सा की बहुत बडी योजनाए थीं, जिनके बारे मे उन्होंने चर्चा की, किन्तु बाद मे उन्हे छोड दिया।

: ३१ :

स्वतंत्रता का आगमन

यह वात सभी जानते है कि युद्ध का अन्त होने पर १९४५ के पूर्वार्द्ध मे हमे अशान्त समय में से होकर गुजरना पडा था। किन्तु अगस्त मे जव इग्लैंड मे मजदूर-दलीय सरकार सत्तारूढ हुई तो दृश्य इतना वदल गया कि उन दिनो के घटना-चक्र-वेवल-योजना, शिमला-सम्मेलन और अन्य उत्तेजनाओ का जिक्र करना वेमूद-सा होगा। श्री जिन्ना के वारे मे वहुत से लोगो ने यह समझने की भूल की कि वह झासा-पट्टी देने वाले व्यक्ति है। पर वह अखिल भारतीय एकता के मार्ग मे एक दुर्लघ्य दीवार और निष्ठुर इरादो को पूरा करने के मामले मे अडिग व्यक्ति, सिद्ध हुए। ब्रिटेन मे सरकार का जो परिवर्तन हुआ उससे भी यह रुकावट दूर नही हुई और शुरू-शुरू मे ब्रिटेन मे हुए परिवर्तन के महत्व को भारत मे पूरी तरह से नही समझा गया। सन्देह की जड का उखाडना कितना कठिन कार्य है

सर स्टेफर्ड क्रिप्स ने मुझे लिखा

आशा करता हू कि आपके काग्रेसी मित्र सर्वथा नकारात्मक दृष्टिकोण न अपनाकर हमारी कुछ सहायता करेगे।

काग्रेस की ओर से जो वक्तव्य दिये जा रहे है वे उन लोगो के लिए अधिक सहायक सिद्ध नही हो रहे है, जो इस मामले का निपटारा करने की चेष्टा मे लगे हुए है। इन वक्तव्यो से तो विरोधियो की दलीले ही वजनदार होती जा रही है।

आपने मार्ग को निष्कटक वनाने के लिए जो कुछ किया है, और जो कुछ कर रहे है, उसके लिए मै आपका अत्यत आभारी हू। ब्रिटिश सरकार

का निश्चय ही इस मामले मे आगे बढने का इरादा है, पर भारत की मदद के बिना हम सफल नही हो सकते ।

उत्तर मे मैने लिखा

चुनाव के समय आपको कुछ असयत भाषण सुनने को मिलेगे, पर उन्हें महत्व नही देना चाहिए। आखिर चुनाव तो चुनाव ही है। ब्रिटिश चुनाव हमारे चुनाव से कुछ कम कटुतापूर्ण नही था। इसके अलावा अतीत की पृष्ठभूमि मौजूद है ही। साथ ही इगलैड के अग्रेजो की मनोदशा और यहा के अग्रेजो की मनोदशा के अतर की बात भी नही भूलनी चाहिए। इसके ऊपर इधर इन्डोनेशिया के उपद्रव को लेकर जनता का मन काफी उद्वेलित हो रहा है, सो भी दुर्भाग्य की ही बात है। मै आशा करता हू कि ब्रिटिश सरकार इस प्रश्न को हल करने मे भी सहायक कदम उठायेगी। लोकतत्र और स्वशासन इडोनेशिया के लोगो के लिए अन्य राष्ट्रो की अपेक्षा कम जरूरी नही है। मै यह कहने का साहस करता हू कि इस आकाक्षा के प्रति आपकी पूरी सहानुभूति है। इन सम्बन्धित प्रश्नो के हल का तमाम एशियाई राष्ट्रो पर गहरा प्रभाव पडेगा।

मुझे भविष्य निश्चित रूप से उज्ज्वल और मित्रतापूर्ण नजर आता है। बहुत कुछ इसपर निर्भर करेगा कि दोनो पक्ष कैसा आचरण करते है, और यह भी सही दृष्टिकोण और व्यक्तिगत सम्पर्क पर ही निर्भर है।

इस समय व्यक्तिगत सम्पर्कों मे वृद्धि हो तो बडी बात हो, क्योकि आगामी छह महीने दोनो देशो के पारस्परिक सम्बन्धो के लिए बडे ही महत्व के महीने सिद्ध होगे। मै यहाँ अपने कुछ मित्रो को यह सुझाव दे चुका हू। पर वे सब इस समय चुनावो म बेतरह व्यस्त दिखाई देते है। यदि आपके पक्ष के कुछ लोग व्यक्तिगत हैसियत से भारत की यात्रा करे तो कितनी अच्छी बात हो।

जो हो, स्थिति को सरल बनाने की दोनो ओर से भरसक कोशिश होनी चाहिए। यदि ऐसा हुआ तो मुझे इसमे तनिक भी सन्देह नही है कि भगवान के आशीर्वाद से दोनो देशो के बीच स्थायी मित्रता के सम्बन्ध स्थापित हो सकेगे। इससे सारी दुनिया का भी मगल होगा।

उस समय श्री आर्थर हेण्डर्सन के साथ मेरा काफी पत्र-व्यवहार हुआ। यथासमय मन्त्रिमडल मिशन, जिसमे लार्ड पथिक लारेंस, सर स्टेफर्ड क्रिप्स और श्री एलेक्जेडर थे, यहाँ आ पहुचा। सर स्टेफर्ड क्रिप्स और पेथिक लारेस भारत के जाने-बूझे मित्र थे और औसत दर्जे के समझदार आदमी ने यह जरूर समझ लिया होगा कि ब्रिटिश सरकार ने युद्धकाल मे लडाई बन्द होते ही और शान्ति-सधि पर हस्ताक्षर होने की प्रतीक्षा किये बिना ही भारत को स्वतत्रता प्रदान करने का जो वादा किया था उसे पूरा करने का उसका पूरा-पूरा इरादा है। पर विधि का विधान किसी तरह की दया-ममता दिखाये बिना हमे विभाजन की ओर खीचे लिये जा रहा था। कॉंग्रेस यह मानने के लिए तैयार न थी कि मन्त्रिमडल मिशन की योजना का एकमात्र उद्देश्य देश को विभाजन से बचाना है। उसने तो इस योजना को फूट डालकर शासन करने की नीति का सबसे ताजा प्रदर्शन समझा। उसका लालन-पालन ही इस धारणा के वातावरण मे हुआ था। इसमे सदेह नही कि कभी भारत-स्थित अग्रेजो ने इस नीति का अनुसरण किया था, पर यह नीति वेस्टमिन्स्टर को कभी नही रुची। जो भी हो, मन्त्रिमडल मिशन की योजना को रद्द कर दिया गया। कॉंग्रेस का कहना यह था कि वह इस योजना को उसी दशा मे स्वीकार कर सकती है, जब उसे उसकी अपनी ही व्याख्या करने की छूट रहे। यह व्याख्या ऐसी थी कि ब्रिटिश प्रधान मत्री श्री एटली ने साफ-साफ कह दिया था कि वह सही नहीं है, क्योकि योजना के प्रस्तावको की व्याख्या वैसी नही है और उसके बारे मे वही ज्यादा जान सकते है। राजाजी ने सदा की भाति इस अवसर पर भी अपने दिमाग को ठण्डा रखा। उन्होने मुझे लिखा :

२०।५।४६

प्रिय घनश्यामदासजी

मैंने कार्य-समिति का प्रस्ताव आज प्रात काल पत्रो मे पढा। मुझे

जिसकी आशंका थी वही हुआ। यह रुपये में सोलह आने की माग है और पुरानी कहानी की पुनरावृत्ति मात्र है।

आप कोई खुशखबरी दे सकें तो बात दूसरी है।

पर मेरी यह बद्धमूल धारणा थी कि विभाजन होकर रहेगा। साथ ही मैं यह भी समझता था कि हमारी कठिनाइयों से निस्तार पाने का यह एक अच्छा खासा तरीका है।

मैं सर स्टेफर्ड के स्वास्थ्य के बारे में खासतौर पर चिन्तित था, क्योंकि ये दिन बेहद गर्मियों के थे और उन्हें ऐसी आबहवा में रहने का अभ्यास नहीं था। वह इतने श्रान्त दिखाई देते थे कि जब मैंने इसका जिक्र गांधीजी से किया तो वह बोले, "सर स्टेफर्ड से कहो कि मैं बिना फीस उनकी डाक्टरी कर सकता हूं।" बापू को दूसरों की चिकित्सा करने में बड़ा आनन्द आता था और उन्होंने अपने लिए भी खान-पान के सम्बन्ध में कड़े नियम बना रखे थे। अतएव मैंने सर स्टेफर्ड को खाने-पीने की सूचनाओं से भरा एक पत्र भेजा और साथ ही कुछ फल और सब्जियाँ भी। मेरे पत्र के उत्तर में सर स्टेफर्ड ने लिखा

६, अप्रैल १९४६

गांधीजी ने मेरी चिकित्सा का भार लेने की जो बात कही उसका मेरे दिल पर खासतौर से असर हुआ। मैं उनके प्रस्ताव को गम्भीर भाव से ग्रहण करता हूँ, क्योंकि मैं जानता हूँ कि उनके विचार उस महिला (बॅाट्रिस ब्रेट) के विचारों-जैसे हैं जो इंग्लैंड में मेरे स्वास्थ्य की देखभाल करती है। यदि मुझे किसी चिकित्सक की दरकार हुई तो उनसे अवश्य अनुरोध करूंगा।

आपने प्रोटीनों की जो चर्चा की है सो आपके कहने के बाद से ही मैंने छाछ की व्यवस्था कर ली है। मैंने पहले इस ओर ध्यान नहीं दिया था, पर मुझे इस रूप में दूध सचमुच अच्छा लगता है, और यह मेरे स्वास्थ्य के लिए भी हितकर है। इस प्रकार आपकी सलाह मेरे लिए बड़ी ही लाभदायक सिद्ध हुई है।

मन्त्रिमडल मिशन इगलैड लौट गया। उसे अधिक सफलता नही मिली। जिसे दीर्घकालीन योजना कहा जाता है उसे कॉंग्रेस ने स्वीकार कर लिया था, इसलिए उसे सरकार बनाने को कहा गया। इसपर श्री जिन्ना बिगड गये। ऐसा लगने लगा कि उन्होने अपनी पार्टी की ओर से योजना के दोनो अगो को—अर्थात् अल्पकालीन और दीर्घकालीन अगो को—अगीकार करके कॉंग्रेस को मात दे दी है। उन्होने लार्ड वेवल को धिक्कारा और उनपर विश्वासघात का आरोप लगाया। प्रारम्भ मे तो वह अन्तरिम सरकार की रचना मे किसी प्रकार का सहयोग देने से बराबर इन्कार करते रहे, पर अन्त मे उन्होने स्वय अलग रहते हुए अपनी पार्टी के प्रतिनिधियो को उसमे भाग लेने की अनुमति दे दी। यह जाहिर था कि उन्होने अतरिम सरकार मे अपने प्रतिनिधियो को मेल-जोल की भावना से नही, बल्कि इस उद्देश्य से भेजा था कि वे चौकसी रखे और यह देखे कि उनके दावे अनसुने खारिज न हो जाय। इस कारण आरम्भ से ही अतरिम मन्त्रिमडल एक सुखी परिवार सिद्ध नही हुआ। वह तो दो झगडने वाले तत्वो का अखाडा बन गया। तेल और पानी की तरह उनके भी मिलने की सभावना नही थी। इसके बाद कलकत्ते मे जो भयकर नर-सहार हुआ, वह अन्यत्र की निष्ठुरता का प्रतिबिम्ब मात्र था। राजनीतिज्ञो की योजनाओ मे हजारो निर्दोष नर-नारियो के जीवन का मानो कोई मूल्य ही न हो। मैने अक्तूबर मे सर स्टेफर्ड क्रिप्स को लिखा

लीग अन्तरिम सरकार मे विरोधी मानस के साथ शामिल हो रही है। जिन्ना ने जवाहरलालजी की शर्तो को तो अस्वीकार कर दिया, पर जब वही शर्ते उनके सामने वायसराय ने रखी तो उन्हे झट स्वीकार कर लिया। यह भावी मेल-मिलाप के लिए शुभ चिन्ह नहीं है।

पर हमारी सरकार को तो राजनीति की अपेक्षा जनता की गरीबी की ओर अधिक गभीरतापूर्वक ध्यान देना चाहिए। किन्तु सरकार आर्थिक

मामलो को हाथ मे न ले पा रही है। वह तो राजनीति मे व्यस्त है और आज की राजनीति का एकमात्र अर्थ है जिन्ना।

उन आडे दिनो मे वापू और श्री नेहरू ने वगाल और विहार मे वडे शौर्य का परिचय दिया। वहाँ दोनो जातियाँ एक-दूसरे से वदला लेने मे लगी हुई थी। सर स्टेफर्ड ने १८ नवम्वर, १९४६ को मुझे लिखा

मेरे खयाल मे शाति-स्थापन के कार्य मे गाधीजी का योग वहुत ही उल्लेखयोग्य रहा है और उन्होने जो-कुछ किया है उसके लिए मै उनका अत्यन्त आभारी हू।

मेरे नाम वापू का यह लम्वा पत्र अपनी कहानी स्वय कहेगा

२६।११।४६

चि० घनश्यामदास

तुम्हे पता है कि मै श्रीरामपुर मे एकाकी रहता हू। साथ मे प्रो० निर्मल चद और परसराम है। यहा के घरवाले सज्जन है। एक ही हिन्दू कुटम्व इस देहात मे है, वाकी सव मुसलमान है। सव दूर दूर रहते है। यहा सैकडो देहात ऐसे है जो पानी सूखने के वाद एक-दूसरे से वाहन सम्वन्ध कम रखते है। नतीजा यह है कि पैदल काम हो सकता है इसलिये यो भी वदमाश लोग या शरीर मे सशक्त साधु लोग ही एक दूसरो के साथ व्यवहार कर सकते है। ऐसी एक देहात मे मै पडा हू और यहा से जो ऐसी देहात मे दिन व्यतीत करूगा। जवतक यहाँ के हिन्दू-मुसलमान हार्दिक मैत्री से नही रहते तवतक तो यही रहने का इरादा है। भगवान ही मन स्थिर रख सकता है। आज तो दिल्ली छूटा, सेवाग्राम छूटा, उरुली, पचगनी छूटा। इच्छा यहा मरना या करना है। इसमे मेरी अहिसा की परीक्षा है। परीक्षा मे उत्तीर्ण होने के लिये आया हू। मुझे मिलना चाहिये तो यहा आ सकते है तो आना होगा। मै आवश्यकता महसूस नही करता हू। किसीको पूछने के लिये भेजना है या हाथ मे डाक भेजना है तो भेजो।

कन्स्टीट्यूयेंट असेम्बली में मैं नहीं जाऊगा। आवश्यकता भी कम है। जवाहरलाल, सरदार, राजेनबाबू, राजाजी, मौलाना सब जा सकते हैं, या पाचों या कृपलानी। उन सब को पैगाम भेजो। यदि मिलिटरी की मदद से ही क० असेम्बली बैठ सकती है तो नही बैठाना अच्छा होगा। शान्ति मे बैठ सके तो जितने सूबे शरीक होवे उनके ही लिये कानून बन सकते है। मिलिटरी पुलिस का भविष्य मे क्या होगा सो देखना होगा। मुसलिम सूबे क्या करेंगे? जिन सूबो में मुसलिम सख्या कम है वहा क्या करना सो भी देखना होगा। अग्रेजी सरकार क्या करेगी, राजा लोग क्या करेंगे यह सब देखना होगा। मेरा ख्याल है कि तब १६ अप्रैल का स्टेट पेपर बदलना होगा। काम मेरी निगाह में पेचीदा है अगर हम सब काम स्वतत्र रूप से करना चाहे तो। मैंने तो मेरे ख्यालो का दिग्दर्शन करवाया है।

यह भी मित्रवर्ग समझ ले कि यहा जो मैं कर रहा हू वह, कांग्रेस के नाम से मन मे भी नहीं है, निजी अहिंसा दृष्टि से है। मेरे कार्य का विरोध हर कोई आदमी जाहिर मे भी कर सकता है। उनका अधिकार है। धर्म भी हो सकता है। इसलिये जो कुछ किसी को कहना करना है निडर रूप से कहा जाय, किया जाय। मझे किसी बात मे सावधान करना है तो किया जाय।

इसकी नकल सरदार को भेजो और उपरोक्त और अन्य मित्रो को बतावे या इतनी करवा कर उन उन मित्रो को भेजो।

तुम्हारे कहना है सो कहो।

मुझको लिखना पडे सो सीधा लिखो। प्या०, सुशीला, व०, सब अलग देहातो मे है। प्या० कल से बीमार है। कुशल होगे।

बापू के आशीर्वाद

इस दुखद काल मे मैंने एक बहुत लम्बा पत्र सर स्टेफर्ड क्रिप्स को लिखा। इतना लम्बा कि उसे पूरा उद्धृत करना सम्भव नही है। मैंने स्थिति का बहुत ही विषादपूर्ण चित्र खीचा

कांग्रेस के अन्तरिम सरकार मे जाने के बाद, वायसराय ने, जिनके सलाहकार श्री एबेल है, लीग के साथ किसी समझौते पर पहुचने के लिए हमको एक क्षण का भी अवकाश नही दिया। अपनी चालो से वह मुस्लिम लीग की जिद का पोषण करते रहे। जिन्ना एक सिरे से सबको गालिया देते रह। 'डान' अखबार उग्र लेख लिखता रहा और वायसराय जिन्ना के आगे सिर झुकाते रहे।

इसके बाद लीग अन्तरिम सरकार मे शामिल हुई। हमने सतोष की सास ली और समझा कि अब सविधान सभा मे लीग का सहयोग मिल जायेगा। हमे बताया गया कि जिन्ना से ऐसा आश्वासन ले लिया गया है। पर वास्तव मे ऐसा कुछ नही किया गया था। ठीक मौके पर लीग ने अपना पजा दिखाया और संविधान सभा मे आने से इन्कार कर दिया। वायसराय ने इस स्थिति को चुपचाप स्वीकार कर लिया।

लीग के सरकार मे शामिल होने के तुरत बाद स्थिति कुछ जमती हुई नजर आई। दगो ने शायद सभी को यह सबक सिखाया कि हिंसा से कुछ मिलने वाला नही। जैसा कि आपको मालूम ही है, दगो की शुरुआत कलकत्ते मे हुई। मुसलमानो ने 'प्रत्यक्ष कारंवाई' के दिन आक्रमण किया ओर हिन्दुओ ने जवाब दिया। मुसलमानो को हिन्दुओ से अधिक क्षति उठानी पडी। वे तडप गये ओर उन्होने कलकत्ते का बदला निकालने की योजना बनाई। अब नोआखाली काण्ड हुआ। लोगो को भारी सख्या मे धर्मच्युत किया गया, स्त्रिया भगाई गई और उन्हे निकाह करने को मजबूर किया गया। हिन्दू भडक उठे। इस तरह बिहार और बिहार के बाद मेरठ के उपद्रव हुए।

जिन्ना ने आबादी की अदला-बदली का सुझाव रखा जो कि एक मूर्खता-पूर्ण सुझाव था। एक भी प्रमुख मुसलमान ने उनका समर्थन नही किया। पर उत्तर प्रदेश, बिहार और अन्य स्थानो के लोगो को, जो लीग के सबसे बडे स्तम्भ थे, यह दिखाई देने लगा कि पाकिस्तान कायम हो जाने के बाद भी हिन्दू क्षेत्रो मे रहने वाले मुसलमानो को वही-के-वही रहना होगा और पाकिस्तान की स्थापना से उन्हे कोई मदद नही मिलेगी। उत्तर प्रदेश के लीगी समझौता करना चाहते थे और वहा मिला-जुला मन्त्रि-मडल बनाने के इशारे भी किये गए। यदि सफल होते तो अन्य स्थानो मे भी समझौते हो गये होते।

परतु ठीक इसी मनोवैज्ञानिक अवसर पर मानो सारी योजना को उलट देने के लिए ही वायसराय ने लदन-यात्रा की यह योजना बनाई। जवाहरलाल-जी और प्रधान मन्त्री के बीच तारो का जो आदान-प्रदान हुआ उससे हमारी धारणा हुई थी कि १६ मई के दस्तावेज पर पुनर्विचार का कोई सवाल नही उठता है, पर अब मेरी राय मे, अप्रत्यक्ष रूप से सारी बात पर पुनर्विचार होगा। बहुत सारी बातो को अस्पष्ट छोड दिया गया है। मैने ऊपर जो सवाल उठाये है उनके बारे मे जिन्ना और ब्रिटिश सरकार की वास्तविक स्थिति क्या है, सो हमे आजतक मालूम नही हुआ है।

मै आपको विश्वास दिलाना चाहता हू कि काग्रेस अधिक-से-अधिक

सदिच्छा से काम कर रही है। श्रीमती क्रिप्स की भांति आप भी सरदार पटेल के भाषणों की आलोचना कर सकते हैं, पर यदि वह चुप रह जाते तो स्थिति को बहुत गलत समझा जाता और मैं आपसे सच कहता हू कि उन भाषणों का मुसलमानों पर बुरा असर नहीं पड़ा। उन्होंने विरोध अवश्य किया है, पर स्थिति को समझ लिया है।

पर यदि हर मौके पर, जब कभी हम ठोस काम में जुटेंगे और वायसराय अमले के प्रतिगामी तत्वों की सलाह पर, और ब्रिटिश सरकार वायसराय की सलाह पर, सविधान सभा की प्रगति की राह में रोड़े अटकाने लगेगी तो लोग हताश हो जायगे और सारा ढाचा गिर पड़ेगा और इतने परिश्रम के साथ स्थापित किया गया विश्वास नष्ट हो जायगा। तब तो स्थिति पहले से भी अधिक गम्भीर हो जायगी।

श्रीमती क्रिप्स ने मुझसे पूछा कि स्थिति को सुधारने के लिए आखिर क्या किया जाय? मैंने उन्हें बताया कि निम्नलिखित बातें नितान्त आवश्यक हैं

१ अन्तरिम सरकार एक टोली के रूप में काम करे। मुस्लिम लीग या तो सविधान सभा में भाग ले या अन्तरिम सरकार से अलग हो जाय। उससे यह बात साफ-साफ और दृढतापूर्वक कह देनी चाहिए।

२ यद्यपि मैं आत्म-निर्णय के सिद्धान्त पर आपत्ति नहीं करता और यह स्वीकार करता हू कि देश के किसी अनिच्छुक भाग पर कोई सविधान न लादा जाय, तथापि यह स्पष्ट कर दिया जाना चाहिए, जैसा कि आपने १६ मई को राजकीय दस्तावेज में किया है, कि यदि मुसलमान शरीक नहीं होते हैं तो अन्तिम उपाय यही है कि वे उन्ही स्थानों में अपनी पसन्द का सविधान लागू कर सकेंगे, जिनमें उनका बहुमत होगा—अर्थात् सारे पजाब और सारे बगाल में नहीं। हमारी प्रभुत्व करने की कोई इच्छा नही है, पर साथ ही हम यह भी हर्गिज मजूर नहीं करेंगे कि हमारे ऊपर उनका प्रभुत्व लादा जाय।

३: वायसराय और अमले को अपना काम ठीक तरह से करना चाहिए। लार्ड वेवल राजनीतिज्ञ नहीं हैं और उनके सलाहकार लीग का पक्षपात करते हैं और भारत को स्वतत्र नहीं देखना चाहते। इस विषय में मुझे तनि क भी सदेह नहीं है।

४ हर हालत में अमुक तारीख को सत्ता भारतीय हाथो में सौंप दी जायगी, इसकी घोषणा होना बहुत जरूरी है। जबतक यह अनिश्चय की स्थिति बनी रहेगी, कोई समझौता सम्भव नहीं होगा।

मैं ब्रिटिश सरकार की कठिनाइया समझता हू। मुझे इस विषय में

कोई सदेह नही है कि आप भरसक प्रयत्न कर रहे है। परन्तु आपको हमारी कठिनाइयो को भी तो समझना चाहिए। सदिच्छाओ के बावजूद अबतक जो कुछ होता रहा है उससे खाई पटी नही है, उल्टे और चौडी हो गई है।

मेरा यह सोचना दुस्साहस होगा कि स्वतत्रता की निश्चित तारीख या अवधि नियत करने के सम्बन्ध मे मेरे सुझाव से प्रेरित होकर ही मजदूर सरकार ने वैसा करने का फैसला किया तथा लार्ड वेवल को वापस बुलाकर उनकी जगह लार्ड माउन्ट-बेटन को भेजा, पर मेरी धारणा है कि मेरे सुझाव का भी कुछ-न-कुछ असर पडा ही होगा।

तीन दिन बाद मैने सर स्टेफर्ड क्रिप्स को फिर लिखा

१५, दिसम्बर १९४६

प्रिय सर स्टेफर्ड

१२ ता० को आपको पत्र लिखने के बाद, आपका पूरा भाषण भारत मे प्रकाशित हुआ। उसमे घटनाओ का ठीक-ठीक निचोड दिया गया है। कुल मिलाकर ब्रिटिश लोक सभा की बहस को सन्तोषजनक कहा जा सकता है। जब मै देखता हू कि चर्चिल और जिन्ना तो आपको कोसते ही है, इधर हम भी आपकी आलोचना करते है तो आपके साथ मुझे बडी सहानुभूति होती है।

देखता हू कि मैने अपने पिछले पत्र में जो मुद्दे उठाये थे, उनमे से एक का आपने अपने भाषण में उत्तर दिया है। ६ दिसम्बर के वक्तव्य के अन्तिम वाक्य का जिक्र करते हुए आपने कहा है कि मुस्लिम बहुमत वाले क्षेत्रो में कोई सविधान नही लादा जायगा। इस बारे में मेरा कोई झगडा नही है। यह कोई नही चाहता कि मुसलमानो के सहयोग के बिना निर्मित सविधान पूर्वी बगाल या पश्चिमी पजाब या अन्य मुस्लिम क्षेत्रो पर लादा जाय। पर क्या सचमुच आपका यह विश्वास है कि जिन्ना सहयोग करेंगे ?

मुझे तो पूरा सदेह है कि जिन्ना अन्त में सविधान सभा में भाग लेने आ जायगे और वह ऐसा करेगे भी तो सिर्फ पाकिस्तान की लडाई लडने के लिए। इसलिए मुझे तो उनके और हमारे बीच कोई समान आधार दिखाई नही देता है। साथ ही मेरा यह भी विश्वास है कि कांग्रेस युक्तिसगत रुख अख्तियार करेगी और उनके सहयोग का स्वागत करेगी।

मेरा अपना विचार तो यह है कि लीग के अन्य सदस्य उतनी कठिनाई पैदा नहीं करते हैं। बात उन्हीं तक सीमित हो तो वे युक्तिसंगत रुख अपना सकते हैं, पर जिन्ना कभी सहयोग करेंगे, ऐसी मेरी धारणा नहीं है। यथार्थवादियों को इस स्थिति का सामना करना ही होगा।

इधर बापू और सब समस्याओं को एक ओर रखकर हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिए साहसपूर्वक सचेष्ट थे, पर उन्हें सफलता यदा-कदा ही मिल जाती थी। वह तब भी पूर्वी बंगाल की दलदल में फंसे पड़े थे। सरदार पटेल समेत उनके सभी मित्र पूर्वी बंगाल में उनके लम्बे समय तक फंसे रहने की बुद्धिमता को भारी सन्देह की दृष्टि से देखने लगे थे। बापू के इस प्रवास के फलस्वरूप उनके एकनिष्ठ सहकारियों पर भी असाधारण बोझ पड़ रहा था। उन्हें बड़ी तकलीफ में दिन गुजारने पड़ते थे। बापू के एक साथी ने उन स्थानों की तुलना चूहों के बिलों से की थी।

इन दिनों बापू और उनकी कुछ महिला सहकारियों के पारस्परिक सम्पर्क को लेकर कुछ विवाद-सा उठ खड़ा हुआ। वैसे इसमें कोई बुराई की बात नहीं थी, पर दोष निकालने वालों का भी अभाव न था। ये लोग तो बापू पर हर तरह का लॉछन लगाते ही रहते थे। बापू ने एक सार्वजनिक वक्तव्य देना चाहा, पर सरदार ने वैसा करना उचित नहीं समझा। सरदार का और दूसरों का विचार था कि ऐसी बातों के संबंध में जनता को अपना दृष्टिकोण बताने के बजाय पूर्णतया निर्दोष होते हुए भी बापू को दुनिया की इच्छा के अनुरूप आचरण करना चाहिए। बापू को यह बात पसन्द नहीं आई। उनकी वेदना मेरे नाम लिखे एक लम्बे पत्र में प्रकट हुई

रामपुर
१४-२-४७

चि० घनश्यामदास

तुमको एक खत लिखकर सुशीला के मार्फत भेज दिया। लेकिन सरदार के खत से मैं कुछ अस्वस्थ हुआ हूं। देवदास का खत तो मेरे कानों

मे गूज रहा है। तुमको जो मैने लिखा है वो याद तो नही है उसकी नकल नहीं रखी। आज तो इतना ही लिखना चाहता हू कि तुम्हारी तटस्थता छोडनी चाहिये। सरदार के मन मे स्पष्ट है कि अधर्म को मै धर्म मानकर बैठा हू। देवदास तो ऐसा लिखता है ही। सरदार की बुद्धि पर मुझे बहुत विश्वास है। देवदास की बुद्धि पर भी है लेकिन मेरे नजदीक देवदास बडा होते हुये भी बालक है। सरदार के लिये ऐसा नही कहा जाता। किशोरीलाल और नरहरि भी बालक नही है, लेकिन उनका विरोध समझने मे मुझको दिक्कत नही है। मेरा जीवन शुद्ध है, पवित्र है, धर्म पालने के लिये ही चलता है, ऐसी मान्यता ही तुम्हारे और मेरे बीच मे गाठ है। अगर ये नही है तो कुछ नही है, इसलिये चाहता हू कि इस काम मे पूरा हिस्सा लो भले अदृश्य रूप से ही क्योंकि तुम्हारे व्यापार मे खलल पहुचे ऐसा मै नही चाहता। लेकिन मै अधर्म का आचरण करता हू तो मेरा सख्त विरोध करने का सब मित्रो का धर्म हो जाता है। सत्याग्रही अन्त मे दुराग्रही भी बन सकता है। भेद तो इतना ही रहता है कि असत्य को सच मानकर बैठ जाय तो दुराग्रही बन गया। मै ऐसा नही हू, ऐसे मानता हू, लेकिन उससे क्या हुआ। परमेश्वर तो हू नही। गलती कर सकता हू। गलतिया की है। अन्तिम समय पर बडी भारी गलती हो सकती है। अगर हुई है तो जितने हितेच्छु है वे मेरा विरोध करके मेरी आखे खोल सकते है। न करे तो मुझको ऐसे ही जाना तो है तो मै चला जाऊगा। जो कुछ भी मै यहा करता हू वह सब मेरे यज्ञ का हिस्सा है। जानबूझकर ऐसा कुछ नही करता हू कि जो इस यज्ञ मे समाविष्ट न हो सके। आराम लेता हू वो भी यज्ञ के ही लिये।

आख और पेट पर मिट्टी है और इसे लिखवाता हू। थोडे समय मे शाम की प्रार्थना मे जाना है। म० प्रकरण मेरा काफी समय लेता है। उसमे मुझको आपत्ति नही है क्योंकि उसको भी यज्ञ के कारण रखा है। इसकी परीक्षा भी यज्ञ का हिस्सा है। यह सब मै समझा न सकू वह दूसरी बात है। मित्रो को समझाना तो इतना ही है कि मै म० को मेरी गोद मे लेता हू तो एक पवित्र पिता की हैसियत से कि धर्मभ्रष्ट पिता की हैसियत से। जो मै करता हू वह मेरे लिये नई बात नही है। विचार सृष्टि मे शायद ५० साल से, आचार मे भी बरसो थोडा या बहुत किया ही है। मेरे साथ का सब सम्बन्ध तोडोगे तो भी मुझको दु ख नही होगा। जैसे मै अपना धर्म पर कायम रहना चाहता हू ठीक इसी तरह से तुम्हारे रहना है।

अभी दूसरा विषय पर आता हू। यहा के हिन्दू जुलाहा है उनको ताती कहते है। वे लोग बेकार हो गये है। उनका घर के चरखा काफी जलाये गये है। मकान भी जलाये गये है। सूत न मिले तो बेकार बैठना है। या

तो कुदारी लेकर मजदूरी करना है। तो यहा के आफिसर ने मुझको कहा सूत गवर्नमेट को मिल नही सकता। सेन्ट्रल गवर्नमेट दे तो हो सकता है। तो मैंने कहा अगर आप दाम दे तो मैं शायद सूत पैदा कर लूगा। तो वह राजी हुआ। क्या आप लोग सूत दे सकते हैं? अगर दे सकते है तो कितना? और क्या दाम ले? और कब दे सकोगे? क्या वह सूत देने मे मध्यवर्ती गवर्नमेट की इजाजत लेनी पड़ती है? यह सब लिखो।

वापू के आशीर्वाद

यह कहने की जरूरत नही कि वापू के कथन की सराहना करते हुए भी मैंने उनकी दलीलो का प्रवल विरोध किया और अन्त मे उन्होने हम लोगो की सलाह मान ली, यद्यपि उनको उसका औचित्य जचा नही। उनके शत्रु उस समय इसको कुचर्चा का रूप देने की चेष्टा कर रहे थे। हमने सोचा कि वापू का सार्व-जनिक वक्तव्य सही और सीधा कदम होते हुए भी समयानुकूल नही होगा। हम सव दुनियादारो की तरह आचरण करते है। हम चाहते थे कि वह भी ऐसा ही करे। सौभाग्यवश वह हमारे दृष्टिकोण से सहमत हो गये और हमारी एक भारी चिन्ता दूर हुई।

वापू का उपरोक्त पत्र अन्तिम महत्वपूर्ण पत्र था जो मुझे प्राप्त हुआ, क्योकि वह कुछ महीने वाद दिल्ली लौट आये थे और लगातार पॉच महीने से कुछ अधिक मेरे मकान मे मेरे साथ रहे थे और वही उनकी इहलीला समाप्त हुई थी।

उनके जीवन की अन्तिम घडियो से सम्वन्वित घटनाओ का वर्णन करने के वजाय मैं अपने रेडियो के एक भाषण का एक अश उद्धृत करता हू जो मैंने उनकी मृत्यु के कुछ ही वाद दिया था।

इस वार गाधीजी ने दिल्ली मे करीव पाच महीने मेरे साथ रहने का मुझे सौभाग्य प्रदान किया और उनके साथ काफी वडी सख्या मे स्त्री-पुरुष मेरे अतिथि हुए। साफ कहू तो, उनके कुछ अतिथियो को मैं पसन्द नहीं करता था और न वापू के साथी ही उन्हे पसन्द करते थे, पर मेरा मकान उन

सबके लिए खुला था जो गांधीजी के पास आते थे। सवेरे से लगातार बहुत रात तक मिलने आने वालों का अटूट तांता बंधा रहता था और गांधीजी इस बात की परवाह किये बिना कि उनपर कितना बोझ पड़ रहा है, हरएक से कुछ-न-कुछ कहते-सुनते रहते थे, चाहे वह उनके दर्शन के लिए आया हो या उनकी सलाह लेने।

बिड़ला भवन की बम-विस्फोट की घटना के बाद गांधीजी के निकटतम साथियों ने उनसे भीड़ को दूर रखने का अनुरोध किया। सरदार वल्लभभाई पटेल ने प्रार्थना-सभा की देखभाल और रक्षा के लिए करीब ३० फौजी और करीब २० पुलिस अधिकारी तैनात किये। उनके जिम्मे चौकसी करने और प्रार्थना-सभा पर निगाह रखने का काम था। पुलिस के अधिकारी प्रार्थना-सभा में आने वालों की तलाशी भी लेना चाहते थे, पर गांधीजी ने इसकी इजाजत नहीं दी। मुझे आभास-सा हो रहा था कि ईश्वर की दूसरी ही इच्छा है तो सुरक्षा-सम्बन्धी उपायों में विशेष प्रयोजन सिद्ध नहीं होगा। जब कभी उनकी रक्षा के बारे में चिन्ता प्रकट की जाती तो उनका एकमात्र उत्तर यही होता 'मेरा रक्षक तो बस एक राम है।'

इधर कुछ दिनों में राम-नाम की अचूक औषधि में उन्हें बहुत अधिक आस्था हो गई थी। वह तो अपने शुभैषी चिकित्सकों की सलाह की ओर भी कान नहीं देते थे। पिछले उपवास के बाद उनका हाज़मा बिगड़ गया था। मैंने उन्हें एक सीधी-सादी घरेलू दवा सुझाई। काफी समझाने-बुझाने के बाद उन्होंने उसे लेना स्वीकार किया। शोक, उनके महान् चिकित्सक राम ने उन्हें शीघ्र ही अपने पास बुला लिया।

अन्तिम उपवास के कारण उनके प्रिय शिष्यों को गहरी चिन्ता हुई। इस उपवास की उपयोगिता अथवा औचित्य के विरुद्ध मैंने भी उनके साथ तर्क करने की चेष्टा की, पर गांधीजी अचल रहे। यह बात नहीं कि गांधीजी हठी थे। वह सदा विचार-परिवर्तन के लिए तैयार रहते थे। जो लोग उनके साथ विचार-विमर्श करने आते थे, उनके विचारों को उद्दीप्त और जिज्ञासा को जागृत करने का उनका अपना तरीका था। वह रचनात्मक आलोचना को कितने धैर्य के साथ सुनते थे। उनके उपवास के दिनों में ही मुझे जरूरी काम से बम्बई जाना था, पर उन्हें उपवास करते छोड़कर मैं कैसे जाता?

मैं उनकी अनुमति लेने गया। मैंने पूछा, "क्या आप मुझसे सहमत नहीं हैं कि यह उपवास जल्दी ही समाप्त होना चाहिए? मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि देश ने आपकी अभिलाषा का बड़ा ही अनुकूल उत्तर दिया है।" गांधीजी मुस्कराये, बोले, "तुम अपना काम देखो। मेरी अनुमति क्या लेते हो?" मैंने उनसे फिर पूछा, "आपके इस उपवास के जल्दी ही समाप्त

होने के बारे में आपकी क्या धारणा है ?" बापू मुस्कराते रहे। वह मेरे जाल मे फसने वाले नहीं थे। मैंने उन्हे नचिकेता और यम की कथा सुनाई और कहा, "जब नचिकेता ने यम के द्वार पर उपवास किया था तो यम भी घबरा गये थे। मैं चिन्ता और प्रताड़ना की अनुभूति कैसे न करूं जब एक महात्मा मेरे घर मे उपवास कर रहा है।" मेरे सारे प्रश्नों का उनके पास एक ही उत्तर था, "मेरा जीवन राम के हाथ मे है।"

शुक्रवार को उस विधि द्वारा नियत सध्या को करीब सवा पाच बजे गांधीजी पर गोली दागी गई और शीघ्र ही उन्होंने प्राण त्याग दिये। उस समय मैं पिलानी मे था। करीब छ बजे शाम को कालेज के लडके मेरे पास दौडे आये और मुझे रेडियो पर सुनी वह दुखदायी खबर सुनाई। जी में आया कि मोटर से दिल्ली दौड पडूं, पर मेरे मित्रों ने सलाह दी कि दूसरे दिन तडके ही वायुयान से जाना ठीक रहेगा। मैंने वह रात पिलानी मे कितनी बेचैनी से बिताई! मैं सोया या नहीं, और सोया तो कब सोया, अथवा मैं स्वप्नावस्था में था या मेरी आत्मा उडकर गांधीजी के पास पहुच गई थी, सो मुझे कुछ मालूम नही हुआ। मानो मैं मूर्च्छित अवस्था मे होऊ और अचानक गांधीजी के पास पहुच गया होऊ।

मैंने देखा कि उनका शरीर ठीक वहीं पडा है जहा वह सोया करते थे। मैंने प्यारेलाल और सुशीला को उनके पास बैठे देखा। मुझे देखते ही गांधीजी उठ बैठे, मानो नीद से जागे हों और प्यार से मुझे थपथपाते हुए बोले, "तुम आ गये, अच्छा हुआ। मेरे लिए चिन्ता मत करो, मैं षडयन्त्र का शिकार हुआ हू, तो क्या हुआ ? मै तो खुशी के मारे नाचूगा, क्योंकि मेरा मिशन अब पूरा हो गया है।" तब उन्होंने अपनी घडी निकाली और कहा, 'अब तो ११ बज रहे हैं, और तुमको मुझे जमना-घाट ले जाना है। इसलिए अब मुझे लेट जाना चाहिए।"

अचानक मैं जग पडा और आश्चर्य करने लगा कि यह स्वप्न था अथवा पारलौकिक यथार्थता।

अगले दिन मैंने प्यारे बापू को चिर निद्रा मे निद्रित पाया मानो उन्हे कुछ हुआ ही नहीं है। उनका मुख-मण्डल उसी सरल आकर्षण, प्रेम और पावनता की ज्योति से आलोकित हो रहा है। मुझे उनकी मुद्रा मे करुणा और क्षमा की भी एक क्षीण-सी रेखा के दर्शन हुए। शोक, हमे मानवता और दयार्द्रता से दिपदिपाता-हुआ वह चेहरा अब देखने को नहीं मिलेगा।

वास्तव मे एक महान् ज्योति विलीन हो गई, एक महारथी खेत रहा, एक महान् आत्मा मौन हो गई।

इस प्रकार बापू के साथ मेरे ३२ वर्ष के अटूट सम्बन्ध का अन्त हुआ।

: ३२ :

स्वतन्त्रता के बाद

जब स्वतन्त्रता का आगमन हुआ तो दो बातो का सबसे अधिक महत्व दिखाई दिया। उनमे से एक थी उत्पादन-कार्य मे वेगशील-वृद्धि। वर्षा के मनमौजीपन के फलस्वरूप फसलो के नष्ट हो जाने से और कुछ अन्य कारणो से भी, हमारे लिए भूखो मरने का खतरा पैदा हो गया था और बगाल के दुर्भिक्ष की बडे पैमाने पर पुनरावृत्ति होने की सभावना दिखाई देने लगी थी। हम विदेशो से बडी मात्रा मे खाद्यान्न का आयात कर रहे थे, पर उसका मूल्य चुकाने के लिए न तो हम निर्यात की सामग्री ही पर्याप्त मात्रा मे तैयार कर रहे थे और न हमे ऐसे बाजार ही सुलभ थे, जिनमे हम अपने देश मे तैयार की गई निर्यात की सामग्री को बेच पाते। फलस्वरूप हमे अपने आयात की कीमत चुकाने के लिए पौंड-पावने की अपनी सचित निधि को बडी तेजी के साथ खर्च करना पड़ रहा था।

दूसरी महत्वपूर्ण बात यह थी कि हमको पूजी की आवश्यकता थी। देश मे पर्याप्त पूजी होने के साधन उपलब्ध नही थे और यह स्पष्ट ही था कि पूजी बाहर से मगानी होगी। मत्रियो ने शुरू-शुरू के उत्साह मे आकर अदूरदर्शितापूर्ण भाषण दिये, जिनसे देशी और विदेशी पूजी, दोनो ही सशकित हो गई। मत्रीगण अनेक दिशाओ मे ब्रिटेन की मजदूर सरकार का अनुकरण करना चाहते थे। पर बाद मे जो स्थिति सामने आई, उससे पता चला कि उन्होने उस सरकार की आर्थिक सफलताओ का मूल्य बहुत अधिक आंका था और जो कीमत उसे चुकानी पडी उसे बहुत कम करके माना था। इस अवस्था में सुधार

करने के उद्देश्य से मैंने उत्पादन बढाने के साधन तलाश करने के लिए और भारत की स्थिति को स्पष्ट करने के लिए भी, जिसे उस समय काफी गलत समझा जा रहा था, ब्रिटेन और अमरीका की यात्रा की। यह कहना ज्यादा ठीक होगा कि ब्रिटेन मे हमारी स्थिति को ज्यादा गलत समझा जा रहा था। अमरीका मे न तो हमारी स्थिति को ठीक-ठीक समझा जा रहा था, न गलत ही। कुछ इनेगिने राजनेताओ को छोड कर बाकी अमरीकियो को हमारी स्थिति की ओर से उदासीनता मात्र थी। इन राजनेताओ को हमारी स्थिति से भौगोलिक और नैतिक दृष्टि से केवल इतना ही अनुराग था कि हम साम्यवाद से मोर्चा ले।

सौभाग्य से इग्लैड मे मुझे श्री चर्चिल के साथ लम्बी बातचीत करने का अवसर मिला, पर मैंने देखा कि उन्हे भारत के बारे मे जितनी गलत जानकारी पहले थी, उतनी ही अब भी है। मैंने अपनी इस मुलाकात का विवरण सरदार पटेल को लिख भेजा था। मेरे पत्र-व्यवहार मे बापू का जो स्थान था, वह अब सरदार पटेल ने ले लिया था। उस पत्र का एक उद्धरण यहाँ देता हूँ

वह (चर्चिल) अकस्मात् उबल पडे—"आप लोगो ने हैदराबाद में जो कुछ किया सो मुझे पसन्द नही आया। आपको जनमत सग्रह करना चाहिये था।" मैंने उन्हे बताया कि अब भारत मे शान्ति विराज रही है और जो अग्रेज हाल मे वहा गये हैं, उनका कहना है कि दुनिया का कोई भी मुल्क आज भारत जितना शान्त नही है। पडित नेहरू और सरदार बहुत अच्छी तरह काम चला रहे हैं। हम साम्यवाद की बाढ को रोक रहे हैं, पर हमे लोगो की हालत को सुधारना है। हमे दो चीजो की दरकार है पहली सशक्त रक्षा-व्यवस्था और दूसरी वेगशील औद्योगीकरण। ये दोनो बाते तुरन्त होनी चाहिए। हमारे नेता अब काफी बूढे हो चले है। आज तो उनका शब्द ही कानून है। पर यदि वे अगले दस वर्षों मे भारत का निर्माण न कर सके तो उसके बाद क्या होगा, सो मैं नही जानता।"

उन्होने कहा, "मुझे दस वर्ष आगे की बात नही सोचनी चाहिए। सोचने के लिए एक साल बहुत काफी है।"

तब मैंने उन्हें मित्रता के उस संदेश की याद दिलाई जो सन् १९३५ में उन्होंने मेरे द्वारा गांधीजी को भेजा था। "हम अब स्वतन्त्र हो चुके हैं। हम मित्र हैं और आगे भी मित्र रहना चाहेंगे। फिर आप इतनी गैरियत के साथ क्यों बातें करते हैं?" उन्होंने तुरन्त उत्तर दिया, "मैं गैरियत नहीं बरत रहा हूं। आप इंग्लैण्ड के साथ अच्छा बर्ताव करेंगे तो मैं निश्चित रूप से अनुकूल प्रत्युत्तर दूंगा। शायद हम सरकार में लौट आयंगे। समाजवादी जनता में अप्रिय होते जा रहे हैं, इसलिए मैं कोई ऐसा काम नहीं करना चाहता, जिसे भारत में अमैत्रीपूर्ण समझा जाय। पिछली बातों को सोचना मेरी आदत में दाखिल नहीं है। मुझे आगे की ओर देखना सिखाया गया है। भूतकाल भुला दिया गया है। अब यदि आप सहयोग करेंगे तो मैं भी सहयोग करने को तैयार हूं।" मैंने उन्हें बताया कि पं० नेहरू ने किस प्रकार अपनी तमाम पिछली कटुता के बावजूद राष्ट्रमंडल में रहने का फैसला किया है। उन्होंने हृदय के पूरे योग के साथ उत्तर दिया, "मैं उनकी उदारता की बहुत सराहना करता हूं।" तब अकस्मात् उन्होंने प्रश्न किया, "क्या आपके यहां अपना राष्ट्रीय गान है? क्या उसकी ध्वनि अच्छी है?" मैंने कहा, "बहुत अच्छी तो नहीं है।" "आप अपने राष्ट्रीय गान के साथ "ईश्वर राजा की रक्षा करें" क्यों नहीं बजाते? ये छोटी-छोटी बातें काफी सहायक होती हैं। कनाडा का अपना गान है, पर उसके साथ वे लोग हमारे गान की ध्वनि भी बजाते हैं। इससे मित्रता की भावना पैदा होती है।" मैंने कठिनाई बताई, पर साथ ही कहा, "यह तो इंग्लैण्ड पर ही निर्भर है। आप मित्र रहेंगे तो शायद इसकी भी नौबत आ जाय।" उन्होंने कहा, 'मेरी धारणा है कि समय आने पर ऐसा भी होगा।" मैंने उनसे कहा कि हमारी सबसे बड़ी कमजोरी हमारी दरिद्रता है जिसे हम थोड़े समय में दूर करना चाहते हैं और यदि हम अपने लोगों का स्तर ऊंचा न उठा पाये तो साम्यवाद की बाढ़ किसीके रोके न रुकेगी। इंग्लैण्ड को इस काम में हमारे साथ सहयोग करना चाहिए। उन्होंने कहा, "बढ़ती हुई जनसंख्या के साथ आपकी गरीबी एक कठिन समस्या अवश्य है।"

मैंने उनसे पूछा कि श्री ईडन भारत के क्या संस्मरण लाये हैं? उन्होंने कहा, 'उन्हें बड़ी खुशी हुई। उन्होंने आपके साथ हुई अपनी बातचीत का मुझसे जिक्र किया था।' तब उन्होंने मुझसे पूछा कि क्या नेहरू राष्ट्र-मंडल के विचार को मनवा सकेंगे? मैंने कहा, "मुझे इसमें कोई शक नहीं है। समाजवादी बहुत शक्तिशाली नहीं हैं। साम्यवादी छितरे हुए हैं।" मैंने उनसे कहा कि ब्रिटेन को और किसी देश की अपेक्षा हमारी सहायता अधिक करनी चाहिए। उन्होंने स्वीकार किया, पुन: अपनी मैत्री की

आकांक्षा की पुष्टि की, पर साथ ही कहा कि पाकिस्तान के पास जल और खाद्य के साधन प्रचुर मात्रा में हैं।

यहाँ हर कोई यह सोचता प्रतीत होता है कि समाजवादियों का प्रभाव कम होता जा रहा है। अतएव यदि अगले चुनाव में मजदूर दल के बहुमत में काफी कमी हो जाय तो मुझे आश्चर्य नहीं होगा।

कल मैं श्री अलेक्जेन्डर से मिल रहा हूं।

६ मई, १९४९

कल मैं श्री ऐंथनी ईडन से आधे घंटे के लिए मिला। उन्होंने मुझे बताया कि जब दिल्ली में वह चाय पर आपके यहां थे तो आपने उनसे कहा था कि अपने संविधान की वर्तमान स्थिति को कायम रखते हुए आप राष्ट्रमंडल में बने रहने को तैयार होंगे। यह बात श्री ईडन ने एटली और चर्चिल ने भी कह दी है और चर्चिल से सहायता की जोरदार सिफारिश की है। उन्हें परिणाम से भारी संतोष है।

मैंने उनसे इस विषय की भी चर्चा की कि भारत को सैनिक और औद्योगिक दृष्टि से मजबूत बनाने की जरूरत है और कहा कि ब्रिटेन को इस दिशा में हमें सहयोग देना चाहिए। उन्होंने कहा कि वह सैनिक सामग्री के बारे में लार्ड अलेक्जेन्डर से बात करेंगे और उद्योग के बारे में ब्रिटिश पूंजीपतियों से। उन्होंने कहा कि अब भारत राष्ट्रमंडल में है तो वे सभी तरह का सहयोग देंगे। वह अच्छे और सहृदय प्रतीत हुए।

अमरीका से लन्दन वापस लौटने पर, मैंने जुलाई में सरदार को लिखा

११, जुलाई, १९४९

अबतक मैं यहां प्रधान मंत्री, श्री अलेक्जेन्डर, श्री बेविन, श्री नोएल बेकर, सर जान एण्डर्सन और श्री चर्चिल से मिल चुका हूं। इनमें से कुछ से दुबारा और दूसरों से आगामी सप्ताह में मिलने की आशा है। क्रिप्स से एक-दो दिन में मिलने वाला हूं।

मुडी के त्यागपत्र और लियाकत की संभावित मास्को-यात्रा को यहां विशेष महत्व नहीं दिया जा रहा है। उन्हें यह सबकुछ पसन्द नहीं है, पर वे इसे ब्रिटेन से रिआयतें ऐंठने के लिए एक झांसा-मात्र समझते हैं। पाकिस्तान को ध्यान में रखा जाय तो इन तौर-तरीकों का असर यहाँ कुल मिलाकर बुरा नहीं रहा। पाकिस्तान को अब भी निम्नकोटि का ही

समझा जाता है। हम लोग भले, विवेकशील और आदरणीय व्यक्ति समझे जाते है, साथ ही हमे सदा यही परामर्श दिया जाता है कि हमे पाकिस्तानियो को बहलाते रहना चाहिए। 'वे गिर पडे तो यह आपके ही हित मे बुरा होगा', हमे ऐसी सलाह दी जाती है।

कश्मीर को लेकर ये सब बहुत चिन्तित है। यहा के लोग जम्मू और बौद्धो के क्षेत्र की स्थिति को तो समझते है, पर इनकी समझ मे यह बात नही आती कि हम मुस्लिम-बहुल कश्मीर घाटी को भारत मे शामिल करने का आग्रह क्यो कर रहे है।

यहा हैदराबाद को लेकर किसी को परेशानी नही है। उसे तो भुला ही दिया गया है। मुख्य प्रश्न कश्मीर का है और प्राय हर कोई किसी-न-किसी प्रकार के विभाजन का पक्ष लेता दिखाई देता है।

यहा की आर्थिक अवस्था बहुत खराब है। पर जो बात सबसे अधिक उल्लेख-योग्य है वह यह है कि ये लोग इस अवस्था का मुकाबला लौह सकल्प के साथ और अत्यन्त वैज्ञानिक तरीको से कर रहे है। सभव है, ये लोग वर्तमान जीवन-स्तर कायम न रख सकें, पर उसे कायम रखने के लिए कडा सघर्ष किये बिना ये उसे गिरने नही देगे।

इग्लैण्ड की पूजी भारत मे लगने के बारे मे अमरीका की अपेक्षा यहा की स्थिति अधिक अनुकूल है। मैने यहा कुछ व्यवसायियो से बात की है और उनका रुख निराशाजनक नही था। कुछ कठिनाइया है, जिन्हे हल करना ही होगा। किन्तु इस बारे में भी मेरा खयाल है कि मेरे लिए कुछ कर सकना सभव होगा।

१४ जुलाई, १९४९

आपको पिछला पत्र लिखने के बाद मै लार्ड हेलीफैक्स और लन्दन के 'इकोनामिस्ट' के सपादक श्री क्रोथर से मिला। आज मैने लेडी माउन्टबेटन के साथ दोपहर का भोजन किया। लेडी क्रिप्स और कुमारी पामेला माउन्टबेटन भी उपस्थित थी। दोपहर को मै लार्ड केमरोज और उनके सपादक अर्थात् डेली 'टेलीग्राफ' के सपादक से मिला।

लेडी माउन्टबेटन हमारे सामान्य शासन-कार्य मे पूरे तौर से सन्तुष्ट नही थी। उनका खयाल था कि हम आवश्यकता से अधिक केन्द्रीकरण कर रहे है और मत्रियो पर काम का बोझ ज्यादा है। उनकी बातों में आलोचना का पुट था, पर वह आलोचना मैत्री की भावना से ओतप्रोत थी। उन्होने मुझसे कहा, "आप मेरा सप्रेम अभिवादन सरदार को पहुचा दीजिए।" रक्षा मत्री श्री एलेक्जेन्डर और लेडी क्रिप्स ने भी ऐसा ही कहा है।

भोजन के समय करीब दस मिनट तक लेडी माउन्टबेटन, उनकी पुत्री और लेडी क्रिप्स मणिबहन की तारीफ करने में एक-दूसरे की प्रतिस्पर्द्धा करती रहीं। अगर मणिबहन मौजूद होती तो सकुचा जाती और घबरा उठती।

'डेली टेलीग्राफ' का और कभी-कभी 'डेली एक्सप्रेस' का भी रुख हमारे खिलाफ ही रहता है। कल भारत से प्राप्त एक शरारत-भरा संवाद प्रकाशित हुआ, जिसमें अंग्रेजों और पाकिस्तानियों के बिगड़ते जा रहे संबंधों की चर्चा थी और इसका दोष संवाददाता ने भारत के मत्थे मढ़ा था। इस बारे में केमरोज और उनके संपादक के साथ लम्बी बातचीत हुई।

नोएल बेकर कश्मीर को लेकर चिन्तित थे। वह जनमत-संग्रह में विश्वास रखते हैं, किन्तु मेरा खयाल है कि उनका विश्वास क्षेत्रीय जनमत संग्रह में है, सारी रियासत के लिए एक जनमत-संग्रह में नहीं।

बस, मेरी कहानी पूरी हुई।

परिशिष्ट

'भारतीय वाणिज्य उद्योग संघ' का प्रस्ताव[1]

१ सघ की यह दृढ सम्मति है कि सरकार की वर्तमान दमन-नीति से देश की वर्तमान दुखद स्थिति नही सुधर सकती और वह सरकार से उसके वजाय समझौते की नीति अपनाने का अनुरोध करता है, ताकि ऐसा सविधान वनाने और उस सविधान पर अमल करने के लिए उपयुक्त वातावरण पैदा हो सके, जो जनता को स्वीकार हो।

२ सघ की कार्य-समिति के २२ जनवरी १९३२ के प्रस्ताव का जो अर्थ निकाला गया है, उसपर सघ खेद प्रकट करता है, क्योकि प्रस्ताव के प्रारम्भ मे ही यह स्पष्ट मन्तव्य मौजूद है कि सघ की कार्य-समिति भारत के लिए उपयुक्त सविधान की रचना मे भाग लेना अपना कर्तव्य समझती है।

३ सघ की धारणा है कि दमन-नीति को और गोलमेज परिषद के गत अधिवेशन मे अपने प्रतिनिधि मडल के अनुभव को, ध्यान में रखते हुए परामर्श-दायिनी समिति के काम मे उसके प्रतिनिधियो के भाग लेने से उस समय तक कोई लाभ नही होगा, जवतक कि

(क) सरकार सच्चे दिल से उस नीति मे परिवर्तन करने और वित्तीय स्वशासन सरक्षण और व्यापारिक अधिकार-सवधी प्रश्नो की चर्चा करने और उनके वारे मे देश के प्रगतिशील लोकमत के साथ समझौता करने को तैयार न हो,

(ख) इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए, परामर्शदायिनी समिति को यह अधिकार न रहे कि वह वित्त-सवन्धी विभिन्न प्रश्नो के वारे में खुली और पूरी चर्चा कर सकेगी तथा व्यापारिक अधिकारो, वित्तीय सरक्षणो आदि से सवन्ध रखने वाले प्रश्नो को ऐसी समिति के सिपुर्द न किया जाय जिसमें

---

१ चौथे अध्याय में जिस प्रस्ताव का उल्लेख है, वह यह था।

अंग्रेज और भारतीय विशेषज्ञों की संख्या एक समान हो और भारतीय विशेषज्ञ ऐसे हों, जिन्हें संघ का विश्वास प्राप्त हो।

पैरा ३ जैसा कि वह उपरोक्त प्रस्ताव के प्रारंभिक रूप में था।

३ इस समिति ने गोलमेज परिषद के अपने प्रतिनिधि की रिपोर्ट सुनी और उसे यह जान कर खेद हुआ कि आरक्षणों, वित्तीय संरक्षणों और व्यापारिक अधिकारों से संबन्ध रखने वाले प्रश्नों की जांच-पड़ताल करने और उनपर पूरी चर्चा करने के लिए पर्याप्त अवसर नहीं दिया गया। इस समिति का निश्चय है कि उसकी राय में वित्तीय संरक्षणों और व्यापारिक अधिकारों से सम्बन्ध रखने वाले प्रश्नों की पड़ताल व्यवसायियों की ऐसी समिति द्वारा की जाय, जिसके भारतीय सदस्यों की संख्या आधी से कम न हो और वे सदस्य ऐसे हों जिन्हें संघ का समर्थन प्राप्त हो, ताकि इन समस्याओं का सर्वसम्मत हल खोजा जा सके।

निर्देशिका